

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला

॥ श्री रत्नप्रभ सूरेश्वर सद्गुरुभ्यो नम ॥

त्रय श्री

शीघ्रबोध जाग

१०-११-१६-२०-२१-२२

भाषातरुती

श्रीमदुपदेश गच्छीय मुनिश्री

ज्ञानसुन्दरजी (गयवरचन्द्रजी)

—→१०*←—

प्रकाशक

श्रीरत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला ऑफीस--(फलोधी)

के मैनेजर शाहा जोरावरमल वैठ.

प्रथमावृत्ति १०००

वीर सवत २४४९

मूल्य

इस पुस्तक छपानेमें जिन महानुभावोंने साहाय-
ता दी है उन्नोंका यह सस्था सहर्ष उपकार मा-
नती है और धन्यवाद देती है ।



- १००) शा हीराचन्दजी फूलचन्दजी कोचर—मु० फलोरी
१००) मुताजी गीशुलालजी चन्दन मलजी—मु० पीसागण
८४१) स. १२७६ के सुपनों कि आवादानी का

शेष खरचा श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला ऑफीस फ-
लोधीसे दीया गया है.

भायनगर—धी मानर प्रिन्टींग प्रेममा शाह गुलाबचद लल्लुभाइय
छाप्यु

श्रीमदुपदेशगच्छीय—

मुनिराजश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज ।



—[कृष्ण दीक्षा १९६३]—

—[जैन धर्म टीका म० १९७०]

—[जन्म १९३७]—

प्रस्तावना.

प्यारे पाठकगुरु !

चरम तीर्थकर भगवान धीर प्रभुके मुखार्थिदसे फरमाइ हुइ स्याद्वादरूपी भवतारक अमृत देशना जिस्में देवदेवी मनुष्य आर्य अनाय पशु पक्षी आदि तीर्थच यह सब अपनि अपनि भाषामें नमजके प्रतिबोध पाकर अपना आत्मकल्याण करते थे ।

उस धीतराग याणिको गणधर भगवानोंने अर्ध भागधि भाषासे ब्राह्मशागमें सकलित करी थी जीसपर जीस जीस समयमें जीस जीस भाषाकि आवश्यकता थी उस उस भाषा (प्राकृत संस्कृत) में टीका निर्युक्ति भाष्य चूर्ण आदिकि रचना कर भव्य नीचापर महान उपकार कीया था ।

इस समय साधारण मनुष्योंका यह भाषा भी कठीन होने लग गई है क्योंकि इस समय जनताका लक्ष हिन्दी भाषाकि तर्फ बढ रहा है वास्ते जैनसिद्धान्तोंकि भी हिन्दी भाषा अवश्य होनी चाहिये

इस उद्देशकि पुरतीके लिये इस संस्थाद्वारा शीघ्रबोध भाग १ से १६ तक प्रकाशित हो चुके हैं जिस्में श्री भगवती पद्म षणा जैसे महान् सूत्रोंकि भाषा कर थोकडे रूपमें छपा दीया है ओ कि ज्ञानाम्यासियोंका बडेही सुगमतासे कण्ठस्थ कर समज में सुभीता हो गया है ।

इस बखत यह १२ गारह सूत्रोंका भाषान्तर आपके कर क-मलोमे रक्षा जाता है आशा है कि आप इसको आधोपान्त पदके लाभ उठायेंगे ।

इस लघु प्रस्तावनाको समाप्त करते हुवे हम हमारे सुसज्ज-नोंसे यह प्रार्थना करते हैं कि आगमोंका भाषान्तर करनेमें तथा सुफ शुद्ध करनेमें अगर दृष्टिदोष रह गया हो तो आप लोग सुधा रके पढ़ें और हमे सूचना करे ताके द्वितीयावृत्ति में सुधारा करा दीया जायेंगे—अस्तु कल्याणमस्तु

‘ प्रकाशक ’

विषयानुक्रमणिका



(१) शीघ्रबोध भाग १७ वां

[१] श्री उपासक दशाग मूत्रका भाषान्तर

(१) अध्ययन पहला आनन्द श्रावक ।

१ वाणिया ग्राम नगर	१
२ आनन्द गाथापतिका घणन	२
३ भगवान् धीरप्रभुका आगमन	४
४ आनन्द देशना सुनके व्रतग्रहण	६
५ सथाविशथा तथा पुणाउगणीस विशथादया	७
६ पाचसो हलधेकी जमीन	९
७ अभिग्रह ग्रहण । अथधिज्ञानोत्पन्न	१२
८ गौतम स्यामिसे प्रभ्र	१५
९ स्वर्ग गमन महाविदहमें मोक्ष	१६

(२) अध्ययन दुसरा कामदेव श्रावक

१ कामदेव श्रावक व्रतग्रहण	१७
२ वैषताका तीन उपसग	१७
३ भगवानने कामदेवकी तारीफ करी	२१
४ स्वर्ग गमन विदेहक्षेत्रमे मोक्ष	२२

(३) अध्ययन तीसरा चुलनिपिता श्रावक

१ धनारसी नगरी चुलनिपिता घणन	२२
-----------------------------	----

२ देवताका उपसर्ग

३ स्वर्ग गमन विदेह क्षेत्रमें मोक्ष

(४) अध्ययन चौथा सूरदेव श्रावक

(५) अध्ययन पाचवा सुरशतक श्रावक

(६) अध्ययन छटा कुडकोलीक श्रावक

१ कपीलपुर नगर कुडकोलीक श्रावक

२ देवताके साथ चर्चा

३ स्वर्ग गमन । विदेह क्षेत्र में मोक्ष

(७) अध्ययन सातवा शकडाल पुल श्रावक

१ पोलासपुर में गोशालाको श्रावक शकडाल

२ देवताके घबरोसे गोशालाका आगमन जाना

३ भगवान धीरप्रभुका आगमन

४ मट्टीके घरतन तथा अग्रभीताका दृष्टान्त

५ शकडाल श्रावकघरत ग्रहन

६ भगवानका विहार, गोशालाका आगमन

७ शकडाल और गोशालाके चर्चा

८ देवताका उपसर्ग

९ स्वर्गगमन और मोक्ष

(८) अध्ययन आठवा महाशतक श्रावक

१ राजग्रह नगर महाशतक श्रावक

२ रेवतीभार्याका निमित्त कहना

३ गौतमस्यामिको महाशतकके धहा भेजना

४ स्वर्गगमन और मोक्ष

(९) अध्ययन नोवा नन्दनिपिता श्रावक	४३
(१०) अध्ययन दशवा शालनिपिता श्रावक	४३
(क) दश श्रावकोंका यत्र	४४

[२] श्री अन्तगढशागमून " "

(१) वर्ग पहला अध्ययन पहला

१ द्वारामति नगरी घणन	४४
२ रेवतगिरि पर्वत नन्दनयोघान	४२
३ श्रीकृष्ण राजा आदि	४६
४ गौतम कुमरका जन्म	४९
५ गौतम कुमरको आठ अन्तेघर	५०
६ श्री नेमिनाथ प्रभुका आगमन	५२
७ गौतम कुमर देशना सुन दीक्षा प्रहन	५३
८ गौतम मुनिकि तपघर्या	५६
९ गौतममुनिका निर्वाण	
१० समुद्रकुमरादि नौ भाइयोका मोक्ष	५७

(२) वर्ग दुसरा अशोभकुमरादि आठ अन्तगढ केवनीयोका
आठ अध्ययन

५८

(३) वर्ग तीसरा अध्ययन तेरहा

१ महलपुर नागशेठ मुलशा अनययश का जन्म	५८
२ कलाम्यास ३२ अन्तेघर	५८
३ श्री नेमिनाथ पास दीक्षा	५९
४ छहों भाइ अन्तगढ केवली	६०

५ सारणकुमार अन्तगढ केवली	६०
६ देवकी राणीके यद्वा तीन सिंघाटे छ मुनिओंका आगमन	६०
७ दो मुनियों और छे भाइयोंके कथा	६१
८ देवकीराणीका भगधानसे प्रश्न	६३
९ श्रीकृष्ण माताको यन्दन करना	६४
१० कृष्णका अष्टम तप और गजसुकुमालका जन्म	६४
११ कृष्ण भगधानको यन्दन निमत्त जाना	६५
१२ गजसुकुमालके लिये शोभा ब्रह्मणीका ब्रह्मन	६६
१३ गजसुकुमालका भगधानके पास दीक्षा लेना	६७
१४ सोमल ब्राह्मणका मुनिये शीर अग्नि धरना	६८
१५ गजसुकुमाल मुनिका मोक्ष होता	६९
१६ सोमल ब्राह्मणका मृत्यु	६९
१७ सुमुहादि पाच मुनियोंको केवलज्ञान	७०

(४) वर्ग चौथा अध्ययन दस

१ जालीकुंमरादि दश भाइओ नेमिनाथ प्रभुके पास दीक्षा ग्रहण कर अन्तगढ केवली हुये	७१
--	----

(५) वर्ग पाचवा दस अध्ययन

१ द्वारामति विनाशका प्रश्न	७१
२ कृष्ण घासुदेवके गतिका निर्णय	७२
३ कृष्ण भविष्यमें अमाम नामा तीर्थकर होगा	७३
४ दीक्षा लेनेवालोंको साहिताके घोषणा	७३
५ पद्मायती आदि दश महासतीयोंका दीक्षा ग्रहण	७४

(६) वर्ग छठा अध्ययन सोला

१ मकाइ गाथापतिका	
------------------	--

२ कौकम गाथापतिका	७६
३ अर्जुनमाली बन्धुमतीभार्या भोगर पाणियक्ष	७६
४ छे गोटीले पुरुष बन्धुमतीसे अत्याचार	७७
५ मालीके शरीरमे यक्ष प्रवेश	७८
६ प्रतिदिन सात जीवोंकि घात	७८
७ सुदर्शन शोठकि मज्जुती	८१
८ अर्जुनमाली दीक्षा अन्तगढ केवली	८२
९ कासघादि गाथापतियोंका ११ अभ्ययन	८२
१० पैमन्त मुनिका अधिकार	८३
११ अलखराजा अन्तगढ केवली	८६

(७) वर्ग सातवा श्रेणिकराजाकि नन्दादि तेरहा राणीयो
भगवान वीरप्रभुके पाम दीक्षा ले मोक्ष गइ ८७

(८) वग जाठवा श्रेणिकराजाकि काली आदि दस राणीयो

१ कालीराणी दीक्षा ले रत्नावली तप कीया	८८
२ सुकालीराणी दीक्षा ले वनकावली तप कीया	८९
३ महाकालीराणी दीक्षा ले लघु सिंहगति तप कीया	९०
४ कृष्णाराणी दीक्षा ले महामिह तप कीया	९०
५ सुकृष्णाराणी दीक्षा ले सतसतमियाभिक्ष प्रतिमा	९०
६ महाकृष्णाराणी दीक्षा ले लघुसर्धतोभद्र तप	९१
७ वीरकृष्णाराणी दीक्षा ले महामर्धतोभद्र तप	९२
८ रामकृष्णाराणी दीक्षा ले भद्रोत्तर तप कीया	९२
९ पितृसेन कृष्णा , मुक्तावली तप कीया	९२
१० महासेनकृष्णा , अघिल वर्धमान तप कीया	९३

[३] श्री अनुत्तरोपवद्मूत्र वर्ग ३

- (१) वर्ग पहला अध्ययन दश—जालीकुमगादि दश कुमर
भगवान वीरप्रभुके पास दीक्षा ९४
- (२) वर्ग दुसरा अध्ययन तेरहा—श्रेणिकराजाके दीर्घश्रेणादि
तेरहा कुमर, भगवान पासे दीक्षा ९६
- (३) वर्ग तीसरा अध्ययन दश
- १ काकंदीनगरी धन्नाकुमर यत्तीस अन्तेवर ९७
- २ वीरप्रभुकी देशना सुन धन्ना दीक्षा ली ९७
- ३ धन्नामुनिकि तपस्या और गोचरी १०१
- ४ धन्नामुनिके शरीरका घर्षण १०२
- ५ राजग्रह पधारना श्रेणिकराजाका प्रश्न १०५
- ६ धन्ना मुनिका अमसन-स्वर्गवास १०७

[२] शीघ्रप्रोत्र भाग १८ या.

(१) श्री निरयात्रिका सूत्र

- १ चम्पानगरी—भगवानका आगमन १०८
- २ कालीराणीका प्रश्नोत्तर १०९
- ३ कालीकुमारके लीये गौतमस्यामीका प्रश्न ११२
- ४ खेलनाराणी सगर्भवन्तीको दोहला ११३
- ५ अभयकुमारकी बुद्धि दोहलापूर्ण ११४
- ६ कोणककुमरका जन्म ११६
- ७ कोणकके साथ काली आदि दश कुमर ११८
- ८ श्रेणिकराजाकी वन्धन ११९
- ९ श्रेणिक काल कोणक राजगादी ११९

१०	सींचाणक गन्धहस्तीकी उत्पत्ति	१२०
११	अठारा सरीया दिव्यहारकी उत्पत्ति	१२१
१२	बहलकुमारका वैशालानगरी जाना	१२२
१३	दुतको वैशालानगरी भेजना	१२७
१४	चेटक और कोणककी संग्राम तैयारी	१२८
१५	पहला दिन कालीकुमारका मृत्यु	१२९
१६	दश दिनोंमें दशों भाइयोंका मृत्यु	१३१
१७	कोणक अष्टमतप कर दो इन्द्राको धुलाना	१३२
१८	दो दिनोंका संग्राममें १८०००००० का मृत्यु	१३३
१९	चेटराजाका पराजय	१३४
२०	हारहाथीका नाश बहलकुमारकी दीक्षा	१३४
२१	कुलबालुका साधु वैशाला भग	१३५
२२	चेटराजाका मृत्यु	१३६
२३	कोणकराजाका मृत्यु	१३७
२४	सुकाली आदि नौ भाइयोंका अधिकार	१३७

(२) श्री कप्पवडिसिया सूत्र

१	पद्मकुमारका अधिकार	१३८
२	पद्मकुमार दीक्षा ग्रहण करना	१३९
३	स्वगधास जाना विदेहमें मोक्ष	१३९
४	नौ कुमरोंका अधिकार	१४०

(३) श्री पुष्किया सूत्र

१	राजगृहनगरमें भगवानका आगमन	१४१
२	चन्द्र इन्द्र सपरिवार चन्दन	१४१
३	भक्तिपूजक ३२ प्रकारका नाटिक	१४२
४	चन्द्रका पूजभय	१४३
५	सूयका अधिकार अध्या० २	१४४

अध्ययन तीजा.

६ शुक्र महाग्रहका नाटक पूर्वभय पृच्छा	१४५
७ सोमल ब्राह्मणका प्रश्न	१४६
८ श्रावक व्रत ग्रहन	१४७
९ श्रद्धासे पतित मिश्रयात्यका ग्रहन	१४९
१० तापसीका नाम	१५०
११ सोमल तापसी दीक्षा	१५१
१२ देवतासे प्रतिरोध देवपणे	१५४

अध्ययन चौथा

१३ बहुदुतीया देवीका नाटक	१५५
१४ पूर्वभयकी पुच्छा और उत्तर	१५६
१५ घातीकर्म स्वीकार देवी होना.	१५७
१६ सामा ब्राह्मणीका भय मोक्षगमन	१६१
१७ पाचमा अध्ययन पूर्णभद्र देवका	१६३
१८ मणिभद्रादि देवीका - अध्ययन	१६४

(४) श्री पुष्पचूलिया सूत्र

१ श्रीदेवीका आगमन नाटक	१६५
२ पूर्वभय भूता नामकी लडकी	१६५
३ भूताकी दीक्षा शरीर शुधुषा	१६६
४ विराधीकपणे देवी, विदेहमें मोक्ष	१६९
५ हरी आदि नौ देवीयों	१६९

(५) श्री विन्दिदशा सूत्र

१ बलदेव राजाका निपेढकुमर	१७१
२ निपेढकुमर श्रावक व्रत ग्रहन	१७२

३ निपेटकुमरका पुर्यभय	१७२
४ निपेटकुमर दीक्षा ग्रहन	१७२
५ पाचधे देवलोक विद्वहमे मोक्ष	१७४

[१६] श्री गीमरोध भाग १६ या

(१) श्री बृहत्कल्पसूत्र

१ छेद सूत्रोकि प्रस्तायना	१
(१) पहला उगा	
२ फलग्रहन विधि	७
३ मासकल्प तथा चतुर्मासकल्प	८
४ साधु साध्वी ठरने योग्य स्थान	९
५ मात्राका भाजन रखने योग्य	१३
६ कपाय उपशांत विधि	१६
७ बध्नादि याचना विधि	१७
८ रात्रीमें अशनादि तथा पन्नादि० ग्रहन निपेध	१८
९ रात्रीमें टटी पैसाय परठणेका जानेकि विधि	२०
१० साधु साध्वीयोका विहार क्षेत्र	२०
() उगा दुजा	
११ साधु साध्वीयोको ठरनेका स्थान	२१
१२ पाच प्रकारक धस तथा रजोहरण	२६
(२) ताजा उग्शा	
१३ साधु साध्वीयोके मकानपर जाना निपेध	२७
१४ घर्म विगरे उपकरण	२८
१५ दीक्षा लेनेवालाका उपकरण	२८

१६ गृहस्थोंके घर जाके बैठना निषेध	२९
१७ शय्या संस्तारव विधि	३०
१८ मकानके आक्षा लेनेकी विधि	३२
१९ जाने आनेका क्षेत्र परिमाण	३३

(४) चौथा उद्देश

२१ मूल० अणुठप्पा पारचीया प्रायाश्चित्त	३३
२२ दीक्षाके अयोग्य योग	३४
२३ सूत्रोंके वाचना देना या न देना	३५
२४ शिक्षा देने योग्य तथा अयोग्य	३५
२५ अशनादि ग्रहन विधि	३६
२६ अन्य गच्छमें जाना न जाना	३७
२७ भुनि कालधर्म प्राप्त होनेके बाद	४०
२८ कपाय-प्रायाश्चित्त लेना	४१
२९ नदी उत्तरणेके विधि	४२
३० मष्ठात्मे ठेरने योग्य	४२

(५) पाचवा उद्देश

३१ देव देवीका रूपसे ग्रहन करे	४३
३२ सूर्योदय तथा अस्त होते आहार ग्रहन	४४
३३ साधुघोंकों न करने योग्य कार्य	४६
३४ अशनादि आहार विधि	४९

(६) उद्देश छठा

३५ नदी घोलने लायक छे प्रकारकी भाषा	५०
३६ साधुघोंके छे प्रकारके पस्तारा	५१
३७ पायोंमे काटादि भागें तो अन्योन्य काढ सके	५१
३८ छे प्रकारका पलीमथु	५३

[२०] श्री शीघ्रयोग भाग २० वा.

(१) श्री दशाश्रुतस्कन्ध छेद सूत्र

१ बीस असमाधिस्थान	५६
२ एकबीस सबलास्थान	५७
३ तेतीस आशातनाके स्थान	५९
४ आचार्य महाराजकि आठ भंपदाय	६२
५ चित्त समाधिके दश स्थान	७१
६ भाषककि इग्याराप्रतिमा	८७
७ मुनियोंकि दारहाप्रतिमा	८८
८ भगवान् घोर प्रभुके पाच कल्याणक	९७
९ मोहनिय फर्मव-धके तीस स्थान	९८
१० नौ तिधान (नियाणा) अधिकार	१०४

[२१] श्री शीघ्रयोग भाग २१ वा

(१) श्री व्यवहार छेद सूत्र

१ प्रायश्चित्त विधि	१३०
२ प्रायश्चित्तक साधुका विहार	१३८
३ गच्छ त्याग एकल विहारी	१३८
४ स्वगच्छसे परगच्छमे जाना	१३९
५ गच्छ छोडके व्रत भंग करे जीस्का	१४०
६ आलोचना बीसके पास करना	१४१
७ दो साधुओंसे एकके तथा दोनोंक दोष लगेतो	१४२
८ बहुत साधुयसे कोई भी दाप सेवेतो	१४३
९ प्रायश्चित्त बहता साधु ग्लानहो तो	१४४
१० प्राय० बालकों फोरसे दीक्षा केसे देना	१४६

११ एक साधु दूसरे साधुपर आक्षेप (कष्टक)	१४७
१२ मुनि कामपीडित हो संसारमें जावे	१४७
१३ निरापेक्षी साधुको स्वल्पकालमें भी पछि	१४८
१४ परिहार तप थाला मुनि	१४९
१५ गण (गच्छ) धारणकरनेवाले मुनि	१५०
१६ तीन षण्ठीके दीक्षित अग्न्याचार्यको उपाध्यायपणा	१५१
१७ आठ षण्ठीके दीक्षित , आचार्यपद	१५१
१८ एकदिनके दिक्षितको आचार्यपद	१५२
१९ गच्छवामी तरुण साधु	१५३
२० वेश में अत्याचार करने वालेको	१५३
२१ कामपिडित गच्छ त्याग अत्याचारकरे	१५३
२२ बहुश्रुतिकारणात् मायामृपात्राद् धोले तौ	१५५
२३ आचार्य तथा साधुओंको विहार तथा रहना	१५६
२४ साधुओंको पछि देना तथा छोड़ाना	१५७
२५ लघुदीक्षा षड्दीक्षा देनेका काल	१६०
२६ ज्ञानाभ्यासके निमित्त पर गच्छमें जाना	१६१
२७ मुनि विहारमें आचार्यकी आज्ञा	१६२
२८ लघु गुरु होके रहना	१६३
२९ साधुओंको विहार करनेका	१६४
३० साधुओंके पछिदेना तथा छोड़ाना	१६५
३१ साधु साधुओं पदाहुया ज्ञान विस्मृत हो जावे	१६६
३२ स्वयंसे ज्ञानाभ्यासे	१६७
३३ साधु साधुओंकी आलोचना	१६८
३४ साधु साधुओंको सर्प काट जावे तो	१६८
३५ मुनि ससारी न्यातीलोंके घहागोचरी जावे तो	१६९
३६ ज्ञात या अज्ञात मुनियोंके रहने योग्य	१७१
३७ अन्यगच्छमें आई हुई साधु	१७३

३८ साधु साध्वीयोंका सभोगका तोड़देना	१७४
३९ साधु साध्वीयोंके वास्ते दीक्षा देना	१७४
४० ग्रामादिफर्म साधु २ कालकर जाये तो	१७६
४१ ठेरे हुये मकानके पहले आहा लेना	१७७
४२ स्थयीरके अधिक उपकरण	१७९
४३ अपना उपकरण कहा भी भूटा हो ता	१८१
४४ पात्र याचना तथा दुसरेको देना	१८२
४५ उणोदरी तप करनेकी विधि	१८२
४६ शय्यातर सयधी अशानादि आहार	१८३
४७ साधुयोंके प्रतिमा घटान अधिकार	१८५
४८ पाच प्रकारका व्यवहार	१८९
४९ चौभगीयों	१९१
५० तीन प्रकारके स्थयीर तथा शिष्यभूमि	१९५
५१ छाटे लडकेको दीक्षा नहीं देना	१९६
५२ कौतने वर्षोंके दीक्षा ओर कौनसे सूत्रपढाना	१९७
५३ दश प्रकारके वैयाचवसे मोक्ष	१९८

[२२] श्री गीघमोध भाग २२ रा

(१) श्री लघु निशियसूत्र (छे)

१ निशियसूत्र	१९९
२ उद्देशो पहलो बोल ६० का प्रायश्चित्त	२०१
३ , दुसरो " , ,	२०८
४ , तीसरो " ८२	२१५
५ " चौथो " १६८	२२१
६ " पाचवो " ७८	२२७
७ " छठो " , ,	२३३

८	सातवा	"	"	"	२३४	
९	"	आठवां	"	१९	"	२३४
१०	"	नौवा	"	२६	"	२३८
	"	दसवा	"	४८	"	२४३
२	"	इग्यारवा	"	१९७	"	२२०
३	"	बारहवा	"	४८	"	२५७
४	"	तेरहवा	"	७६	"	२६४
१५	"	चौदवा	"	५०	"	२७१
१६	"	पन्द्रवा	"	१७२	"	२७६
१७	"	सोलवा	"	५१	"	२८०
१८	"	सतरवा	"	२६८	"	२८५
१९	"	अठारवा	"	९३	"	२९१
२०	"	उन्नीसवा	"	३९	"	२९८
२१	"	वीसवा	"	६५	"	३०४
२२	आलोचनाकि विविध विषय					३१४



सहर्ष निवेदन



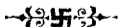
श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला ऑफीस फलोधीसे आज स्वल्प समय में ७० पुष्पोंद्वारा १४०००० पुस्तके प्रकाशित हो चुकि है जिस्में जैन सिद्धान्तोंका तत्त्वज्ञान सविस्त सुगमतासे समजाया गया है वह साधारण मनुष्य भी सुख पूर्वक लाभ उठा सक्ते है पाठक वर्ग एकदफे भगवाके अवश्य लाभ लेंगें

पुस्तक मीलनेका ठीकाना

मेनेजर—

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला

घु'—फलोधी—(मारवाड)



परम यागिराज—

मुनि श्री रत्नविजयजी महाराज

—[जन्म १९३०]—



—[म्रगवाम १९७७]—

—[पुस्तक क्रमांक १९७०]—

—[जन्म वर्ष १९३०]—

॥ ॐ नमः ॥

॥ स्वर्गस्थ पूज्यपाद परमयोगी सतामान्य प्रभाते
स्मरणीय मुनि श्री श्री श्री १००८ श्री
श्रीमान् रत्नविजयजी महाराज साहस्रके
कर कमलोभे सादर समर्पण पत्रिका ॥



पूज्यवर ! आपने भारत भूमिपर अवतार ले, असार ससारको जलाजली दे, मल्यफालमें (दश वर्षकी अल्पावस्थामें) जन्मोद्धारक दीक्षा ले, जैनागमोका अध्ययन कर, सत्यसुगधीको प्राप्त कर, अशुभ असत्य ढँढक वासनाकी दृग्धसे घृणित हो अठावीस वर्षकी अवस्थामें समुचीत मार्गदर्शी श्रीमान् विजयधर्मसूरी-धरजीके चरणमरोजमें ध्रमरकी तरह लिपट गए ऐसी आपकी सत्यप्रियता ? इसी सत्यप्रियताके आधीन हो मैं इन आगमरूपी पुष्पोजो आपके आगे रखता हूँ क्यों कि आपके जैमा मत्यनिष्ठ और अनेकागमावलोकी इस पाम रकों कहीं मिलेगा ?

परमपुनीत पूज्य ? आपने गिरनार और आत्रु जैमे गिरि-बरोकी गुफाओमें निर्माकतासे निवास कर, अनेक तीर्थ स्थानोंकी पुनीत भूमीओमें रमण कर, योगाम्यासकी जैनोंमेंमे गई हुई कीर्तिको अद्वाहन कर पुन स्थापीत कर गए इसलिए आपके मूक्षमदर्शिताके

गुणोंमें मुग्ध हो ये पुष्प आपने आगे रखनेकी उत्कट इच्छा इस दासको हुई है

मेरे हृदयमंदिरके देव ? आपने अति प्राचीन श्रीरत्नप्रभमूरीधर स्थापित उपकेश पट्टनस्थ (ओशीयामें) महावीर प्रभुके मंदिरके जीर्णोद्धारमें अपूर्व सहाय कर जैनमालाश्रम स्थापित कर जैनागमोका समग्रहीत ज्ञानभंडार कर मरूभूमिमें अलभ्यलाभ कायम कर जैनजातिफी सेवा कर अपूर्व नाम कर गए इन कारणोंमे लानायीत हो ये आगम पुष्प आपक मन्मुख रगू तो मेरी कोई अधीकृता नहीं है

भव्योद्धारक ! इस दासपर आपकी असीम कृपा हुई है इससे यह दास आपका कमी उपकार नहीं भूल सकता मुझे आपने मिथ्याजालमेंमे छूड़ाया है, सन्मार्ग बताया है, दूढ़कोके व्यामोहमे दृष्टि हटा कर नानदान दिया है, साध्याचारमें स्थिर किया है यह सब आपका ही प्रताप है इस अहसानको मानकर इन वारे सूत्रोंका हिन्दी अनुवादरूपी पुष्पोको आपकी अनुपस्थितिमें समर्पण करता हूँ इसे सूक्ष्म ज्ञानद्वारा स्वीकार करीएगा यही हार्दिक प्रार्थना है किमधिकम्

आपथीके चरणकमलोंका दास
मुनि ज्ञानसुन्दर



पूज्यपाद श्रीमान् मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराजकेकरकमलामें

अभिनन्दनपत्रम्.



शान्त्यादि गुणगणाल्लृत पूज्यपाद प्रातस्मरणीय मुनि श्री श्री १००८ श्री श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराजसाहिब ! आपश्री बड़े ही उपकारी और ज्ञानदान प्रदान करनेमें बड़े ही उदारवृत्तिको धारण कर आपश्रीकी प्रशमनीय व्याख्यान शैली द्वारा भव्यजीवोत्साह कल्याण करते हुवे हमारा सद्भाग्य और हमारी चिरकालकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिये आपश्रीका शुभागमन इस फलोधी नगरमें हुवा, जिसके वजरिये फलोधी नगरकी जैन समाजको उड़ा भारी लाभ हुवा है बहुतसे लोग आपश्रीकी प्रभावशाली देशनामृतका पानसे सद्बोधको प्राप्त कर पठन—पाठन, शास्त्रश्रवण, पूजा, प्रभावना, सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषधादि, त्याग, वैराग और अपूर्व ज्ञान—ध्यान करते हुवे आपश्रीके मुस्ताविदसे श्रीमद् आचारागादि ३७ आगम और १४ प्रकरण श्रवण कर अपना आत्मानो पवित्र बनाया यह आपश्रीके पधारनेका ही फल है

हे करूणासिन्धु ! आपश्रीने इस फलोधी नगरपर ही नहीं केन्तु अपने पूर्ण परिश्रम द्वारा जैन सिद्धान्तोंके तत्त्वज्ञानमय ७५००० पुस्तकें प्रकाशित करवाके अखिल भारतवासी जैन समाज पर बड़ा भारी उपकार किया है यह आपश्रीका परम उपकारस्पी क्षेत्र मर्दोंके लिये हमारे अन्तःकरणमें स्मरणीय है ।

हे स्वामिन् ! फलोधीमे गत वर्षमें जैसलमेरका सघ निकला, उम्में भी आप सरीखे अतिशयधारी मुनिमहाराजोंके पधारनेसे जैन शासनकी अवर्णनीय उन्नति हुई, जो कि फलोधी उसनेके बाद यह सुअवसर हम लोगोंको अपूर्व ही मीला था ।

हे दयाल ! आपश्रीकी रूपासे यहाके श्रावकवर्ग भगवानकी भक्तिके लिये समवसरणकी रचना, अष्टाहमहोत्सव, नित्य नवी २ पूजा भणगाक वरघोडा और स्वामिवासल्यादि शुभ कार्योंमें अपनी चल श्रमीना सदुपयोगसे धर्मजागृति कर शासनोन्नतिना लाभ लिया है यह सब आपश्रीके विराजनेका ही प्रभाव है ।

आपश्रीके विराजनेसे नानद्रव्य, देवद्रव्य, जिणोद्धारके चन्दे आदि अनेक शुभ कार्योंका लाभ हम लोगोंको मीला है ।

अधिक हृषका विषय यह है कि यहापर कितनेक धर्मद्वेषी नास्तिक शिरोमणि धर्मकार्योंमें विघ्न करनेवालोंको भी आपश्रीके तरिये अच्छा प्रतिबोध (नशियत) हुवा है, जाना है कि अब वह लोग धर्मविघ्न न करेंगे ।

अन्तमें यह फलोधी श्रीसघ आपश्रीका अन्तःकरणसे परमो-

पकार मानते हुवे भक्तिपूर्वक यह अभिनन्दनपत्र आपश्रीके करकम-
लोंमें अर्पण करते हैं, आशा है कि आप इसे स्वीकार कर हम लोगोंको
कृतार्थ बनावेंगे ।

ता० क०—जैसे आपश्रीके शरीरके कारणसे आप यहापर तीन
चातुर्मास कर हम लोगोंपर उपकार किया है अब तक भी आपके
नेत्रोंका कारण है, वहातक यहा पर ही विराजके हम लोगोपर उपकार
करे उमेद है कि हमारी विनति स्वीकार कर आपके कारण है वहा-
तक आपश्री अवश्य यहा पर ही विराजेंगे । श्रीरन्तु ऋल्याणमस्तु ।

संवत् १९७९ का
कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी
जनरल सभामें

आपश्रीके चरणोपासक
फलोरी श्री स०





श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प न० ५३

श्री रत्नप्रभसुरीश्वर सत्गुरुभ्योनम

अथर्था

शीघ्रबोध या थोकडाप्रबन्ध

भाग १७ वा



संपादक

श्रीमदुपवेश गच्छीय मुनिश्री
ज्ञानमुन्दरजी (गणपरचन्दजी)



द्वयगणायक

श्रीमद्य फलोधीमुपनोंकीग्रामदनीमे



प्रकाशक

शाह मेधराजजी मुणोत मु० फलोधी



प्रथम वर्ण १०००

वीर गवा ११८

विक्रम म १७०

भावनगर—श्री ' सान् प्रीर्त्तग प्रेम मा
शा. गुलाबचंद लल्लुभाईए अण्डु

॥ ॐ ॥

॥ श्री गन्धर्वप्रभृतीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ॥

शीघ्रबोध या थोकदा प्रबन्ध.

—ॐ(ॐ)३—

भाग १७ वा

—→ॐ←—

देवोऽनेक भगजिताऽजित महा पाप प्रदीपान्तो ।

देवः मिद्विवध्र पिणाल हृदयालकार हागंपमः ॥

देवोऽष्टादशदोष मिधुरघटा निर्भद पचाननो ।

भयाना विदधातु सञ्चित फल, श्री नीतगगो जिन' ॥१॥

—ॐ३—

श्री उपान्तक दशांग सूत्र अध्ययन १

—०००—

(आनंद श्रावकाधिकार)

आद्ये आनेय अन्तिम समयकी बात है कि इस भारतभूमिमें
अपनी उची २ ध्यजा पतायात्री और सुन्दर प्रमाष्टर्य मनोहर
शिशुगान्ध गगनमडर्या चुम्बन करता हुआ अनेक प्रकारघ धन
धाय और मनुष्यादि पश्यान्में मसङ्ग गेमा थाणीय ग्राम नामक

एक नगर था। उस नगरके बाहिरी भागमें अनेक जातिके वृक्ष पुष्प आर लताआँस अति शाभनीय दुतीपलास नामका उद्यान (उगीचा) था। और वहा अनेक शशुओंका अपनी भुजाआँके बल्म पराजय करके प्रजाका न्याय युक्त पावन करता हुआ जय शत्रु नामका राजा उस नगरमें राज्य करता था। और वहा आनन्द नामका एक गाथापति रहता था। जिसका मित्रानदा नामकी भार्या थी वह बडा ही धनाढ्य और नीती पूर्णक प्रवृत्ति करने न्यायोपाजित द्रव्य आर धन धान्य करके युक्त था। जिसके घर चार करोड सोनैया धरतीमें गटे हुए थे। चार कराँ मानैयाका गहना आदि ग्रह सामग्री थी। आर चार कराँड सोनैये वाणिज्य व्यापारमें उगे हुए थे। और दश हजार गायोंका एक धर्म होता है ऐसै चार धर्म याने ४०००० गायार्थी। इनके मित्राय अनेक प्रकारकी सामग्री करके समृद्ध और राजा, शैठ मैनापती आदिका बडा माननीय आर प्रशस्तनीय गज और रहस्यकी बातोंमें नक मगहका देनेवाडा, व्यापारीयमें अग्रसर था। हमेशा धानद चित्तमें अपनी प्राणप्रिया सुशीला मित्रानदाके साथ उचित भोग-विलास य पेश्य सुगोंको भाग्यता हुआ रहता था। उस नगरके बाहिरी भागमें एक काठक नामका सलीपेश (मोहल्ला) था। वहापर आनन्द गाथापतीक मज्जन मन्धी लोक रहते थे। उभी बटे ही धनाढ्य थे।

एक समय भगवान् श्रीगोक्य पूजनीय थीर प्रभु अपने शिष्ययग-परिवार सहित पृथ्वी मडलको पवित्र करत हुए, वाणीय ग्राम नगरके दुतीपलास नामक उद्यानमें पधारे।

यह खबर नगरमें हात ही जहा दा, तीन चार या बहुतसै मन्त पकत्रित हात है। ऐसै स्थानापर बहुतसै लार आपसमें म-

द्वय वातालाप कर रहे हैं कि अहो ! देवानुप्रिय ! यथा स्वयं च
 गिहत भगवन्तोरे नाम मात्र श्रवण करनेसे ही महापत्र होता है
 यही श्रमण भगवान महावीर प्रभुना पधारना आज दुतीपलास
 नामक उद्यानमे हुआ है ता स्मने लिये कहनाही क्या है । चण
 भगवन्तका धन्दन-नमस्कार करके श्री मुग्धमे देशना श्रवण कर
 प्रश्नादि करके उत्तुत रका निणय कर । मेसा विचार करके सब
 लोक अपन ० घर जाक स्नान कर श्राभूषण जा वह मूल्यके थ
 य धारण करीये । आर शिरपर छत्र धगत हुये कितनेकगज अश्व
 रथादिपर आर कितनेक पैदल जानका तैयार हो रहेथ । इतनेम
 जयशतु गजानो धनपालकने गगर दीदि आप जिनके दशनवी
 अभिगता करतेये व परमेश्वर वीरप्रभु उद्यानमे पधारे हैं । यह
 सुनके गजाने उम धनपालकों मतोपित कर बहुत द्रव्य
 इनाम दिया और स्वयम चार प्रकारकी सेना नेया कर
 यत्तसे मनुष्यांर परिधारने राजक गजाकी माफीक नगर-
 धृगारके उडे ही हर्ष-उत्साह और जाडम्परके साथ भगवानको
 धन्दन करनेको गया । समामरणमे प्रवेश करते ही प्रथम पाच
 प्रकारके अभिगम-विनय करते हुए भगवानके पास पहुच गये ।
 राजा और नगरनिवासी रोक भगवानको प्रदक्षिणा दे धन्दन-
 नमस्कार कर अपन ० याग्य स्थान पर बैठ गये ।

आनन्द गाथापति भी इस बातको श्रवण करन हा स्नान-
 मज्जन कर शरीर पर अच्छे ० बहुमूल्य श्राभूषण धारण कर
 शिरपर छत्र धगत हुये और बहुतसे मनुष्यवृन्द ने परिधाम्ने
 भगवानका धन्दन करका आये । धन्दन-नमस्कार कर योग्य
 स्थान पर बैठ गया ।

भगवानने भी उम विशाठ पपटाका धमदेशना देना प्रारभ

किया। जिसमें मुख्य जीव और कर्मोंका स्वरूप बतलाया कि हे भयान्माओ! यह जीव निमल शानादि गुणयुक्त अमृत हैं और सब चिदानन्दमय हैं परन्तु अज्ञानमें परवस्तुओंका अपनी कर्मानी हैं। इन्हींमें उत्पन्न हुआ गग-रूपर हनुम कर्मोंका अनादि कात्म चय-उपचय करता हुआ इस अपार सत्कार अन्दर परिधमण कर रहा है। शान्त अपनी निजसत्ताका पहिचानक जन्म जग, मृत्यु आदि अनन्त दुर्खाका हनु यह अनित्य अमार ससाग्व धन्धनसे छूटना चाहिये। इत्यादि दशना देख अन्तमें परमाया कि मोक्षप्राप्तिक मुख्य कारण दोय हैं (१) मातु धममयथा निवृत्ति। (२) श्रायक धमजा दशमे निवृत्ति रम दोनों धमम यथाशक्ति आराधना करनेसे समाग का पार हा र स्वप्नाका राज मीर सजता है।

यह अमृतमय दशना देवता विद्याधर और गजादि धरण कर सहय गले कि ह करणासि हु! आपने यह भयताग्व देशना दे क जगतके जीवापर अमूल्य उपकार किया है। इत्यादि स्मृति कर अपन २ स्थान पर गमन करन हुए।

आनन्द गाथापति दशना सुनक सहय भगवानका धन्धननमस्कार कर बोला कि हे भगवान! मैं आपकी सुधारम दशना धरण कर आपसे बचनाकी अन्तर आत्मामें श्रद्धा हुए हैं। और मरवा प्रतीति हानम धम करनेका रचि उपपन्न हुई हैं परन्तु हे दीनाङ्गक" धय है जगतमें गजा महाराजा। शेट मनापति आदि का जी कि राजपाट, धन धान्य पुत्र, कलत्रका त्याग कर आप क समीप दीक्षा ग्रहण करते हैं परन्तु मैं ऐसा समथ नहीं हू। हे प्रभो! मैं आपसे ग्रहन्ध धम अर्थात् श्रायकक पारह व्रत ग्रहण करुगा। भगवानने परमाया कि "जहा सुख" हे आनन्द! "जैमा

नुमकीं मुख हा वैसा करो परन्तु जा धमकाय करना हा उममें समय मात्र भी प्रमाद मत करो । ऐसी आज्ञा जाने पर आनन्द श्रायश भगवानके समीप श्रायश व्रतकी धारण करना प्रारम्भ किया ।

(१) प्रथम श्थू प्राणातिपात अथान् हलता चरता श्रम जीवाको मार्गना याग जायज्जीयतय, दाय करन रथय कीर्ती

1. आनन्दन प्रथम व्रतम तस चात्रिका एणनका प्रथाम्यायन दाय रण शरवीन यागम किया है, तैम कि हलमें सामायिक पादधमें ताय करण और तानयागम पया म्यायन करत * विप इतना है कि सामायिक पागमम गर्ग मावय शाराग * और आनन्दान तस चात्रिका मार्गना न्याग काया वा ।

बहुतम प्रथम श्रायशक मया शिववा दया करण * उच्यते श्वायश चात्रा की तस शिववा न्या ना श्रायशक पय ना नयी मय और यम चावाम ना निर्विकार पार शिववा शपराशक तस तासुतास सवा एव १८॥ शिववा शत करता मया शिववा न्या श्रायशक हाता * । यत एव शपराशक मय * कि चित्तान एव मातवा तावदा व्रत नया शिव * चित्तमा १४ गतगकन मयाशवाय मु * है ।

जा श्रायश तस चात्रिका मार्गना कामा नया * उच्यते १० दया शिववा दया तस चात्रिका शर्ती * शर मयाशक जावकि शिव छया व्रतकी मयाशक करत * तो मयाशक बहायक शमन्यायन काजासुता अथान् मयादक गिताय रै * गचलाशक श्वायश जीवामा मार्गना ना श्रायशक श्यागी है शरतु पात्र शिववा न्या पय मकी है । शर मयाशक भूमिकाम बहुतम श्य * चियमें मातवा व्रतम उपभाग परिभागीकी मयादा करनम श्य म्यनक गिताय मय श्याशक शीवाकी दया पय जानम श्रायश शिववा दया हाता है तव श्रम्यादिना मयाशक शरी शी उच्येमें भी शर्पदशक प्रथाम म्याय करनम सवा शीवाश न्या पय चाला है एव १०- - ११-११ माशक १८॥ चात्रा न्या बागदुर्ती श्रायशक पय मयता है ।

जीवका मारना नहीं, और व फाम मरधाना भी नहीं और
तीन योग मनमें उचनम और कायमें । इम ग्रनमें "जाणी

इम गुरु प्रक्ष क्रिया जाय कि धावर श्रमार्थक निय तथा मप्रामादिमें नम
चाव मरते * । उचर- । मन्वायादिमें नम चाव मरते परन्तु श्रवक नम जाव मर
नका कामा गी * जेन कि गायुसा नम उचरता नम स्वामर्गकी क्रिया होना है परन्तु
मारनसा कामा न शनन वीम विमवाता दया मानी मर है । मइता मर ३ य ३० १
में मर है कि धर वीवाका मारनसा न्यता करन पर प्र वा मारता नम जाव मर जाव
नो धावका वनम विचार नहीं मर ॥ ६ ।

इम धावका श्रवण वाशरी वाचन दया नहीं गिनी चाव तो फिर धावक
उ दिग परिमाण नम करता है * मरसा नया फल दया * सतमा वनमें श्रमार्थक मरप
करता है मरसा नया फल दया * गीला नियम धारत है * उचर नम नया गम हुआ *
मारण कि स्वामर्ग वीवाका दया तो मर एक गाना ही नडा जाती है । और धम जावोंक
नो पहल * नयाग नम चुना नम फिर मर सतमा मरवा वन मनसा क्या
गम मर

(प्र. १) माधु मर धावका क्या मर विमवा दयासा नम फल है

(उचर) जाव क्या है * दमिय धावका गायुका मरन कमा मर वनमया है

ममने ममम मरता मर ५ ५ ५ ३ वाग मरमाग विमर मरवायमें मरत
हुव धावका यह लक्ष है कि मीनगायसा मर हं वर मर और मरमाय है । नय मर
काय मर है । मरैर जावमासा मरता हुआ मरता है । मरचना मरति कि माधु
और मरम क्या मर * । दमिय मरक मरवायमें मरति मरता है मरक निय ही
मवा मीमसा मर मर गइ है । मरम मर जावक * मरवाकी मरति मर प्रक्ष करत
नम तो मर मर मरत है कि मर मरम माधु है मर नम धावक * । परन्तु मरन तो
मरन वनम वलनवागकी वात मरति है । दमिय धावक मरति मरत करत है
नम माधु मरति मर है नम क्या मरका मवा मरसा ही दया करी चावगी ? कमा
नहीं । नम मर मरमपियान मर विमवा कमा है * मरसा मर करत नम जीवारी
मरसा मर मरति है । मर कवा मर ॥

पौच्छी उदरी सङ्गीत श्रुतापराधा । अंगार हात है उर म्या
 जननियमाधरीमे ।

(२) दूसर स्थूल मृषापाठ-तीघ राग रूप मकरेपोत्पन्न उर-
 नेपाग मृषापाठ तथा गजदड या गोकमडे पेमा मृषापाठ कोठ-
 मैका न्याग जायज्जीय तक दोय करण और तीन यागसे पूर्यत ।

(३) तीसरे स्थूल अदस्तादान-परद्वय हस्त करना अथ
 अणादिका न्याग जायजीयतक दोयकरण और तीन यागसे ।

(४) चारो मृग मैजुन-स्वदाग मताप जिमम जानन्दने
 अपनी परणी हुई मियानन्दा भाया ग्वरे दोप मैजुनका न्याग
 कियाया ।

(५) पाचम मृग परिग्रहका परिमाण करना । (१)
 सुयण, स्परे परिमाणम गगह घाट जिममे च्यार कोड
 धरतीमे, च्यारकोड चापारमे, च्यार कोड घरमे आश्रुपण उ-
 द्यादि पर जिमीम । इन्हा मियाय मरे त्याग किया । (२)
 चतुस्पद परिमाणमे च्यार उरग रथानि चागम हजार^३गौ(गाया)
 के मियाय सय न्याग किये (३) भूमिकारे परिमाणमे पा-
 चमो ह^४ जमीन गरी शेषभूमिका परिमाण किया । (४)

१ जा ग्वे इव व्यापारम पाठि गता है उर सब अनादी मर्यादाम सर्व
 जानाई ।

२ च्यार गार (वर्ग) का उद्वि ही वर इका मज्जापमे है ।

३ अज्ञात परिमाण एक वाय और राम गार परिमाणका एक निरत और
 सो निरका एक ह^५ एक पायम ह^६ जमीन म्नाया ग्ल्याक १ ० गार गला है ।
 वय उरतररी मर्यादामा इया भुमाकाम गगह सी जालन अथ प्रतना एगपर इया
 मरी क्या है । सिन्नु नविगार उर प्रतका अरुम क्या है । और अरुनन्तका मिय
 (कविना) मे ०० अरु अरु अरु है ग्यामा लिखा है । ग्यापायम अरु खनी मममी

शकट-गाडाके परिमाणमें पाचसौ गाटा जहाजा पर माल पहुँचा नके लिये तथा देशांतरमें माल लानके लिये और पाचसौ गाडा अपने गृहकायके लिये खुला रगके शेष शकट-गाडाआँका त्याग कर दिया (-) बहाण पाणीर अन्दर चरनेवाले जहाजके परिमाणमें चार बड़े जहाज दिशापरमें मात्र भजनेका और चार छोटे जहाज खुले रगके शेष उहाणका त्याग कीया । छट्ठा व्रत पाचव्रतके अन्तगत है ।

(७) मातवा उपभाग परिभाग व्रतका निम्न लिखित परिमाण करत हुए ।

(१) अगपूछनका रमात्रमें गन्ध कर्पांत वस्त्र रखा है ।

(२) दातणमें एक अमृति-जेगीमधका दातण ।

(३) फलमें एक शीर आषटाका फल (केशधानेका)

(४) कमरत करने पर भात्रिम करनेके लिये सौपाक और हजार पाक तत्र रखाथा । सौ औषधिमें पकाये उमका सौपाक और हजार औषधिमें पकाये उमको हजार पाक धहत है तथा सौ मोनैयाका एक टकाभर मेवा कीमतवाला तत्र रखा था ।

(५) उघटना एक सुगन्ध पदार्थ कुण्डिका रखा है ।

(६) स्नान मज्जन-जाट घड़े पाणी प्रतिदिन रखा है ।

(७) उर्ध्वाकी जातिमें एक क्षेमयुगल कपासका वस्त्र रखा है ।

चात्र ना लग्न लिगाव्रत वाच्युही नग रखाथा ता उहाके चार वर वराण चार मात्र उहाण सिम लिगाम उरतर गया प्रश्न स्वभाविस उत्पन्न जाता है । जानका व्ययत्न (शापार) में कुशा उहा है और पावन व्रतमें चार ब्राह्मणव्यापारके लिये रखा था । वाग्वि उभय जाता है कि पाचम हल्दी चमीन रमीना रमीमें छगव्रतका भी सम्बन्ध हासया हा । तत्र वक्ता गम्य ।

- (८) विलेपन-अंगरू कुम्ब चन्दनका विलेपन रखा था।
 (९) पुष्पकी ज्ञातिमें शुद्ध पद्म और मातृतिष्ठ पुष्पाकी माला।
 (१०) आभरण-कानाने तुड्ड और नामाकित मुद्रिका रंगी थी।
 (११) धूप-अंगरू तगरादि सुगन्ध धूप रखा था।
 (१२) पेज-घृतमें तनीया हुआ चायण पुषा।
 (१३) भोजन-घृत पुरी और स्वाड गजा रखा था।
 (१४) आदन-कर्म ज्ञातिष्ठ शाली चावल रखा था।
 (१५) मप-दालमें मूग, उडुकी दाल रंगी थी।
 (१६) घृतमें शब्दस्मृतिका घृत अथवा मये निकाला रखा।
 (१७) शाक शाकमें यथुवाकी भाजीका तथा मटुकी घन-
 म्पनिका शाक रखा था।
 (१८) मयूर फलमें एक बली फल पात्रमें फल रखा था।
 (१९) जमण, जिमणत्रिधि त्रय त्रिनेप रखा था।
 (२०) पाणीकी ज्ञातिमें एक आकाशका पाणी टाकादिका
 (२१) मुखवासमें गायत्री लग्न कपूर जाधतरी जायफल
 यह पाच धन्तु तालमें रंगी थी। सर्व जायन्तमें पत्र २१ योगेक
 द्रव्य रखे थे।

(८) आठवा घृतमें अनर्थदत्तका त्याग किया था यथा-स्त्राथि
 जिना आत यान करनेका त्याग। प्रमादमें पशु हो, घृत तैल,
 दूध इहीं पाणी, आदिका भाजन खुला रखनेना, औरभी प्रमादा
 चरणश त्याग। हिंसाकारी शस्त्र पक्षत्र करनेका त्याग। पापकारी
 उपदेश देनेका त्याग यह त्याग प्रकारमें अनर्थदत्त भेषनकरनेका
 त्याग।

यह आठ घृतका परिमाण करनेपर भगवान महावीर

स्थिति में कि हे आनन्द जा सम्यक्त्व महित व्रत स्तं हे उ
 मका पेस्तक व्रतार अतिचार जा कि व्रतार भग हानेम मद्द
 गार हे उसका समझने टूट करना चाहिये। यहापर सम्यक्त्व
 ७ और वारह व्रतांक १० कमादानर १० मल्लेखनात्रे ७ गध ८-
 अतिचार शास्त्रकारान व्रतलाये हे। किन्तु यह अतिचार प्रथम
 जैन नियमावलीम लिख गये थे वास्ते यहापर नहीं लिखा है।
 जिसका दखना हो यह " जैन नियमावली से देखे।

आनन्द गाथापति भगवान श्रीप्रभुने सम्यक्त्व मूर्त धारण
 व्रत धारण करके भगवानको वन्दन-नमस्कार करके बोला कि हे
 भगवान ! अब आज मैं सब धर्मका समझ गया हूँ। वास्ते आजस
 मुझे नहीं क्या जा कि अन्यतीर्थी श्रमण शाक्यादि तथा अन्यती
 र्थीयारि व्रत हरि, हर्षहरादि और अन्यतीर्थीयानि अग्निहोत्री
 प्रतिमा अपने द्वायत्यर्म अपन करज कर देय तरीक मान रखी
 है इन्ही तीनाको वन्दन-नमस्कार करना तथा श्रमणशाक्यादिका
 पहिरे धराना, एकवार या धार्यार उन्हांसे यातालाप करना और
 पहिलेकी माफिक गुरु समजत धर्मयुद्धिस आमनादिचनुविधाहा
 रका दना या दूमरगसे दिगना यह सब मुझ नहीं कल्पत है। परंतु
 इतना विशय है कि मैं ससाग्म वैरा हू वास्ते अगर (१) राजाके
 कहनेसे (२) गणसमूह न्यातके कहनेसे (३) यलय-तर कहनेसे
 (४) दयताओंके कहनेसे (५) मातापितादिक कहनेसे (६)
 मुखपुथक आज्ञाविका नहीं चरती हा। अथात् पेसी हालतमें
 किसी आज्ञाविकाके निमित्त उर काय करना भी पड़े यह न
 प्रकारक आगार है।

अब आनन्द धावक कहता है कि मुझे कल्प साजु-निग्रन्थ
 का फामुक, निर्जाय, निर्दाय अशन पान आदिम म्यादिम वस्त्रपात्र

केवल रजाहरण पीठ फलमशया सम्वागक औपध भैपज्ज देता हुआ विचरना । पमा अभिग्रह धारण कर भगवानको घन्दन कर प्रश्नादि पूछने अपने स्थानको गमन करता हुआ । आनन्द श्रायक अपने परपर जायके अपनी भायाँ मिथानन्दाको कहता हुआ । ॐ देवानुप्रिय ! मैं राज भगवान श्रीप्रभुकी अमृत दशना श्रयण कर सम्यक्त्व मूल धारण व्रत धारण किया है धाम्त तुम भी भगवानको घन्दन कर धारण व्रत धारण करा । मिथानन्दा अपने पतिको वचन सहण श्योकार कर स्नान-मन्त्रन कर शरीरको धस्त्रामूप जोस अलकृत कर अपनी दामीया आदि परिहार सदित भगवानने निवृत्त आइ । घन्दन कर श्रायकके १२ व्रतोंको धारण कर अपने स्थानपर आर अपने पतिकी आशाका सुप्रत करती हुए ।

भगवानको घन्दन कर गौतमश्यामिने प्रश्न किया कि हे भगवन ! यह आनन्द श्रायक आपसे पाम दीक्षा लेगा ? भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम ! आनन्द दीक्षा न लेगा, किन्तु उहुतमें वर्ष श्रायक व्रत पाठके अन्तमें अनशन कर प्रथम देवलोकमें अरुणनामका विमानमें उत्पन्न होगा । गौतमश्यामि यह सुनके घन्दना कर आत्मरमणताम रमण करत गे ।

भगवान् एक समय थाणीयाग्राम नगरसे उथानसे विहार कर अन्य देशमें विहार करते हुए विचरने गे ।

आनन्द श्रायक जीव अजीव पुत्र, पाप, आश्रय, मकर, निर्जग, वध, मोक्ष आर क्रिया अधिकरणादिका जानकार हुआ जिमकी श्रद्धाको देखादिक भी क्षोभित न कर सक । याघत निजात्मामें रमण करत हुए विचरन लगा ।

आनन्द श्रायक उच्च वाटीय व्रत प्रत्याख्यानदि पालन करते हुए साधिक श्रौद्ध धर्म गुण कीये उसने याद एक

समय रात्रीस धमजागना करून ह्या यहा माममान ह्या वि म घाणीयाग्राम नगरम राजा उपराजा शठ मनापति आदिने मानने याग्य हु परन्तु भगवानक पाम झीथा तेनेका असमथ हु, घास्त कर मयादिय होत ही विस्तरण प्रकारका आस नादि तैयाग करवाथ यात जातिका बापुने उन्होका भजन करवावे ज्येष्ठ पुत्रका कुटुम्बर आधारभूत स्थापन कर म उक्त काहाक मन्त्रियशमे अपन मकानपर जाऊ भगवानम प्राप्त किये हुने धममे मेरा आत्मा क त्याग करता हुआ थिचर। एमा विचार कर पर्यादिय एानपर घट ही कीया, अपन ज्येष्ठ पुत्रका चरका कागभाग सुप्रन कर आप साहाय मन्त्रियशमे जा पहुचा। अथ आनन्द श्रायक उमी पौषधशायाका प्रमाजने कर उच्चार पामथण भूमिका प्रमा जने कर भगवान शीरप्रभुसे जा आमीक ज्ञान प्राप्त कीया ग उमर आठव रमणता करने लगा।

आनन्द श्रायक यहापर श्रायकरा ११ प्रतिमा (अभिग्रह विशप) का धारण करक प्रवृत्ति करन लगा। इन्हाका विस्तार शीघ्रबाध भाग ४ म द्वा यावन माट पांचवप तक तपश्चर्या करक शरीरका कृश बना दीया अर्थात् शरीरका उस्थान बल कमयीय ओर पुरुषाथ तिलकूल कमजार हो गया, तब आनन्द श्रायकने विचारग कि अथ अतिम अनशन 'मलेखता' करना ठीक है। यम, आनन्दन आलाचना करके-आशन करके अठारा पापस्थान और त्याग आहागका पचवान कर आत्मध्यानमे रमणता करता हुआ। शुभाभ्यसनाय-अच्छे परिणाम प्रदस्त ऐशा हानेमे आनन्दका अवधिज्ञान टपन्न हुआ मा पूव पश्चिम और म्भिण दिशा लयणममुद्रम पाचमा पाचमा योजन क्षेत्र और उत्तरम चूटनेमघनत पर्यंत तक ठंखने लग गया। उभय मौधर्मदे-

बल्कि आर अथा रत्नप्रभा नरकके लोटुच पान्थडाक चागसा
हजार वर्षोंकी स्थितिबाले नरकावासका देखने गग गया ।

उस समय भगवान धीरप्रभु दुतिपलामाघानम पधारे । उन्हां
के समीप रहनेबाले गौतमस्यामि जिन्हांका शरीर गौर रण,
प्रथम सहनेन मस्थान, मात हाथ टेहमान, न्याग ज्ञान चौदहपूर्व
पाग्यामि, छठतपसी तपश्चया करनेबारे एक समय छठतपसे
पारणे भगवानकी आज्ञा लेके याणीयाग्राम नगरमें समुदार्णा
भिक्षा कर जालाक सन्निवेशसे पाम हाके पीछा भगवानक पास
आ रहे थे । इतनेमें गौतमने सुना कि भगवान धीरप्रभुका शिष्य
आनन्द धाचक अनशन किया है यह घान सुन गौतमस्यामि
आनन्दके पास गये । आनन्दने भी गौतमस्यामिको आने सुने दे-
खके हर्षसे सात्रवन्दन-नमस्कार किया और बोला कि हे भगवान
' मेरी शक्ति नहीं है वास्ते आप अपना चरणकमल नजीक कर
गये। ताके मैं आपके चरणकमलका स्पर्श कर मेरा आत्माका पवित्र
कर । तब गौतमस्यामिने अपना चरणकमल आनन्दकी तर्फ कीया
आनन्दने अपने मस्तकमे गौतमस्यामिके चरण स्पर्श का अपना
जन्म पवित्र किया । आनन्दने प्रश्न किया कि हे भगवान गृहावा
समे रहा हुआ गृहस्थोंको अधधिज्ञान होता है ? गौतमस्यामिने
उत्तर दिया कि हे आनन्द गृहस्थोंकोभी अधधिज्ञान होता है ।
आनन्द घाग कि हे भगवान मुये अधधिज्ञान हुआ है जिसका ज-
रिये में पूर्व पश्चिम आर दक्षिण इन्ही तीना दिशा दक्षणममृष्टमें
पाचमो पाचमो योजन तथा उत्तर दिशामें चुल हेमयन्त पर्यंत नक्ष
उध्व मौधमकल्प, अधो रत्नप्रभा नरकका लालुच पान्थटा देखता
हु । यह सुनके गौतम स्यामि बोलेकि हे आनन्द ! गृहस्थका इतना
विस्तारबाला अधधिज्ञान नहीं होता है वास्ते हे आनन्द ! मम वा-

तका आलोचना कर प्रायश्चित्त लेना चाहिये । आनन्दन कहा कि न भगवान् ! क्या यथा वस्तु देख उतना कहनेवालेका प्रायश्चित्त आता है अर्थात् क्या मन्त्र यात्रनयागका भी प्रायश्चित्त आता है । गौतमशास्त्र कि = आनन्दसत्य यात्रनयागका प्रायश्चित्त नहीं आता है । आनन्दन कहा कि मन्त्र यात्रनयागको प्रायश्चित्त नहीं आता हा ता ह भगवान् ! आपही इस स्थानका आगचन कर प्रायश्चित्त ला । इतना सुन गौतमस्यामिका शका हुए । तत्र मीधाही भगवानक पाम जाने सर याता कही । भगवानने परमाया कि हे गौतम तुमही इस यातका आलोचना करा । गौतमस्यामि आलोचना करके आनन्द श्रायकके पाम आये और श्रमत्क्षामणा करके अपन स्थानपर गमन करते हुए ।

आनन्द श्रायकन मात्र चौदह वष श्रायक व्रत पात्रा, साठ पात्र वष प्रतिमात्रा पालन किया अ तमें एक मासका अनशन कर समाधि सयुक्त यात्रकर सौधम नामका देवताकमें अरुणवै मानस च्छार पन्थोपमने स्थितिघाला देख हुआ । उही देवताका भव आयुष्य स्थितिका पुण कर व्रहामे महाविदेह शैत्रमें अन्द्रे उत्तम जाति-कुलके अन्दर जन्म धारण कर दृढपइनेकी माफीक शेषली धर्मका स्वीकार कर अनेक प्रकारक तपसयमसे कर्म भय कर वैद्यज्ञान प्राप्त कर मोक्षम जायेगा । इसी माफीक श्रायक पगश्रीभी अपने आत्म कल्याण करना । ॥३॥

इति आनन्द श्रायकाधिकार मन्त्रिस सार समाप्तम् ।



(२) अध्ययन दुसरा कामदेव श्रावकाधिकार ।



चम्पानगरी पुणेभद्र उद्यान जयशत्रुगजा, कामदेव गाथा-पति जोसके भद्राभार्या, अटाग फोड सोनैयाका द्रव्य-जिसमे ४ फोड धरतीमें, ३ फोडका व्यापार, ३ फोडकी घरघिघी और ४ घगे अर्थात् नाठ हजार गौ (गाया) यावन आनन्दकी माफीक थी-भगवान धीरप्रभुका पधारगा हुआ, राजा और नगरके लोक बन्दनकी गये कामदेवभी गया । भगवानने देशना ही । कामदेवन आनन्दकी माफीक स्वच्छा मर्यादा रखके सम्यक्त्व मूल धारण कर धारण किया । यात्रु अपने ज्येष्ठपुत्रका गृहस्थभाग सुप्रतकर आप पीपथशालामें अपनी आत्म रमणताम रमण करने लगे ।

एक समय अर्ध रात्रिके समयमें कामदेवके पास एक मिथ्याष्टि देवता उपस्थित हुआ, वह देवता एक पीशाचका रूप जो कि महान भयकर-देवनेसे ही कार्यरोंके कर्त्ता कर्त्त लगे जाता है, एसा गौत्र रूप प्रकियकविधसे धारण कर जहापर काम देव अपनी पीपथशालामें प्रतिमा (अभिग्रह) धारण कर बैठे थे, वहापर आया और बड़े ही क्रोधसे कुपित हो नैत्राको लाल रगये और निलाडपर तीनशर करके बोलता हुआ कि भो काम देव ! मरणकी प्रार्थना करनेवाले, पुन्यहीन कालीचतुर्दशीके दिन जन्मा हुआ, लक्ष्मी और अच्छे गुणरहित तु धर्म पुन्य म्यग और मात्रका कामी हो रहा है । इन्होंकी तुझे पीपासा लग रही है । इस बातकी ही तु आशक्षा रख रहा है परन्तु देव ! आज तेरेको तेरा धर्म जो शील व्रत पचगण पीपथ और तुमारा प्रतिज्ञामे

चलना-क्षाभ पामना-भंग करना तरेको नहीं कल्पता है। किन्तु मैं आज तरा धर्मम तुज शोभ करानेको-भंग करानेको आया हू। अगर तु तेरी प्रतिज्ञाको न छोड़ेगा तो देख यह मरा हाथमें नि लापल नामका तीक्ष्ण धारायुक्त खड्ग है इन्हींमें अभी तेरा खड खड करदुगा जीमने तु आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान करता हुआ अभी मृत्युको प्राप्त हो जायगा।

कामदेव ध्रायक पिशाचरूप देवका कटक और दारुण शस्त्र श्रवण कर आत्माक एक प्रदेश मात्रमें भय नहीं, घाम नहीं, उद्वेग नहीं, शोभ नहीं चलित नहीं, मध्यातपना नहीं जाता हुआ मौन कर अपनी प्रतिज्ञा पालन करता ही रहा।

पिशाचरूप देवन कामदेव ध्रायकका अक्षाभीत धमयान करता हुआ देखक और भी गुम्सारे नाय दो तीनघार उही घचन सुनाया। परन्तु कामदेव लगार मात्र भी श्राभित न हाकर अपने आमयाममें ही रमणता करता रहा।

मायी मिथ्यादृष्टि पिशाचरूप देवन कामदेव ध्रायकपर अत्यन्त माध करता हुआ उही तीक्ष्ण धारावाली तलवार (खड्ग) से कामदेव ध्रायकका खड खड कर दिया उस समय कामदेव ध्रायकको घोर वेदना-अत्यन्त वेदना अन्य मनुष्यासे महन करना भा मुश्कील है एसी वेदना हुई थी। परन्तु जिन्होंने चैतन्य और जडका स्वरूप जाना है कि मरा चैतन्य तो महा आनन्दमय है इहीका तो किमी प्रकारको तकलीफ है नहीं और तकलीफ है इन्ही शरीरका वह शरीर मरा नहीं है। यसा ध्यान करनेमें जो अति वेदना हो ता भी आर्त्तध्यानादि दुष्ट परिणाम नहीं हाते हैं। योतगायक शासनका यही ना महत्व है।

विशाखरूप देवन कामदेवको धमपत्रमें नहीं चंग हुआ देखके आप पौषधशालामें निकलकर विशाखरूपको छोड़के एक महान हस्तीका रूप बनाया। यह भी बड़ा भारी भयकर गीठ आग जिनकर दन्ताशुल यद्ये ही तीक्ष्ण थे। यावत् देव हस्तीरूप धारण कर पौषधशालामें आवे पहिलेकी माफीक योग्यता हुआ कि भा कामदेव ! अगर तू तैरा धर्मको न छोड़ेगा तो मैं अभी तैरेका इस मूठ द्वारा पकड़ आकाशमें धँक दगा और पीठ गीरते हुये तुमको यह मरा तीक्ष्ण दन्ताशुल है इनपर तैरेको पाँ दूगा आग धग्तीपर खुब गगड़गा तावे तू आर्तध्यान गीठध्याय करता हुआ मृत्यु धर्मको प्राप्त होगा। भेमा दो तीन देखे बहा, परन्तु काम-देव ध्रायक तो पूर्णयत् अटल-निश्चल आत्मध्यानमें ही रमण करता रहा भायना मये पूर्णयत् ही समझना।

हस्तीरूप देवन कामदेवको अगाम देखके बहाली प्राध करती हुआ कामदेवको अपनी मूठमें पकड़ आकाशमें उछाट दीया और पीछे गीरते हुयेका दन्ताशुलमें जैसे श्रीशुल्म पाँ दित है इसी माफीक पकड़के धग्तीपर गगड़के खुब तपरीक हो परन्तु कामदेवके एक प्रदेशया भी धर्ममें चरित करनेको देख समये नहीं हुआ। कामदेवने अपने चान्ने हुय कर्म समझके उन्ही उज्वल पेदाको सम्यक् प्रकारमें महन करी।

देवने कामदेवका अटल-निश्चल देखके पौषधशालामें नि-
 चर हस्तीके रूपका छोड़ वैमिय लन्धिते एक प्रचण्ड आशीर्विष
 सपका रूप बनाके पौषधशालामें आया। देखनेमें उडाही भयकर
 था, यह बोलने लगा कि हे कामदेव ! अगर तू तैरा धर्म नहीं
 छोड़ेगा तो मैं अभी इस विष सहित दाढाने तुजे मार डारुगा
 इत्यादि दुषचन बोला परन्तु कामदेव चिन्कुर शंभ न पाता

हुवा अटल-निश्चल रहा। दुष्ट देवने कामदेवको बहुत उपसंग किया परन्तु धर्मवीर कामदेवको एक प्रदश मात्रमें भी श्लाभित करनेको आखीर असमर्थ हुआ। देवताने उपयोग लगाकर देगा तो अपनी सब दुष्ट वृत्ति निष्फल हुई। तब देवताने अपना रूप छोड़ कर एक अच्छा मनाहर सुन्दरगाकार धन्नाभूषण भद्रित देव रूप धारण किया और आकाशक अन्दर स्थित रहकर गान्ता हुआ कि हे कामदेव ! तु धन्य हैं पुर्यं भयमें अच्छे पुण्य कीया है। हे कामदेव ! तु कृताय है। यह मनुष्य जन्मको आपने अच्छी तरहने सफल किया है। यह धर्म तुमको मीठा ही प्रमाण है। आपकी धर्मके अन्दर दृढता बहुत अच्छी है। यह धर्म पाया ही आपका सार्वक है। हे कामदेव ! एक समय सौधम देवताक की सौधर्मा मभाके अन्दर शम्भु-व्रते अपने देवताओंक वृद्धमें बैठा हुआ आपकी ताराफ और धर्मके अन्दर दृढताकी प्रशंसा करीयो परन्तु मैं मृदमति उस बातको ठीक नहीं समझके बहापर आवे आपकी परिक्षाके निमित्त आपकी भेने बहुत उपसंगे किया है परन्तु हे महानुभाव ! आप निर्भयकर प्रयत्नसे विचरु भी शोभा यमान नही हुवे। वास्ते मैंने प्रत्यक्ष आपकी धर्म दृढताको देखी है। हे आत्मवीर अरु आप मेरा अपराधकी क्षमा कर, उसी धारधार शमा याचना करता हुआ देव गाला कि अरु ऐसा शाय मैं कभी नहीं करगा इत्यादि कहता हुआ कामदेवको नमस्कार कर स्वर्गको गमन करता हुआ।

उपस्थात् कामदेव श्रायक निरुपसंग ज्ञानक अपन अभि प्रद (प्रतिगा) को पागता हुआ।

जिस रात्रीक अन्दर कामदेव श्रायकका उपसंग हुआ था

उसीके प्रभातकालमें सूर्यादिके घरत कामदेवको समाचार आया कि भगवान् वीरप्रभु पूर्णभद्र उद्यानमें पधारें हैं। कामदेवने विचार कि आज भगवान्को वन्दन-नमस्कार कर देशना श्रयण करके ही पौषध पाँगे। एसा विचार करते ही अच्छे सुन्दर वस्त्राभूषण धारण कर भगवान्का वन्दन करनेको गया। राजादि और भी परिपदा आइ थी। उन्होंने भगवान्ने जगतारक देशना दी। देशना देनके बादमें भगवान् वीरप्रभु कामदेव श्रावक प्रति बोले कि ते कामदेव! आज रात्रीके समय देवताने पिशाच, दम्नि और सर्प हम तिन रूपको बनाके तेरेको उपसर्ग किया था ?

कामदेवने कहा कि हाँ, भगवान् यह बात सत्य है। मेरेको तीना प्रकारसे देवने उपसर्ग किया था।

भगवान् वीरप्रभु उहुतसे अमण-निर्ग्रह-साधु तथा माध्वी-योंका आमन्त्रण करके कहते हुये कि हे आर्य ! यह कामदेवने गृहस्थाश्रममें रह कर घोर उपसर्ग सम्यक् प्रकारसे महन किये हैं। तो तुम लोगोंने तो दीक्षाव्रत धारण किये हैं और द्वादशागीके ज्ञाता हो आम्ने तुम लोगोंका देव, मनुष्य और तियन्त्रक उपसर्गको अथश्रय सम्यक् प्रकारसे सहा करना चाहिये। यह अमृतमय घचन श्रयण कर माधु माध्वीयानि विनय सहित भगवान्के शर्चाको म्थीकार किया।

कामदेव भगवान्का प्रश्नादि पूछ, वन्दन-नमस्कार कर अपने स्वान् प्रति गमन करता हुना। और भगवान् भी वहासे विहार कर अन्य तेशमें विहार करते हुये।

कामदेव श्रावकन १०॥ सठे चौदह उपे गृहस्थाश्रममें श्रावक धर्मका पालन किया और २॥ नाडेपाच उपे प्रतिमा रहन करी।

अन्तमें एक मामका अनशन कर आलोचना कर समाधिमें काल कर मौधमदेवशक्तिम अरुण नामका विमानमें च्यार पल्यापम स्थितियाला देख हुआ। वहासे आयुष्य पूर्ण कर महाविदेह क्षेत्रमें माभ जावगा ॥ इतिशम् ॥ २ ॥

—•f(⊙)३—

(३) अध्ययन तीसरा चुलनिपिताधिकार

बनारसा नगरी काएक उद्यान, जयशतु राजा राज करता था। उस नगरीमे एक चुलनिपिता नामका गाथापति बडाही धनाढ्य था। उसको शोभा नामकी भार्या थी। चौधौम प्रोडमोनै याका द्रव्य था। जिममें आठ फ्राड धर्तीमें, आठ प्रोड व्यापारमें और आठ प्रोडफा घर थीमिमें था। आर आठ वर्ग अथांत पसी हजार गौ (भार्या) थी। आनन्दक माफीक नगरीमे बडा माननीय था।

भगवान धीमप्रभु पधारं। राजा और चुलनिपिता धन्दन करनेको गये। भगवानने धमदेशता दी। आनन्दकी माफीक चुलनिपिताने भा स्वइच्छा परिमाण रखके श्रावक व्रत धारण कर भगवानका श्रावक बन गया।

एक समय पौपथशालामें ब्रह्मचर्य सहित पौपथ कर आत्म रमणता कर रहा था। अर्द्ध रात्रीके समय एक देवता हाथमें निलोत्पल नामकी तलवार ले के चुलनिपित श्रावक के पास आया ओर कामदेवकी माफीक चुलनिपिताको भी धर्म छोडने की अनेक धमकीया दी। परन्तु चुल० धर्ममे शोभायमान नहीं

हुवा। तब देवताने कहा कि अगर तू धर्म नहीं छोड़ेगा तो मैं आज तेरे ज्येष्ठ पुत्रको तेरे आगे मारके खड्ग कर रक्त, मेद, और मांस तेरे शरीरपर लेपन करदूंगा, और उसका शेषमांसका तुला बनाके तैलकी कड़ाहमें तेरे सामने पकाऊंगा। उसको देखके तू आर्तध्यान कर मृत्यु धर्मका प्राप्त होगा। तब भी चुलनिपिता क्षोभायमान न हुआ। देवताने एसाही अन्याचार कर लेखाया। पुत्रका तीनतीन खड्ग किया। तथापि चुलनिपिताने अपने आत्मध्यानमें रमणता करता हुआ उस उपमर्गको सम्यक् प्रकारसे सहन किया। क्योंकि देवताने धर्म छोड़ानेका साहस किया था। पुत्रादि अनन्तियार मीला है वह भी कारण सग्रन्थ है। धर्म है तो निजबन्तु है। चुलनिपिताका अक्षोभ देख देवताने पहले की माफीक कोषित होके दूसरे पुत्रको भी लाजे खड्ग किया, तो भी चुलनिपिता अक्षोभ होके उपमर्गका सम्यक् प्रकारसे सहन किया। तीसरी दूधे कनिष्ठ (छोटा) पुत्रको लाजे उमका भी खड्ग किया। तो भी चुलनिपिता अक्षोभ हो रहा।

देवने कहाकि हे चुलनिपिता ! अगर तू धर्म नहीं छोड़ेगा तो अब मैं तेरी माता जो भद्रा तेरे देवगुरु समान है उसको मैं तेरे आगे लाके पुत्राकी तरह अग्नी मारगा। यह सुनके चुलनिपिताने मोघा कि यह कोई अनार्य पुरुष ज्ञात होता है कि जिन्होंने मेरे तीन पुत्राका मार डाला। अब जो मेरे देवगुरु समान और धर्ममें सहायता देनेवाली भद्रा माता है उसको मारनेका साहस करता है तो मुझे उचित है कि इस अनार्य पुत्रको मैं पकड़ दूँ। ऐसा विचार कर पकड़नेको तैयार हुआ। इतनमें देवता आकाशमें गमन करता हुआ। और चुलनिपिताके हाथमें एक स्थभ आगया और कोराहल हुआ। इस हेतु भद्रा

माता पापधशालामे आर बोली कि हे पुत्र ! क्या है ? चुलनि-
पिताने सय यात यही । तब माता बोली कि हे पुत्र ! तेरे पुत्राका
किमीने भी नहीं भाग है किन्तु काह देवता तुझे श्रांभ करनेकी
आयाथा उमन तुझे उपमग किया है ! ता हे पुत्र ! अथ तु जा
रात्रीमें घोलाहर कीया है उससे अपना नियम-व्रत पापधया
भंग हुया है धाम्त इसकी आलाचना कर अपने व्रतका शुद्ध
करना । चुलनिपिताने अपनी माताका घचनको म्थीकार कीया ।

चुलनिपिताने माटाचीठह घप गृहस्थाधामर्म रहवे श्रावक
व्रत पाला, माटेपाथ घप इग्यारे प्रतिमा यहन करी, अन्तमें एव
मासका अनसन कर समाधि सहित धाणकर सौधर्म देवलोकमें
अरुणप्रभ नामका देवविमानमें च्यार पल्योपमकी म्थितियाना
देव हुया है । घणसे आयुष्य पूणकर महाविदेह क्षेत्रमें मनुष्य
हो दीक्षा ले कबलज्ञान प्राप्त हो मोक्ष जायेगा ॥ इतिशम ॥ ३ ॥



(४) चौथा अध्ययन सूरादेवाधिकार

यतारभी नगरी काएक उद्यान जयशत्रु राजा था । उस नग
रीमें सूरादेव नामका गायपति था । उमको धन्ना नामकी भाया
थी । कामदेवके माफीक अठारग घाड द्रव्य आर साठ हजार
गार्या थी । किसीने भी पराजय नहीं हो सका था ।

भगवान धीरप्रभु पधारे । राजा प्रजा और सूरादेव बन्दनकी
गया । भगवानने धर्मदेशना दी । सूरादेवने आनन्दके माफीक
स्यइच्छा मयादा कर सम्यक्त्व सूत्र वारह व्रत धारण किया ।

एक रोज सुरादेव पौषधशालामें पौषध कर अपना आत्मध्यान कर रहा था ।

अर्ध रात्रीके समय एक देवता आया । जैसे चुलनिपिताया उपसर्ग कीया था इसी माफीक मृगदेवकी भी कीया । परन्तु इन्होंने परेव पुत्रया पाच पाच गड किया था और चौबीसवाक कहने लगा कि अगर नु तेरा धर्म नहीं छोड़ेगा तो मैं आज तेरे शरीरमे जमगममगादि साह्र उडे गेग है यह उत्पन्न कर दूगा । यह सुनके सुरादेव चुलनिपिताकी माफीक पकड़नेको प्रयत्न किया । इतनेमें देवने आकाशगमन किया । हाथमें म्थभ आया । फोलाहाल सुनरे धम्रा भाषाने कहा है स्वामिन ! आपके तीना पुत्र धरम सुन है परन्तु कोई देवने आपका उपसर्ग किया है थायत् आप हम स्थानकी जागेचना करना हम यातकी मृग-देवने म्थीकाक करी ।

सुरादेव श्रावकने सादेचौदह थर्प ग्रहस्यावामम रह कर श्रावक व्रत पाला, साडेपाच थर्प तक इग्यारे प्रतिमा घहन करी । अन्तमें जागेचना कर एक मामका अनशन कर समाधिपूवक काल कर माधर्मदेवलाकमें अरुणकन्त नामका प्रैमानमे स्याम परयोपमकी स्थितिजाग देयता हया । यथाने महाविदेहक्षेत्रमे मोक्ष जायेगा ॥ इतिशम ॥ ४ ॥



(५) पाचवा अध्यायन चुलगतकाधिकार.

आलभीया नगरी, मगधनोधान, जयशशु राजा था । उस नगरीमें चुलगतक नामका गाथापति प्रसता था । उसकी राजकुल

नामकी भाया थी और अठाग्ह कांडका द्रव्य, साट हजार गायीं यायत् बडाही धनाथ था ।

भगवान घोरप्रभु पधारे । राजा, प्रजा और चुलशतक बन्द-नकी गये । भगवानने अमृतमय देशना दी । चुलशतक आनद का माफीक स्वइच्छा मयादा कर सम्यक्त्व मृत्यु वारह व्रत धारण कीया ।

चुलनिपिताकी माफीक इमधो भी देवताने उपमग कीया । परन्तु पकेक पुत्रके सात सात खड किया । चौथी बखत देवता कहने लगा कि अगर तू धर्म नहीं छोटेगा तो मैं तेरा अठारा थोड मोनैयाका द्रव्य इमी आलभीया नगरीक दो तीन यायत् बहुतसे रास्तेमें फँकदगा कि जिह्वाके जरिये तू आर्तभ्यान करता हुआ मृत्यु पायेगा ।

यह सुनक चुलशतकन पूबवत् पकडनेका प्रयत्न काया इतनेमें देव आकाश गमन करता हुआ । कौठाहल सुनके बहला भायाने कहा कि आपके तीना पुत्र घरमे सुते हैं यह कौर देवने आपको उपमग किया है । यास्ते इस बातकी आलोचना लेना । चुलशत-कने स्वीकार किया ।

चुलशतकन साठे चौदह वष गृहधामम श्राधकपणा पाला, साठे पाच वर्ष इग्याग प्रतिमा बहन कीया, अन्तम आलोचना कर एक माम अनमन कर समाधिमे फाल कर सौधम देवलोकके अरूणश्रेष्ठ वैमानमें न्याग पत्योपमकी स्थितिमे देवपणे उत्पन्न हुआ । बडासे आयुष्य पूर्णकर महाविदहमें मोक्ष जावेगा । इतिशत ॥ • ॥

(६) छद्म अध्ययन कुडकोलिकाधिकार

कपीलपुरनगर सहस्र आस्र उद्यान जयशत्रुगजा, उर्मोनग
गोमं कुडकोलिक नामका गाथापति उडाही धनान्ध वसता था।
उसको पत्नी नामकी भार्याथी कामदेवकी माफीक अठाग नौड
मौनया और माठ हजार गायी थी।

भगवान श्रीगुरु पचारे, राजाप्रजा और कुडकोलिक अन्ध
करनेका गया। भगवानने धमदेशना दी। कुडकोलिकने म्
इच्छा मर्यादाकर सम्यक्त्व मूळ गारह व्रत धारण कीया।

एक समय मध्याह्नकाकी उखत कुडकोलिक श्रावक
अशाक खाडीमें गयाथा, नामायिक करनेक इगदासे नामाकित
मुद्रिकादि उतावक पृथ्वी शींगपटपर रख्य भगवानक फग्माये
स्य धम चिंतन कर रहा था।

उस समय एक देवता आया। वह पृथ्वी शींगपटपर रखा
हुड नामाकित मुद्रिकादि उठाक देवता आकाशमें स्थित रहा
हुवा कुडकोलीका धायक प्रति पेसा घालता हुआ।

भा कुडकोलिया ! सुन्दर है मखरी पुत्र गोशाकाका धर्म
कयाकि जिन्हकि अन्धर उम्थान (उटना) कर्म (गमन करना)
बल (शरीरादिका) शीर्य (जीवप्रभाय) पुरपाकार (पुरपा
याभिमान) इन्होका आवश्यकता नहीं है। मय भाय नित्य है
अथात गाशाकाक मतमें भधितन्यताको ही प्रधान माना है धाम्ने
उत्स्थानादि क्रिया कर करनेकी आवश्यकता नहीं है। और भग
वान महावीर भ्यामिका धर्म अच्छा नहीं है कयाकि जिसके
अन्धर उत्स्थान कर्म, बल शीर्य और पुरपाकार धतगये हैं

अथात् सय कायकी सिद्धि पुरपाथसे ही मानी है थास्त ठाँप नहीं है ।

यह सुनकर कुडकालिक धायक बाला कि हे देव ! तरा कहना है कि गोशालाका धम अच्छा है आर वीरप्रभुका धम गराय है । अगर उत्स्थानादि बिना कायकी सिद्धि हाती है तो मैं तुमको पुछता हूँ कि यह प्रत्यक्ष तुमका देवता मरधी ऋद्धि मीली है यह उत्स्थानादि पुरपार्थसे मीली है या बिना पुरपाथसे मीली है ? यह प्रत्यक्ष तेरा उपभोगसे आइ है । देवने उत्तर दिया कि मेरेका यह ऋद्धि मीली है यह अनुस्थान यायत् अपुरपार्थसे मीली है । यायत् उपभागमें आइ है । आयक कुडकालिक योग कि हे देव ! अगर अनुस्थान यायत् अपुरपाथसे ही जा देवऋद्धि मीलती हा तो जिम जीवाका उत्स्थानादि नहीं है (एवेन्द्रियादि) उहाका देवऋद्धि क्यों नहीं मीलती है । इस थास्ते हे देव ! तेरा कहना है कि गोशालाका धम अच्छा और महावीर प्रभुका धम गराय यह सय मिश्या है अर्थात् झुटा है ।

यह सुनके देव थापस उत्तर देनेसे अममथ हुवा और अपनी भायतामें भी शका कक्षादि हुइ । शीघ्रतासे यह नामाकित मुष्टि फादि थापस पृथ्वीशीलापटपग ग्यक जिम दिशामे आया था उसी दिशामें गमन करता हुवा ।

भगवान श्रीरप्रभु पृथ्वी महलको पचित्र वरत हुय कपीलपुर नगरके महाराजाधानमें पधाने । कामदेवकी माफीक कुडकालिक धायक थादनकी गया । भगवानने धर्मकथा परमाइ । तन्पधान भगवानने कुडकालिक धायकको कहा कि हे मय्य ! वल मध्यान्हमें एक देवता तुमारे पास आया था यायत् हे धमणोपासक ! तुमने ठीक उत्तर देके उस देवता पराजय किया । कामदेवकी माफीक

भगवानने कुटकोलिक ध्रायकरी तारीफ करी । गार्डमें बहुतसे माधु माध्वीयाका आमन्त्रण करके भगवानन कहा कि हे आर्यो ! यह गृहस्थने गृहग्राममें रहने हुये भी हेतु इष्टान्त प्रभ्रादि करके अन्य तीर्थ अर्थात् मिथ्यायादीयोका परगनय क्रिया है । तत्र तुम गम ता हादशागरे पाटी हो यान्त तुमका तो विशेष मिथ्या यादीयाका परगनय करना चाहिये । इन्ही हितशिक्षाको मर्थ माधुआनि स्वीकार करी । पीठ कुटकोलिक ध्रायक भगवानसे प्रभ्रादि पुष्ट और धन्दन-नमस्कार कर अपने स्थान प्रति गमन कर्ता हुआ । और भगवान भी अन्य जनपद-देशमें विहार करते हुये ।

कुटकोलिक ध्रायकने साठेचौदह वर्ष गृहग्राममें ध्रायक व्रत पाटन किया और साठेपाच वर्ष प्रतिमा रहन रगी । मवाधिसार कामदेवकी माफीक कहना अन्तम आलोचना कर एक मामरा ननशा ममाधि सहित कालधर्म प्राप्त हुआ । यह मोधर्मदेवनेक क अम्णध्यज नामरा वैमानमें न्याग पल्योपम न्यतिगारा देव हुआ । घटास आयुष्य पूण कर महाविदेह क्षेत्रमें आनन्दकी माफीक मनुष्यभवमें दीया तैर तैरज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा ।

—+६(६)३+—

(७) सातवां अध्ययन शकडालपुत्राधिकार.

पोरामपुरनगर महल योयान जयशनुगजा, उम नन्दे नन्द शकडालपुत्र नामका गृमराग या उमको अग्रमिन्द्र नामकी भार्याकी नीन काड मानिया द्रव्य या । जिनमें नन्द शकडालपुत्राधिकारमें, एक कोड व्यापारमें एक कोड कर विशेषण श्री

एक यग अर्थात् दशहजार गायत्री थी। तथा शकडालपुत्रके पाग सपर याहीर पाचमो कुभकारकी दुषानेथी। उममें यहूतता नाकर-मजुर थे कि जिनमें कितनेकवा ता दिन प्रथे नाकरी टि जाति थी कितनेकको माम प्रति-यग प्रति नोकरी ही जाती थी यह यहूतसे नोकरा मे कीतनेक मट्टीके घडे, अधघड, झारी, गल जरा, आदि अनक प्रकारके धग्गन घनातेथे, कितनेक नाकर पोलासपुग्ध राजभागमें प्रैठके यह घडादि मट्टार धरतन प्रति दिन देवा करतेथे, इमीपर शकडालकुभकारकी आजोयिका चलतीथी।

शकडालकुभकार आजोयिका मतिथा अधान् गोशालाका उपामक था। यह गोशालेका मतके अथकी ठीक तौरपर ग्रहण कियाथा यायन् उमकी दाडहाड की मीजी गोशागके धममें प्रेमानुरागता हो रहीथी इतना हि नहीं यन्के ज्ञा अर्थ तथा पर मायं जानताथा ता एक गोशालाका मतका ही जानताथा, शेष सर्व धर्मपालका अनर्थ ही समझता था, गोशालेका धममें अपना आत्माको भावता हुआ भुवपथक विचरताथा।

एइदिन मध्याह्नक समय शकडालकुभकार अशोक याहीमें जाक गोशालेका मत था उमी माफक धम प्रथ तिमें बत रहा था। उम समय एक देवता शकडालके पास आया, यह देव आकाशमें रहा हुआ जिन्हाके पाधर्मि बुधर गमक रहीथी। यह देव शक डालकुभकार प्रति बोल्ता हुआ कि हे शकडाल ' महामहान जिसरो उत्पन्न हुआ है केवलज्ञान केवल दशन तथा भूत भयिष्य घतमानको जानने वाले, जिन=अग्निहत=केवली मयहा, प्रैत्रोक्य पजित देव मनुष्य असुरादिकी अर्पन धन्दन पजन करने योग्य, उपासना-सेवा-भक्ति कग्ने योग्य, या

चत् मोक्षके क्रामी, कल यहापर पधारेंगे । हे शकडाल ! उसका तुम घन्दना करना यावत् सेवा-भक्ति करके पाट, पाटला, मकान सस्तारक आदिका आमन्त्रण रना । ऐसा दो तीनघार कहवे यह देयता जिम दिशासे आयाथा उस दिशामे चला गया ।

दुसरे ही दिन भगवान वीरप्रभु अपने शिष्य मडल-परिया रसे युक्त पृथ्वी मडल पधित्र रते पोलामपुर नगरके गहार मह आगोछामें पधारे । राजा, प्रजा भगवानको घन्दन करनेको गये । यह बात शकडालको मालुम हुइ तत्र शकडाल गोशालाका भक्त होने पर भी स्नान कर सुन्दर वस्त्राभूषण सज बहुतसे मनुष्योंकी साथ ले के पोलामपुर नगरके मध्य बजारसे चलता हुआ भगवानके समीप आये । घन्दन नमस्कार कर योग्य स्थानपर बैठा । भगवानने उस विस्तारग्याली पग्गिपदाको धर्मदेशना सुनाइ जघ देशना समाप्त हुई तब भगवान । शकडालपुत्र तुभकार गोशालाके उपामत्रसे कहने हुए कि हे शकडाल कल अशोकवाडीमें तरे पास एक देयता आयाथा, उमने तुमका कहाथा कि कत्र महामहन्त आवेगा यावत् उन्हींको पाचसो दुकाना और शय्या सवागका आमन्त्रण करना । क्या यह बात सत्य है ? हा, भगवान यह बात सत्य है मुझे ऐसाही प्रहाथा ।

हे शकडाल ! देयताने गोशालाकी अपेक्षा नही कहाथा । इस पर शकडालने विचार किया कि जो अग्निहत=वेधली=मर्वज्ञ=हैं तो भगवान वीरप्रभु ही हैं । घास्ते मुझे उचित है कि मेरी पाचसो दुकानों और पाट पाटला शय्या मन्थारा भगवानसे आमन्त्रण कर । शकडालने अपनी दुकाना आदिकी आमन्त्रण करी और भगवानने भविष्यका लाभ जानके स्वीकार कर पोलामपुरके गहार पाचसो दुकानों और शय्या मथागका पडिहाग “ लेके पीछा देना ” ग्रहन करग ।

एक समय शकडाल अपने मकानक अन्दरसे बहुतसे मट्टीके धरतनोंको बाह्यार धूपमे रख रखाथा, उन्ही समय भगवान शकडालसे पुच्छा कि हे शकडाल ! यह मट्टीके धरतन तुमने कैसे बनाया है ? शकडालने उत्तर दिया कि हे भगवान पहिले हम लोग मट्टी लायेथे फीर इन्हाके साथ पाणा रागादिके मीलाके चक्रपर चडाके यह धरतन बनाये है ।

हे शकडाल ! यह मट्टीके धरतन तैयार हुआ है यह उस्थानादि पुरुषार्थ करनेसे हुये है कि विन पुरुषार्थसे ।

हे भगवान ! यह सब नित्यभाव है भवीतव्यता है इस्में उस्थानादि पुरुषार्थकी क्या जरूरत है ।

हे शकडाल ! अगर कोन पुरुष इस तरे मट्टीका धरतनोंकी कीसी प्रकारसे फोडे तोडे इधर उधर पैक दे चौंकीकर हसन करे तथा तुमारी अग्रमिता भायासे अत्याचार अथात् भोगविलास करता हो ता तम उन्ही पुरुषको पकटेगा नही दड करेगा नही यावत् जीवस भारेगा नही तत्र तुमारा अनुस्थान यावत् अपुरुषार्थ और सब भाव नित्यपणा कहना ठीक होगा, (ऐसा धरताव दुनियाम दीसता नहीं है । यह एक कीस्मकी अनीति अत्याचार है और जहापर अनीति अत्याचार हो वहापर धम जैसे हो सता है) अगर तुम कहागा कि मैं उन्ही नुकसान कता पुरुषको मारुगा पकडुगा यावत् प्राणस यात करुगा तो तगर क हना अनुस्थान यावत् अपुरुषार्थार सब भाव नित्य है यह मिथ्या होगा । तता सुनतेही शकडाल का ज्ञान हो गया कि भगवान परमात्त है यह सत्य है क्या कि पुरुषार्थ विना कीसी भी कार्यकी सिद्धि नही होती है । शकडालने कहा कि हे भगवान मेरी इच्छा है कि मैं आपके मुन्वाधिदमे विस्तारपूर्वक धर्म

श्रवण कर तब भगवानने शकडालका विस्तारने धर्म सुनाया । यह शकडालपुत्र गोगालेका भक्त, भगवान वीरप्रभुकी मधुर भाषासे स्वाद्वाट रहस्ययुक्त आत्मतत्त्व ज्ञानमय देशना श्रवण कर बड़े ही हर्षको प्राप्त हुआ, बोला कि हे भगवान! धन्य है जा गजेश्वरगदि आपके पाम दीक्षा ग्रहण करते है मैं कतना नमर्थ नही हु परन्तु मैं आपकी समीप श्रावक धर्म ग्रहण करना चाहता हू । भगवानन परमाया कि जैसे सुख हो वसा करो परन्तु धर्म कायमें विठम्य करना उचित नही है । तत्र शकडाल पुत्र कुभकारने भगवानके पाम आनन्दकी माफीक सम्यक्त्व मूल चारह व्रतका धारण कीया परन्तु स्वइच्छा परिमाण किया जिस्मे द्रव्य तीन कौड मोनैया तथा अग्रमिता भार्या आग दुकानादि माकरी ग्वी थी । शेष अधिकार आनन्दकी माफीक समझना । भगवानकी वन्दन नमस्कार कर पोलामपुरक प्रसिद्ध मय्य प्रजार ही के अपने घरपे आया और अपनी भाया अग्र मित्ताका कहा कि मैंने आज भगवान वीरप्रभुके पाम चारह व्रत ग्रहण कीया है तुम भी जाओ भगवानने वन्दन नमस्कार कर चारह व्रत धारण करो । यह सुनक अग्रमिता भी उडे ही धाम-धूम आडम्बरने भगवानका व वन करनेको गड और सम्यक्त्व मूल चारह व्रत धारण कर भगवानको वन्दन नमस्कार कर अपने घरपे आये अपने पतिकी आज्ञा सुप्रत करती हुई । अथ दम्पति भगवानके भक्त हो भगवानके धमका पालन करते खुवे आनन्दमें रहने लग । भगवान भी वहाँसे विहार कर अन्य देशमे गमन किया ।

शकडाक कुभकार और अग्रमिता भार्या यह दोन जीपार्जी

य आदि पदार्थक अच्छे ज्ञाता हो गये थे । और श्रायकप्रतका अच्छी तरहसे पालत हुए भगवानकी आज्ञाका पालन कर रहे थे ।

यह थाता गोशासनने सुनि कि शकडाल० घोरप्रभुका भगवन गया है तय वहास चलकर पोलालपुग्वा आया । उमका विचार था कि शकडालका समझाव पीछा अपन मतमें ले लेता । गोशालान अपने भंडापरण ग्वक सिधा ही शकडाल पुत्र श्रायकक पाम आया । किन्तु शकडाल श्रायकने गोशासनका आदर-मत्कार नहीं दिया, इतना ही नहीं किन्तु मतमें अच्छा भी नहीं समझा और युगया भी नहीं तय गोशासन विचारता कि इन्दीके दुकानों सिधाय काइ उताराकी जगा भी नहीं है इमक लिये अर भगवान महाघोर स्थामिका गुण विज्ञान करने क बिना अपनेका उतारनेको स्थान मीरना मुशकीर है । एसा विचार कर गोशाला, शकडाल श्रायक प्रति घाग-क्या शकडाल पुत्र ! यहापर महा महान आय थ ?

शकडाल बोला कि कौनसा महा महान ?

गोशालान कहा कि भगवान घोरप्रभु महा महान ।

शकडाल बोला कि कौन कारणसे महामहान ?

गोशाला घाग कि भगवान् महाघोर प्रभु उत्पन्न कयलज्ञान कयल दशनक धरनेवाले त्रैलोक्य पूजनाय यावन माभमें पधारन वाले हैं (जिमका उपदश है कि महणा महणों) वास्ते भगवान घोरप्रभु महामहान है ।

गोशाला बोला कि हे शकडाल ! यहा पर महागाप आय थ ?

शकडालने कहा कि कौन महागाप ?

गोशालाने कहा कि भगवान घोरप्रभु महागाप ?

शकडालने कहा किम कारण महागोप है ?

गोशालाने कहा कि समार रूपी महान् अटयी है जिस्में प्र-
हृतसे जीय, विनाशको प्राप्त हाते हुए छिन्न भिन्नादि परा १० दशा
को पहुचते हुये श्री धर्मरूपी टड हाथमें ले के सिधा सिद्धपुर
राटणके अन्दर ले जा रहे है थास्ते महागोप योगप्रभु है ।

गोशालाने कहा कि हे शकडाल ! यहा महामार्थवाह आये थ ?
शकडालने कहा कि कौन महामार्थवाह ?

गोशालाने कहा कि भगवान् योगप्रभु महामार्थवाहा है ।

शकडालने कहा कि कौस कारणसे ?

गोशालाने कहा कि समाररूपी महा अटयीमें प्रहृतस
जीय नामते हुये-यायन् विटुपत हुये श्री धर्मपथ पतलाते हुये
निवृत्तिपुरमें पहुचा देत है । थास्त भगवान् योगप्रभु महामार्थ
वाह है ।

गोशाला गीरा कि हे शकडाल ! यहा पर महाधर्मकथक
आये थ ?

शकडालने कहा कि कौन महाधर्म कथा कहनेवाले ।

गोशालाने कहा कि भगवान् योगप्रभु ।

शकडालने कहा कि किम कारणसे ।

गोशालाने कहा कि समारय अन्दर प्रहृतसे प्राणी नाश
पामते यायन् उ-मार्ग जा रहे है उन्हा श्री मन्मार्ग लगानेक
लिये महाधर्म कथा केहके धतुर्गति रूपी ससारमें पाव जन्नेवाले
भगवान् योगप्रभु महाधर्म कथाने केहनेवाले है ।

गोशालाने कहा कि हे शकडाल ! यहा पर महा निजामन्
आये थ ?

शकडाल ने कहा कि कौन महा निजामक ?

गाशालान कहा भगवान् वीरप्रभु महा निजामक ॥

शकडाल ने कहा किम कारणम् ?

गाशालान कहा कि ममार ममुद्रम यदुतसा जाय दुयत हुय का भगवान् वीरप्रभु धमरूपी नाथमें बेटाक नियतिपुरीक मन्मुख कर देते ह यास्ते भगवान् वीरप्रभु महा निजामक है ।

शकडाल याग कि ह गोशाला ! इम वयत तु मर भगवान् का गुणकीर्त्तन कर रहा है यथा गुण करनेस तु नितिन है विज्ञानवत है तो क्या हमारे भगवान् वीरप्रभु साथ विद्याद (शास्त्राथ) कर सकेगा ?

गाशालान कहा कि मैं भगवान् वीरप्रभु का साथ विद्याद करनेका समर्थ नहीं हू ।

शकडाल वाला कि किम कारणसे असमर्थ है ।

गोशाला याग कि हे शकडाल ! जैन काइ युवक मनुष्य यथान् यावत विज्ञानवत कडाकौशल्यमें निपुण मज्जुत स्थिर शरीरवाला होता है वह मनुष्य पलक, सूधर, रुकड, तीतर, भट कर गहाग, पाग्वा, काग, जत्रकागादि पशुवाक हाथ, पग पाख, पुच्छ, शृग, चम, रोम आदि जो जो अथयव पकडत है वह मज्जुत ही पकडते हैं । इसी माफीक भगवान् वीरप्रभु मेरे प्रभु २२ वृथगणादि जा जा पकडत है उहीमें पीर मुझ गालनेका अथकाग नहीं रहते है । अथात् उन्हाके आग मैं कौनसी चीज हू । धाम्ते २ शकडाल ! मैं तुमारे धमाचाथ भगवान् वीरप्रभुने साथ विद्याद करनेका असमर्थ हू ।

यह सुनकर शकडाल पुन आकर बोला कि हे गोशाला ! तु

आज माफ हृदयसे मेरे भगवानका यथार्थ गुण धरता है वास्ने में तुझे उतरनेका पाचसा दुकाणे और पाटपाटला शय्या तथा गयी आक्षा देता हू किन्तु धमरूप समझवे नहीं देता हू वास्ने जायो घुभकारकी दुकाणा आदि भोगधा (कामम लो) । धम । गोशाली उन्ही दुकाणा आदिकी उपभागमें लेता हुआ और भी शकडाल ग्रन्थे हेतु युक्ति आदिसे उहुत समझाया । परन्तु जिन्होंने आत्मधन्तु तत्त्वज्ञान कर पहचान लिया है । उन्हाका मनुष्यता क्या परन्तु देयता भी समथ नहीं है कि एक प्रदेष मात्रमें क्षोभ कर सत्र । गोशालकी मध उयुक्तियाको शकडाल धायक न्यायपूर्वक युक्तिया द्वारा नष्ट कर दी । यादमें गोशाला यहासे विहार कर अस्य क्षत्रोमें चला गया ।

शकडालपुत्र धायक उहुत काल तक धायक व्रत पा रते हुये । एक दिन पौषधशालामें पौषध किया था उन्ही समय आधी रात्रिम एक दय आया और चूलणी पिताकी माफीक तीन पुत्रका ग्रन्थेकका नी ना खड किया और चांथीधार अग्रमिता भाया जा धमत्रायोमे सहायता देती थी उन्हाका मारणेका देवन दो तीन दपे कहा तत्र शकडा रने अनार्य समझवे एकडनेरा उठा यात्रन अग्रमिता भार्या कात्र हल सुन मत्र पूर्वगत नाढाचौदा यष गृहस्थाधाममें धायक व्रत नाढापाच घण प्रतिमा अन्तिम आगेचनापूर्वक एक मानका अनशन कर समाधिमहित काल कर भीधमें देवलोकवे आरूण मूत धमानमें प्यार पन्यापमरी स्थितियाला देयता हुआ । यहासे आयुष्य पूण कर महाधिदेह क्षेत्रमें उत्तम जानी-चुग्में उन्पत्र ल कीर दीना लेंके उधरज्ञान प्राप्त कर मान जायेगा ॥ इतिशाम् ॥

(८) आठवा अध्ययन महाशतकाधिकार ।



राजग्रह नगर, गुल्शीला उद्यान, श्रेणिक राजा, उन्ही नगरमें महाशतक गाथापति उडा ही धनात्य था जिन्हकि रेवती आदि तेरा भायाया थी । चौथीस क्रोडका द्रय था, जिहोमें आठ क्रोड धरतामें, आठ क्रोड पैपारमें, आठ क्रोड घरविखगमें और आठ गातुल अर्थात् अमी हजार गायी थी । और महाशतकके रेवती भायाक वापक परम आठ क्रोड मोनैया और अमी हजार गायी दानमें आइ थी तथा शेष बारह भायाकाक वापके घरमें एकैक क्रोड मोनैया और दूग दूग हजार गायी दानमें आइ थी । महाशतक नगरमें एक प्रतिष्ठित माननिय गाथापति था ।

भगवान् शीरप्रभुका पधारणा राजग्रह नगरके गुणशील उद्यानमे हुवा । श्रेणिक राजा तथा प्रजा भगवानका वन्दन करनका गय । महाशतक भी वन्दन निमित्त गया । भगवानन देशना दी । महाशतकने आनन्दकी माफीक सम्यक्त्व सूत्र बारह ब्रह्मोच्चारण कीया, परन्तु चौथीस क्रोड द्रय और तर्ह भायाया तथा कासा पात्रम द्रय देना पीच्छा दुगुनादि लेना, गमा पैपार रखा, शेष याग कर जीवादिपदार्थका जानकार एा अपनि आत्मगमनकाक अ दूर भगवानकी आज्ञाका पालन करता हुवा धिचरने लगा ।

एक समय रेवती भाया रात्रि समय कुटुम्ब जागरण करता गमा धिचार किया कि इन्ही बारह शाक्याक कारणमे मैं मेरा पति महाशतकक साथ पाचा इन्द्रियाका मुख भामधिराम स्वत प्रतामे नहीं कर सकु, वास्त इन्ही बारह शाक्याको अग्निविष तथा शस्त्र प्रयोगमे नष्ट कर इन्हकि परक क्रोड मोनैया तथा

एकेक धर्म गायिका मैं अपने कर्जे कर मेरा भरतारके साथ मनुष्य साथी कामभोग अपने स्वतंत्रतासे भोगयती हुई गहु।

एसा विचार कर छे शोक्याका शत्रु प्रयोगसे और शोक्याको विप्रयोगसे मृत्युके धामपर पहुँचा दी अथान् माग डाली। और उन्हाका बारह फोडी द्रव्य और बारह गोकुल अपने कर्जे कर महाशतकरे साथमें भागविलाम करती हुई स्वतंत्रतासे रहने लगी। स्वतंत्रता होनेसे रेयतीनि, गाथापतिने माम मदिरा आदि भक्षण कराना भी प्रारम्भ कर दीया।

एक समय राजगृह नगरके अन्दर श्रेणिय राजाने अमागे पडह यज्ञयाया वा कि किसी भी जीवको कोई भी मारने नहीं पाये। यह बात सुनके रेयतीने अपने गुप्त मनुष्योंको योग्य कहा कि तुम जायो मेरे गायिके गोकुलमें प्रतिदिन दोग दोग घोणा (घाछरू) मेरेको ला दीया करो। यह मनुष्य प्रतिदिन दोग दोग घाछरू रेयतीका सुप्त कर देना स्वीकार किया, रेयती उन्हाका माम शोरा उनाके मदिराके साथ भक्षण कर रही थी।

महाशतक श्रावकसाधिक चौदा वर्ष श्रावक व्रत पालके अपन जेष्ठ पुत्रको घरभार सुप्त कर आप पौषधशालमें जाने धर्म साधन करने लग गया।

इदर रेयती मत्समदिगदि आचरण करती हुई काम विकारसे उन्मत्त बनके एक समय पौषधशालमें महाशतक श्रावकके पासमें आड ओग कामपिठिन होके स्वइच्छा श्रृंगारके साथ स्त्रीभाव अथान् कामक्रीडाके शब्दामे महाशतक श्रावक प्रतिबोलती हुई कि भो महाशतक तु धर्म पुण्य स्वर्ग और मोक्षका मोहो रहा है, इन्हाकि पिपामा तुमका लग रही है इसकी ही तुमका कक्षा लग रही है जिसमें तुम मेरे साथ मनुष्य सम्यन्धी काम

भाग नहीं भाग्यवादी है। परमा यद्यन सुनक महाशतक रचते
 यद्यनशो आदरमस्त्यार नदी दीया और धरणी नहीं और अ
 भी नहीं जानता मीर कर अपनी आत्मगमनतामें ही रमण क
 रगा। कारण यह सबे कर्मा की विरम्यना है अज्ञानक ज
 जीय क्या क्या नहीं करता है सब कृच्छ करता है। रेघतीने
 तीरधार कहा परन्तु महाशतकन पीलकृष्ण आन्तर नहीं क
 वास्तु रचनी अपन स्थान पर घरी गई।

महाशतकन धायकवि इत्याग प्रतिमा यदन क
 माता पाद्य धप तप धीर तपभया कर अपन शरीरका सुय
 त्त्व बना दीया अस्तिम आगेचना कर अनशन कर दा
 अनशनक अद्भुत गुभाध्ययशाया विशुद्ध परिमाण प्रशस्थ से
 होनसे महाशतकका अधधि ज्ञानात्पन्न हुआ। मा पूत्र प
 और दक्षिण दिशामें हजार हजार योजन और उत्तर दि
 चुन समयन पवन उत्थ मीधम दयलाक अथा प्रथम रन
 नग्यका शोच नामका पाद्यहाकि चौगामी हजार यर्षोकि मि
 तयके क्षेत्रको देखत रगा।

रेघती और भी उन्मत्त हाय महाशतक धायक अनशन
 वा कहा पर आइ और भी तप दा तीन चार अमभ्य भा
 भाग आयम्यण करी। रही समय महाशतकका पाद्य आया
 अधधिज्ञानसे दत्वक घोलाकि भर रेघती! तु आजस मात अ
 रात्रीमें अन्मय रागये जगिये आतंगेद्र ध्यानस अममा
 काय वरक प्रथम रनप्रभा तरकय लालुच नामक पाद्यडमे
 रामी हजार यर्षोकि स्थितियाले नैरियपन उत्पन्न हागी।
 यद्यन सुनक रेघतीको थडा ही भय हुआ थान पामी उद्भग
 हुआ विचार हुआ कि यह महाशतक मेर पर कृपित हुआ है

नाने मुझे कीमतुमोंत मारेगा घास्ते पीछी हटती हुई अपने स्थान चली गए। वम, रेयतीको मात गरीमें उक्त गोग ही के काट कर गोलुच पाथडेमें चौरामी हजार वर्षकी स्थितियाले नैगियापने नारकीमें उत्पन्न होना ही पडा।

भगवान वीरप्रभु राजग्रह नगरके गुणशीलोद्यानमें पधार गजाडि घन्दनरा आये, भगवानने धर्मदेशना दी। भगवान गौतम स्वामीको आमन्त्रण कर कहते हुये कि हे गौतम ! तुम महाशतक ध्रायकके पास जायें आर उन्हाका कहा कि अनशन रिये हुयेको मृत्य होने पर भी परमात्माका दुःख हो एमी कठोर भाषा बोलती तुमको नहीं कपे और तुमने रेयती भार्याको कठोर शब्द बाला है घास्न उन्हीकी आलोचना प्रतिप्रमण कर प्रायश्चित ले अपनी आत्माका निर्मल बनाया। गौतमस्वामीने भगवानके वचनोंको सधिनय स्वीकार कर घहासे चलके महाशतक ध्रायकके पास आये। महाशतक, भगवानगौतमस्वामीको आते हुए देख महपे घन्दन नमस्कार किया। गौतमस्वामीने कहा कि भगवान वीर प्रभु मुझे आपके लीये भेजा है घास्ते आपने नेत्रतीका कठोर शब्द कहा है इसकी आलोचना करे। महाशतकने आलोचन कर प्रायश्चित लेके अपनी आत्माका निर्मल बनाके गौतमस्वामी को घन्दन नमस्कार करी फिर गौतमस्वामी मध्य यजार होय भगवानके पास आये। भगवान वीर यहासे विहार कर अथ क्षेत्रमें गमन करते हुये।

महाशतक ध्रायक एक मासका अनशन कर अन्तिम न माधिपूर्वक काठ कर मौधम देयकेके अरण्यतमिक यमानमें प्यार पल्यापम स्थितियाले देयता हुया, घास्ते आयुष्य पूर्ण कर महापिदेह संयमें मोल जायेगा। इतिशाम।

(६) नववा अध्ययन नन्दनीपिताधिकार ।

माघन्थी नगरी कोटकोथान जयशतु राजा । उन्ही नगरीमें नन्दनीपिता गाथापती था उन्हाके अश्वनि नामकी भाया थी और बारह ऋड मानइयाका द्रव्य तथा चार गोकुल अर्थात् चालीस हजार गाया थी जैसे आनन्द ।

भगवान पधारे आनन्दकी माफीक श्रावक व्रत ग्रहण किये माधिक चाँदा धन गृहस्थावासमें श्रावक व्रत पात्रन कीये माढा पाच वष श्रावक प्रतिमा ग्रहन करी अन्तिम आलोचन कर एक मामका अनशन कर समाधिपूर्वक काल कर साधर्म देवलोकक अर्णप्रय वैमानमें चार पत्योपम स्थितिके देवता हुवा । वहासे आयुष्य पून कर महाविदेह श्रेत्रमे मोथ जावेगा । इतिशम् ।

—*(C)*—

(१०) दशवा अध्ययन शालनीपिताधिकार ।

माघन्थी नगरी काटकोथान जयशतु राजा । उन्ही नगरीमें शालनीपिता नामका गाथापति वसता था । उन्हाके फाल्गुनि नामकी भाया थी । बारह ऋड मानइयाका द्रव्य और चालीस हजार गाया थी ।

भगवान पधारे आनन्दकी माफीक श्रावक व्रत ग्रहण किये । माढा चाँदा धन गृहस्थावासमें श्रावक व्रत, माढा पाच वष श्रावक प्रतिमा ग्रहन करी अन्तिम आलोचन कर एक मामका अनशन कर समाधिपूर्वक काल कर साधर्म देवलोकमे अर्णकिल वैमानमें चार पत्योपमकी स्थितिमें देवतापणे उत्पन्न हुये वहा

मे आयुष्य पुर्ण कर महाविदेह क्षेत्रमें मोक्ष जायेगा नथथा और
दयाया श्रावकको उपमर्ग नही हुवा था । इतिशाम् ।

॥ इति दश श्रावकाका सत्तिप्ताविकार समाप्त ॥

ग्राम	श्रावक	भायानाम	व्यक्ती	गातुल (गाया)	वैमान नाम	ग्रामग
वाणायाम	आनन्द	सेवानन्द	१ क।ड	१००००	अश्व	
उम्गापुरी	कामदेव	भृगा	१८	०००	अश्वभ	दरुवन
बनाग्या	चुम्नापिता	सामा	१ ,	८०० ०	अश्वप्रभा	
बनाग्या	सुराव	श्रमा	१८	०००	अश्ववन्त	
आलभीया	कुलशतक	वदुग	१८	००	अश्वधेष्ट	
कपिलपुर	कुन्दोलीक	कृमा	१८ ,	१००००	अश्ववन्त	उपमर्ग
पाणमपुर	गकण्ड	अप्रमिता		१ ० ०	अश्वभूत	उपमर्ग
राजग	मन्नागतक	रुदयादि१	१	८०० ०	अश्ववन्त	उपमर्ग
गावर्था	नन्दनापिता	अन्ता	१ ,	१००००	अश्वप्रव	०
गावर्था	गार्लनापिता	फारगुनी	१	६० ००	अश्वशील	

आचार्य मन्वे वीरप्रभु हैं गृहवासमे श्रावक व्रत साढाचौडे
वष प्रतिमा साढापाच वर्ष पय मर्थ रोम वर्ष श्रावक व्रत पालन
कर एरेक मासका अनसन समाधिमें काटकार प्रथम मीधर्म देख
येकमे च्यार फल्योपमन्थिति महा विदेहक्षेत्रम मोक्ष जायेगा ।
इतिशाम्

इति उपामगदशाग सार सत्तप्त समाप्तम्

श्री अन्तगडदशागसूत्रका संक्षिप्त सार

(१) पहला वर्ग जिम्का दश अध्ययन है ।

प्रथम अध्ययन—उत्तुध आरंभ अतिम यादवकुम्भगार
 बालघातवागी बाधीममा तीधकर श्री नमिनाथ प्रभुके समयकी
 घात है कि इस जम्बुद्विपकी भाग्यभूमिके अन्वार नामास्य या
 रह याजन लम्बी नव योजन घाटी सुयण्ड काट र्नारि वंगरे
 गढमढ मन्दिर तारण दरवाज पाठ तथा उंच उंच प्रामाद माना
 गगनसही घाता न कर रहेहा और घट घडे शीखरवाले देवालय
 पर विजय विजयति पताकार्यापर अथलाकन किये हुय सिहा
 द्विके चिह्न जिन्हके डगर मारे आकाश न जाने उ ये दिशामें
 गमनकरतके पीछे अति यगसे जारही हो तथा दुपद चतुस्पद
 आर धन्न धाय मणि मानक मौता परयाग आदिसे समुद्र
 आर भी अनेक उपमा सयुक्त णसी हारामती (हारका) नामकी
 नगरीथी । यह नगरी धनपति-कुधेर द्यताकि कलाकीशक्त्यसे
 रची गइथी शास्त्रकार स्यारयान करते हैं कि यह नगरी प्रत्यभ
 दयलाक सदश माना अलकापुरी हो नियास कीया हा जनममु
 हक मनका प्रसन नत्रोकात्म करनघाती घडीही सुन्दराकार म्य
 रूपसे अपनी कीर्ति सुरलाक तक पहुचादीथी । नगरीके लोक थ
 डही ग्यायशील म्यमपत्नी सदागसेही सतोप रखतेथे घहनाक
 परद्रय लेनेमें पशु थ परस्त्री दरनेम अथे थ, परादिहा सुनन
 का बेर थे, परापवाद बोलनेका भुग थ, उही नगरीक अन्दर
 दडका नाम फल मद्दिर्गा थ शिखर पर ही देखा जाते थे और

बन्धका नाम औरताकि रेणी पर ही पाये जाते थे। यह नगरी क शोक मदैयरे लिये प्रमुदित चित्तसे कामअर्थधर्म साथ रन्ही स्यागं कायमे पुरुषार्थ करते हुए आनन्दपूर्वक नगरीकी शोभामें वृद्धि करते थे।

हारकानगरी क साहार पूरे और उत्तर दिशाके मध्य भाग इत्यानकीतमे निम्बर टुक गुफायां मेसरायां कन्दर्ग निशरणा और अनेक वृक्षरतायामे सुभाभनिक रेवस्तगिरि नामका पर्वत था।

हारकानगरी और रेवस्तगिरि पर्वत के बिचमें अनेक कुँव थायीं सर ब्रह्म और चम्पा, चमेगी, कतकि मोगरा, गुलाब, जाड, जुड, हीना अनार, दाडिम द्राक्ष, खजुर नारंगी, नाग पुनागादि युक्ष तथा शामरता अशोकठता चम्पकठता आर भी गुच्छा गुल्म रेह्लि तृण आदि लक्ष्मीमे अपनी छटाकीं दीयाने हुआ भागी पुरुषां का विलास आर योगिपुरपांका ध्यान ध्यान करने योग्य भानो मरुके टूमरा धनकि माफीक 'नन्दन धन नामका उद्यान था यह छर्हा मनुजे पत्र-पुत्रके लिये उडा-दा तार था।

उसी नन्दनधनोद्यानमें बहुतसे देवता देवीयां त्रिधाधर और मनुष्ययोके अपनी अग्तीका भक्त कर गतिव साथ रम नना करत थे।

उसी उद्यानक एक प्रदेशम अच्छ सुन्दर त्रिशाल अनेक स्था नापर तोरण रभासी मनोहर पुतयोयैमे मंडित सुरष्पीय यभका यक्षायतन था। यह सुरष्पीय यक्ष भी चौरकालका पुगणा था यहुतसे लोकीके धन्दन पुजन करने योग्य वा अगर भक्तिपूर्वक जो उन्हीका स्मरण करतेशे उन्हीके मनोकामना पूर्ण कर अच्छी

प्रतिष्ठाको प्राप्त कर अपना नाम 'द्वयमन्त्रे एमा विश्व-यापत्र
उर दीया था ।

उनी यथायतनक नजीकमें सुन्दर मूल स्वन्ध कन्द शाखा
प्रतिशाखा पत्र पुष्प फलसे नमा हुया श्रमको दुर करनवाला शी
तल छाया सहित आशाक नामका वृक्ष था । जीमके आश्रयमें दु
पद चतुपद पशु पंखी अति आनन्द करत थ ।

उनी अशोक वृक्षके नीचे मेघकी घटाके माफीक श्याम वण
सुन्दराकर अनेक चित्रविचित्र नाना प्रकारके रपासे अलङ्कृत
सिंहामनक आकार पशुशीला नामका पट था । इन्ही सबका
वणन उबघाई सूत्रसे देखना ।

द्वारका नगरीके अन्दर न्यायशील मूरधार धीर पण परा
क्रमी स्वभुजावोंने तीन पङ्की राज्यलक्ष्मीकी अपने आधिन कर
लीथी । मुरनर त्रिधाधरास पूजित जिन्हाका उज्वल यश तीन
राकमें गजना कर रहा था । उत्तरमें वैताल्यगिरि आर पूर्य
पश्चिम दक्षिणमे लयण समुद्र तक जिन्हाका राजतत्र चल रहा है
एमा श्रीकृष्ण नामका वासुदेव राजा राज कर रहा था । जिस
धमराज्यमे बड़े बट मत्स्यधारी महान पुरुष निवास कर रहे थ ।
जैमे कि समुद्रविजयादि दश द्मारण राजा, बलदेव आदि पच
महावीर, प्रद्योतन आदि भाटा तीन फौड केमरीय कुमर साम्य
आदि भाठ हजार दुदात राजकुमार ।

महामेनादि छपत्रहजार उलघन्त धर्म, धीरसेनादि एकत्रीस
हजार धीरपुरुष उगगरसेनादि सालाहजार मुगटबन्ध राजा हा

१ समुद्रविजय अशोक म्निमान, गागर, हेमवत अथर, धर पुष्प
अभिवद मुनेव की दाी भाइयोंसा नामराजोंने दत्तारणक नामन भालग्याया है ।

जरीमे रहते थे। रुखमणी आदि सोलाहजार अन्तेश्वर तथा अनेक सेना आदि अनेक हजारों गणकाया और भी बहुतसे राजेश्वर युगराजा तालवर माहरी कीटरी शेट इन्धशेट सेनापति मन्थ चहा आदि नगरीके अन्दर आनन्दमें निवास करते थे।

उसी द्वारकानगरीके अन्दर अन्धकाघृणि राजा अनङ्ग गुणासे शोभित तथा उन्हींके धारणी नामकी पट्टराणी मयाग सुन्दराकार अपने पतिसे अनुक्त पाचेन्द्रियोंका सुख भोगवती थी।

एक समय कि रात है कि धारणी राणी अपने सुने याग्य सजामें सुती थी आधी रात्री रुखनमें न ता पूर्ण जगृत है न पूर्ण निद्रामें है एसी अवस्थामें राणीने एक सुपेत मन्थोंके हावके माफीक सुपेत। सिंह आकाशसे उत्तरता हुआ और अपने मुहमें प्रवेश होता हुआ स्वप्नमें देखा। एसा स्वप्न देखते ही राणी अपनी सेजासे उठये जहा पर अपने पति कि सेजा थी वहापर आई। राजाने भी राणीका घडा ही सत्कार कर भद्रामन पर बैठनेके आज्ञा दि। राणी भद्रामन पर बेठी और समाधि के साथ बोली के है नाथ! आज मुझे सिंहका स्वप्न हुआ है इसका क्या फल होगा। इस घातको ध्यानपूर्वक ध्यान कर बोला कि हे प्रिया! यह महान् स्वप्न अति फल दाता होगा। इस स्वप्नमें पाये जात है कि तुमारे नय माम परिपूर्ण होनेसे एक शूरवीर पुत्ररनकी प्राप्ति हागी। गणीन राजाके मुगसे यह सुनके दोनों करकमल शिरपर चढाये प्रागी तथास्तु" राजाकी रजा होनेने राणी अपने स्थानपर चली गई और विचार करने लगी कि यह मुझे उत्तम स्वप्न मिला है अगर

१ पति और पत्नारी मया अलग जलग थी तयी हा आपस आपसमें स्नाननामका हमों वृद्धि हावी था नयी ता " अनि परिचयादज्ञा "

अप्र निद्रा लेनेमें काइ गराय स्वप्न हागा ता मेरा सुन्दर स्वप्न का फल चला जावेगा यास्त अय मुझ निद्रा नहीं लेनी चाहिये । किन्तु देवगुरुका स्मरण हो करना चाहिये । एसा ही कीया ।

स्वप्न अन्धवृद्धिण राजा उर्यादय दाने ही अनुचरामे कच गीकी अन्धा श्रगारकी सजायन करवार अप्र महानिमित्तक जाननेवाले सुपनपाठकाजा बुज्राये उहाका आदर मत्कार पूजा करे जा धारणी राणीका मिहका स्वप्न आया था उन्हाका फल पृच्छा । स्वप्नपाठकानि ध्यानपुषक स्वप्नका धयण कर अपने शास्त्राका अयगाहन कर एक दुमरेक साय विचार कर राजामे निरदन करने लग कि हे धरगधिप ! हमारे स्वप्नशास्त्रमें तीस स्वप्न महान् फल और बेयालीम स्वप्न सामान्य फलक दाता ये एय सय बहुतर स्वप्न है जिस्में तीसकर चप्रवर्तिकी माताया तीम महान् स्वप्नसँ चौडा स्वप्न देखे । धसुदेयकी माता मात स्वप्न देखे । बलदेयकी माता स्यार और मडलीक राजाकी माता एक स्वप्न देखे । हे नाथ ! जो धारणी राणी तीम महान स्वप्नक अदर्ने एक महान स्वप्न देगा है तो यह हमारे शास्त्रकी बात नि शक है कि धारणी राणीक गभदिन पुण होनेमे महान शम्भीर धीर अखिल पृथ्वी भाला आपके तुलमें तीलक प्रज सामाय पुत्ररत्नकी प्राप्ति होगी । यह बात राणी धारणी भी कीनातक अन्तरमें बैठी हुइ सुन रही थी । राजा स्वप्नपाठ काकी रात सुन अति हर्षित हो स्वप्नपाठकाकी प्रहृतसा द्रव्य दायी तथा भोजन कराके पुष्पाकी माला धिगेरा देके रजाना किया । प्रादभे राजाने राणीमे मत्र बात कही, राणी सद्य बात की स्वीकार कर अपने स्थानमें गमन करती हुई ।

राणी धारणी अपने गभजा पालन सुखपुषक कर रही है ।

तीन मासके बाद राणीको अच्छे अच्छे दोहले उत्पन्न हुये जिस्को राजाने आनन्दमे पुर्ण किये । नय मास नाडेसात रात्रि पुण होनेमे अच्छे ग्रह नक्षत्र याग आदिमे राणीसे पुत्रका जन्म हुआ है । राजाको खबर होनेमे केदीर्याको छोड दीया है माप तोल बढ़ा दीया या और नगरमे बडा ही महोत्सव कीया था ।

पहले दिन सुतीका कार्य किया, तीसरे दिन चन्द्रसूर्यका दर्शन, छठे दिन रात्रिजागरण, इग्यारमे दिन असूचिकर्म दूर किया, गार्हपत्ये दिन विन्तर्गण प्रकारके अज्ञान पान खादिम स्वादिम निपजाये अपने कुटुम्ब-न्याति आदिको आमन्त्रण कर भाजनादि करवाये उम राजपुत्रका नाम "गौतमकुमार" दीया । पचधायोसे वृद्धि पामतो यालमिडा करते हुये जय आठ वर्षका राजकुमार हो गया । तत्र विद्याभ्यासके लिये कृष्णचार्यके यहा भेजा और कलाचार्यको गृह्यतन्त्रा द्रव्य दिया । कृष्णचार्य भी राजकुमारको आठ वर्ष तक अभ्यास कराये जो पुरुषाकी ७२ कला होती है उन्होमे प्रथिन उनारे राजाको सुप्रत कर दिया । राजाने कुमारका अभ्यास आर प्राप्त हुई १६ वर्षकी युवका बन्धा देख विचार किया कि अब कुमारका विवाह करना चाहिये, जब राजाने पेंस्तर आठ सुन्दर प्रासाद कुमराणीयाके लिये और आठोंके विचमे एक मनोहर महल कुमारके लिये बनवाये आठ बडे राजाओंकी कन्याजा जो कि ज्येष्ठ, लक्ष्मण्यता, चानुर्यता, धर्म, प्रय तथा ६४ कलामे प्रविण, साक्षात सुरसुन्दरी यारे माफीय जिन्होंका रूप है एमी आठ राजकन्याओंके साथ गौतमकुमारका विवाह कर दिया । आठ कन्याओंके पिताने दात (दायजो) कितनी दियो जिस्का विवरण शास्त्रकारनि बडा ही विन्तारसे किया है (देवो भगवतीसूत्र महावलाधिषार) एषमी

माणु (१९२) घोलाको दायचो जिन्हाकी प्रौडा सांनैयाकी किमत है एसी राजलीलामें दम्पति देवताधोंकी भाफीक कामभोग भोग यने लग । ताकं यह भी मालम नहीं पडता था कि यप, मान तीर्थी और धार कोनसा है ।

एक समयकी बात है कि जिन्हाका धमचक्र आकाशमें धल रहा है । भाभडल अज्ञान अन्धकारको हटाके ज्ञानोद्योत कर रहा है । धर्मध्यज नभमें ल्हेर कर रही है लूषणकमल आगे चल रहे हैं । इन्द्र और करोडा देवता जिन्हाके चरणकमलकी सेवा पर रह है एसे याधीममा तीर्थकर नेमिनाथ भगवान अठारे सहस्र मुनि और चालीश सहस्र ना-धीयाके परिवारसे भूमड न्की पवित्र करते हुये द्वारकानगरीके नन्दनवनीयानको पवित्र करते हुये ।

पनपालकने यह खबर श्री कृष्णनरेश्वरको दी कि हे भूनाथ ! जिन्हाके दर्शनाकी आप अभिलाषा करते थे यह तीर्थ-कर आज नन्दनवनमें पधार गये है यह सुनके श्रीखडभोक्ता कृष्ण वासुदेवने साढेजारह लभ द्रव्य सुशीका दिया और आप मिहासनसे उठके घहापर ही भगवानको नमोन्थुण करके कहा कि हे भगवान ! आप सर्वज्ञ हो मेरी वन्दना स्वीकार करायें ।

श्रीकृष्ण छोटवालको बोलायक नगरी धगरनेका हुकम दिया और सेनापतिका बोलाके च्यार प्रकारकी मैना तैयार करनेकी आज्ञा देके आप स्नानमज्जन करनेको मज्जनधरमें प्रवेश करते हुये ।

इधर द्वारकानगरीके दोय तीन च्यार तथा बहुत वास्ते पकत्र होत हैं । घहा जनममुह आपस आपसमें वार्तालाप कर रहे थ कि अहो देवानुप्रिय ! श्री अरिहत भगवानके नाम गोत्र धषण

करनेका भी महाफल है तो यहाँ नन्दनयनमें पधारे हुये भगवानको घन्दन-नमस्कार करनेको जाना, देशना सुनना प्रश्नादि पुच्छना । इस फल (गम) का तो कहना ही क्या? घान्ते चरा, भगवानको घन्दन करनेको । यम ! इतना सुनते ही मय गीक अपने अपने स्थान जाये स्नानमञ्जन कर अच्छा २ बहुमूल्य आमू पण वस्त्र धारण कर कितनेक गज, अश्व, गथ, मेघिक, ममदानी, पिजम पाग्वी आदि पर और कितनेक पैदल चलनेको तैयार ना रहे थे । इधर बटे ही आडगरवे साथ श्रीरूण चार प्रका- रकी सैन्य लेके भगवानका घन्दनका जा रहा था ।

डाक्कानगरीके मध्य उजारसे बड़े ही उन्मवसे लोग जा रहे थे, उन्ही समय इतनी ती गडदी थी कि लोगका उजारमें ममावेश नहीं होता था । एक दुमरेको बोलानेमें इतना तो गुप्त शब्द हो रहा था कि एक दुमरेका शब्द पूर्ण तीरपर सुन भी नहीं सके थे ।

जिस समय परिपदा भगवानको घन्दन करनेको जा रही थी, उस समय " गौतमकुमार " अपने अन्तधरके साथ भोग- धिलास कर रहा था । जब परिपदाकी तफ द्रष्टिपात करते ही कचुकी (गगीकी खतर देनेवाला) पुरुषको बुलायके बोला-क्या आज द्वाग्जानगरीके बाहार किसी इन्द्रका महोन्मव है । नागका, यक्षका, मूतका, वैश्रमणका, नदी, पर्यत, तलाव, कुथा आदिका महोत्सव है ताक जनसमुह एक दिशामें जा रहा है ? कचुकी पुरुषने उत्तर दिया कि हे नाथ ! आज किसी प्रकारका महोन्मव नहीं है । आज यादवकुलक तीलक समान यायीशमा तीर्थकरका आगमन हुवा है, घास्ते जनसमुह उन्ही भगवानको घन्दन कर- नेको जा रहा है । यह सुनके गौतमकुमारकी भावना हुई के इतने

लोक जा रहे हैं तो अपने भी चर कर यहा क्या हो रहा है वह देखेंग।

आदेश करते ही रथकारद्वारा चार अश्वघाटा रथ तैयार हो गया, आप भी स्नानमज्जन कर यज्ञामूपणसे शरीरको अलकृत कर रथपर बैठने परिपदाये साथ हो गये। परिपदा पचाभिगम धारण करते हुये भगवानक समीकरणमे जाक भगवानका तीन प्रदक्षिणा देखे सय लोग अपने अपने योग्यस्थानपर बैठ गये और भगवानकी देशना पानकी अभिलाषा कर रहे थे।

भगवान् नेमिनाथ प्रभुने भी उम आइ हुई परिपदाका धर्म-देशना द्वा प्राग्भ किया कि हे भव्य जीवा ! इस अपार संसारक अन्दर परिभ्रमण करते हुये जीव नरक, निगोद, पृथ्वा अप, तेउ, वायु, धनस्पति और प्रसफायमे अनन्त जन्म-मरण किया है और करते भी है। इस दु खामि विमुक्त करनेमे अग्र-श्वर समकितदेशन है उन्हीको धारण कर आगे चारित्रराजाका संघन करो ताके संसारसमुद्रसे जलदी पार करे। हे भव्यात्मन ! इस संसारसे पार होनेके लिये दो नौका है (१) एक साधु धम (सवव्रत) (२) श्रावक धम (देशव्रत) दोनोंका सम्यक् प्रकारसे जाणके जैसी अपनी शक्ति हो उम स्वीकार कर इस्मे पुरुषार्थ कर प्रतिदिन उच्च धेणीपर अपना जीवन लगा देंग ता उमारका अन्त होनेमे किसी प्रकारकी देर नहीं है इत्यादि विन्तारपूयक धर्मदेशनाके अन्तमे भगवानने परमाया कि विषय-कपाय, राग-द्वेष यह संसारवृद्धि करता है। इन्हीको प्रथम त्यागो और दान, शील, तप, भाव, भावना आदिको स्वीकार करो, सबका माराश यह है कि जीतना नियम व्रत लेते हो उन्हीको अच्छी तरहसे पालन कर आराधीपदको प्राप्त करा तांके शिघ्र शिवमन्दिरमे

पहुँच जाये। शृणादि परिपदा अमृतमय देशना श्रवण कर अत्यन्त हर्षमे भगवानको घन्दन-नमस्कार कर स्वस्थान गमन करती हुई।

गातमकुमार भगवानकी देशना श्रवण करते ही हृदयकमलमें ममार्ककि अमारता भासमान हो गई। और विचार करने लगा कि यह सुख मैंने मान रखा है परन्तु ये तो अनन्त दुर्खाका एक बीज है इस विषमिधत सुखोंके लिये अमूल्य मनुष्यभयकों खां देना मुझे उचित नहीं है। एसा विचारके भगवानको घन्दा नमस्कार कर बोला कि हे प्रैलोक्य पूजनीय प्रभु! आपका धचनकि मुझे श्रद्धा प्रतित हुई और मेरे रोमरोममें रुच गये हैं मेरी हाड हाडकी मीजी धर्मरगनु रगाइ गई है आप फरमाते है एसाही इस ममार्कका स्वरूप है। हे दयालु! आप मेरेपर अच्छी कृपा करी हैं मैं आपके चरणकमलमे दीक्षा लेना चाहता हु परन्तु मेरे माता-पिताका पुछने मैं पीछा आता हु। भगवानने फरमाया कि 'जहासुखम' गौतमकुमार भगवानका घन्दन कर अपने घर पर आया और माताजीसे कहता हुआ कि हे माताजी! मैं आज भगवानका दर्शन कर देशना सुनी है जिमसे ससारका स्थरूप जानने मैं भय प्राप्त हुआ हु अगर आप आज्ञा देवे तो मैं भगवानक पाम दीक्षा ले मेरा आन्माका कत्याण कर। माता यह धचन पुत्रका सुनते ही मूर्छित हो धरतीपर गीर पड़ी दासीयोने शीतल पाणी और घायुका उपचार कर मचेतन करी। माता हृसीयाग होके पुत्र प्रति कहने लगी। कि हे जाया! तु मारे एक ही पुत्र है और मेरा जीधनही तरे आधारपर है और तु जो दीक्षा लेनेकी बात करता है यह मेरेको श्रवण करनाही कानोंको कटक तुल्य तु गदाता है। चम,। आज तुमने यह बात करी है परन्तु आइयासे हम एमी याने

लोक जा रहे हैं तो अपने भी चल कर यहा क्या हो रहा है यह देखेंग।

आदेश करत ही रथकारहाग च्यार अश्वयान्ग रथ तैयार हा गया, आप भी स्नानमज्जन कर घस्त्राभूषणसे शरीरको अशुद्ध कर रथपर बैठने परिपदाके साथ हा गये। परिपदा पचाभिगम धारण करतें हुए भगवानक समामरणमे जाक भगवानको तीन प्रदक्षिणा देक सब लोग अपने अपने योग्यस्थानपर बैठ गये और भगवानकी देशना पानकी अभिलाषा कर रहे थ।

भगवान नेमिनाथ प्रभुने भी उम आइ हुई परिपदाका धम-देशना दना प्रारभ किया कि हे भव्य जीवों! इस अपार समारक अन्दर परिभ्रमण करतें हुये जीव नरक, निर्गोद, पृथ्वा अप, तंड, वायु, वनस्पति और प्रसकायमे अनन्त जन्म-मरण किया है और करतें भी है। इस दु खासे त्रिमुक्त करनेमें अंग्र-श्वर समक्षितदशन है उन्हीको धारण कर आग चारिधराजाका सेवन करी ताके मसारसमुद्रसे जलदी पार करे। हे भयामन! इस संसारसे पार होनेक लिये दो नौका है (१) एक साधु धम (सर्वव्रत) (२) श्रायक धम (देशव्रत) दोनोंका सम्यक् प्रकारसे जानक जैसी अपनी शक्ति हा उसे स्वीकार कर इस्मे पुरुषार्थ कर प्रतिदिन उच्च श्रेणीपर अपना जीवन लगा देंगे तो नमारका अन्त होनेमें किसी प्रकारकी देर नहीं है इत्यादि विस्तारपूषक धमदेशनाक अन्तमे भगवानने फरमाया कि विषय-कषाय, राग-द्वेष यह ससारघृद्धि करता है। इन्हांको प्रथम त्यागो और दान, शील, तप, भाव, भावना आदिको स्वीकार करो, सबका सागश यह है कि जीतना नियम व्रत लेते हो उन्हांको अच्छी तरहसे पालन कर आगधीपदका प्राप्त करग ताके शिष्य शिष्यमदिरमे

पहुँच जाय। कृष्णादि परिपद्मा अमृतमय देशना श्रवण कर अत्यन्त हृष्ये भगवानको घन्दन-नमस्कार कर स्थस्थान गमन करती हुई।

गौतमकुमार भगवानकी देशना श्रवण करते ही हृदयक मर्ममें समारकि अमारता भाममान हो गई। और विचार करने लगा कि यह सुख मैंने मान रखा है परन्तु ये तो अनन्त दुर्खाका एक बीज है इस विषमिश्रित सुखोंने लिये अमूल्य मनुष्यभयको खो देना मुझे उचित नहीं है। एसा विचारके भगवानको घन्दन नमस्कार कर बोला कि हे त्रैलोक्य पूजनीय प्रभु! आपका वचनकि मुझे श्रद्धा प्रतिष्ठ हुई और मेरे गोमरोममें रुच गये है मेरी हाड-हाडकी मीजी धर्मरगसु रगाइ गई है आप परमात्मे हे एसाही इस समारका स्वरूप है। हे दयालु! आप मेरेपर अच्छी कृपा करी है मैं आपने चरणफलमे दीक्षा लेना चाहता हु परन्तु मेरे माता पिताको पुछने मैं पीछा आता हु। भगवानने फरमाया कि "जहासुखम्" गौतमकुमार भगवानका घन्दन कर अपने घर पर आया और माताजीसे कहता हुआ कि हे माताजी! मैं आज भगवानका दर्शन कर देशना सुनी है जिमसे समारका स्वरूप जानने में भय प्राप्त हुआ हु अगर आप आज्ञा देये तो मैं भगवानके पाम दीक्षा ले मेरा आत्माका कल्याण कर। माता यह वचन पुत्रका सुनते ही मूर्च्छित हो धरतीपर गौर पडी दासीयानि शीतल पाणी और वायुका उपचार कर सर्वतन करी। माता हुम्पीयार होके पुत्र प्रति कहने लगी। कि हे जाया! तु मारे एक ही पुत्र है और मेरा जीवनही तेरे आधारपर है और तु जो दीक्षा देनेकी बात करता है यह मेरेको श्रवण करनाही कानोंको कटक तुल्य दु सदाता है। चम, आज तुमने यह बात कही है परन्तु आइदासे हम एसी याने

सुनना मनसे भि नही चाहती है । जहाँतक तुमारे मातापिता जीव वहाँतक मसारका सुख भोगयो । जब तुमारे मातापिता कालधम प्राप्त हो जाय बाद में तुमारे पुत्रादिकि वृद्धि होनेपर तुमारा वन्छा हो तो खुशीसे दीक्षा लेना ।

माताका यह वचन सुन गौतमकुमार योग कि ह माता ! एमा मातापिता पुत्रका भव तो जीव अनन्तीयारकीया है इन्हामि कुछ भी कल्याण नही है और मुझे यह भी विश्वास नही है कि मैं पहला जाउगा कि मातापिता पहिले जायेगा अर्थात् कालका विश्राम समय मात्रका भी नही है वास्ते आप आज्ञा दो तो मैं भगवानक पाम दीक्षा ले मेरा कल्याण कर ।

माता बोली हे लालजी ! तुमारे याप दादादि पृथजाक मग्रह कीया शुवा द्रव्य है इ-हीको भागविलासके काममें ली और देवा गना जेमी आठ राजकन्या तुमरो परणाइ है इ-हाके साथ काम-भोग भोगवा फीर यात्रत् कुलवृद्धि होनेसे दीक्षा लेना ।

तुमार बोला कि ह माता ! मैं यह रही जानता हु कि यह द्रव्य आर स्त्रियां पहले जायगी कि मैं पहला जाउगा । कारण यह धन जोवन स्त्रियादि मय अस्थिर है और मैं ता धीरधाम करना चाहता हु वास्ते आज्ञा दो दीक्षा लेउगा ।

माता निराग हो गई परन्तु मोहनीकम जगतमें जधरदम्न है माता बोली कि हे लालजी ! आप मुझे तो छोड जाओगा परन्तु पहला खुब दीर्घदृष्टीसे विचार करीये यह निग्रन्थक प्रवचन एमे ही है कि इ-होका आराधन करनेवालाको जन्मजरा मृत्यु आदिमे मुक्तकर अक्षय स्थानको प्राप्त करा देता है परन्तु याद रगो सज्जम खाडाकी धारपर चलना है, वतुका कबलीया जेमा अमार है, म यणवे दान्तोंसे लोहाका घीना चायना है नदीके मामे पुर चलना

है समुद्रको भुजामे तीरना है हे यत्स ! साबु होनेके बाद शिर्षा लोच करना होगा । पैदल विहार करना होगा, जायजीय ज्ञान नहीं होगा घरघरसे भिक्षा मागनी पड़ेगी कप्री न मीलनेपर ' स तोष रम्गा पड़ेगा । लोगोंका दुर्बचन भी महन करना पड़ेगा आधाकर्मी उदेशी आदि दोष रहित आहार लेना होगा इत्यादि बायीस परिमह तीन उपसर्ग आदिका विघरण कर माताने खुब समझाया और कहा कि अगर तुमको धर्मकण्ठी करना हो तो घरमें रहने करला सयम पालना बडाही कठिन काम है ।

पुत्रने कहा है माता ! आपका कहना सत्य है सयम पालना बडाही दुष्कर है परन्तु वह कीसके लिये ? हे जननी ! यह सयम कायरीके लिये दुष्कर है जो इन्ही लोगके पुद्गलीक सुग्रीका अ भिलापी है । परन्तु हे माता ! मैं तेरा पुत्र हु मुझे सजम पालना किंचित् भी दुष्कर नहीं है कारण मैं नरक निगोदमें अनन्त दु ख सहन कीया है ।

इतना वचन पुत्रका सुन माता समज गई कि अत्र यह पुत्र घरमें रहनेवाला नहीं है । तत्र माताने दीक्षाका प्रडा भारी महोत्सव कीया जेमेकि यावत्पुत्र कुमारका दीक्षा महोत्सव वृष्ण-महाराजने कीया था (शातासूत्र अध्या० ७ वे) इमी माफीक वृष्ण थासुदेव महोत्सव कर गौतमकुमारका श्री नेमिनाथ भगवान् पामे दीक्षा करादी । विन्तार देखो शातासे ।

श्री नेमिनाथ प्रभु गौतमकुमारको दीक्षा देके हितशिखा दी कि हे भय्य ! अत्र तुम दीक्षित हुये हा तो यन्नासे हलनचलन आदि क्रिया करना ज्ञान ध्यानके सिधाय पक्क समय मात्र भी प्रमाद नहीं करना ।

गौतममुनिने भगवानका वचन सम्रमाण स्वीकार कर स्वल्प

समयमें स्थिररत्नीकी भक्ति कर इग्यारा अंगका ज्ञान कण्ठस्थ कर लिया। बादमें श्री नेमिनाथप्रभु द्वारकानगरीसे विहार कर अन्य जनपद देशमें विहार करते हुए।

गौतम नामका मुनि चौथ छठ अठमादि तपश्चर्या करता हुआ एक दिन भगवान् नेमिनाथका धन्दन नमस्कार कर अर्ज की कि हे भगवान्! आपकी आज्ञा हो तो मैं 'मासीक भिक्षु प्रतिमा' नामका तप कर, भगवान् ने कहा "जहासुखम्" पथ दो मासीक तीन मासीक यायत् बारहवीं पकराश्रीक भिक्षुप्रतिमा नामका तप गौतममुनिने कीया और भी मुनिकी भावना बढ जानेसे धन्दन नमस्कार कर भगवान् से अर्ज करी कि हे दयालु! आपकी आज्ञा हो तो मैं गुणरत्न ममत्नर नामका तप कर 'जहासुखम्' जय गौतममुनि गुणरत्न समत्तर तप करना प्रारम्भ कीया। पहले मासमें पक्वान्तर पारणा, दुसरे मासमें छठ छठ पारणा, तीसरे मासमें अठम अठम पारणा पथ यायत् सोलमे मासमें सोलार उपवासका पारणा पथ सोला मास तपश्चर्या कर शरीरको थोल्कुल शृष अर्थात् सूखा हुआ सर्पका शरीर भा फीक हलते चलते समय शरीरको हडीका अघाज जैसे काण्ठे गाडाकी भाफीक तथा सूजे हुये पत्ताकी भाफीक शब्द हा रहा था।

एक समय गौतम मुनि राश्रीमें धर्मचिंतवन कर रहा था उसी समय विचारा कि अब इस शरीरके पुद्गल बिलकुल कमजोर हो गये हैं हलते चलते घालते समय मुझे तकलीफ हो रही है तो मृत्युके सामने वेमगीथा कर मुझे तैयार हो जाना चाहिये अर्थात् अनशन करना ही उचित है। धन, सूर्यादिय होते ही

१ भिक्षुकी बारह प्रतिमाका विन्तागुप्तक विवरण दशांशुन स्वध सुनमें

५ है वरुण शीघ्रनाथ भाग बोधा।

भगवानसे अर्जुन करी कि मैं श्रीशत्रुजय तीर्थ (पर्यंत) पर जाके अनशन करू। भगवानने कहा ' जहासुख्यम् ' यत्न, गौतममुनि मर्घ माधुनाध्ययीको स्वमाके धीरे धीरे शत्रुजय तीर्थ पर स्थियरीके साथ जाके आलोचना कर सब रागद्वेषकी दीक्षा पालके अनशन कर दीया आत्मममाधिमें एक मासका अनशन पूर्ण कर अन्त समय वैश्वज्ञान प्राप्त कर शत्रुओंका जय करनेवाले शत्रुजय तीर्थ पर अष्ट कर्मोंसे मुक्त हो शाश्वत अत्यावाध सुखोंके अन्दर नादि अनन्त भाग सिद्ध हो गये। इति प्रथम अध्ययन।

इसी माफीक शेष नय अध्ययन भी समझना यहा पर नाम मात्र ही लिखते हैं। समुद्रकुमार १ सागरकुमार २ गभिरकुमार ३ स्तिमितकुमार ४ अन्यलकुमार ५ कपिलकुमार ६ अक्षोभकुमार ७ प्रश्नकुमार ८ विष्णुकुमार ९ पर यह दश ही कुमार अन्धक विष्णु राजा और धारणी राणीका पुत्र हैं। आठ आठ अन्तेयर और राजन्याग कर श्रीनेमिनाथ प्रभु पासे दीक्षा ग्रहण करी थी तपश्चर्या कर एक मासका अनशन कर श्रीशत्रुजय तीर्थ पर कर्मेशत्रुओंको दृष्टाये अन्तमें वैश्वज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये थे इति प्रथम वर्ग समाप्तम् ।



(२) दूसरा वर्ग जिसके आठ अध्ययन हैं।

अक्षोभकुमार १ सागरकुमार २ समुद्रकुमार ३ हेमचन्द्रकुमार ४ अचलकुमार ५ परणकुमार ६ धरुणकुमार ७ और अभिचन्द्रकुमार ८ यह आठ कुमारोंके आठ अध्ययन "गौतम" अध्ययनकी माफीक विष्णु पिता धारणी माता आठ आठ अन्तेयर न्यागने श्रीनेमिनाथ भगवान ममीके दीक्षा ग्रहण गुणरत्नादि अनेक प्रकारके तप

कर कुल सोला वर्ष दीक्षा पालन अन्तिम श्रीशत्रुजय तीथ पर एक मामका अनशन कर अन्तमें केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षमें पधार गये इति द्वितीयगके आठ अभ्ययन समाप्त ।



(३) तीसरा वर्गके तेरह अध्ययन हे ।

(प्रथमाध्ययन)

भूमिष भूषणरूप भद्रलपुर नामका नगर था । उस नगरके इशान कोणमें श्रीधन नामका उद्यान था और जयशत्रु नामका राजा राज कर रहा था वर्णन पूवकी माफीक समझना । उसी भद्रलपुर नगरके अन्दर नाग नामका गाथापति निवास करता था वह उडाही धनाढ्य और प्रतिष्ठित था जिन्होंने गृहगृगाररूप सुल्मा नामकी भार्या थी वह सुकोमल आर स्वरूपवान थी । पतिकी आज्ञा प्रतिपात्क थी । नागगाथापति और सुल्माके अगसे एक पुत्र जनमा था जिसका नाम ' अनययश ' दीया था वह पुत्र पाच धातृ जैसे कि (१) दूध पीलानेवाली (२) मज्जन क गनेवाली (३) मडन काजलकी टीकी उखाभूषण धारण करानेवाली (४) मीडा करानेवाली (५) अक-पक दुसरेके पास लेजानेवाली इन्ही पाचा धातृ मातासे सुखपुत्रके धृद्धि जैसे गिरिकदरकी लताओं धृद्धिका प्राप्ति होती है एसे आठवष निगमन दानने प्राद उसी कुमरकी कलाधायक यहा विद्याभ्यासके लीये भेजा आठ वष विद्याभ्यास करते हुये ७० कलामें प्रवीण हो गये नागगाथापतिने भी कलाचार्यकी बहुत द्रव्य दीया जब कुमर १६ वर्षकी अयस्या अर्थात् युवक उय प्राप्त हुआ तब मातापिताने यत्नीम

इस मैट्रोकी ३० घर तरुण जीवन लायण्य चानुर्यता युक्त घय सर्व कुमरने महेश देखके एकही दिनमें ३० घर कन्याओंके माथमें कुमरका पाणिग्रहण (विवाह) कर दीया उम्मी प्रतीम कन्याओंके पिताओं नागसेठका १५२ घालाका जैसे कि यत्तीम फ्रांड मोनइयाका, यत्तीम फ्रांड रुपइया, यत्तीम हस्तो, प्रतीम अश्र, रथ दाश दासीया दीपक मेज गाकल आदि बहुतमा द्रव्य दीया नागसेठके बहुओं पंगे लागी उममं यह सर्व द्रव्य बहुओंका दे दीया नागसेठने प्रतीम बहुओंके लीये यत्तीस प्रामाद और बीचमें कुमरने लीये थडा मनाहर महेल बना दीया जिन्होंने अन्दर यत्तीम सुरसु दरीयाँ साथ मनुष्य मंत्र धी पञ्चैन्द्रियके भोग सुखपूर्वक भागधने लग ।

यत्तीम प्रकारके नाटक हो रहे थे मर्दगके तिर फुट रह थे जिन्होंने काट जानकि मालम तब कुमरना नही पडती थी यह सब पूर्य किये हुये सुकृतके फल है ।

पृथ्वी मडठको परिग्र करते हुये राधीममा तीर्थकर श्री ने मिनाथ भगवान सपरियाग-भद्रठपुर नगरके श्रीयनोद्यानमे प धारे । राजा प्यार प्रसारकी मैनामे तथा नगर निवासी उडे ही आडम्बरके साथ भगवानका यन्दन करनेको जा रहे थे । उम समय अनजयशकुमर देखके गौतमकुमर कि माफीक भगवानको यन्दन करनेको गया भगवान की देशना सुन प्रतीस अन्तेयर और धनधान्य का त्यागके प्रभु पाने दीक्षा ग्रहण करके सामायि फादि चादे पर्य ज्ञानाभ्यास कीया । बहुत प्रकारके तप थया कर सर्व धीस सर्व कि दीक्षापालनकर अन्तमें श्री शत्रुजय तीर्थपर एक मामका अनमनकर अन्तिम वैचलज्ञान प्राप्त कर शान्धते सिद्धपद्का धरणीया इति प्रथमाध्ययन ।

इसी माफीक अनससेन (१) अनाहितसेन (२) अजितसेन (३) देवयश (४) शत्रुसेन (५) यह छैया नागसेठ सुग्मा शीठाणी क पुत्र है वत्तीस वत्तीस रभावाका न्याग नेमिनाथ प्रभु पासे दीक्षा ले चौदा पूर्य अध्ययनकर सर्व वीस वष दीक्षा व्रत पाल अन्तिम सिद्धाचलपर एक मासका अनसनकर घरम समय वेयलज्ञान प्राप्तकर मोक्ष गया इति छे अध्ययन ।

मानवा अध्ययन—द्वारका नगरीमें वसुदेव राजा के धारणी राणी सिंह स्वप्न सूचित-सारण नामका कुमरका जन्म पूषवत् ७२ कलाग्रघिण २० राजक-यायाका पाणीग्रहण पचाम पचास बोलका दत्त भोगविलाममें मग था। नेमिनाथप्रभु कि देशना सुण दीक्षा ले चौदा पूषवा ज्ञान । वीस वष दीक्षापालके अन्तिम धी सिद्धाचलजी पर एक मासका अनसन अन्तमें वयलज्ञान प्राप्तीकर माभ गये । इति सप्तमाध्ययन समाप्त ।

आठवाध्ययन—द्वारका नगरीके नन्दनवनीधानमे श्री नेमिनाथ भगवान समासरते हुये । उस समय भगवान्क छे मुनि मग भाइ सदशयचा वष वदेही रूपवस्तु नलजुवर (वैधमणदेव) सदश जिस समय भगवान पासे दीक्षा ली थी उमी दिन अभिग्रह किया था कि यावनजीव छठ तप-पारणा करना । जय उही छुर्वा मुनियाक छठका पारणा आया तव भगवानकि आज्ञा ले दो दो साधुआक तीन मंघाड हो व द्वारका नगरीका महान् यगधानसे निकल द्वारका नगरीमें समुदाणी भिक्षा करते हुये प्रथम दा साधुआका मिघाडा वसुदेव राजा कि देवकी नाम कि राणीका मकानपर आये । मुनियाका आते हुये देख के देवकी राणी अपने आसन से उठके सात आठ पग सामने गइ और भक्तिपूर्वक वन्दन नमस्कार कर जहाँ भात-पा

गीका घर था वहा मुनिको ले गइ उहा पर मिह केसरिया मोदक उज्यल भायनामे दान दीया यादमें सत्कारपूर्वक चिदा कर दीये । इतनेमें दुसरे सिंघाटे भि समुदाणी भिक्षा करते हुये देयकीराणीके मकान पर आ पहुचे उन्होंने भी पुर्वके माफीक उज्यल भायनामे सिह केसरिये मोदकका दान दे विसर्जन किया । इतनेमें तीसरे सिंघाटेवाले मुनि भि समुदाणी भिक्षा करते देय कीराणीके मकानपर आ पहुचे । देयकीराणीने पुर्वकी माफीक उज्यल भायनामे मिह केसरिये मोदकोंका दान दीया । मुनियर जाने लग । उम समय देयकीराणी नम्रतापूर्वक मुनियोंसे अज करने लगी कि हे स्वामिनाथ ! यह ऋण यमुदेयकी द्वायानगरी जो बारह योजनकि लम्बी नज योजनकि चौडी यावत् प्रत्यक्ष देवलोक सदश जिन्होंके अन्दर उडे घडे लोक नियाम करते है परन्तु आश्चर्य यह है कि क्या श्रमण निग्रन्थोंको अटन करने पर भि भिक्षा नहीं मिलती हे कि यह बार बार एक ही कुल (घर) के अन्दर भिक्षाके लिये प्रवेश करते है ?* मुनियोंने उत्तर दिया कि हे देयकीराणी ! ऐसा नहीं है कि द्वायानगरीमें साधुओंको आहारपाणी न मीले परन्तु हे श्राविका तु ध्यान दे रे मुन भद्र-लपुर नगरका नागशेठ और सुलभाभायाके हम छ पुत्र थे हमारे माता-पिताने हम उजों भाइयाकी बत्तीम बत्तीस इन्भ शेठाकि पुत्रोया हमकों परणाइयी दानके अन्दर १९२ बोलोंमें अगणित द्रव्य आया था हम लाग ससागके सुखोंमे इतने तों मन्त यन गये थे कि जो फाल जाता था उन्होंनेका हमलोगोंको ग्याल भी नही था । एक समय जादवकुठ श्रगाग राधीममा तिथकर नेमिनाथ

* मुनियान स्वप्रनाम जान लिया कि हमार दाय सिंघाटे भी पहला यहाम ही आहार-पाणी ले गय हगि वास्त ही वरगीराणान यत् प्रज कीया है ता अज उन्होंनेकी शकाका पूर्ण ही ममान वग्ना चाहीय ।

भगवान् ब्रह्मापरा पधारो ध उन्हां कि देशना सुन हम उँयों भाइ
 सत्तारने सुगोंकीं दु खाकि गान समझवे भगवान्ने पासमें दीक्षा
 ले अभिग्रह कर लिया कि याधन् जीव छठ छठ पागणा करना । हे
 देवकी! आज हम छयों मुनिराज छठने पारणे भगवान्कि आज्ञा
 ने द्वाराका नगरीके अन्दर समुदाणी भिभा करनेवां आये थे हे
 गार्! जो पण्ड दोय सिंघाडे जो तुमारे बहा आगये थे बह
 अलग है और हम अलग है अर्थात् हम दोय तीनवार तुमारे घर
 नहीं आये है । हम एक ही बार आये है एसा कहवे मुनि ना
 यद्दामे चलके उधानमें आ गये ।

गार् में देवकीराणीकीं एसे अध्यवसाय उत्पन्न हुवे कि
 पालामपुर नगरमें अमता नामके अनगारने मुझे कहा था कि हे
 देवकी! तु आठ पुत्राकीं जनम देगी बह पुत्र अच्छ सुन्दर स्वरू-
 पवाले जेने कि नल-कुंवर देवता महश होगी, दुसरी कोई माता
 हम भरतक्षेत्रमें नहीं है । जाकि तेरे जैम स्वरूपवान पुत्रकीं प्राप्ति
 करे । बह मुनिका बचन आज मिथ्या (असत्य) भाटम
 होता है क्या कि यह मरे खम्बुष ही ६ पुत्र देवनेमें
 आते है कि जो अभी मुनि आये थे । और मेरे तो एक
 श्रीकृष्ण ही है देवकीने बह भी विचार कीया कि मुनियांके
 बचन भी तो असत्य नहीं होत है । देवकी राणीने अपनी शफा
 निवृत्तन करनेकीं भगवान् नेमिनाथजीके पास जानेका इरादा
 कीया । तब आज्ञाकारी पुरुषोंकीं बुलवायके आज्ञा करी कि चार
 अश्वघाला धार्मीक रथ मरे लीये तैयार करो । आप स्नान मज्जन
 कर दासीयों नोकर घाकरीके बृद्धमें बडेही आढम्बरके साथ
 भगवान्की बन्दन करनेकीं गर विधिपुर्वक बन्दन करनेके बादमे
 भगवान् परमाने हुय कि हे देवकी! तु छे मुनियोंकीं देखके

अमन्ता मुनिके घचनमें अमत्यकी शका कर मरे पास पुछनेकी आइ है। क्या यह बात सत्य है? हाँ भगवान यह बात सत्य है मे आपसे पुछनेका ही आइ हु।

भगवान नेमिनाथ परमाते है कि हे देवकी ! तु ध्यान देके सुन। इसी भक्तश्रेष्ठमें भद्रपुर नगरके अन्दर नागमेठ और सुलसा भार्या निवास करते थे। सुलसाको बालपणमे एक निमन्तीयेने कहा था कि तु मृत्यु बालकको जनम देवेगी उस दिनमे सुलसाने हिरणगमसी देवकी एक मूर्ति बनाके प्रतिदिन पुजा कर पुष्प चडाके भक्ति करने लगी। एसा नियम बन लीया कि देव की पुजा भक्ति बिना किये आहारनिहार आदि कुछ भी कार्य नही करेगा। एसी भक्तिसे देवकी आराधना करी। हिरणगमसी देव सुलसाकी अति भक्तिसे सन्तुष्ट हुया। है देवकी ! तुमारे और सुलसाके साथही में गर्भ रहता था और साथही में पुत्रका जन्म होता था उसी समय हिरणगमपी देव सुलसाके मृत बालक नेरे पास रखके तेरा जीता हुया बालकको सुलसाको सुप्रत कर देता था। घास्ते दरअमल यह छर्था पुत्र सुलसाका नही किन्तु तुमारा ही है। एमे भगवानके घचन सुन देवकीकी बडे ही हर्षमतोप हुया भगवानको घन्दन नमस्कार कर जहाँ पर ठे मुनि था वहा पर आई उन्होंको घन्दन नमस्कार कर एक दृष्टिमे देखने लगी इतनेमें अपना स्नेह स्तना तो उत्सुक हो गया कि देवकीके स्तनोमें दुध बर्षने लगा और शरीरके रोम रोम वृद्धिको प्राप्त हो देह रीमाचित हो गई। देवकी मुनिआको घन्दन नमस्कार कर भगवानके पास आवे भगवानने प्रदक्षिणापुर्वक घन्दन करके अपने रथ पर बैठके निज आवास पर आगई।

देवकीगणी अपनि शय्याके अन्दर बेठीयी उन्ही समय

ठडकी है ? आदमी बोले कि यह सामल ग्राहणकी ठडका है
 कृष्णने कहा कि जाया इसको कुमारे अन्तेवर्गमें रख दो गजसुकु
 मालक साथ इसका ऋण कर दीया जायेगा । आजाकारी पुराणोंन
 सोमाके प्रापकी रजा ले सामाको कुमारे अन्तेवर्गमें रख दी ।

कृष्णवासुदेव गजसुकुमालादि भगवान समीप वन्दन नम
 स्कार कर योग्य स्थान पर बैठ गये। भगवानने धर्मदेशना दी ।
 भय्य जायों ! यह मसार अमार है जीव गगद्वेपके बीज बोके फीर
 नरक निगोदादीके दु खरूपी फलका आम्ब्यादन करते हैं ' खीण
 मत्त सुखा बहुकाल दु ख्वा " अणमात्रके सुखोंक लीये दीर्घकालक
 दु खोंका खरीद कर रहे हैं । जो जीव प्रात्यावस्थामें धर्मकार्य
 साधन करते है वह रानाके माफीक लाभ उठाते हैं जाजीव युवा
 यस्थामें धर्मकार्य साधन करते है वह सुवर्णकी माफीक और जा
 बुद्धावस्थामें धर्म करते है वह रुपेकी माफीक लाभ उठाते है ।
 परन्तु जो उम्मरभर्गमें धर्म नहीं करते है वह दालोद्रे लेके परमथ
 जाते है यह परम दु खको भोगत है। चास्ते हे भय्य ! यथाशक्ति
 आत्मकृत्याणमें प्रयत्न करो इत्यादि देशना श्रवण कर यथाशक्ति
 न्याग-प्रयारयान कर परिपदा स्थस्थान गमन करती हुई । गज
 सुकुमाल भगवानकी देशना सुन परम वैराग्यका धारण करता
 हुआ बोला कि हे भगवान् ! आपका परमाया सत्य है मैं मेरे मात
 पिताआसे पुछने आपके पास दीया लेउगा ? भगवानने कहा
 " जहामुखम् ' गजसुकुमाल भगवानका वन्दन कर अपने घरपर
 आया मातासे आज्ञा मागी यह यात श्रीकृष्णको मालूम हुइ
 कृष्णने कहा हे लघु धान्धव ! तुम दीया मत लो राज करो । गज
 सुकुमाल बोला कि यह राज, धन, मप्रदा सभी कारमी है और
 मैं अक्षय सुख चाहता हु अनुकूल प्रतिकूल उहुतसे प्रभु हुय
 परन्तु जिमको आतरीक वैराग्य हा उमको कोन भीटा सकत

। आखीरमें श्री कृष्ण तथा देवकी माताने कहा कि हे लालजी !
 अगर तुमारा एसाही इगदा हो तो नुम एक दिनका राज्यलक्ष्मी
 स्वीकार कर हमारा मनारथका पुरण करो। गजसुकुमालने मान
 ली। बटे ही आडम्यग्ने राज्याभिषेक करके श्रीकृष्ण गोला वि
 ब्रात आपकया इच्छते है ? आदेश दो गजसुकुमालने कहा कि
 क्षमीके भडारसे तीन ऋक्ष सोनइया नीकाऱ्ने दोलक्ष्मे रजा
 ण पाये और एक लभ हजमका दे दीक्षायोग प्रजाम करगया।
 ण नरेऱ्ग्ने महावलकी माफीक घटा भारी महोत्सव कराव
 मिनाथजीके पाम गजसुकुमालको दीक्षा विरा दी। गजसुखमाद
 नि श्यांसमिति यावत गुप्त प्रत्नचर्य पालन करने लगा। उमी
 रन गजसुकुमाल मुनि भगवानको घन्दन कर बोला कि ह सर्वव
 णकी आज्ञा हो तो मैं महाकाल नामके स्मशानमें जावे ध्यान
 कर। भगवानने कहा “जहासुख” भगवानको घन्दन कर स्मशा
 में जावे भूमिका प्रतिलेखन कर शरीरको किंचित् नमारे
 णधुकी वारहधी प्रतिमा धारण कर ध्यान करने लग गया।

इधर भोमऱ् नामका ब्राह्मण जो गजसुकुमाऱ्जीवे सुसग
 ण यह विद्यादने लिये समाधिके काष्टनृण दुर्घादि लानेका नगरी
 णहार पेहला गया था सर्व सामग्री लेके पीछा आ रहाथा वह
 हाकाल स्मशानके पामसे जाता हुआ गजसुकुमाल मुनिवो
 खा (उस वखत श्याम (मजा) काल हो रहाथा) देखते ही पुर्य
 र्यका तैर स्मरणमें होने ही क्रोधातुर हो बोला कि भो गजसुकु
 माल! हीणपुन्या अधारी घवदमके जन्मा हुआ आज तेरा मृत्यु
 णाया है कि मेरी पुत्री सोमाका यिनोही दुपण त्यागन कर तु
 शेर्का मुडावे यहा ध्यान किरता है एसा वचन धोऱ्के दिशा-
 शेकन कर मग्म मट्टी लाने मुनिके शिरपर पाल राधी मानोष

मुसगजी शिरपर एक नवीन पेचाही बधा रहा है। फीर स्म-
 शानमें खेर नामका काष्ठ जत्र रहाथा उन्हीका अगार लाके वह
 अग्नि गजसुकुमालक शिरपर धर आप बहासे चला गया। गज
 सुकुमालमुनिको अत्यन्त वेदना होनेपरभी सोमल ब्राह्मणपर
 लगारभी द्वेष नहीं कीया। यह सत्र अपने किये हुए कर्मोंकाही
 फल समझके आनन्दके साथ बरजाको चुका रहाया। पसा शुभा
 ध्ययसाय, उज्वल परिणाम, विशुद्ध होश्या, होनेसे न्यार घातीया
 कर्मका क्षयकर बचलज्ञान प्राप्ती कर अतगढ बचली हो अनन्त
 अव्यापध शास्त्रत सुखामि जाय धिराजमान होगये अर्थात्
 गजसुकुमालमुनि दीक्षा ले एकही रात्रीमें माथ पधार गय।
 नजीकमें गहनवाले देवतावांनि घडाही महोत्सव कीया पचवर्णक
 पुष्पों आदि ५ प्रव्यकि बपा करी और वह गीत-गान करने लग।

इधर सूर्यादय होतेही श्रीकृष्ण गज अमघारीकर छत्र धरा
 घाते बमर उडते हुये बहूतसे मनुष्योंके परिवारस भगवानका ब
 टन करनेको जा रहाथा। रहस्तेम एक वृद्ध पुरुष बडी तकरीफत
 साथ पकेक ईठ रहस्तेसे उठाके निज घरमें रखते हुयेका देखा।
 कृष्णका उन्ही पुरुषकी अनुकम्पा आइ आप हस्तीपर रहा हुया
 एक इट लेके उन्ही वृद्ध पुरुषके घरमें गयी पमा देखके सत्र
 लोकनि पकेक ईठ लेके घरमें रगनेसे यह सत्र इटोनी रासी प
 कही साथमे घरमें गयी गइ फीर श्री कृष्ण भगवानके पास जाके
 बदन नमस्कार कर इधर उधर देखते गजसुकुमालमुनि देखनेमें
 नहीं आया तत्र भगवानसे पुच्छा कि हे भगवान मेरा छोटाभाइ
 गजसुकुमाल मुनि कहा है म उहासे बदन कर ?

भगवानने कहाकि हे कृष्ण ! गजसुकुमालने अपना कार्य
 सिद्ध कर लिया। कृष्ण कहाकि वेसे। भगवानने कहाकि गज

सुकुमाल दीक्षा ले महाकाल स्मशानमें ध्यान धरा घटा एक पुरुष उन्ही मुनिकों सहायता अर्थात् शिम्पर अग्नि रख देणसे मोक्ष गया

कृष्ण बोलाकि हे भगवान उन्ही पुरुषने वैसे सहायता दी । भगवानने कहाकि हे कृष्ण ! जेसे तु मेरे प्रति घन्दनकों आ राहा था गहस्तेमें वृद्ध पुरुषकों साहिता दे के सुखी कर दीया था इसी माफीक गजसुखमालकों भी सुखी कर दीया है ।

हे भगवान् एसा कोन पुन्यहीन कालीचौदसका जन्मा हुआ है कि मेरा लघु प्राधयनों अकाल मृत्युधर्म प्राप्त करा दीया अब मैं उन्ही पुरुषकों वैसे जान सकू । भगवानने कहा हे कृष्ण तु द्वाग मतीमें प्रवेश करेगा उस समय यह पुरुष तेरे सामने आते ही भयभ्रात होके धरतीपर पडके मृत्यु पावेगा उसको तु समजना कि यह गजसुखमालमुनिका साज देनेवाला है । भगवानकों घन्दनकर कृष्ण हस्तीपर आरूढ़ हो नगरीमें जाते समय भाइकी बिताके मारे राजगहस्तेकों छोड़के दूसरे गहस्ते जा रहाथा ।

इधर सामन्त ब्राह्मणने विचारा कि श्रीकृष्ण भगवानके पास गये है और भगवान तो मर्ये जाणे है मेरा नाम बतानेपर नजाने श्रीकृष्ण मुझे कीम कुमौत मारेगा तो मुझे यहासे भाग जाना डीक है यहभी राजरहस्ता छोडके उन्ही रहस्ते आया कि जहासे श्रीकृष्ण जा रहाथा । श्री कृष्णको देखते ही भयभ्रात हो धरतीपर पडके मृत्यु धर्मके शरण हो गया श्री कृष्णने जानलियाकि यह दुष्ट मेरे भाइको अकाल मृत्युका साहाज दीया है फिर श्रीकृष्णने उन्ही मोमलके शरीरकी बहुत दुर्दशाकर अपने स्थानपर गमन करता हुआ । इति तीजा धर्मका अष्टमा गजसुकुमाउमुनिका अभ्ययन समाप्तम् ।

नरमाध्ययन-द्वारका नगरी बन्धुदेवराजा धारणी राणीके
निह स्वप्न । सूचित सुमुह नामका कुमारका जन्म हुआ कलाप्रविण
पचास राजकन्यावांसे साथ कुमारका लग्न कर दिया दत्तदायजो
गर्व गातमकि माफीक यावन भोगविलानाम मग्न हो रहाथा ।

श्री नेमिनाथ भगवानका आगमन । धर्म दशना ध्वण कर
सुमुह कुमार सत्सर त्याग दीक्षाव्रत ग्रहन कीया चौदा पूर्व ज्ञान
वाम वरुन दीक्षा व्रत एक मासका अनसन श्री शत्रुजय तीर्थपर
अन्तिम वैश्वज्ञान प्राप्त कर भाक्ष गया । इन्ही माफीक दशथा
ध्ययनमें दुमुहकुमार इग्यारवा ध्ययनमें कोपीदकुमार यह तीना
भाइ बलदेवराजा धारणी राणीके पुत्र दीक्षा लेके चौदाह पत्र ज्ञान
वास वर्ष दीक्षा एक मास अनसन शत्रुजय अतगढ केवली हो
भाक्ष गये । और नारदथा दारणकुमार तेरवा श्वनाधीठकुमार यह
वासुदेवराजा धारणीराणीके पुत्र पचास अन्तेपर त्याग दीक्षा ले
सुमुहके माफीक श्री निद्राचल तीर्थपर अतगढ केवली हो भोग
गया । इति तीजा वर्गके तेरवा अध्ययन तीजा वर्ग समाप्तम ।



(४) चौथा वर्गका दश अध्ययन ।

द्वारामती नगरी पूर्ववत् ध्वण करने योग्य है । द्वागमतीमें
बन्धुदेवराजा धारणी राणी सिंह स्वप्न सूचित जाली नामका
कुमारका जन्म हुआ मोहत्सव पूर्ववत् कलाचार्यने ७२ कलाभ्यास
जोवन वय ५० अन्तेपरसे लग्न दत्तदायजो पूर्ववत् ।

श्री नेमिनाथ भगवानकी देशनामुा दीक्षा तीनी द्वादशाग
का ज्ञान सोलावर्ष दीक्षापाली शत्रुजय तीर्थपर एक मासका अन
सन अन्तिम वैश्वज्ञान प्राप्तकर मोक्ष गया इति । इसी माफीक

(२) मयालीकुमर (३) उषपायालीकुमर (४) पुरुषसेन (५) धारि-
सेन यह पाचो वामुदेय धारणीसुत (६) प्रजुनकुमार परन्तु कृष्ण
राजा रूक्मिणी सुत (७) सम्भुकुमार परन्तु कृष्णराजा जयुवन्ती
राणीका पुत्र (८) अनिरुद्रकुमार परन्तु प्रजुन पिता वेदरथी
माता (९) मत्यनेमि (१०) द्रुनेमि परन्तु समुद्रविजय राजा
मेधादेयीके पुत्र हैं । यह दशों राजकुमार पचास पचाम अन्तेवर
त्याग बाधीशमा तीर्थकर पामे दीक्षा द्वादशागका ज्ञान सोले
थप दीक्षा शशुजय तीर्थ पर एक मासका अनशन अग्निम केवल
ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये इति चोर्थो ऽर्ग दश अध्ययन समाप्त ।



(५) पांचमा वर्गके दश अध्ययन

द्वारिका नगरी कृष्णवामुदेय राजा राज कर रहा था यावत्
पुषकी माफक समग्रता । कृष्ण राजाके पद्मावती नामकी अग्र
महिषी राणी थी । स्वरूप सुन्दराकार यावत् भागधिलास करती
आनन्दमें रहती थी ।

श्रीनेमिनाथ भगवानका आगमन हुआ कृष्णादि बडे ही ठाठ
स घन्दन करनेकी गये पद्मावती राणी भी गई । भगवानने धर्म-
देशना फरमाई । परिपद्दा श्रेयण कर यथाशक्ति त्याग वैराग कर
स्थस्थस्थाने गमन कीया, कृष्ण नरेश्वर भगवानको घन्दन नमस्का-
र कर अर्जकरी कि हे भगवान्त सर्व घन्तु नाशवान है तो यह प्र
त्यक्ष देयलाक सदश द्वारिका नगरीका विनाश मूल कीम कारण
से होगा ?

भगवानने फरमाया है धर्मधिप द्वारिका नगरीका विनाश

मदिरा प्रसंग द्विपायनक कारण अग्नि के योगसे द्वारिका नष्ट होगा ।

यह सुनके वामुदेवने बहुत पश्चात्ताप किया और विचारा कि धन्य है जालीमयानी यावत् दृढ नेमिको जो कि राज धन अन्तधर त्यागके दीक्षा ग्रहण करी । मैं जगतमें अधन्य अपुन्य अभाग्य जो कि राज अन्तधरादि कामभोगमे गृहीत हो रहा हु ताके भगवानके पाम दीक्षा लेनेमें असमय हु ।

कृष्णके मनकी बातोंको ज्ञानसे जानरे भगवान बाल कि क्युं कृष्ण तेरा दीलमें यह विचार हो रहा है कि मैं अधय अ पुन्य हु यावत् आतध्यान करता है क्या यह बात सत्य है ? कृष्णने कहा हाँ भगवान सत्य है । भगवानने कहा है कृष्ण ! यह बात न हुई न होगा कि वामुदेव दीक्षा ले । कारण सब वामुदेव पुर्ण भय निदान करते है उम निदानके फल है कि दीक्षा नहीं ले सके ।

कृष्णने प्रश्न किया कि हे भगवान ! मैं जो आरभ परिग्रह राज अन्तधरमे मुच्छित हुआ हु तो अब परमाइये मेरी क्या गति जागी ?

भगवानने उत्तर दिया कि हे कृष्ण यह द्वारिका नगरी मदिरा अग्नि और द्विपायनके योगसे विनाश होगी, उसी समय मानपिताको त्रिकाशनेके प्रयोगसे कृष्ण और बलभद्र द्वारिकासे दक्षिणकी वंठी मन्मुग्ग युधिष्ठिर आदि पाच पाडवा की पडु मथुरा होके वसुधी धनमें घड वृक्षके नीचे पृथ्वीशीला पटके उपर पीत बद्धसे शरीरको आच्छादित कर सुवेगा, उम समय जराकुमार तीक्ष्ण घाण घाम पावमे भारनेसे काट कर तीसरी बालुकाप्रभा पृथ्वीमें जाय उत्पन्न होगा ।

यह बात सुन कृष्णको उडा ही रज हुआ कारण मे पसी

साहिबीकाधाणी आखीर उमी स्थानमे जाउगा । पसा आत-
ध्यान कर रहा था ।

पसा आतध्यान करता हुआ कृष्णको देखते भगवान घोल
कि हे कृष्ण तु आतध्यान मत कर तुम श्रीजी पृथ्वीमें उज्वल
वेदना सहन कर अन्तर रहीत यहासे नीकलये इसी जम्बुद्वीपके
भरतक्षेत्रकी आवती उत्सर्पिणीमें पुट नामका जिनपद देशम
सत्यद्वाग नगरीमें 'गारहया अमाम नामका तीर्थकर होगा । यहा
रहुत फाल केधठपर्याय पाल मोक्षमें जायेगा ।

कृष्ण नरेश्वर भगवानका यह वचन श्रवण कर अत्यत हर्ष
सतोपको प्राप्त हो सुशीका मिहनाद कर हाथरसे गर्जना
करता हुआ विचार करा कि मैं आवती उन्सर्पिणीमें तीर्थकर
होउगा तो बीधारी नरकवेदना कोनसी गोनतीम है । महर्षे भ-
गवन्तको वन्दन नमस्कार कर अपने हस्ती पर आरूढ हो यहा
मे चलके अपने स्थान पर आया मिहामन पर विराजमान हो
आहाकारी पुर्णोंको बुलवाये आदेश कीया कि तुम जावे ।
द्वारिका नगरीका दोय तीन चार तथा बहुतना रस्ता एकत्र
मीले यहा पर उद्घोषणा करा कि यह द्वारिका नगरी प्रत्यक्ष
देवलोक सम्बन्धी है यह मदिग अग्नि और द्विपायनके प्रयोगमे
विनाश होगा वास्त जो राजा युगराजा शेट इ'भशेट सेनापति
मावत्ययहा आदि तथा मेरी राणीयों कुमार कुमारीयों अगर
भगवान नेमिनाथजी पास दीक्षा ले उन्होंको कृष्ण महाराजकी
आहा है अगर कीमीको कोई प्रकारकी सहायताकी अपेक्षा हा
तो कृष्ण महाराज करेगा पीछेले उद्दुम्बका मरण करना हो तो

१ वसुदेव इ'दि प्रथामे कृष्णका ३ भय तथा - नर भी गीगा है पान्तु
यहां तो अंतरा रगत नैकिक नैयकर राना रिवा है । नन्वमवलीगम्य ।

कृष्ण महाराज करेगा दीक्षाका महोत्सव भी बड़ा आडम्बर न कृष्ण महागज करेगा। द्वारका विनाश होगी वास्तव दीक्षा जन्दी ला।

पत्नी पुकार कर मेरी आज्ञा सुप्त कर। आज्ञाकारी कृष्ण महागजका हुक्मका मयिनय गिर चढार द्वारकामें उद कर आज्ञा सुप्त कर दी।

इधर पद्मावती राणी भगवानकी देशना सुन हृष-मंतोष होके बोली कि हे भगवान! आपका वचनमें मुझे भ्रष्टा प्रतिक आइ श्रीकृष्णका पुच्छमें आपके पास दीक्षा उगा। भगवानने कहा “ जहामुख

पद्मावती भगवानका वन्दन कर अपन स्थानपर आइ, अपने पति श्रीकृष्णको पुछा कि आपकी आज्ञा हो तो मैं भगवानकी पास दीक्षा ग्रहण कर ‘ जहामुख कृष्णमहाराजन पद्मावती राणी का दीक्षाका उडा भारी महोत्सव किया। हजार पुरुषस उठाने योग्य सेवीकामें बैठके उडा थरघोटाफ साथ भगवान् पास जाके वन्दन कर श्रीकृष्ण बालता हुआ कि हे भगवान! यह पद्मावती राणी मेरे बहुतही इष्ट थायत परमवल्लभा थी परन्तु आपकी देशना सुन दीक्षा लेना चाहती है। हे भगवान! मैं यह शिष्य नीरूपी भिक्षा देता हूँ आप स्वीकार कराव।

पद्मावती राणी बस्त्राभूषण उतार शिरलोच कर भगवानके पास आके गाली ह भगवान्! इस मसारेने अन्दर अलीता-प गीता लग रहा है आप मुझे दीक्षा दे मेरा कल्याण करे। तब भगवानने स्वयं पद्मावती राणीको दीक्षा दे यज्ञणाजी नाथिकी शिष्याणी बनाक सुप्त कर दी फिर यज्ञणाजीने पद्मावतीको दीक्षा-शिक्षा दी।

पद्मावती माध्व इर्यामिति यावत् गुप्त प्रह्लादचर्यं पाठ्यती
 यक्षणाजीके पान पकादशाग सूत्राभ्यास किया, फीर चौथ छठ
 अष्टमादि विस्तरण प्रकारसे तपस्या कर पूर्ण धीश धर्म दीक्षा
 प्राप्त कर मासका अनशन कर, अन्तिम वैचलज्ञान प्राप्त कर,
 अपना आत्माके कायको मिट्ट कर मोक्षमे विराजमान हो गई ।
 इति प्रथमा यजन समाप्त । इसी माफीक (२) गौरीगणी, (३)
 गधारीगणी (४) लक्ष्मणा, (५) सुसीमा, (६) जाग्रयती, (७) सत्य-
 भामा (८) स्वमणी यह आठों ऋणमहाराजकी अग्रमहिषी पट्ट-
 राणीया परमवल्लभ थी । यह नेमिनाथ भगवानर पान दीक्षा ले
 वैचलज्ञान प्राप्त कर मोक्षमे गई । (९) मूर्च्छी (१०) मूलदत्ता,
 यह द्वाय जाग्रयतीका पुत्र सायुकुमारकी राणीया थी । ऋणमहा-
 राज दीक्षामहात्म्य कर परमेश्वरके पान दीक्षा डीराई । पद्मा-
 वर्तीकी माफीक वैचलज्ञान प्राप्त कर लिया । इति पंचमधर्गक
 दशाभ्ययन समाप्त । पंचमधर्ग समाप्त ।



(६) छट्टा वर्गके सोलाध्ययन

प्रथम अध्ययन—राजगृह नगरके बहार गुणशीला नामका
 उद्यान था वहापर राजा श्रेणिक न्यायमपन्न अनेक राजगुणोमे
 संयुक्त था जिन्हके चेलणा नामकी पत्नी थी । राजतत्र चला
 नेमे वहा ही कुशल, शान, दाम, भेद, दडके ज्ञाता और युद्धि-
 निधान पत्ता अभयकुमार नामका मंत्री था । उसी नगरमे वहा
 ही धनाढ्य और लोगोमे प्रतिष्ठित पत्ता माकाह नामका गायक
 पनि निवास करता था ।

उसी समय भगवान धीरप्रभु राजगृह नगरके गुणशीला

चैत्यय अन्दर पधारे, राजा श्रेणिक, चेलणा राणी और नगरजन भगवानको घन्दन करनेका गये, यह बात माकाइ गाथापति श्रवण कर यह भी भगवानका घन्दन करनेका गये ।

भगवानने उस आइ हुई परिपदाको अमृतमय धर्मदेशना दी । श्रोतागण सुधारस पान कर यथाशक्ति न्याग-धैराग धारण कर स्वस्थान गमन किया । माकाइ गाथापति देशना सुन मसारावा असार जान कर अपन जेष्टपुत्रकी कुटुम्बभार सुप्रत कर भगवानके पास दीक्षा ग्रहण करी । माकाइमुनि इयांसमिति यायत् गुप्त ब्रह्मचर्यको पालन करता हुआ तथारूपके स्थिथर भगवतकी भक्ति धिनय कर पचादशागका ज्ञानाभ्यास किया । बादमे बहुतसी तपभर्या करते हुए महामुनि गुणरत्न सखत्सर तप कर अपने शरीरको जजरित बना दीया । सर्वे मोलाधपदीक्षा पालके अतिम धिपुल (व्यथहागगिरि) गिरि पर्यंतके उपर एक मासका अनशन कर बबलज्ञान प्राप्त कर शाश्वत सुखको प्राप्त हुये । इति प्रथम अध्ययन । इसी माफीक कियम नामका गाथापति भगवान समीपे दीक्षा ले व्यथहारगिरि तीर्थपर मोक्षप्राप्ति करी । इति दुमरा अध्ययन समाप्त ।

तीसरा अध्ययन—राजगृह नगर गुणशीला उद्यान, श्रेणिक राजा, चेलणा राणी वणन करने योग्य जेमे पूर्व कर आये थे । उसी राजगृह नगरक अन्दर अर्जुन नामका मागी रहता था जिहाके ३ धुमती नामकी भार्या अच्छे स्वरूपधन्ती थी । उमा नगरके बहार अर्जुन मागीका एक पुष्पाराम नामका बगचा था यह पच वणके पुष्पोरुपी लक्ष्मीसे अच्छे मुशोभीत था । उसी बगेचाके अति दूर भी नहीं अति नजीक भी नहीं एक मोगरपाणी यक्षका यक्षायतन था । यह अर्जुन मालीके चापदादा परदादा

आदि षडपत्रपरा चीन्कालसे उसी मोगरपाणी यक्षकी सेवाभक्ति करते आये थे और यत्र भी उन्हाकी मनकामना पुर्ण करता था ।

मोगरपाणी यक्षकी प्रतिमाने महाम्रपल लोहसे बना हुआ मुद्गल धारण कर रखा था । अर्जुनमाली बालपण्ये मोगरपाणी यक्षका परम भक्त था । उन्हाको मदैयके लिये एसा नियम था कि जत्र अपने घरसे प्रतिदिन बगचेमें जाये पाच घण्टेके पुष्प चुटके एकत्र कर अपनी बन्धुमती भार्या के साथ पुष्प ले मोगरपाणी यत्रके देवालयेमें जाके पुष्पा चढाके दीचण नमाके परिणाम कर फीर राजगृहनगरके राजमार्गमें घट पुष्पाका विक्रय कर अपनी आजीविका करता था ।

राजगृह नगरके अन्दर छे गोटीले पुरुष घस्ते थे, यह अच्छे और स्वराज्य कार्यमें स्वेच्छासे धीदार करतेथे । एक समय राजगृह नगरमें महीत्सव था ! घाम्ते अर्जुनमागी अपने घरसे पुष्प भरणेकी छावों ग्रहणकर पुष्प लानेकी अपनी बन्धुमती भार्याकी साथ ले बगचामें गयेथे । बहापर दम्पति पुष्पोंकी चुटके एकत्र कर रहेथे ।

उसी समय यह छे गोटीले पुरुष क्रीडा करते हुये मोगरपाणी यक्षके देवालयेमें आये इदर अर्जुनमाली अपनी भार्याके साथ पुष्प ले के मोगरपाणी यक्षके मन्दिरके तर्प आ रहेथे । जत्र छे गोटीले पुरुषोंने बन्धुमती मालणका मनीहर रूप देवके विचार किया कि अपने मत्र एकत्र हो इम अर्जुनमालीकी नित्रिड बन्धनसे बाध कर इम बन्धुमती भार्याके साथ मनुष्य-मयन्धी भोग (मैजुन) भोगये । एसा त्रिचार कर छे वों गोटीले पुरुष उस मन्दिरके किधादर अतरमे अनधीलते हुये गुपचुप छिपकर घेठ गये ।

इदरम् अञ्जुनमाली आर उ-पुमती भाया दाना पुष्प लक्षं
मोगरपाणी यक्षक पानमे आय । पुर्पाका र्त्र कर (घटाके)
अञ्जुनमा गी अपना शिर झुकाक य र्था प्रणाम करता था इत
नेमै तो पीच्छसे यह उ गोटीले पुरुष आके अञ्जुनमालीको पकड
निचिड (घन) उ-धनमे था-ध कर एक तर्फ डा- दीया ओर य-पु
मतीमालणके साथ यह लपट भोग भागयना (मँथुन कम मेघन
करने गग गये) शर कर दीया ।

अञ्जुनमाली उम अत्याचारका दग्ध धिचार कीयाकि मै
वालपणेसे इम मोगरपाणी यथ प्रतिमाकी सया-भक्ति करता हु
और आज मेरे उपर इतनी विपत्तपडने परभी मरी साहिता
नही करता है तो न जाणे मोगरपाणी यक्ष है या नही । मालम
होता है कि केंचठ काष्टकी प्रतिमाही घेठा गयी है इमी माफीक
देवपत्र अश्रदा करता हुआ निगश हो रहा था ।

इदर मोगरपाणी यथने अञ्जुनमालीका यह अध्यवसाय
जानक आप (यथ) मालीके शरीरमे आज प्रवेश किया । वम ।
मालीके शरीरमे यथका प्रवेश हाते ही यह उन्धन एकही साथमे
तुट पडे ओर जो महन्न पलमे उना हुआ मुद्रल हाथमे लेके उ
गोटीले पुरुष ओर सातवी अपनी भार्या उ-होंका चक्चुर कर
अकार्यका प्रत्यश्रम फ- देता हुआ परलोक पहुचा दिया ।

अञ्जुन मालीका उ पुरुष और सातवी स्त्रीपर इतना तो द्वेष
हो गया कि अपने शरीरमे यथ हानेसे सहस्रपलघाले मुद्रल द्वारा
प्रतिदिन उे पुरुष और एक स्त्रीको मारनेसे ही किंचित् सतोप
होता था अथात् प्रतिदिन सात जीर्वाकी घात करता था । यह
घात राजगृह नगरमे बहुतमे लोगों द्वारा सुनके राजा श्रेणिकने
नगरमे उद्घोषणा करा दी कि वाइ भी मनुष्य तृण, काष्ठ, पाणी

आदिके त्रिये नगरके पहार न जाय कारण यह अजुन माली यश इष्टसे मान जीर्षाकी प्रतिदिन घात करता है घाम्ने पहार जान-घातके शरीरको और जीवको नुकसान होगा घाम्ने कोई भी पहार मत जायो ।

राजगृह नगरके अन्दर सुदर्शन नामका श्रेष्ठी उमता था । यह बडा ही धनाढ्य और धायक, जीयाजीवका अच्छा ज्ञाता था । अपना आन्माज्ञा कल्याणके रमते धरत रहा था ।

उर्मा समय भगवान धीरप्रभु अपने शिष्यरत्नाके परिवारने भूमडलको पवित्र करते हुये राजगृह नगरके गुणशीलोद्या नमें समयसरण किया ।

अजुन मालीके भयके मारे बहुत लोग अपन स्थानपर ही भगवानको घन्दा कर आनन्दको प्राप्त हो गये । परन्तु सुदर्शन श्रेष्ठी यह घात सुनी कि आज भगवान धगेचेमे पधारे है । घन्दनको जानेके त्रिये मातापिताको पुछा तत्र मातापिताने उत्तर दीया कि हे ल्यात्रजी ! राजगृह नगरके पहार अजुनमाली मर्दय मान जीर्षाको मारता है । घाम्ने घहा जानेमें तेरे शरीरको पादा होगा घाम्ने मत्र त्रिंगाकी माफीक तु भी यहा ही रह क भगवानको घन्दन कर ले । यह भगवान् सर्वज्ञ है तेरी थडना स्वीकार करेंगे । सुदर्शनश्रेष्ठीने उत्तर दीया कि हे माता ! आज पवित्र दिन हे कि धीरप्रभु यहा पधारे है ता मैं यहा रहक घन्दन कने कर ? आपकी आज्ञा दा तो मैं तो घहा ही जायके भगवानका दर्शन कर घन्दन कर । जत्र पुत्रका बहुत आग्रहदेखा तत्र मातापिताने कहा कि जैसे तुमको सुय होये वैसे करो ।

सुदर्शनश्रेष्ठी स्नानमज्जन कर शुद्ध वस्त्र पहरेके पैदल ही भगवानका घन्दन करनेको चला, जहा मोगरपाणी यशका मन्दिर

बुद्ध कहने लगे कि अहो। इस पापीने मेरे पिताको मारा था कोई कहते हैं कि मेरी माताको मारी थी। काह कहते हैं कि मेरे भाई चंदेन औरत पुत्र पुत्री और सगे सम्बन्धीओका मारा था इसीसे कोई आक्रोष ध्वन तो कोई हीलना पथरसे मारना तर्जना ताडना आदि दे रहे थे। परन्तु अर्जुन मुनिने लगार मात्र भी उन्हां पर द्वेष नहीं किया मुनिने विचारा कि मैंने तो इन्होंके मध-धीयोंक प्राणोंका नाश किया है तो यह तो मेरेको गालीगुला ही दे रहे हैं। इत्यादि आत्मभायनासे अपने चन्धे हुये कर्मोंको सम्यक् प्रकारसे सहन करता हुआ कर्मशत्रुओंको पराजय कर रहा था।

अर्जुन मुनिको आहार मीले तो पाणी न मीले, पाणी मीले तो आहार न मीले। तथापि मुनिश्री किंचित् भी दीनपणा नहीं लाता था यह आहारपाणी भगवानको दीखाके अमूर्छितपणे कायाको भाडा देता था, जैसे सर्प बीलके अन्दर प्रवेश करता है इसी माफीक मुनि आहार करते थे। एसेही हमेशाके लीये छठ-परणा होता था।

एक समय भगवान राजगृह नगरसे विहार कर अन्य जन-पद देशमे गमन करते हुये। अर्जुनमुनि इस माफीक क्षमा सहित घोर तपधर्या करते हुये छ मास दीक्षा पाली जिस्में शरीर को पुणतया अजरित कर दीया जैसे खदकमुनिकी माफीक।

अन्तिम आधा मास अर्थात् पन्द्रा दीनका अनशन कर कर्मोंसे विमुक्त हो अब्यायाघ शाश्वत सुखोंमे विराजमान हो गये मोक्ष पधार गये इति।

चौथा अध्ययन-राजगृह नगर गुणशीलोद्यान श्रेणीक राजा चेलना राणी। उसी नगरमें काम्ब नामका गाथापति यद्वाही धनान्य यमता था। भगवान पधारे मयाईकी माफिक दीक्षा ले

एकादशाग ज्ञानाम्बास मोत्या वर्षकी दीक्षा एक मासका अनशन पालके धैभार गिनि पर्यंत पर अन्तसमय केवल ले मोक्ष गये। इति ४ एष क्षेमनामा गाथापति परन्तु यह काकदी नगरीका था। ५। एष घृतहर गाथापति काकदीका। ६। पर्य कैलान गाथापति परन्तु सधेत नगरका था और चारह वर्षकी दीक्षा। ७। एष हर्षिचन्द्र गाथापति। ८। एष घरतनामा गाथापति परन्तु यह राजगृह नगरका था। ९। एष सुदर्शन गाथापति परन्तु घाणीया ग्राम नगरका था यह पाच वर्षकी दीक्षा पाल मोक्ष गया। १०। एष पुर्णभद्रगाथा०। ११। एष सुमनभद्र परन्तु सायन्धी नगरीका बहुत वर्ष दीक्षा पाली थी। १२। एष सुप्रतिष्ठ गाथापति सावत्यी नगरीका सत्तावीश वर्षकी दीक्षा पाल मोक्ष गया। १३। मेघ गाथापति राजगृह नगरका था यह बहुत वर्ष दीक्षा पात्र मोक्ष गया। १४। यह सब त्रिपुलगिरि-व्यथहारगिरि पर्यंतपर मोक्ष गये हैं। इति।

पन्दरवा अध्ययन—पोलासपुर नगर श्रीवनोद्यान विजय नामका राजा राज करता था, उस राजाके श्रीदेवी नामकी पट्टराणी थी। उस राणीको अतिमुक्त-अमतो नामका कुमार था वह बडाही सुकुमाल और जाल्यावस्थाले ही बडा होशियार था—

भगवान् धीरप्रभु पोलासपुरके श्रीवनोद्यानमे पधारे। धीर-प्रभुका बडा शिष्य इन्द्रमूनि-गीतमस्थामि छठने पारणे भगवानकी आज्ञाले पोलासपुर नगरमें समुदायी भिक्षाके लिये अटन कर रहेथा।

उस समय अमतो कुमार स्नान मज्जन कर सुन्दर पद्मा मूषण धारण कर बहुतमे लडने लडकीयो कुमार कुमरियोने साथ

क्रीडा करनेकी रास्तेमें आता हुआ गौतमस्वामिका देखके अमन्तो कुमर बोलाकि हे भगवान ! आप कौनहो ओर कीम वास्ते इधर उधर फीरत हो ? गौतमस्वामिने उत्तर दीयाकि हे कुमर हम इर्यासमिति यावन् ब्रह्मचर्य पालने वाले मुनि हे ओर ममु दाणी भिभाके लिये अटन कर रहे हैं । अमन्तोकुमार बोलाकि हे भगवान हमारे वहा पधारे हम आपकी भिभा दीरायेगे,, एसा कहके गौतमस्वामिकी अगुली^१ पकडके अपने घरपर ले आये श्री देवीगणी गौतमस्वामिका आत हुये देखके हप सतोपक साथ अपने आसनसे उठ सात आठ पग सन्मुख गइ वन्दन नमस्कार कर भात्त पाणीके घरमे ले जायके च्यार प्रकारका आहारका सहर्ष दान दीया ।

अमन्तोकुमर गौतमस्वामिसे अज करी कि हे भगवान आप वहापर घिराजते हो ? हे अमन्ता ! इस नगरके याहार श्री वनोद्यानमे हमारे धर्माचार्य धर्मकी आदिके करनेवाले भ्रमण भगवान वीरप्रभु घिराजते हैं उन्हाके चरण कमलोमें हम निवास करते हैं । अमन्तो कुमरबोलाकि हे भगवान ! मैं आपके साथ चलने आपके भगवान वीर प्रभुका चरण वन्दन कर “ जहा सुख । ’ तब अमन्ता कुमर भगवान गौतमस्वामिके साथ होके श्रीवनोद्यानमे आके भगवान वीरप्रभुका वन्दन नमस्कार कर सेवा भक्ति करने लगा ।

भगवान गौतमस्वामि गया हुआ आहार भगवानकी यताक पारणो कर तप मयममें रमनता करने लगा ।

१ द्वाय एक क्त है कि एह हायम गौतमके शालीया दुसरे हायकि अगुली अम तेन पकडला ता फीर खुल मुहवालो कम करा नास्त मुत्पति वचनरोंवा ? उत्तर एक हायकि कुणापर बोरी आंग्नाथम मुत्पनीम यन्ना करीरी दुसरे हायकी अगुली अम तान पन्नीवी जाचनी पै न मुनि टा न ताएर बाल सरत हैं ।

मर्यज्ञ धीर प्रभु अमन्ताकुमारकों धर्म देशना सुनाइ। अ-
मन्ताकुमार बोलाकी हे करुणासिंधु भापकि देशना सुनमें मन्त्राग्ने
भयभ्रात हुवा में मेरे मातापिताकों पुच्छके आपके पास दीक्षा
ले उगा “जहा सुख ’ प्रमाद मत करो। अमन्ताकुमार भगवानकों
चन्दनकर अपने मातापिताके पास आया और बोलाकि हे माता
आजमे श्रीरप्रभुकि देशना सुनके जन्ममरणके दु गोसे मुक्त होनेके
लिये दीक्षा लेउगा। पैनीधानें सुनके दुसरोकि मातायोका रज
हुवा करता था परन्तुयहा अमन्ताकुमार कि माताको विस्मय
हुवा और बोली की हे वत्स! तु दीक्षा और धर्मकों क्या जानता
हे? कुमरजीने उत्तर दिया कि हे माता! मैं जानता हूं उसकों
ना नहीं जानता हूँ और नहीं जानता हूँ उमकों जानता हूँ। माता-
ने कहा कि यह क्या?

हे माता! यह मैं निश्चित जानता हूँ कि जितने जीव जन्म-
ते है यह अद्यय मृत्युकों भी प्राप्त होतें है परन्तु मैं यह नहीं जा-
नता हूँ कि किस समयमें किम क्षेत्रमें और किम प्रकारसे सृष्टि
होगी। हे माता! मैं नहीं जानता हूँ कि कौनसा जीव किस कर्मों
से नरक तीर्थच मनुष्य और देवगतिमें जाता है, परन्तु यह
घात मैं निश्चय जानता हूँ कि अपने अपने किये हुये शुभाशुभ
कर्मोंसे नारकी तीर्थच मनुष्य और देवतोमें जात हैं। इस घामने
हे माता! मैं जानता हूँ यह नहीं जानता और नहीं जानता यह
जानता हूँ। वत्स! इतनेमें माता समझ गई कि अब यह मेरा पुत्र
घरमे रहनेवाला नहीं है। तथापि मोहप्रेरित उहनुसे अनुकूल-प्र-
तिक्रम शब्दामे समझाया, परन्तु जिन्होंकों असली घस्तुका भान
हो गया हो यह इस कारणसे कभी लोभीत नहीं होता है
अमन्ताकुमार का तो शिवसुन्दरीमे इतना पडा प्रेम हो रहा था
कि मैं कीतना जल्दी जाके मिलूँ।

माताजीने कहा कि हे पुत्र! अगर आप दीक्षा ही लेना चाहते हो तो एक दिनका राज कर मेरे मनोरथका पूर्ण करो। अमन्तोकुमर इस बातको सुनके मौन रहा। जय माता-पिताने बड़ा ही आडम्बर कर कुमरका राजअभिषेक कर बोले कि हे लालजी आप कि क्या इच्छा है आज्ञा करा। कुमरने कहा कि तीन लक्ष सोनइया लक्ष्मीके भंडारसे निकाल दो लभ्य रजाहरण पात्रा और एकलभ हजामकां दे मेरे दीक्षा कि तैयारी करा जा। जैसे महाबलकुमरके दीक्षाका महोत्सव कीया इसी माफीक बड़े ही महोत्सव पूवक भगवानके पास अमन्ताकुमरको भी दीक्षा दराइ। तयारूपके स्थिचरों के पास एकादशागका ज्ञान कीया।* बहुतसे वर्ष दीक्षा पाली गुणरत्न समत्सरादि तप कर अन्तमे व्यवहार गिरिपर वैषलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गया ॥ १५ ॥

सोल्या अध्ययन-यनारसी नगरी काम घनोधान अलख नामका राजाया, उम समय भगवान धीरप्रभुका आगमन हुआ कोणककी माफीक अलखराजाभी यदन करने को गया। धम

* भगवतीसूत्र शतक ५ उ० ४ में लिखा है कि एक समय बर्षा वरगाद वर्षनेक बादमें स्थिचरोंक साथमें अमन्तोबालऋषि स्थण्डिल गया था स्थिचर कुच्छ दूर गय य अमन्तोऋषि पीच्छ जात समय पाणीक अन्दर मगरी पाल बाध अपन पासका पातरी उन्म डाल तास्ती हुइ दख बालना ह कि यह मरी नइया (नौका) तिर रही है। दुरग स्थिचरोंने दखा उमी समय स्थिचरोंको बरा ही विचार हुआ कि दखा यन् बालऋषि क्या अनुचित कोडा कर रहा है। वन् एक तपस भगवानक समिप जाक पुच्छ कि हे भगवान! आपका शिष्य अमन्ता बालऋषि कितना भव कर माभ जावगा। भगवानने उत्तर दिया की हे स्थिचरों अमन्ताऋषि कि हालना मत करो यावन् अमन्ता ऋषि चरम शरीरी अर्थात् इसी भवमें मोक्ष जावगा। वास्त तुम सब मुनि बालऋषिकि ब्यावर करो। इति।

देशना सुन अपने जेष्ठ पुत्रका राज देवे उदाई राजाकी माफी क दीक्षा ग्रहण करी एका दशाग अध्ययन कर विचित्र प्रकारकी तपश्चर्या करते हुये बहुतसे वर्ष दीक्षा पाल अन्तमें विपुलगिरि (व्यवहारगिरि) पर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये इति सोलवाध्ययन । इति छट्ठार्यग समाप्त ।



(७) सातवा वर्गके तेरह अध्ययन

राजग्रह नगर गुणशीलोद्यान श्रेणिकराजा चेलनाराणी अभ यदुमारमन्त्री भगवान धीरप्रभुका आगमन, राजा श्रेणिककाचन्द्रनको जाना यहसर्वाधिकर पूर्वके माफीक समझना । परन्तु श्रेणिकराजा कि नन्दानामकि राणी भगवानकि धर्मदेशना श्रवण कर श्रेणिक-राजाकि आज्ञा लेके प्रभु पाने दीक्षा ग्रहणकर चन्द्रनवालाजीके समिप रहेतीहुइ एकादशागका अध्ययन कर विचित्र प्रकारकी तपश्चर्या करती हुइ कर्मशत्रुयोका पराजयकर केवलज्ञान पावे मोक्षगइ इति । १। एव (२) नन्दमती (३) नन्दोतरा (४) नन्दमेना (५) मरुता (६) मुमस्ता (७) महामरुता (८) मरुदेवा (९) भद्रा (१०) सुभद्रा (११) सुजाता (१२) सुमा णसा (१३) भुतादिना यह तेरहा राणी या अपने पति श्रेणिक-राजाकि आज्ञासे भगवान धीर प्रभुके पास दीक्षा लेके सर्वने इग्यारे अगका ज्ञान पदा । बहुतसी तपस्याकर अन्तमें केवलज्ञान प्राप्तकर मोक्ष गइ है इति सातवा वर्ग समाप्त ।



(८) आठवा वर्गके दश अध्ययन है ।

धम्पानगरी पुर्णभद्र उद्यान कोणक नामका राजा राज कर रहाथा। उसी धम्पानगरीमें धेणीक राजाकि राणी कोणक राजाकि चुलमाता 'कालीनामकि राणी निवास करतीथी

भगवान धीरप्रभुका आगमन हुआ नन्दाराणीकि माफीक कालीराणी भी देशना सुन दीक्षा ग्रहन कर इग्यारे भग ज्ञानाभ्यासकर चोत्थ छद्वादि विचित्र प्रकारसे तपधर्याकर अपनि आत्माको भावती हुइ धीचर रहीथी ।

एक समय काली साध्विने आय चन्दन वाला साध्विको चन्दन कर अर्ज करी कि आपकी रजा हो तो मैं रत्नायली तप प्रारभ करूँ ? जहामुखम् ।

आया चन्दन वालाजीकी आज्ञा होनेसे काली साध्विने रत्नायली तप शरु किया । प्रथम एक उपवास किया पारणेके दिन " सव्यकामगुण" सर्थ विगइ अर्थात् दूध दही घृत तैल मीठा इसे जैसे मीले बेसाही आहारसे पारणो कर सके । सय पारणेमें पसी विधि समझना । फिर दोय उपवास कर पारणो करे । फिर तीन उपवास कर पारणो कर बादमें आठ छठ (धेला) करे पारणो कर, उपवास करे, पारणो कर, छठ करे, पारणो कर अठम करे, पारणो कर ध्यारोपास पारणो कर पाचोउपवास पारणो कर छ उपवास, पारणो कर सात उपवास, पारणो कर आठ उपवास, पर्यं नव दश इग्यारा बारह तेरह चौदा पन्दर मोला उपवास करे, पारणो कर लगता चौतीस छठ करे, पारणो कर पौर

सोला उपवास करे, पाण्णो कर पन्द्ररा उपवास करे, ष्य चौदा तेरह बारह इग्यार दश नव आठ सात छे पांच चार तीन शेष और पाण्णो कर एक उपवास करे । वादमें आठ छठ करे पाण्णो कर तीन उपवास करे, पारणो कर छठ करे, और पारणो कर एक उपवास करे, यह प्रथम आली हुइ अर्थात् इम तपके हारकी पहली लड हुइ इमको एक वर्ष तीन मास और बायीस दिन लगते हैं जिसमें ३८४ दिन तपस्या और ८८ पाण्णो होता है पारणे पाची विगइ सहीत भी कर सकते हैं । इसी माफीक दुसरी ओली (हारकी लड) करी थी परन्तु पारणा विगइ यज्ञ करते थे । इसी माफीक तीसरी ओली परन्तु पारणा लेपालेप धर्ज करते थे । ष्य चौथी ओली परन्तु पारणे आयिल करते थे । यह तपरूपी हारकी च्यार लडकों पाच वर्ष दोष माम अठ्ठाधीस दिन हुवे जिसमें च्यार वर्ष तीन मास छे दिन तपस्याके और इग्यार मास बाधीस दिन पारणेके एसे घौर तप करते हुये वाली साध्वीका शरीर सुके लुरवे भुग्गे हो गया था चलते हुये शरीरके हाड खडखड शब्दसे याज्ञने लग गया अर्थात् शरीर बीलकुल कृप बन गया तथापि आत्मशक्ति बहुत ही प्रकाशमान थी । गुरुणीजिकी आशासे अन्तिम ष्य मामका अनशन कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गई इति ।

इसी माफीक दुसरा अध्ययन सुकालीराणीका है परन्तु रत्नावली तपके स्थान कनकावली तप कीया था रत्नावली और कनकावली तपमें इतना विशेष है कि रत्नावली तपमें दोष स्थान पर आठ आठ छठ एक स्थानपर चौतीस छठ किया था तथा कनकावली तपमें अठम तप कीया है वास्ते तपकाल पच वर्ष नव मास और अठारा दिन लगा है शेष कालीराणीकी माफीक कर्म क्षय कर केवलज्ञान प्राप्त हो मोक्ष गई । २ ।

इसी माफीक महाकालीगणी दीक्षा छै यावत लघु सिंहकी चाली माफीक तप करा यथा एक उपवास कर पाग्ना कीया फीर दोय उपवास कीया पारणा कर, एक उपवास पाग्ना कर तीन उपवास पारणा कर दोय उपवास, पारणीकर च्यार उपवास पारणो कर तीन उपवास, पारणो कर पाच उपवास, पारणो कर च्यार उपवास, पारणो कर छे उपवास, पारणो कर पाच उपवास, पारणो कर सप्त उपवास, पारणो कर छे उपवास, पारणो कर आठ उपवास करे, सात उपवास करे०, नव उप० आठ उप० नव उप० सात उप०, आठ उप०, छे उप० सात उप०, पाच उप०, छे उप०, च्यार उप०, पाच उप० तीन उप० च्यार उप०, दोय उप०, तीन उप०, एक उप०, दोय उप० एक उप०, एक ओलीका १८७ दिन लागे पूषवत् च्यार ओलीका दोय वष अटावीश दिन लाग । यावत् सिद्ध हुई ॥ ३ ॥

इमी माफीक कृष्णागणीका परन्तु उन्होने महासिंह निष्कल तप जो लघुसिंह० बडते हुने नव उपवास तक कहा है इमी माफीक १६ उपवास तक समझना एक ओलीका एक वष छ मास अद्वारा दिन लगा था । च्यार ओली पूषवत्को छ वष दोय मास बारह दिन लगा था यावत् मोक्ष गई ॥ ४ ॥

इमी माफीक सुकृष्णराणी परन्तु सत्त सत्तमिर्या कि भिक्षु प्रतिमा तप कीया था यथा-सात दिन तक एक एक आहार कि दात' एकेक पाणीकी दात । दूसरे सात दिन तक द्वा आहार दो

१ दातार त्त समय विवम धार खरित न हो उम दात करन है जेस मोदक दान समय एक क्षुर पन जावे तथा पाणा दते समय एक क्षुद गिर जावे तो उम भा दान कहते है । अगर एक ही समय थालभर मोदक आर घन्भर, पाणी दतो भी एकही दान ह

पाणीकी दात । तीसरे सात दिन तीन तीन आहार तीन तीन पाणीकी दात यायत् सातम सातदिन, सात सात दात आहार पाणी कर लेते हैं पय पकोणपचास दिन और एकसौ छीनव दात आहार एक सौ छीनव दात, पाणी की होती है । फिर यादमे अठ अठमिया भिक्षु प्रतिमा तपकरा यह प्रथम आठ दिन पकेक दात आहार पनेक दात पाणी कि पय यायत् आठवे आठ दिन तक आठ आठ दात आहारकी आठ आठ दात पाणीकी सर्व चौमठ दिन और दोय सौ इठीयामी दात आहार दोय सौ इठीयामी दात पाणीकी होती है । यादमें नव नवमिया कि भिक्षु प्रतिमा तप पूर्यवत इकीयासी दिन और च्यागसो पच दात नरया होती है । यादमे दश दशमिया भिक्षु प्रतिमा तप करा जिस्का एक सौ दिन और साढापाचसो दात सख्या होती है । यह प्रतिमा सर्व अभिग्रह तप है यादमें ही बहुतसे मास क्षमणा कि तप कर वेचलज्ञान प्राप्त कर अन्तिम मोक्षमें जा विराजे इति ॥ ५ ॥

१	०	३	४	५
३	४	५	१	२
६	१	०	३	४
०	३	४	६	१
४	५	१	२	३

इसी माफीक महाकृष्णा राणी परन्तु लघु सर्वतो भद्र तप कराया यया यत्र प्रथम ओलीकों तीनमास दशदिन एव च्यार ओलीकों एक वर्ष एकमास दशदिन, पारणा सब रत्नावली तपकि माफीक समझना । अन्तिम मोक्ष में विराजमान हुये । ६ ।

इसी माफीक धीर कृष्णा राणी परन्तु महा सधता भद्र तप

१	०	३	४	५	६	७
४	५	६	७	१	२	३
७	१	२	३	४	५	६
३	४	५	६	७	१	२
६	७	१	२	३	४	५
२	३	४	५	६	७	१
५	६	७	१	२	३	४

कीया था। यथा यत्र एक ओलीने आठ मास पाच दिन पय च्यार ओलीने दाय पय आठ मास और बीस दिन लगा था। पारणमे भोजनविधि सघरत्तावली तपकि माफीक समजना औरभी विधिप्र प्रकारमे तपकर केवलज्ञान प्राप्त कर मा क्षमें विराजमान हुये इति। ७।

५	६	७	८	९
७	८	९	७	६
९	५	६	७	८
६	७	८	९	५
८	९	५	६	७

इसी माफीक रामकृष्णा राणी परन्तु भद्रोत्तर प्रतिमा तप कीयाया। यथा यत्र एक ओलीका छ मास और बीस दिन तथा च्यार ओलीका दाय पय दौय मास और धिमदिन औरभी बहुत तप कर केवलज्ञान प्राप्त कर मो क्षमें विराजमान हुये इति। ८।

इसी माफीक पितुसेन कृष्णाराणी परन्तु मुक्तावली तप कीया यथा—एक उपवास कर पारणा कर छठ कीया पारणा कर एक

उपवास पाग्णा कर तीन उपवास पारणाकर एक उपवास च्यार
 उप० एक उप० पात्र उप० एक उप० छ उप० एक उप० मात
 उप० एक उप० आठ उप० एक उप० नव उप० एक० दश०
 एक० इग्यारे० एक० बारह० एक० तेरह एक० चौदा० एक० पंद्रा०
 एक० सोळा उपवास इमी माफीक पीछा उतरता सोळा उपवासमे
 एक उपवास तक कीया । एक ओलीका सादाइग्यारे मास लागे
 और च्यारों ओलीकों तीन घण और दश मास काल लगा पार
 णका भोजन जैसे रत्नायली तपकि माफीक यावन शाश्वता सु-
 खमे विराजमान हो गये इति । ९ ।

इमी माफीक महासेण वृष्णा परन्तु इन्होंने आविल वद्ध-
 मान नामका तप किया था । यथा—एक आविल कर एक उप-
 वास दो आविल कर एक उपवास, तीन आविल कर एक उप-
 वास पच च्यार आविल एक उपवास पाच आविल कर एक
 उप० छे आविल एक उप० मात आविल इसी माफीक एकेक
 आविलकि वृद्धि करते हुये यावत् नियाणवे आविल कर एक उप-
 वास कर सो आविल कीये इस तप पुरा करनेको चौदा घण तीन
 मास विसदिन लगा था सर्वसतरा वर्षकी दीप्ता पालके अन्तिम
 एक मासका अनसन कर मोक्ष गया ॥ १० ॥

यह श्रेणिकराजा कि दशा राणीयां घोरप्रभुके पास दीक्षा
 लि । इग्यारा अंगका ज्ञानाभ्यास कर, पूर घतलाइ हुइ दशा प्र-
 वारकि तपधर्या कर अन्तिम एकेक मासका अनसन कर कर्म
 शशुका पराजय कर अन्तगढ बंधली हो वे मोक्षमें गइ इति ।

॥ इति आठवावर्गके दशाध्ययन समाप्तम् ॥

इति अन्तगढ दशागसूत्र वा सक्षित मार्ग समाप्तम् ।

श्री अनुत्तरोववाइ सूत्रका संक्षिप्त सार.



(प्रथम वर्गके दश अध्ययन है)



(१) पहला अध्ययन—राजगृह नगर गुणशीलोपान श्रेणिक राजा चेलनाराणी इसका विस्तार अर्थ गौतमजुमारके अध्ययन से समझना ।

श्रेणिकराजा के धारणी नामकी राणीका सिंह स्वप्न सूचित जाली नामक पुत्रका जन्म हुआ महोत्सवके साथ पाच धायामे पालीत आठ वर्षका होनेके बाद कलाचार्यसे बहुततर कलाभ्यास यावत् युवक अवस्था होने पर बड़े बड़े आठ राजायाकी आठ कन्याया के साथ जालीकुमारका विवाह कर दिया दत्त दायजो पूर्ववत् समझना । जालीकुमार पूर्व सचित्त पुण्योदय आठ अत्तेउरके साथ देवतायो कि माफीक सुखाका अनुभव कर रहा था ।

भगवान धीरप्रभुका आगमन राजादि वन्दन करने को पुत्र वत् तथा—जालीकुमार भी वन्दनका गया देशना श्रवण कर आठ अत्तेउर और ससारका त्याग कर माता-पिताकी आज्ञा ले बड़े ही महोत्सवके साथ भगवान धीरप्रभुके पास दीक्षा ग्रहण करी, विनयभक्तिसे इग्यारा अंगका ज्ञानाभ्यास कर चोत्थ छट अठमादि तपस्या करते हुये गुणरत्न समत्सर तपकर अपनि आत्माया उज्यल बनाते हुये अन्तिम भगवानकी आज्ञा ले साधु साध्वीयोसे क्षमत्क्षामणाकर स्थिर भगवानके साथे विपुलगिनि पर्यंत पर अनसन किया सब सोला वषकी दीक्षा पाली । एक माम

वे अनसनके अन्तमें काल कर उर्ध्व सौधर्मइशान यायत् अच्युत देवलोकके उपर नव ग्रीवैक से भी उर्ध्व विजय नामका वैमान में उतन्न हुये । जत्र स्थिषर भगवान जालीमुनि काल प्राप्त हुआ जानके परि निर्वणार्थ काउस्सगकीया (जाली मुनिके अनसनके अनुमोदन) काउस्सगरु जालीमुनिका उख पात्र लेके भगवान के समिप आये वह उख पात्र भगवान के आगे रखा गौतम स्वा मीने प्रश्न कियाकि हे भगवान ! आपका शिष्य जाली अनगार प्रकृ तिका भद्रीय विनित यायत् कालकर कहा पर उत्पन्न हुआ होगा भगवानने उत्तर दीयाकि मेराशिष्य जाली मुनि यायत् विजय वैमानके अन्दर देव पणे उतन्न हुआ है उन्हाकी स्थिति वत्तीम मागरोपमकि है । गौतमस्वामिने पुच्छाकि हे भगवान जालिदेव विजय वैमानने फीर कहा जावेगा ? भगवानने उत्तर दीयाकि हे गौतम ! जाद्रीदेव यहासे कालकर महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाति कुल के अन्दर जनम लेगा यहाभी केवली परहित धर्मका सेधनकर दीक्षाले केवलज्ञान प्राप्तकर मोक्ष जावेगा इति प्रथमा-ध्ययन समाप्त ।

इसी माफोक (०) मयालीकुमार (३) उयवालीकुमार (८) पुरुषसेन (५) धीरसेन (६) लठवन्त (७) दीर्घदत्त यह सार्ता धेणिक राजाकि धारणी राणीके पुत्र हैं और (८) वद्वेत्कुमार (९) विहासे कुमार यह दोय धेणकराजाकि चेलना राणी के पुत्र हैं (१०) अमयकुमार धेणक राजाकि नन्दाराणीका पुत्र हैं पथ दश राजकुमार भगवान योगप्रभु पासे दीक्षा ग्रहण करी थी ।

इग्यारा अगका ज्ञानाभ्यास । पहले पाच मुनियोने १६ वर्ष दीक्षा पाली क्रमसे छट्ठा, नातथा, आठवा, बारह वर्ष दीक्षा पाली नववा दशवा पांच वर्ष दीक्षा पाली । गति-पहला विजयवैमान, दुमग विजयन्त वैमान, तीसरा जयन्त

वैमान, चौथा अप्राजत वैमान, पाचवा छटा सर्वायसिद्ध वैमान । शेष च्यार मुनि विजय वैमानमे उत्पन्न हुये । वहासे चवके मय महाविदेह क्षेत्रमे पूर्वधत् मोक्ष जायेगा । इति प्रथम धर्गये दशाध्यायन समाप्तम् । प्रथम धर्ग समाप्तम् ।



(२) दुसरै वर्गका तेरह अध्ययन है ।

प्रथम अध्ययन—राजगृह नगर श्रेणिकराजा धारणी राणी सिंह सुपनसूचित दीर्घसेन कुमारका जन्म यात्यायस्था कलाभ्यास पाणीग्रहन आठ राजक्याघोषे साथ विवाह यायत् मनुष्य संघर्षी पाचो इन्द्रियके सुख भोगयतेहुये विचर रहाया । भगवान धीर प्रभुका आगमन हुया धर्मदेशना सुनके दीर्घसेन कुमार दीक्षा ग्रहण करी सोला धर्षकी दीक्षा पालके विपुलगिरि पर्वत पर एक भासका अनसन कर विजय वैमान गये वहासे एकही भव महाविदेह क्षेत्रमे उत्तम जाति कुलमे जन्म ले के फीर केवली प्ररूपित धर्म स्वीकार कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगा । इति प्रथमाध्ययन समाप्तम् । १ ।

इमी माफीक (२) महासेन कुमार (३) लठदत्त (४) गूढ दन्त (५) सुद्वदन्त (६) हलकुमर (७) दुम्मकु० (८) दुमसेन कु० (९) महादुमसेन (१०) सिंह (११) सिंहसेन (१२) महासिंहसेन (१३) पुन्यसेन यह तेरह राजकुमर श्रेणिक राजाकि धारणी राणीके पुत्र थे भगवाण समिप दीक्षा ले १६ धर्ष दीक्षा पाळी विविध प्रकारकि तपधर्या कर अन्तिम विपुलगिरि पर्वतपर अनसन करके क्रम सर दोय मुनि विजयवैमान दोय मुनि विजयत वैमान, दोय मुनि जय त वैमान शेष सात मुनि स

षार्धसिद्ध धैर्यमानमें देयपणे उत्पन्न हुये यदासे तेरहवीं देय एक
भय महाविदेह क्षेत्रमें करके दीक्षा पाके येयल्लक्षण प्राप्त कर मो-
क्षमें जायेगा । इति दुमरे वर्गके तेरवाध्ययन समाप्तम् । २ ।

इति दुमरे वर्ग समाप्तम् ।

—❧(⊙)❧—

(३) तीसरे वर्गके दश अध्ययन है ।

प्रथम अध्ययन—काकदी नामकी नगरी महाराज्यनोधान
जयशत्रु नामका राजा । सयका वर्णन पृथक्त् समझना । काकदी
नगरीके अन्दर यहीही धनात्थ भद्रा नामकी सार्धयाहिणी बसती
थी यह नगरीमें अच्छी प्रतिष्ठित थी । उस भद्रा शैठानीके एक
स्वरूपवान धनो नामको पुत्र थी, उसके कला आदिका वर्णन
महाउल्लुभाङ्गी माफीक यायत् उहोतेर कलामें प्रचिन युवक
भवस्थाको प्राप्त हो गया था । जब भद्रा शैठानीने उस कुमारको
बत्तीस इम्भशैठानी कन्यावाके साथ विवाह करनेका इरादासे
बत्तीस सुन्दराकार प्रामाद धनाके विचमें धन्राकुमारका महैल
बना दिया । उस प्रामाद महैरीके अन्दर अनेक स्थभ पुतलीयो
तोरणादिसे अच्छे शोभनिय बना दीया था उसी प्रामादोका
शिगरमानो गगनसे घाताही न कर रहा हो अर्थात् देवप्रामादके
माफीक अच्छा रमणीय था ।

बत्तीस इम्भशैठानी कन्यावा जो कि रूप, यौवन, लावण्य,
चानुर्यता कर ६४ कगयोमे प्रचिन कुमारके सदृश धयवाली
बत्तीस कन्यावाका पाणीग्रहण एकही दिनमें कुमारके साथ करा
दिया उन्ही बत्तीस कन्यावाका मातापिता अपरिमित दत्त
दायजो दियो थो यावत् बत्तीस र्भाधोंके साथ धन्राकुमार मनुष्य

सयन्धी का भोग भोग्य रहा था अर्थात् यत्नीस प्रकारके नाटक आदि से आनन्दमें काल निर्गमन कर रहा था। यह सब, पूर्व सुकृतका ही फल है।

पृथ्वीमण्डलको पवित्र करते हुये बहुत शिष्योंके परिवारसे भगवान् घोरप्रभुका पधारना काफदी नगरीके महद्याम्रवनो पानमे हुआ।

कोणक राजाकी माफीक जयशत्रु राजा भी च्यार प्रकारकी मैनाके साथ भगवानको वन्दन करनेको जा रहा था, नगरलोक भी स्नानमज्जन कर अच्छे अच्छे धस्त्राभूषण धारण कर गज, अश्व, रथ, पिंजस, पालखी, सेधिका समदाणी आदिपर सवार हो और कितनेक पैदल भी मध्ययज्ञा हारे भगवानको वन्दन करनेको जा रहे थे।

इधर धन्नोडुमार अपने प्रासादपर बैठो हुयो इस महान् परिपदाको एकदिशामें जाती हुई देखके पचुकी पुरुषसे दरियापत करनेपर ज्ञात हुआ कि भगवान् घोरप्रभुको वन्दन करनेको जनसमुह जा रहे हैं। बादमे आप भी च्यार अश्ववाले रथपर बैठके भगवानको वन्दन करनेको परिपदाके साथमें हो गये। जहाँ भगवान् विराजमान थे वहाँ आये सवारी छोडके पांच अभिगम कर तीन प्रदक्षिणा दे वन्दन नमस्कार कर सब लोग अपने अपने योग्य स्थानपर बैठ गये। आये हुये जनसमुह धर्माभिलाषीयाँको भगवानने खुश ही विस्तार सहित धर्मदेशना सुनाइ। जिस्में भगवानने मुख्य यह फरमाया था कि—

हे भय जीयो! यह जीव अनादिकालसे नसारमें परिभ्रमन कर रहा है जिस्का मूलहेतु मिथ्यात्व, अग्रत, कपाय और योग है इन्हींसे शुभाशुभ कर्मोंका सचय होता है तय कभी राजा महाराजा

शेठ मेनापति होके पुण्यफलको भोगघता है कभी रफ दरिद्री पशुवादि होके रोग-शोकादि अनेक प्रकारके दुःख भोगघता है और अज्ञानके घस हा यह जीव इन्द्रियजनित क्षण मात्र सुखोंके लिये दीर्घकाल तक दुःख सहन करते हैं ।

इसी दुःखासे टूटाने वाला सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र्य है यास्ते हे भय जीवों ! इसी सर्व सुख संपन्न चारित्र्यका स्वीकार कर इन्हींका ही पालन करा ताके आत्मा मदैयके लिये सुखी हो ।

अमृतमय देशना श्रवण कर यथाशक्ति त्याग वैरागकी धारण कर परिपदाने स्व स्व स्थान गमन कीया ।

धनोकुमार देशना श्रवणकर विचार किया कि अहो आज मेरा धन्य भाग्य है कि प्रमा अपूर्व व्याख्यान सुना । और जगतारक जिनेन्द्र देवोंने फरमाया कि यह मसार स्थायका है पौदगलीक सुखोंके अन्ते दुःख है क्षण मात्रके सुखोंके लिये अज्ञानी जीवों घोर कालके दुःख सहन करते हैं यह सब मत्य है अब मुझे चारित्र्य धर्मका ही सरणा लेना चाहिये । धनोकुमार भगवानसे घन्दन नमस्कार कर बोला कि हे कदनासिन्धु । मुझे आपका प्रवचन पर श्रद्धा प्रतीत आइ और यह वचन मुझे रुचता भी है आप फरमाते हैं एसे ही इस ससारका स्वरूप है मैं मेरी माताका पुच्छके आपके पास दीक्षा ग्रहण करुगा "जहासुखम्" परन्तु हे धनो । धर्म कार्यमें प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

धनोकुमार भगवान कि आज्ञाको स्वीकार कर घन्दन नमस्कार कर अपने चार अश्वके रथपर बैठके स्व स्थानपर आया निज मातासे अर्ज करी कि हे माता आज मैं भगवानकि देशना श्रवण कर ससारसे भयघात हुआ हु । यास्ते आप आज्ञा देयें मैं भगवानके पास दीक्षा ग्रहण करु । माताने कहा कि हे लालजी

तु मेरे एक ही पुत्र है तुझे बत्तीस ओरती परणाइ है और यह अपरिमित द्रव्य जो तुमारे थापदादाजके मचे हुये है इसको भोगयो बादमें तुमारे पुत्रादिकी वृद्धि होनेपर भुक्त भोगी हो जायेंगे फिर हम काल धर्मका प्राप्त हो जाये यादमें दीक्षा लेना ।

कुमरजीने कहा कि ऐ माता यह जीव भय भ्रमन करते हुये अनेक बार माता पिता त्रि भरतार पुत्र पितादिका सबन्ध करता आया है कोइ कीसीको तारणको ममथ नहीं है धन दालत राजपाट आदि भी जीवको उहुतसी दफे मीला है इन्हीमे जीवका कल्याण नहीं है । वास्तु आप आना दो में भगवानक पास दीक्षा लुगा । माताने अनुकुल प्रतिकुल उहुत समझाया परन्तु कुमरती एक ही बातपर कायम रहा आखिर माताने यह विचारा कि यह पुत्र अय घरमे रहेनखाला नहीं है तो मरे हाथसे दीक्षाका महोत्सव करव ही दीक्षा दिरादु । एसा विचार कर जैसे थायचा शैठानी कृष्णमहाराजके पास गई थी ओर थायचा पुत्रका दीक्षामहोत्सव कृष्णमहाराजने किया था इसी माकीक भद्रा शैठानीने भी जय शशुराजाके पास भेटणी (निजराणा) लेके गइ और धनाकुमारका दीक्षामहोत्सव जयशशुराजाने किया इसी माफीक यावत् भगवान वींग्रभुके पास धनोतुमर दीक्षा ग्रहनकर मुनि धनगया इयांस-मिति यावत् गुप्त ब्रह्मचर्य व्रतका पालन करने लग गया

जिस दिन धनाकुमारने दीक्षा लीथी उन्ही दिन अभिग्रह धारण कर लीयाथा कि मुझे कल्पे है जात्रजीव तक छठ छठ तप पारणा ओर पारणेके दिन भी आविल करना । जत्र पारणेक दिन आविलका आहार सस्पृष्ट हस्तानि देनेखाला देव । यह भी बचा हुवा अरस निरस आहार वह भी थमण शाकयादि मालण ब्राह्मणादि अतीथ कृपण घणीभगादि भी उस आहारकी इच्छा न करे

पसा पारणे आहार लेना । इस अभिग्रहमें भगवानने भी आशा देदी कि 'जदासुम्ब' ।

धन्ना अनगारके पहला छठ तपसा पारणा आया तब पहले पहोरमे स्वाध्याय करी दुसरे पहोरमे ध्यान (अर्थचिंतन) कीया तीसरे पहोरमें मुहपत्ती तथा पात्रादि प्रतिलेखन किया बादमें भगवानकी आशा लेके काकदी नगरीमें समुदाणी गौचरी करनेमें प्रयत्न कर रहे थे । परन्तु धन्ना मुनि आहार केसा लेता था कि त्रिकुल राक यणीमग पशु पक्षी भी इच्छा न करे इस कारणसे मुनिका आहार मीले तो पाणी नहीं मीले और पाणी मीले तो आहार नहीं मीले तथापि उसमें दीनपणा नहीं था व्यग्रचित्त नहीं शुन्य चित्त नहीं कुटुपित चित्त नहीं विषयाद नहीं, नमाधि चित्त से यत्नाकी घटना करता हुआ पपणा सयुक्त निर्दापाहारकी ग्रप करता हुआ यथापर्याप्ति गौचरी आ जानेपर काकदी नगरीसे नीक भगवानके समिप आये भगवानकी आहार दीग्वाके अमूर्च्छित अर्गहित मर्प जेमे धील्मे शीघ्रता पूर्वक जाता है इसी माफीक स्वाद नहीं करते हुये शीघ्रता पूर्वक आहार कर तप समयमे रमणता कर रहाथा इसी माफीक हमेशा प्रति पारणे करने लगे ।

एक समय भगवान धीरप्रभु काकदी नगरीसे विहार कर अन्य जनपद देशमें विहार करते हुये धन्ना अनगार तपधर्या करता हुआ तथा रूपके स्थिधर भगवानका विनय भक्ति कर इग्यारा अंगका ज्ञान अभ्यासभी कियाथा ।

धन्ना अनगारने प्रधान धीर तपधर्या करी जिसका शरीर इतना तीव्र-दुर्बल बन गयाकि जिस्का व्याख्यान सुद शास्त्र-कारोंने इस मुजत्र कीया है ।

(१) धन्ना अनगारका पग जेसे वृक्षकि शुकी हुई छाली तथा

काटकी पाघड़ीयां और जरग (पुराणे जुते) कि माफीक या वहाभी मास रुधीर रहीत केवल हाड चर्ममे बिटा हुआही देमा व देताथा ।

(२) धन्ना अनगारक पगकि अंगुलीयां जसे मुग उडद चाला दि धान्यकि तरुण फलीकां तापमें शुक्रानेपर मीली हुई होती है इसी माफीक मास लोही रहीत केवल हाडपर चर्म बिटा हुआ अंगुलीयोका आकारसा माट्टम होता था ।

(३) धन्ना मुनिका ज्ञाघ (पोंडि) जेमे काफनामकि घनस्पति तथा वायस पभिके जघ माफीक तथा कंक या ढाणीये पभि विशेष है उमके जघा माफीक यायत् पुर्य माफीक मास लोही रहीत थी ।

(४) धन्नामुनिका जानु (गोडा) जेसे कालिपोरें-काक जंघ घनस्पतिविशेष अर्थात् गारकी गुटली तथा एक जातिकी घनस्पतिके गाढ माफीक गोडा था यायत् मास रजित पुष्यत् ।

(५) धन्नामुनिके उरु (साथल) जेमे प्रियगु वृक्षकी शाखा, बोरडी वृक्षकी शाखा, भगरी वृक्षकी शाखा, तरुणको छेदके धुपमे शुक्रानेके माफीक शुष्क थी यायत् मास लोही रहित ।

(६) धन्ना अनगारके कम्मर जेसे ऊंटका पाँच, जरम्बका पाँच, भेसका पाँचके माफीक यायत् मस लोही रहित ।

(७) धन्नामुनिका उदर जेसे भाजन-मुकी हुई चमकी दीवडी, रांटी पकानेकी बेलडी, लकडेकी कठीतरी इसी माफीक यायत् मंस रक्त रहित ।

(८) धन्नामुनिकी पासलीयां जेसे घासका करडीया, घासकी टोपली, घासके पासे, घामका सुंडला यायत् मस रक्त रहित थे ।

(९) धन्नामुनिके पृष्ठविभाग जेसे घामकी कोठी, पायाणक गोलाकी श्रेणि इत्यादि मस रक्त रहित ।

(१०) धन्नामुनिका हृदय (छाती) बीछानेकी घटाइ, पत्ते का पखा, दुपडपखा, तालपत्तेका पखा माफीक यावत् पुर्धवत् ।

(११) धन्नामुनिके याहु जैसे समलेकी फली, पहाडकी फली, अगथीयाकी फली इसी माफीक यावत् मन रक्त रहित ।

(१२) धन्नामुनिका हाथ जैसे सुका छाणा, बढये पत्ते, पोलासके पत्तेके माफीक यावत् मन रक्त रहित ।

(१३) धन्नामुनिकी हस्तागुलीयों जैसे तुघर, मुग, मठ, उडदकी तरुण फली, काठके अतापसे सुकाइके माफीक पुर्धवत् ।

(१४) धन्नामुनिकी ग्रीवा (गरदन) जैसे लोटाका गला, कुडाका गला, कमडलके गला इत्यादि मन रहित पुर्धवत् ।

(१५) धन्नामुनिके होठ जैसे सुकी जलौख, सुका श्लयम, लायकी गोली इसी माफीक यावत्—

(१६) धन्नामुनिकी जिह्वा सुका बडका पत्ता, पोलासका पत्ता, गोलरका पत्ता, सागका पत्ता यावत्—

(१७) धन्नामुनिका नाथ जैसे आम्रकी कातली, अथाडीकी गुठली, बीजोरेकी कातली, हरीछेदके सुकाइ ही इस माफीक—

(१८) धन्नामुनिकी आखी (नेत्र) बीणाका छिद्र, यामलीके छिद्र, प्रभातका तारा इसी माफीक—

(१९) धन्नामुनिका कान मूलेकी छाल, खरबुजेकी छाल, कारेलाकी छाल इसी माफीक—

(२०) धन्नामुनिका शिर (मस्तक) जैसे तुयाका फल, कालाका फल, सुका हुषा होता है इसी माफीक—

(२१) धन्नामुनिका सर्व शरीर सुखा, भुखा, लुखा, मास रक्त रहित था ।

इन्हीं २१ बोलोंमें उदर, धान, द्रोण, जिह्वा ये चार बोलमें हाड नहीं था। शेष बोलोंमें रक्त रक्षित वैचल्य हाडपर चरम बिटा हुआ नशा आदिसे घग्घा हुआ शरीर मात्रवा आकार दोखाइ दे रहा था। उठते बैठते समय शरीर कडकड बोल रहा था। पासली आदिकी हड्डीयां मालाके मणकोंकी माफिक अलग अलग गीनी जाती थी, छातीका रग गद्दाकी तरग समान तथा सुका सर्पका मोखा मुताबिक शरीर ही रहा था, हस्त तो सुका थोरीके पंजे समान था चलते समय शरीर कम्पायमान हो जाता था, भस्त्व डींगडींग करता था, नेत्र अन्दर घेठ गया था, शरीर निस्तेज हो रहा था, चलते समय जैसे काटका गाडा, सुके पत्तेका गाडा तथा कौडीयोंके कोयलाका अवाज होता है इसी माफिक धम्मामुनिक शरीरने हड्डीयोंका शब्द होता था इलना, चलना, धोलना यह सब जीवशक्ति ही होता था। पिश पाधिकार खदकजीने देगो (भगवती सूत्र श० २ उ० १)

इतना तो अवश्य था कि धम्मामुनिक आत्मबलसे उन्हींका तपतेजसे शरीर धडा ही शोभायमान दीखाइ दे रहा था।

भगवान् धीग्प्रभु मूमंडलको पवित्र करते हुये राजगृह नगरके गुणशीलोद्यानमें पधारे। श्रेणिकराजादि भगवान्को बन्द नको गया। देशना सुनके राजा श्रेणिकने प्रश्न किया कि हे कर्णासिन्धु! आपके इन्द्रमूर्ति आदि चौदा हजार मुनियोंके अन्दर दुष्कर करणी करनेवाला तथा महान निजरा करनेवाला मुनि कौन है ?

भगवानने उत्तर फरमाया कि हे श्रेणिक! मेरे चौदा हजार मुनियके अन्दर धन्ना नामका अनगर दुष्कर करणीका करने वाला है महानिर्जराका करनेवाला है।

श्रेणिकराजाने पुछा कि क्या कारण है ?

भगवानने फरमाया कि हे धराधिप ! काकदी नगरीमे भद्रा शैठाणीका पुत्र बत्तीस रभाधिवे साथ मनुष्य मन्वन्धी भोग भोग्य रहा था । बहापर मेरा गमन हुवा था, देशना सुन मेरे पाम श्रीक्षा लेके छट छट पारणा, पारणे आत्रिल यावत् धत्रामुनिका शरीरका सपूर्ण यर्णन कर सुनाया । “ इम वास्ते धन्ना० ”

श्रेणिकराजा भगवानको बन्दन-नमस्कार कर धत्रामुनिके पास आया, बन्दन-नमस्कार कर गाला कि हे महाभाग्य ! आपका धन्य है पुर्वभयमे अच्छा पुन्योपार्जन कीया था कृतार्थ है आपका मनुष्यजन्म, सफल किया है आपने मनुष्यभय इत्यादि स्तुति कर बन्दन कर भगवानके पास आया अर्थात् जेमा भगवानने फरमायाया वेमा ही देखनेसे बडी खुशी हुई भगवानको बन्दकर अपने स्थानपर गमन करता हुवा ।

धत्रामुनि एक समय रात्रीमे धम चिंतयन करता हुवा पन्ना विचार किया कि अत्र शरीरसे कुच्छ भी कार्य हो नही सक्ता है पौद्गल भी थक रहा है ता सूर्योदय होते ही भगवानने पुच्छके विपुलगिरि पर्यत् पर अनसन करना ठीक है सूर्योदय होते ही भगवानकि आज्ञा ले मर्ध माधु साधिवियोंसे क्षमत्क्षामणा कर न्यत्रर मुनियोंके साथ धीरे धीरे विपुलगिरि पर्यतपर जाके च्यारो आहारका त्याग कर पादुगमन अनसन कर दीया आलोचन पूरक एक मासका अनसनके अन्तमे समाधिपूरक काल कर उर्ध्व लोचमे त्र्यं देवलोकोके उपर मर्यार्थ सिद्ध वैमानमें तेतीस मा-गगपमकी स्थितिवाले देवता हो गये अन्तर महूर्तमें पर्याप्त आयको प्राप्त हो गया ।

स्थिर भगवान धत्रा मुनिको काल किया जानके परि-

निर्घानार्थं काउस्सग्नं कर धन्ना मुनिं का वस्त्रपात्र लेषे भगवान्कं पास आये वस्त्रपात्र भगवान्के आग रग्वके जोले कि हे भगवान् आपका शिष्य धन्ना नामका अनगर आठ मान्कि दीक्षा एक मासका अनसन कर कहा गया होगा ?

भगवान्ने कहा कि मेरा शिष्य धन्ना नामका अनगर दुष्कर करनी कर नव मासकि सर्व दीक्षा पाल अन्तिम समाधी पुयक काल कर उर्ध्वं सर्वार्थमिद्ध नामका महा वैमानमें देवता ह्या है । उसकी तेतीस सागरोपमकि स्थिति है ।

गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवान् धन्ना नामका देव देवलोकसे चयक कहा जावेगा ?

भगवान्ने उत्तर दीया । महाधिदेहक्षेत्रमें उत्तम जातिकुलके अन्दर जनम धारण करेगा यह कामभोगसे विरक्त होके और स्थिररौके पाम दीक्षा लेत्र तपश्चर्याद्विसे कर्माका नाश कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगा । इति तीसरे धर्गका प्रथम अध्ययन समाप्त ।

इसी भाफीक सुनक्षत्र अनगर परन्तु बहुत वर्ष दीक्षा पाली सर्वार्थमिद्ध वैमानमें देव हुये महाधिदेहक्षेत्रमे मोक्ष जावेगा । इति ॥ २ ॥

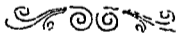
इसी भाफीक शेष आठ परन्तु दो राजगृह, दो प्र्येतविका, दो घाणीया ग्राम, नवमो हथनापुर दशमो राजग्रह नगरके (३) ऋषिदाश (४) पेलकपुत्र (५) रामपुत्रका (६) चन्द्रकुमार (७) पोटीपुत्र (८) पैटालकुमार (९) पोडिलकुमार (१०) बहलकुमारका ।

धनादि नव कुमारका महोत्सव राजासोने और बहलकुमारका पिताने कीयाथा ।

धनो नवमास, येद्वलजुमर मुनि छ मास, शेष आठ मुनिया
 बहुत काल दीक्षा पाली । शशो मुनि सर्वार्थमिद्ध धैमान तेतीस
 मागरोपमकि स्थितिमे देवता हुये घहामे घयवे महाविद्दक्षेत्रमे
 मोक्ष जायगा इति श्री अनुत्तरो यथाऽसूत्रके तीसरे वर्गके दशा
 प्ययन समाप्त ।

इति श्री अनुत्तरोववाड सूत्रका मूलपरसे सचित्त सार ।

इतिश्री शीघ्रबोध भाग १७ वा समाप्तम्



श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला पु न ६१

श्री कक्मरीश्वर सदगुरुभ्यो नम

त्रय श्री

शीघ्रबोध भाग १८ वा

श्रीनिद्धसूरीश्वर सदगुरुभ्या नम

त्रयश्री

निरयावलिका सूत्र.

(सञ्चित साग)



पाचमा गणधर सौधमस्थामि अपने शिष्य जम्बुप्रते कह रहे हैं कि हे चीरजीव जम्बु ! मधुज्ञ भगवान् वीरप्रभु निरयावलिका सूत्रक दश अध्ययन परमाये हैं वह मैं तुझ प्रति कहता हू ।

इस जम्बुद्विपमें भारतभूमिके अलंकाररूप अगदेशमें अलकापुरी सदृश चम्पा नामक नगरी थी जिसके बाह्यर इशान कोनमे पुणभद्र नामका उद्यान जिसके अन्दर पुर्णभद्र यक्षका यक्षायतन अशोकवृक्ष और पृथ्वीशीलापट्ट इन मधुका धर्षण 'उषयाद् सूत्र' मे सविस्तार किया हुआ है शास्त्रधर्मों उन सूत्रसे देखनेके सूचना करी है ।

उस चम्पानगरीके अन्दर कोणक नामका राजा राज कर रहा था जिसके पद्मावति नामकी पट्टराणी अति सुकुमाल और सुन्दरानी, पाचेन्द्रिय परिपूर्ण महीलायोंके गुण सयुक्त अपने पतिके साथ अनुरक्त भोग भोग्य रही थी ।

उस चपा नगरीमें श्रेणकराजाका पुत्र काली राणीका अगज काली नामका कुँमर बसता था । एक समयकि घात है कि काली कुमार तीन हजार हस्ती तीन हजार अश्व तीन हजार रथ और तीन घोड पेदलके परिवारसे कोणकराजाके साथ रथमुशरु सग्राममे गया था ।

कालीकुँमारकी माता कालीराणी एक समय कुटम्ब चिंतामें धरतती हुई एसा विचार कियाकि मेरा पुत्र रथमुशल सग्राममें गया है वह सग्राममें जय करेगा या नही ? जीवेगा या नही ? मैं मेरा कुँमरको जीता हुआ देखुगा या नही ? इस घातोंका आर्ति ध्यान करने लगी ।

भगवान् धीरमभु अपने शिष्य समुदायके समुहसे पृथ्वी मडलकों पवित्र करते हुये चम्पानगरीके पुर्णभद्र उद्यानमे पधारे ।

परिपदावृन्द भगवन्का वन्दन करनेको गये इदर कालीराणीने भगवन्के आगमनकि घाता सुनके विचार किया कि भगवान् सर्वज्ञ है चलो अपने मनका प्रश्न पुच्छ हम घातका निणय करे कि याघत मेरा पुत्र जीयताको मैं देखुगी या नही ।

कालीराणीने अपने अनुचरोंका आदेश दिया कि मैं भगवानको वन्दन करनेके लिये जाती हु घाम्ते धार्मीक प्रधानरथ अच्छी सजायटकर तैयार कर जल्दी लावों ।

कालीराणी आप मज्जन घरके अदर प्रवेश किया स्नान मज्जन कर अपने धारण करने योग धरामूपण जोकि बहत्त कि

मति थे यह धारणकर बहुतसे नायर चाकर गोजा दास दासी यथे परिवारसे यहारके उम्भान शालमें आइ, यहापर अनुचरोने धार्मिक रथको अन्ही सजाघट कर तैयार रखा था, कालीराणी उस रथपर आरूढ हा चम्पानगरीके मध्यमजारसे निक्कये पणभद्रोधानमें आइ, रथसे उतरके सपरिवार भगवानको यन्दन-नमस्कार कर सेवा-भक्ति करने लगी।

भगवान धीन्रभुने कालीराणी आदि धातागणाको विचित्र प्रकारसे धर्मदेशना सुनाइ कि हे भव्य ! इम अपार ममारके अन्दर जीव परिभ्रमन करता है इमका मूल कारण आरभ और परिग्रह है। जयतक इहाका परित्याग न किया जाय वदातक ससारके जन्म, जरा, मृत्यु, रोग, शाक इत्यादि दु खसे सुटना नहोगा यास्ते मर्यशक्तियान् यनके मर्य व्रत धारण करा अगर पसा न यने तो देशवती यनो, ग्रहन किये हुये व्रताको निरति चार पालनेसे जीव आराधि होता है आराधि होनेसे ज० तीन उत्पृष्ट पन्दरा भवमें अवश्य मोक्ष जाता है इत्यादि देशना दी।

धर्मदेशना श्रवण कर धातागण यथाशक्ति न्याग धैराग्य धारण किया उस समय कालीराणी देशना श्रवण कर हय सतो-चको प्राप्त हो बोली कि हे भगवान ! आप परमाते हैं यह सब सत्य है मैं ससारसमुद्रके अन्दर इधर उधर गोधा खा रही हूँ। हे करूणासिन्धु ! मेरा पुत्र कालीकुमार सैन लेके कोणवराजाके साथ रथमुशल सग्राममें गया है तो क्या वह शत्रुवोंपर विजय करेगा या नहीं ? जीवेगा या नहीं ? हे प्रभो ! मे मेरा पुत्रको जीवता देखुंगी या नहीं ?

भगवानने उत्तर दिया कि हे कालीराणी ! तेरा पुत्र तीन हजार हस्ती, तीन हजार अश्व, तीन हजार रथ और तीन घोड

पैदलके परिवारसे रथमुशाल संग्राममें गया है। पहले दिन चेटक नामका राजा जो श्रेणिकराजाका सुसंग चेलनाराणीका पिता शोणकराजाके नानाजी कालीकुमारके सामने आया कालीकुमारने कहा कि हे वृद्धययधार्मक नानाजी ! आपका घाण आने दिजिये नहींतो फीर बाण फेंकनेकी दिलहीमें रहेगी। चेटकराजा पार्श्व-नायजीका श्रावक था वह यगर अपराधे किसीपर हाथ नहीं उठाते थे। कालीकुमारने धनुषबाणको खुत्र जोगसे चढाया, अपने हीचणको जमानपर म्यापन कर धनुष्यकी फाणचको धानतक लेजाके जोगमें बाण फेंका परन्तु चेटकराजाको बाण लगा नहीं आता हुआ बाणको देख चेटकराजाको बहुत गुस्मा हुआ। अपना अपराधि ज्ञानके चेटकराजाने पराक्रमसे बाण मारा जिसमे जेमे पर्यतकी टूक गीरती है इसी माफीक एकही बाणमें कालीकुमार मृत्युधर्मकी प्राप्त हो गया। वस, मामत शीतल हो गये, धरजा-पताका निचे गिर पडी यास्तं हे कालीराणी ! तु तंग कालीकुमार पुत्रको जीधता नही देखेगी।

कालीराणी भगवानके मुखार्चिन्दसे कालीकुमार मृत्युधि यात शरणकर अत्यन्त दु खसे पुत्रका शोक के मारे मुच्छित होवे जैसे डेदी हुर चम्पककी लता धरतीपर गिरती है इसी माफीक कालीराणी भी धरतीपर गिर पडी सर्व अग शीतल हो गया *

महुत्तादि कालके यादमे कालीराणी सचेतन होवे भगवानसे

१ चेटकराजाको देवीका वर था वान्ते उनका बाण कमी माली नहीं जाता था।

* छत्रियोंका यह व्यवहार नही है कि किसीका दुख हो एसा बड़ परन्तु मर्याद भक्तिप्रसा लभ जाना या कृपातिर्नोके लिये कौमी प्रकारका कायदा नही होता है। इसी कारणम कालीराणीन दीक्षा ग्रहन की थी।

बढ़ने लगी कि हे भगवान आप परमात्में हो यह सत्य है मन न-
जरोसे नहीं देखा है तथापि नजरान देगे हुये कि माफीक सत्य
है मसा यह पद्वन नमस्कार कर अपने ग्यपर घेठक अपने स्था
नपर जाये लिये गमन किया ।

नाट—अन्तगढ दशाग आठये घगमें इम कारणमे घैरागवो
प्राप्त हो भगवानक पास दिभा ग्रहन कर एकावली जादि तप
भया घुर कर्म निपुवा जीत अन्तमें वयलज्ञान प्राप्त कर मोभ गइ
है पर्य दशा राणीया नमहना ।

भगवानने कालीराणीको उत्तर दीयाथा उस समय गौतम
स्वामि भी बहा मौजूद थे उत्तर सुनके गौतमस्वामिन प्रभ्र
किया कि हे भगवान । कालीकुमार घेठक राजाये घाणसे मघाममें
मृत्यु घमका प्राप्त हुआ है ना एसे मघाममें मरनेवागेकि क्या
गति होती है अर्थात् कालीकुंमर मरक वीनसे स्थानमें उत्पन्न
हुवा होगा ?

भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम ! कालीकुमार मघाममें
मरक चौथी पक्षप्रभा नामकि नरकके हेमाल नामका नरका
घाममें दश सागरोपमकि स्थितियाला नैरियापणे उत्पन्न हुवा है ।

हे भगवान ! कालीकुमारने वीनसा आरभ भारभ समारभ
कीया था वीनसा भोग सभोगमें गृहित, मुष्टिष्ठत और वीनसा
अशुभ कर्मोंके प्रभावसे चौथी पक्षप्रभा नरकके हेमाल नरकाघा
मम नैरियापणे उत्पन्न हुवा है ।

उत्तरमें भगवान सविस्तारसे परमाते है कि हे गौतम !
जिस समय राजगृह नगरके अन्दर धेणिकराजा राज कर रहा
था धेणिकराजाके नन्दा नामकि राणी सुतुमाल सुन्दराकारथी
उसी नन्दाराणीके अगज अभय नामका कुंमर था । यह च्यार

बुद्धि सयुक्त माम, दाम, दड, भेदका जाणकार, राजतंत्र चला-
नेमें बडाही दक्ष था श्रेणिकराजाके अनेक रहस्य कार्य गुप्त कार्य
करनेमें अश्वेश्वर था ।

राजा श्रेणिकके चलना नामकि राणी एक समय अपनी सुख
शय्या क अन्दर न सुती न जागृत एमी अवस्थामें राणीने सिंहका
स्वप्न देखा राजामे कहना स्वप्नपाठकीको बोलाना स्वप्नोंके
अर्थ श्रवण करना यह सर्व गौतमजुमारके अधिकारमें देवना ।

राणी चलनाका माधिक तीन मास होनेपर गर्भके प्रभावसे
दोहले उत्पन्न हुये कि धन्य है जो गर्भवन्ती मातायों जिन्हींका
नीयित सफल है कि राजा श्रेणिकके उदरका मास जिसको तेलके
अन्दर शोला बनाने मदिराके माय जाती हुई भोगवती हुई रहे
अर्थात् दोहलाको पूर्ण करे । एसा दोहलाका पुर्ण नहीं करती हुई
चलना राणी शरीरमें कृप वन गई शरीर कम जोर पहुँचकर
यदन बिलखा नेत्राकि चेष्टा आदि दीन वन गई औरभी चलना-
राणी, पुष्पमाला गन्ध बस्त्र भूषण आदि जो विशेष उपभोगमें
लिये जातेथे-उसको त्यागरूप कर द्रिया या और अधोनिश
अपने गालोंपर छाये दे के आर्तध्यान करने लगी ।

उस समय चलना राणीके अगकि रक्षा करनेवाली दासी
योंने चलना राणीकि यह दशा देखके राजा श्रेणिकसे सर्व घात
नियेदन कि । राजा सर्व घात सुनके चलनाराणीके पास आया
और चलना राणीको सुखे लुखे भूये अर्थात् शरीरकि स्वभाव चेष्टा
देख बोलकि हे प्रिये ! आपका यह हाल क्यों हो रहा है तुमारे
दोहमें क्या घात है यह सब हमका कहो ? राणी राजाका वचन
सुना परन्तु पीछा उत्तर कुछभी न दीया घातभी ठीक है कि
उत्तर देने योग्य घातभी नहींथी ।

राजाश्रेणिकने और भी दोय तीनयार कहा परन्तु राणीने कुछ भी जबाब नही दीया। आखिर राजाने कहा, हे राणी ! क्या तेरे एसी भी रहस्यकी बात है कि मेरेके भी नही कहती है ? राणीने कहा कि हे प्राणनाथ मेरे एसी कोई भी बात नही है कि मैं आपसे गुप्त रखु परन्तु क्या करू यह बात आपको येहने योग्य नही है। राजाने कहा कि एसी कौनसी बात है कि मेरे सुनने लायक नही है मेरी आज्ञा है कि जो बात हो सो मुझे कह दो। यह सुनके राणीने कहा कि हे म्यामि ! उस म्यपन प्रभावसे मेरे जो गर्भ के तीन माम्नाधिक होनेसे मुझे दोहला उत्पन्न हुआ है कि मैं आपके उदरके मांसके शूले मदिराके साथ भोगवती रहू। यह दोहला पुण न होनेसे मेरी यह दशा हुई है।

राजा श्रेणिक यह बात सुनके बोला कि हे देवी ! अब आप इस बात कि बिल्कुल चिंता मत करो जिम रीतीसे यह तुमारा दोहला सम्पूर्ण होगा एसा ही मे उपाय करुगा इत्यादि मधुर शब्दोंसे विश्वास देके राजाश्रेणिक अपने कचेरीका स्थान था वहा पर आ गये।

राजाश्रेणिक सिंहासन पर बैठके विचार करने लगा कि अब इस दोहले को कौन उपायसे पुन करना उत्पातिक, धिन यिक, कर्मिक, परिणामिक इस च्यारी युद्धियोंके अन्दर राजाने खुय उपाय सोच कर यह निश्चय किया कि यातो अपने उदरका माम देना पडेगा या अपनि जवान जावेगा तीसरा कोई उपाय राजाने नही देखा। इस लिये राजा शुन्योपयोग होके चिंता कर रहा था।

इतनेमें अभयकुमर राजाको नमस्कार करनेके लिये आया, राजाको चिंताग्रस्त देखके कुमर बोला। हे तातजी ! अन्य

दिनोंमें जय मैं आपके धरण कमला मैं मेरा शिग देता हूँ तब आप मुझे बतलाते हैं राज कि धार्ता अलाप करते हैं। आजतों कुछ भी नहीं, इतना ही नहीं बल्कि मेरे आनेका भी आपको स्याद ही ख्याल होगा। तो इस्का कारण क्या है मेरे मोजुदगीमें आपको इतनि क्या फीकर है ?

राजाश्रेणिकने चेलनाराणीके दोहले नयन्धी मय घात कटी है पुत्र ! मैं इसी धितामें हूँ कि अत्र राणी चेलनाका दोहला केसे पुर्ण करना चाहिये। यह वृत्तान्त सुनके अभयकुमार बोला है पिताजी ! आप इस यातका विचिन् भी फीकर न करे, इस दोहलाको मैं पुण करुंगा यह सुन राजाका पूर्ण धिमधाम होगया अभयकुमार राजाको नमस्कार कर अपने स्थानपर गया यह जाके विचार करने पर एक उपाय सोचके अपने रहस्यके कार्य करनेवाले पुरुषोंको बुलवाये। और कहेने लगे कि तुम जायों माम नेचनेवालोंके यह तत्कालिन माम रुधिर सयुक्त गुप्तपणे ले आधो इदर राजा श्रेणिकसे सयेत कर दीया कि जय आपके हृदय पर हम मम रखके काटेगे तब आप जौरसे पुकार करते रहना, राणी चेलनाको एक किनातके अन्तरमें घेठादी इतनेमें यह पुरुष मास ले आये युद्धिके सागर अभयकुमरने इसी प्रकारसे राणी चेलनाका दोहला पुर्ण कर रहाथा कि राजाके उदर पर यह लाया हुया मम रख उसको काट काटके शुल्ल घनाके राणीको दीया राणी गर्भके प्रभायसे उस्का आचरण कर अपने दोहलेको पुर्ण कीया। तब राणीके दीलको शान्ति हुई।

नोट—शास्त्रकाराने 'स्थान स्थान पर फरमाया है कि हे भव्य जीवो ! कौसी जीवके साथ धैर मत रखो कर्म मत धान्धो न जाने यह धैर तथा कर्म किम प्रकारसे कौस बखतमें उदय

हागा राजा श्रेणिक और चेलनाक गर्भका जीव एक तापमक भयमे कम उपाजन कीयाथा यह इम भयमें उदय हुआ है। इस कथानिक सबन्धका सार यह है कि कीमीने साथ वैर मत रखा कम मत बान्धो किमधिकम्।

एक समय राणीने यह विचार किया कि यह भरे गर्भका जीव गर्भमें आते ही अपने पिताके उदर मासभक्षण कीया है, तो न जाने जन्म होनेसे क्या अनर्थ करेगा इम लिये मुझे उचित है कि गर्भहीमें इमका विध्वंस करदु। इमके लिये अनेक प्रयोग किया परन्तु सबके सब निःफल हो गये। गर्भक दिन पुन हानेसे चेलनाराणीने पुत्रको जन्म दिया। उम बखत भी चेलनाराणीने विचार किया कि यह कोई दुष्ट जीव है जो कि गर्भमें आते ही पिताके उदरका मासभक्षण कीया था तो न जाने बड़ा होनेसे कुठका क्षय करेगा या और कुच्छ करेगा वास्ते मुझे उचित है कि इम जन्मा हुआ पुत्रको कीसी पकान्त स्थानपर (उखरडीपर) डालदु। एमा विचार कर एक दासीको बुलाके अपने पुत्रका पकान्तमें डालदेनेकी आज्ञा दे दी।

यह हुकमकी नोकर-दासी उम राजपुत्रको लेक आशाक नामकी सुकी हुई घाड़ीमें पकान्त जाके डालदीया। उम राजपुत्रको भग्नघाड़ीमे डालतो ही पुत्रके पुन्योदयमे यह घाड़ी नथपल्ल धित हो गई। उसकी खबर राजाके पास आई।

नोट—दासाने विचारा कि मैं राणीके पहनेसे कार्य किया है परन्तु कभी राजा पुच्छेगा तो मैं क्या जवाब दुगी वास्ते यह सब हाल राजामे अर्ज करदेना चाहिये। दासीने सब हाल राजासे कहा राजाने सुना। फिर

राजा श्रेणिक अशोकघाड़ीमें आया बहापर देखा जावे ता

तत्काल जन्मा हुआ राजपुत्र पकान्त स्थानमें पडा है, देखतेही राजा बहुत गुस्से हुआ, उस पुत्रको लेवे राणी चेलनाके पास आया राणी चेलनाका तिरस्कार करता हुआ राजाने कहा कि हे देवी ! यह तुमारे पहला ही पहले पुत्र हुआ है, इसका अनुक्रमे अच्छी तरहसे संरक्षण करो राणी चेलना लज्जित होके राजाके घबनेका सयिनय स्वीकार कर अपने शिरपे चढाये और राजा श्रेणिकके हाथसे अपने पुत्रको ग्रहण कर पालन करने लगी ।

जब राजपुत्रको पकान्त डालाथा उस समय कुमारकी एक अंगुली कुहुंदने घाटडाली थी उसीमें रौद्रविकार होके रद हो गई उसके मारा यह बालक रौद्र शब्दसे रूदन कर रहा था राणीने राजाके कहनेसे पुत्रको स्वीकार कीया था । परन्तु अन्दरसे तो यह भी घती थी जब पुत्रका रूदन शब्द सुन खुद राजा श्रेणिकपुत्रके पास आके उस मडे हुवे रौद्रको अपने मुहमें अगुलीसे चुम चुमके बाहर डालता था जब कम वेदना होनेसे यह पुत्र स्वरूप देर चुप रहता था और पीर रूदन करने लगजाता था इस माफीक राजा गतभर उस पुत्रका पालन करनेमें खुषही प्रयत्न किया था ।

नोट—पाठक्यर्गको ध्यान रखना चाहिये कि मातापिताका कितना उपकार है और यह बालककी कितनी हिफानत रखते है ।

उस बालकको तीजे दिन चन्द्र-सूर्यके दर्शन कराये, छठे दिन रात्रिजाग्रन किया, इग्यारमे दिन असूचि कर्म दूर किया, बारहवे दिन भमनादि घनायके न्यात-जातघालोको गुलायके उस कुमारका गुणनिष्पन्न नाम जोकी इस बालकको जन्मसमय

एकान्त डालनेसे कुर्कटने अगुली फाटडाली थी, पास्ते इस कुमारात्रा नाम “कोणक” दीया था

क्रमसर वृद्धि होने हुवेके अनेक महोत्सव करते हुवे युवक अवस्था होनेपर आठ राजकन्याओंके माघ वियाह कर दिये, यायत् मनुष्य संयन्धी कामभोग भोगयता हुया सुखपूर्वक काल निर्गमन करने लगा

एक नमय कोणककुमारके दिलमें यह विचार हुया कि श्रेणिकराजाके माजुदगीमें मैं स्थय राज नहीं करसक्ता हु, वास्ते काइ मोका पाये श्रेणिकराजाको निषडयन्धन कर मैं स्थय राज्या भिषेक करवाके राज करता हुया विचरं। केइ दिन इम यातकी कोशीप करी, परन्तु पसा अपसर ही नहीं बना। तत्र कोणकने काली आदि दश कुमारांको खुलयायके अपने दीलका विचार सुनाके कहा कि अगर तुम दशो भाइ हमारी मददमें रहो तो मे अपने राजका इग्यारा भाग कर एक भाग मैं रखुगा और दश भाग तुम दशो भाइयांको भेंट कुगा। दशो भाइयोने भी राजक लोभमे आके इम यातको स्वीकार कर कोणककी मददमें हो गये। “परिग्रह दुनियामें पापका मूल कारण है परिग्रहके लिये केस कसे अनर्थ किये जाते है”

एक समय कोणकने श्रेणिकराजाको पकड निषडयन्धन बाधके पिजरेमें बन्ध कर दिया, और आप राज्याभिषेक करवाक स्थय राजा बन गया एक दिन आप स्नानमज्जन कर अच्छे श्रामुषण धारण कर अपनी माता चेलनाराणीक धरुण ग्रहन करनेको गया था राणी,चेलनाने कोणकका कुछ भी सत्कार या आशिर्वाद नहीं दिया। इसपर कोणक बोला कि हे माता! आज तेरे पुत्रको राज प्राप्त हुया है तो तेरेको दर्प क्यों नहीं

होता है। चेलनाने उत्तर दिया कि हे पुत्र ! तुमने कौनसा अच्छा काम किया है कि जिसके जरिये मुझे खुशी हो। क्या कि मैं तो गर्भमें आया था जयहीसे तुझे ज्ञात होती थी, परन्तु तेरे पिताने तेरेपर बहुतही अनुराग रखा था जिसका फल तेरे हाथसे मीला है अर्थात् तेरे देवगुरु तुल्य तेरा पिता है उन्हींको पित्ररेमें बन्ध कर तु राजप्राप्त किया है, यह कितने दुःखकी यात है अब तुही यह के मुझे किम यातकी खुशी आवे।

कोणकके पूर्वभ्रमका धर श्रेणिकराजासे था यह निवृत्ति हो गया अब चेलनागणीके घबरावका कारण मीलनेसे कोणकने पुरुडा कि हे माता ! श्रेणिकराजाका मेरेपर क्या अनुराग था तब गर्भसे लेके सब यात राणी चेलनाने सुनाई। इतना सुनतेही अत्यन्त भक्तिभावसे कोणक बोला कि हे माता ! अब मैं मेरे हाथसे पिताका बन्धन छेदन करुगा। एसा यहके कोणकने एक कुराट (कर्मी) हाथसे लेके श्रेणिकराजाके पास जाने लगा। उधर राजा श्रेणिकने कोणकको आता हुआ देखके विचार किया कि पेस्तर तो हम दुष्टने मुझे बन्धन बांधके पित्ररामें पुर दीया है अब यह कुराट लेके आरहा है तो न जाने मुझे कौस कुमौतसे मारेगा इससे मुझे स्ययही भर जाना अच्छा है, एसा विचारके अपने पास मुद्रिकामें नग-हीरकणी थी यह भक्षण कर तत्काल शरीरका त्याग कर दीया जब कोणक नजदीक आके देखे तो श्रेणिक निचेष्ट अर्थात् मृत्यु पाये हुये शरीरही देखाई देने लगा उस समय कोणकने बहुत रुदन-धिलाप किया परन्तु भव्यताकी कौन मीटा मये उस समय सामन्त आदि पक्षत्र होके कोणकका आश्वासना दी तब कोणकने रुदन करता हुआ तथा अन्य लोक मीलके श्रेणिकका निर्वाण कार्य अर्थात् मृत्युक्रिया करी। तत्पश्चात् कितनेक रोजके बाद कोणकराजा राजगृहीमें निवास

करते हुवेको बड़ाही मानमिक दुःख होने लगा बगवत बखतपर दीलमें आति है कि मैं केमा अधन्य हु, अपुन्य हु, अकृतार्थ हु, कि मेरे पिता-देवगुरुकी माफीक मेरेपर पण प्रेम रखनेवाले होनेपर भी मेरी कितनी कृतघ्नता है। इत्यादि दीलको बहुत रंज होनेके कारणसे आप अपनी राजधानी चम्पानगरीमें ले गये और बड़ाही निवास करने लगा। यहापर वाली आदि दश भाइयोंको बुलायके राजके इग्यारा भाग कर एक भाग आप रखके शेष दश भाग दश भाइयोंको भेंट दीया, और राज आप अपने स्वतंत्रतासे करने लगगये, और दशों भाइओंने कोणककी आज्ञा स्वीकार करी।

चम्पानगरीके अन्दर श्रेणिकराजाका पुत्र चेलनाराणोका अंगज बहलकुमार जोके कोणकराजाके छोटाभाइ निवास करता था श्रेणिकराजा जीयतो 'नीचाणक गन्ध हस्ती और अठारें सरावाला हार देखीया था। सीचाणक गन्ध हस्ती केसे प्राप्त हुआ यह बात मूलपाठमें नही है तथापि यहा पर मक्षित अन्य स्थलसे लिखते हैं।

एक धनमें हस्तीयाका युव रहता था उस युवके मालीक हस्तीको अपने युवका इतना ता ममस्व भाव था कि कीसी भी हस्तणीके बचा होनेपर यह तुरत मारडालता था कारण अगर यह बचा बड़ा होनेपर मुझे मारके युवका मालिक धन प्रावगा। सब हस्तणीयोंके अन्दर एक हस्तणी गर्भवन्ती हो अपन पेरोंसे लगडी हो १-२ दिन युवसे पीछे रहेने लगी, हस्तीने विचार किया कि यह पायासे कमजोर होगी। हस्तणीने गर्भ दिन नकीक जानके एक तापमाक वृक्षजालीके अन्दर पुत्रको जन्म दीया फिर आप युवमें सेमल हो गई। तापसोंने उस हस्ती बचेको पोषण कर बड़ा किया और उसके सृष्टके अन्दर एक

बालटी डालके नदीसे पाणी भगवायके घगेचेको पाणी पीलाना शुरू कर दीया घगेचेकों पाणी सींचन करनेसे ही इसका नाम तापसोने सींचाणा हस्ती रखाथा । कितनेक कालके बाद हस्ती बच्चा, मदमें आया हुआ, उन्ही तापसोंके आश्रम और घगेचेका भंग कर दीया, तापस क्रोधके मारा राजा श्रेणिक पान जाके कहा कि यह हस्ती आपके राजमें रखने योग्य है राजाने हुकम कर हस्तीकों भगवायके नकल डाल बन्ध कर दीया उन्ही रहस्ते तापस निकलते हस्तीकों उदेश कर बोला रे पापी ले तेरे कीये हुये दुष्कृत्यका फल तुजे मीला है जो कि मृतप्रतामे रहेनेवाले तुझको आज इन कारागृहमें बन्ध होना पडा है यह सुन हस्ती भर्मर्षके मारे संकलाको तोड जंगलमें भाग गया राजा श्रेणिकको इस बातका बडाही रज हुआ तब अभयकुमार देवीके आराधना कर हस्तीके पान भेजी देवी हस्तीको मोध दीया और पुर्यभव व हलकुमारका सबन्ध घतलाया इतनेमें हस्तीको जातिस्मरण ज्ञान हुआ देवीके कहनेसे हस्ती अपने आप राजाके वहा आ गया राजा मी उमको राज अभिशेष कर पट्टधारी हस्ती बना लिया इति ।

हारकि उत्पत्ति—भगवान् धीरप्रभु एक समय राजगृह नगर पधारे व राजा श्रेणिक बडाही आडयरसे भगवानकी बन्दन करनेको गया ।

सौधमें इन्द्र एक प्रसन्न सम्यक्थकि दृढताका व्याख्यान करते हुये राजा श्रेणिककि तारीफ करी कि कोइ देव दानव भि समर्थ नही है कि राजा श्रेणिकको समकितसे क्षोभित करसके ।

सर्ष परिपदोंके देवोंने यह बात स्वीकार कगलीथी परन्तु षोय मिथ्यादृष्टी देवोंने इन बातकों न मानते हुये अभिमान कर मृत्युलोकमें आने लगे ।,

राजाश्रेणिक भगवान कि अमृतमय देशना भयणकर धापीस नगरमें जा रहा था उस समय दीय देयता श्रेणिकराजाकि परिक्षा करनेके लिये पकने उदरवृद्धि कर माधियका रूप बनाया दुकान दुकान मुठ अजमाकि याचना कर रहीथी राजा श्रेणिकने देख उसे कहा कि अगर तेरेको जो कुछ चाहिये तो मेरे घडा से लेजा परन्तु यहा फीरक धर्मकि हीलना क्या करती है। साधियने उत्तर दीया कि हे राजन् ! मेरेजेसी ३६००० है तुं कीम कीसको सामग्री देयेंगा। राजाने कहाकी हे दुण ! छतीस हजार हे यह मर्ष रत्नोंकि माला है तेरे जेमी तो पक् तुही है। दुमरा देय साधु यन पक मच्छी पकडनेकि जाल हाथमे लेके जाताको राजा देख उसे भा कहा कि तेगी इच्छा होगा यह हमारे यहा मील जायगा। तब साधु बोलाकि पसे १४००० है तुम कीम कीसको दोगे राजा उत्तर दीया कि १४००० रत्नोंकि माला है तेरे जेमा तुंही है यह दोनों देवतोन उपयोग लगाके देखा तो राजाके एक आत्मप्रदेशमें भी शका नही हुइ तब देवतायाने घडीही तारीफ कनी। एक मृ-युक (मटी) का गोला और एक कुडुकि जाडी यह दो पदार्थ देय देय आकाशमें गमन करते हुये। राजा श्रेणिकने कुंडल युगल तो नदागणीको दीया और मटीका गोला राणी चेलनाको दीया। चेलना उस मटीका गोलाको देख अपमानके मारी गोलाका पक दीया, उस गोलाके पक देनसे फूटके एक दोव्य हार निकला इति।

इम हार और मींचाण हस्तीसे घहलकुमारका उहुतसा प्रेमथा इस धास्ते राजा श्रेणिक और राणी चेलनाने जीयतो हार और हस्ती घहलकुमारको दे दीया।

घहलकुमार अपने अन्तेघर साथमें लेके चम्पानगरीके मध्य भागसे निकलके गगा महा नदी पर जातेथे वहापर सीचांना

गन्धहस्ती यहलकुमारकि राणीको शुडसे पकड जल घीडा करता हुवा कयी अपने शिरपर कयी कुभस्थलपर कयी पीठपर इत्यादि अनेक प्रकारकि फिडा करताया एसे यहुतसे दिन निर्गमन हो गये। इन् यातकी चम्पानगरीके दोय तीन चार तथा यहुतसे रहन्ते एकत्र होते है वहापर लोक श्लाघा करने लगे कि राजका मोजमजा सुख साहीबी तो यहलकुमर ही भोगव रहा है कि जिन्होके पास सीचानक गन्धहस्ती और अठारा सर वाला दिव्य हार है। एसा सुख राजाकाणकके नही है कयु कि उसके शिर तो सब राजकि गटपट है इत्यादि लोक प्रवाह चल रहाथा।

नगर निघासी लागीकी यह घातों फाँणकराजाकी राणी पद्मावतिने सुनी, औरतोंका स्वभावही होता है कि एक वुमरेकी मपत्तिको, शान्तदृष्टिसे कभी नहीं देख सती है, तो यहा तो देराणी-जेठाणीका मामला होनेसे देग्बही कैसे सके। पद्मावती राणी हारहस्ती लेनेमें घडी ही आनुरता रखती हुई उसी बखत राजा काणकके पास जाके अच्छी तरह राजाका कान भर दिया कि यह दुनियाका अपवाद मुझे सुना नहीं जाता है, वास्ते आप कृपा कर हारहस्ती मुझे भगवा दो।

राजा काणक अपनी राणीकी घात सुनके बोला कि, हे देवी! इस घातका कुछ भी विचार न करो हारहस्ती मेरे पितामानाकी मोजुदगीमें यहलकुमारको दीया गया है और यह मेरा लघुबन्धव है, तो यह हारहस्ती मेरे पास रहे तो क्या और यहलकुमारके पास रहे तो क्या अगर भगाना चाहुगा तबही भंगा सहुंगा। इत्यादि मधुरतासे उत्तर दिया।

दुनिया कहती है कि " वाफा एग वाइपदमोका है " राणी पद्मावतीको संतोष न हुआ। फीर दोय तीनचार राजासे अर्ज

राजाश्रेणिक भगवान कि अमृतमय देशना भ्रमणकर वापीम नगरमें जा रहा था उस समय द्योय देयता श्रेणिकराजाकि परिक्षा करनेके लिये पकने उदरवृद्धि कर माधिका रूप बनाया दुकान दुकान मुठ अजमाकि याचना कर रहीथी राजा श्रेणिकने देख उसे कहा कि अगर तेरेको जो कुछ चाहिये तो मेरे यहा से लेजा परन्तु यहा फीरक धर्मकि हीलना क्या करती है। साधियने उत्तर दीया कि हे राजन् ! मेरेजेमी ३६००० है तु कीम कीसको मामग्री देखेगा। राजाने कहाकी हे दुष्टा ! छतीस हजार हे यह मर्ष रत्नोंकि मात्रा है तेरे जेमी तो एक तुही है। दुसरा देय साधु घन एक मच्छी पकडनेकि जाल हायमे लेके जाताको राजा देख उसे भी कहा कि तेरी इच्छा होगा यह हमारे यहा मील जायगा। तय साधु बोलाकि पसे १४००० है तुम कीम कीसको दोगे राजा उत्तर दीया कि १२००० रत्नोंकि माला है तेरे जेमा तुही है यह दीनों देयताने उपयोग लगाके देखा तो राजाके एक आत्मप्रदेशमें भी शका नही हुइ तय देयतायाने यडीही तारीफ करी। एक मृत्युक (मटी) का गोला और एक कुंडलकि जोडी यह दो पदार्थ देक देय आकाशमें गमन करते हुये। राजा श्रेणिकने कुंडल युगल तो नदाराणीको दीया और मटीका गोला राणी चेलनाको दीया। चेलना उस मटीका गोलाकी देख अपमानके मारी गोलाको फेक दीया, उम गालाके फेक देनेसे फूटके एक दीव्य हार नीकला इति।

इस हार और सीचाण हस्तीसे बहलकुमारका बहुतसा प्रेमथा इस यास्ते राजा श्रेणिक ओर राणी चेलनाने जीयतो हार और हस्ती बहलकुमारको दे दीया।

बहलकुमार अपने अन्तेघर साथमें लेके चम्पानगरीके मध्य भागसे निकलक गगा महा नदी पर जातेथे यहापर सीचांता

गन्धहस्ती यहलकुमारकि राणीका शुद्धसे पकड़ जल फ्रीडा करता हुआ कबी अपने शिरपर कबी कुभस्थलपर कबी पीठपर इत्यादि अनेक प्रकारकि थ्रिडा करताथा एने बहुतसे दिन निर्गमन हो गये। इस रातकी चम्पानगरीके दोय तीन चार तथा बहुतसे रहस्ते पक्ष्य होतें हैं बहापर लोक श्लाघा करने लगें कि राजका मोजमजा सुख साहीयी तो यहलकुमर ही भोग्य रहा है कि जिन्होके पास मोचानक गन्धहस्ती और अठारा मर घाला दिव्य हार है। एसा सुख राजाकोणकके नहीं है क्यु कि उसके शिर तो सब राजकि खटपट है इत्यादि लोक प्रवाह चल रहाथा।

नगर निरामी लार्गाकी यह घाता फीणकगजाकी राणी पद्मावतिने सुनी, ओरतांका प्रभायही होता है कि एक दुमरेकी मपत्तिको शान्तदृष्टिसे कभी नहीं देख सती है, तो यहा नो देगणी-जेटाणीका मामला होनेमें देखही केसे सर्वे। पद्मावती राणी हारहस्ती लेनमें प्रही ही आनुरता रखती हुई उम्नी बखत राजा कोणकके पास जाके अच्छी तरह राजाका कान भर दिया कि यह दुनियार्का अपघाद मुझमें सुना नहीं जाता है, घास्ते आप कृपा कर हारहस्ती मुझे मगवा दो।

राजा कोणक अपनी राणीकी बात सुनके बोला कि हे देयी! इस घातका कुछ भी विचार न करग हारहस्ती मेरे पितामानाकी मौजूदगीमें यहलकुमारको दीया गया है और यह मरा लघुग्रन्थय है, ती यह हारहस्ती मेरे पास रहे तो क्या और यहलकुमारके पास रहे तो क्या अगर भगाना चाहुगा तबही मंगा मरुंगा। इत्यादि मयुरतासे उत्तर दिया।

दुनिया कहती है कि “घाका पग साइपदमोका है” राणी पद्मावतीको संतोष न हुआ। पीर दोय तीनचार राजामे अर्जे

लाया, परन्तु बहलकुमर कि तर्फसे वह ही उत्तर मीला कि यातो अपने मातापिताके इन्साफ पर कायम रहे, हारहस्ती मेरे पास रहने दो, आप अपने राजसे ही संतोष रखो, अगर आपको अपने मातापिताके इन्साफ भजुर न रखना हो तो आधा राज हमका देदो और हारहस्ती लेलो इत्यादि ।

राजा कोणक इस बात पर ध्यान नहीं देता हुआ हारहस्ती लेनेके ही कोशील करता रहा ।

बहलकुमरने अपने दिलमें सोचा कि यह कोणक जब अपने पिताको नियड बन्धन कर पिंजरेमें डालनेमें किंचत् मात्र शरम नहीं रखी तो मेरे पाससे हारहस्ती जबर जस्ती लेले इसमें क्या आश्चर्य है? क्यों कि राजसत्ता सैन्यादि सब इसके हाथमें है। इस लिये मुझे चाहिये कि कोणकके गेरहाजरीमें मैं अपना अन्तेवर आदि सब जायदाद लेके वैशालानगरीका राजा चेटक जो हमारे नानाजी हैं उन्हींके पास चला जाऊं । कारण चेटकराजा धर्मिष्ठ न्यायशील है वह मेरा इन्साफ कर मेरा रक्षण करेगा । अलम् । अक्सर पाके बहलकुमर अपने अन्तेवर और हारहस्ती आदि सब सामग्री ले चम्पानगरीसे निकल वैशालानगरी चला गया वहा जाके अपने नानाजी चेटकराजाको सब दकिकत सुनादि चेटकराजाने बहलकुमारका न्यायपक्ष जान अपने पास रख लिया ।

पीछेसे इस बातकी राजा कोणकको खबर हुई तब बहुत ही गुस्ता किया कि बहलकुमरने मुझे पुच्छा भी नहीं और वैशाला चला गया उसी वखत एक शूतको बोलाया और कहा कि तुम वैशालानगरी जाओ हमारे नानाजी चेटकराजा प्रत्ये हमारा नमस्कार करो और नानाजीने कहा कि बहलकुमर कोणकराजाको

संग्राम करनेको तैयार होनाका आदेश दिया काली आदि दशो भार राजके दश भाग लिया था वास्ते उन्होंको कोणकका हुकम मानके संग्रामकी तैयारी करना ही पडा । राजा कोणकने कहा कि हे बन्धुओं ! आप अपने अपने देशमें जाके तीन तीन हजार गज, अश्व रथ और तीन घोड पैदलसे युद्धके तैयारी करो, एसा हुकम कोणकराजाका पा के अपने अपने राजधानीमें जा के मैना कि तैयारी कर कोणकराजाके पाम आये । कोणकराजा दश भाइयोंको आता हुआ देखके आप भी तैयार हो गया, सय सैन्य तेतीस हजार हस्ती तेतीस हजार अश्व, तेतीस हजार मगामीक रथ, तेतीस घोड पैदल इस सब सैनाकी पक्ष कर अगदेशक मध्य भागसे चलते हुये विदेह देशके तर्फ जा रहाथा ।

इधर चेटकराजाको ज्ञात हुआ कि कोणकराजा कालीआदि दश भाइयोंके साथ युद्ध करनेको आ रहा है । तब चेटकराजा कासी, कोशल, अठारा देशके राजाओं जो कि अपने स्वधर्मी थे उन्हाँको दूता द्वारा बुलवाये । अठारा देशके राजा धमप्रेमी बुलवानेके साथ ही चेटकराजाकी सेवामें हाजर हुवे । और बोले कि ह स्वामि ! क्या कार्य है सो फरमाए ।

चेटकराजाने धहलकुमारकी सब हकिमत यह सुनाइ कि अब क्या करना अगर आप लोगाँकी सलाह हो तो धहलकुमारको दे देवे और आप लोगोकी मरजी हो तो कोणकसे संग्राम करे । यह सुनके कमधीर अठारा देशके राजा सलाह कर बोले कि इन्माफके तौरपर न्यायपक्ष ग्य मरणे आयाथा प्रतिपालन करना आपका फर्ज है अगर कोणक राजा अन्याय कर आपके उपर युद्ध करनेका आता हा तो हम अठारा देशके राजा आपके तर्फ

से युद्ध करनेको तैयार है। चेटक राजाने कहा कि अगर आप-
 कि पसी मरजी हो तो अपनी अपनी राजधानीमें जाके स्व स्व
 मैना तैयार कर जलदी आजाओ। इतना सुनतेही स्व राजा
 स्व स्व स्थान गये वहापर तीन तीन हजार हस्ती, अश्व रथ,
 और तीन तीन घोड पैदल तैयार कर राजा चेटकने पास आ
 पहुचे, राजा चेटक भी अपनी मैना तैयार कर मर्घ मतावन
 हजार हस्ती सतावन हजार अश्व सतावन हजार रथ सतावन
 घोड पैदल का दल लेने रवाना हुआ वहाभि अपने देशान्त वि
 भागमे अपना झंडा रोप पढाय कर दिया। उधर अग देशान्त
 विभागमे कोणक राजाका 'पढाय होगया है। दोनों दलके निशान
 'वजा पताकाओं लगगइ है। मग्रामकि तैयारी हो रही है

हस्ती वालोंसे हस्तीवाले अश्ववालासे अश्ववाले रथवालों
 से रथवाले पैदल सुभटाने पैदलवाले इत्यादि साइश युगल व
 नके मग्राम प्रारभ ममय योद्धा पुरुषोंका सिंहनादमे गगा गर्जना
 कर रहा था अनेक प्रकारके वार्जित्र याज रहे थे धर्म सुराओंका
 उत्साह संग्रामके अन्दर बढ़ रहा था आपसमें शस्त्रोंके धपाद हो
 रहीथी अनेक लोकोंका शिर पृथ्वीपर गिर रहाथा, रौद्रसे धर
 तीपर कीच मचरहा था हा हा कार शब्द होरहा था

कोणक राजाकी तर्फसे मैनापति कालीकुमार नियत किया-
 गया था इधरकि तफसे चेटक राजा मैनाका अग्नेश्वर था दोनों सै-
 नापतियोंका आपसमे सयाद होते चेटक राजाने कहाकि मैं विनो
 अपराधिका नहीं मारताहूँ, यह सुन कालीकुमार कोपित हो,

१ 'मर्घ' राजानि सैनाकि रचना 'मर्घके आकारपर रचि गई थी

२ कोणक राजानि मैना रथमुसल तथा मर्घके आकारपर रची गई थी

अपने धनुष्यपर थाणकी चढावे बडे ही जौरसे थाण फेंका यिन्तु चेटक राजाको थाण लगा नही परन्तु अपराधि जाणवे चेटक राजाने एक्ही थाणमें कालीकुमारका मृत्युके धामपर पहुचादिया जब कालीकुमार सेनापति गिर पडा तब उस रोज सग्राम बन्ध हो गया ।

भगवान् फरमाते हैं कि हे गौतम ! कालीकुमारने इस सग्रामके अन्दर महान् आरभ, सारभ, समारभ कर अपने अध्यक्ष वसायोको मन्गीन कर महान् अशुभ कर्म उपार्जन कर काल प्राप्त हो चौथी पक्षप्रभा नरकके अन्दर दश सागरोपमकी स्थितियाला नैरिया हुया है ।

गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवान् ! यह कालीकुमारका जीव चौथी नरकसे निकल कर कहा जावेगा ।

भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम ! कालीकुमारका जीव नरकसे निकलके महाविदेह क्षेत्रमे उत्तम जाति-कुलके अन्दर जन्म धारण करेगा (कारण अशुभ कर्म बंधे थे यह नरकके अन्दर भोगव लिया था) वहापर अच्छा मत्स्य पाके मुनियोंकी उपासना कर आत्मभाष प्राप्त हो, दीक्षा धारण करेगा महान् तपश्चर्या कर घनघातीया कर्म क्षय कर वैश्वज्ञान प्राप्त कर अनेक भव्य जीवोंको उपदेश दे अपने आयुष्यके अन्तिम श्वासोश्वासका न्याग कर मोक्षमें जावेगा

यह सुन भगवान् गौतमस्वामी प्रभुको बन्दन-नमस्कार कर अपनी ध्यानवृत्तिके अन्दर रमणता करने लगगये ।

इति निरयारलिका सूत्र प्रथम अध्यायन ।

(२) दुसरा अध्ययन—सुकालीकुमारका इन्होंकी माताका नाम सुकालीराणी है भगवानका पधारणा, सुकालीका पुत्रके लिये

प्रश्न करना भगवान् उत्तर देना गौतमम्बामिका प्रश्न पुछना भगवान् मन्त्रिस्तर उत्तर देना यह मय प्रथमाध्ययनकी माफीक अथात् प्रथम दिनक समाप्तमें कालीकुमारका मृत्यु हुआ था और दुसरे दिन सुकालीकुमारका मृत्यु हुआ था। इति।

(३) तीसरा अध्ययन—महाकालीराणीका पुत्र महाकालीकुमारका है।

(४) चौथा अध्ययन—कृष्णाराणीके पुत्र कृष्णकुमारका है।

(५) पाचवा अध्ययन—सुकृष्णाराणीका पुत्र सुकृष्णकुमारका है।

(६) छठा अध्ययन—महाकृष्णाराणीके पुत्र महाकृष्णकुमारका है।

(७) सातवा अध्ययन—धीरकृष्णाराणीके पुत्र धीरकृष्णका है।

(८) आठवा अध्ययन—रामकृष्णाराणीका पुत्र रामकृष्णका है।

(९) नववा अध्ययन—पद्मश्रेणकृष्णाराणीके पुत्र पद्मश्रेणकृष्णकुमारका है।

(१०) दशवा अध्ययन महाश्रेण कृष्णा राणीके पुत्र महाश्रेणकृष्णका है ॥ यह श्रेणिक राजाकी दश राणीयोंके दश पुत्र हैं दशों पुत्र चेटकगजाके हाथसे दश दिनोंमें मारा गया है दशों राणीयोंने भगवानसे प्रश्न किया है भगवानने प्रथमाध्ययनकी माफीक उत्तर दीया है दशों कुमार चौथी नरक गये हैं महापितेद्वमें दशों जीव मोक्ष जावेगा काली आदि दशों राणीयां पुत्रके निमित्त धीर धचन सुन अन्तगढ दशागये आठवा घर्गमें दीक्षा ले तपश्चर्या कर अन्तिम वेयल्लज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गइ है इति निरयाधलीका सूत्रके दश अध्ययन समाप्त हुवे

नोट—दश दिनोंमें दश भाइ स्वतम हो गये फिर उम

संग्रामका क्या हुआ, उसके लिये यहाँ पर भगवतीसूत्र शतक ७ उद्देश ९ से सवन्ध लिखा जाता है

नाम—जब दश दिनामें कौणक राजाके दशा याद्वा संग्राममें काम आगये तब कौणकने त्रिचारा कि एक दीनका काम और है क्याकि चेटक राजाका पाण अचुक है जैसे दश दिनामें दश भाइयाकी गति हुई है यह एक दिन मरे लीये ही हागा वास्ते कुछ दूसरा उपाय सोचना चाहीये ऐसा विचार कर कौणक राजाने अष्टम तप (तीन उपवास) कर स्मरण करने उगा कि अगर कीसी भी भवमें मुझे धचन दीया हा, यह इन प्रवत आज मुझे सहायता दा ऐसा स्मरण करनेसे 'चमरेन्द्र' और 'शक्रेन्द्र' यह दाना और कौणक राजा कीसी भवमें तापस थे उन वरत इन दोनो इन्द्रोने धचन दीया था, इन कारण दानो इन्द्र आये, कौणकको बहुत समझाये कि यह चेटक राजा तुमारा नानाजी है अगर तु जीत भी जायगा तो भी इन्हीके आगे हाग जेमाही होगा वास्ते इन अपना हठको छाड दे। इतना कहन पर भी कौणकने नहीं माना ओर इन्द्रसे कहा कि यह हमारा काम आपका करना ही हागा। इन्द्र धचनके अन्दर बंधे हुये थे। वास्त कौणकका पक्ष करना ही पडा।

भगवती सूत्र—पहले दिन महाशीलाके टक नामका संग्राम क अन्दर कौणक राजाके उदयण नामके हस्तीपर चम्परढीगता हुआ कौणक राजा घेठा और शक्रेन्द्र अगाडी एक अभेद नामका शस्त्र लेक नेट गया था जिन्हीसे दूसरोका पाणादि शस्त्र कौणकको नहीं उगे और कौणककी तफसे तृण घाट ककर भी फेंके तो चेटक राजाकी सेना पर महाशीलाकी माफीक मालम होता था। इन्द्रकी सहायतासे प्रथम दिनके संग्राममें ८४००००० मनुष्योंका क्षय हुआ

इस संग्राममें कोणककी जय और चेटक तथा अठारा देशके राजाओंका पराजय हुआ था। प्रायः मर्घ जीय नरक तथा तीर्यचमें गये। दुसरे दिन भूताइन्द्र हस्ती पर, त्रीचमें कोणक राजा आगे शकेन्द्र पीछे चमरेन्द्र पथ तीन इन्द्र संग्राम करनेका गये इस संग्रामका नाम रथमुशल संग्राम था दूसरे दिन ९६००००० मनुष्याकी हत्या हुई थी जिसमें १०००० जीय तो एक मच्छीकी कुक्षी में उत्पन्न हुये थे एक वर्णनागनर्धों देवलोकमें और उसका बाल मिश्री मनुष्य गतिमें गया शेष जीय बहुता नरक तीर्यच गतिमें उत्पन्न हुआ।

उत्तराध्ययन सूत्रकी टीकामें शेषाधिकार है तथा कीतनीक वार्ते श्रेणिक चन्द्रिमें भी है प्रसंगोपात कुच्छ यहा लिखी जाती है।

जय कामी-काशाल देशके अठारा राजाओंके साथ चेटक राजाका पराजय हो गया तब इन्द्रने अपने स्थान जानेकी रजा मागी उस पर कोणक बोला कि मैं चक्रवर्ति हू। इन्द्रने कहा कि चक्रवर्ति तो तारह हो चुके है, तेरहवा चक्रवर्ति न हुआ न होगा, यह सुनके कोणक बोला कि मैं तेरहवा चक्रवर्ति होउगा, याम्ते आप मुझे चौदा रत्न दीजीये दोनो इन्द्रोंने बहुतसा मम ज्ञाया परन्तु कोणकने अपना हठको नहीं छोडा तब इन्द्रने पकेन्द्रियादि रत्नकृत की घनाके दे दीया और अपना मण्ड तोडके, इन्द्र स्वस्थान गमन करते कह दीया कि अब हमको न बुलाना न हम आयेगे यह बात एक कथाके अन्दर है अगर कोणकने दिग्धिजयका प्रयाणके समय कृत रत्न उनाया हो तो भी घन सत्ता है

जय चेटकराजाका दल कमजोर होगया और वहभि जान

गयाथा कि कोणकको इन्द्र साहिता कर रहा है । तब चेटकराजा अपनी शैप रही हुई सैना ले वैशाला नगरीमें प्रवेश कर नगरीका दरवाजा बंद कर दीया वैशाला नगरीमें श्री मुनिसुव्रत भगवानका स्थुभ था उसके प्रभावसे कोणकराजा नगरीका भंग करनेमें असमर्थ था वास्ते नगरीके पहार निवास कर बैठा था अठारा देशके राजा अपने अपने राजधानीपर चले गयेथे ।

बहलकुमार रात्रीके समय सीमानकगन्ध हस्तीपर आरूढ हो, कोणकराजाकि सैना जो वैशाला नगरीके चोतर्फ घेरा दे रखाथा उन्ही सैनाके अन्दर आके बहुतसे सामग्रीको मार डालता था पसे कीतनेही दीन हो जानेसे राजा कोणकको खबर हुई तब कोणकने आगमनके रहस्तेके अन्दर खाई खोदाके अन्दर अग्नि प्रज्वलित कर उपर आछादीत करदीया इगदायाकि इस रस्ते आत समय अग्निमें पडके मर जायगा, “क्या कर्मोंकि विचित्र गति है और कसे अनर्थ कायकर्म करते है” रात्री समय बहलकुमार उन्ही रहस्तेसे आ रहाथा परन्तु हस्तीको जातिस्मरण ज्ञान, हा नेमें अग्निके स्थानपर आके बह ठेर गया बहलकुमारने बहुतसे अकुश लगाया परन्तु हस्ती एक कदमभी आगे नहीं धरा बहलकुमार बोला रे हस्ती ! तेरे लिये इतना अनर्थ हुवा है अब तू मुझे इम समय क्यों उत्तर देता है यह सुनके हस्ती अपनी मदसे बहलकुमारको दूर रख, आप आगे चलता हुवा उम अच्छादित अग्निमें जा पडा शुभ ध्यानसे मरके देवगतिमें उत्पन्न हुवा बहलकुमारको देवता भगवानके समीसरणमें ले गया यह बदा पर दीक्षा धारण करली अठारा सरयालाहार जिम देवताने दीया था वह थापीम ले गया ।

पाठकों ! ससारकी वृत्तिकी ध्यान देख देखिये जिसहार और

हमित्थे लिये इतना अनर्थ हुआ था वह हस्ती आगम जल गया, द्वार देरता ले गया वह लकुँभर दीक्षा धारण करली है। तथापि कोणक राजाका कोप शान्त नहीं हुआ।

कोणक राजा एक निमित्तियाकी बुलवायके पुच्छा कि हे नैमिस्तीक इम वैशाल नगरीका भग वेसे हो सका है, निमित्तियाने कहाकि हे राजन् कोइ प्रतित साधु हो यह इम नगरीकी भाग कर नेमें माहित हो मत्ता है राजा कोणकने यह बात सुन एक कमल लता वैश्याको बुलवाके उमको कहा कि कोइ तपस्वी साधुकी लात्रो, वैश्या राजाका आदेश पाके यहाँमें साधुकि शोध करनेको गई तो एक नदीके पास एक स्थानपर कुलवालुक नामका साधु ध्यान करताथा उस साधुका संग्रन्ध एसा है कि—

कुलवालुक साधु अपने वृद्ध गुरुके साथ तीर्थयात्रा करनेकी गया था एक पर्वत उत्तरती आगे गुरु चल रहेथे, कुशीष्यने पीच्छेसे एक पत्थर (घड़ीशीला) गुरुके पीछे डाली गुरुका आयुर्न्य अधिक होनेसे शीलाकी आति हुई देख रहस्तेसे हुग हो गये, जत्र शिष्य आया तत्र गुरुने उपात्म दीयाकि हे दुरात्मन् तु मेरेकी मारनेका विचार कीया था, जा कीमी औरतके योग्यसे तेरा चारित्र्य भ्रष्ट होगा एसा कहके उस उपात्र शिष्यको निकाठ दीया

यह शिष्य गुरुके घबहन अमत्य करनेकी एकान्त स्थानपर तपधया कर रहा था। यहापर कमललता वैश्या आके साधुकी देखा यह तपन्धी साधु तीन दिनोंसे उतरके एक शीलाकी अपनि जवानमें तीनवार स्वाद लेके पीर तपधयांकि भूमिधापर न्यित हो जाता था, वैश्याने उम शीलापर कुच्छ औपधिका प्रयोग (लेपन) कर दीया जय साधु आके उम शीलापर जवानसे स्वाद लेने लगा यह स्वाद मधुर होनेसे साधुकी विचार हुआकि

यहमेरे तपश्चर्याका प्रभाय है, उस औपधिके प्रयोगसे साधुका टटी और उलटी इतनी होगी कि अपना होश भुल गया, तब येश्याने उस साधुके हीफाजितकर सचेतनकिया साधुउसका उपकार मानके जोलाकि तेरे कुछ धाम दोतो मुझे कहे, तेरे उपकार काबदला देउ । येश्या बोलीके चलीये । यस्त । राजा कोणके पास ले आइ, कोणकने कहाकि हे मुनि इस नगरीका भग करा दो । यह साधु घहासे नगरीमें गया नगरीक लोक १२ धप हो जानेसे बहुत व्याकुल हो रहे थे उस निमत्तीयाका रूप धारण करने वाले साधुसे लोकाने पुच्छा कि हे साधु इस नगरीको सुख कर होगा । उत्तर दिया कि यह मुनि सुप्रतस्थामिका स्थुभकों गिरा दोगे तब तुमका सुख होगा । सुखाभिलाषी लाकोंने उस स्थुभकों गिरा दीया तब राजा कोणकने उस नगरीका भग करना प्रारभ कर दीया, मुनि अपना फज अदा कर घहासे चलधरा ।

यह धात देव चेटकराजा एक वुँयाक अन्दर पड आपघात करना शरू कीया था परन्तु भुयनपति देव उसकों अपने भुषन में ले गया यस्त । चेटकराजाने घहा पर ही अनसन कर देवगति को प्राप्त हो गये ।

राजा कोणक निराश हो के चम्पानगरी चला गया, यह मसारकि स्थिति है कहा हार, कहा हस्ती, कहा बहलकुमर, कहा चेटकराजा, कहा कोणक, कहा पद्मावती राणी, क्रोडों मनुष्यों की हत्या होने पर भी कीस घस्तुका लाभ उठाया ? इस लिये ही महान् पुरुषाने इस मसारका परित्याग कर योगवृत्ति म्त्री काम करी है ।

चम्पानगरी आनेके बाद कोणक राजाको भगवान् वीर प्रभुका दर्शन हुआ और भगवानका उपदेशसे कोणकको इतना ता

अन्तर हुआ कि भगवानका पूण भक्त बन गया उपपातिक सूत्र मे एसा उल्लेख है कि कोणक राजाको एसा नियम था कि जयतक भगवान कहा पिराजते है उसका निर्णय नही हो वहातक मुहपे अन्न जलभी नही लेता था अर्थात् प्रतिदिन भगवानकि खबर मगवाके ही भोजन करता था । जत्र भगवान चम्पा नगरी पधारतेथे तत्र घडा ही आढम्बरमे भगवाको घन्दन करनेको जाता था । इत्यादि पुर्ण भक्तिघान था । घन्दनाधिशरमे जहा तहा कोणक गजाकि औपमा दि जाती हे, इसका सविस्तार व्याख्यान उचयाइ सूत्रमे है ।

अन्तिम 'अधस्था मे कोणक राजा कृतव्य रत्नोंसे आप चक्रवर्ति हो देश माधन करनेको गया था तमस्रप्रभा गुफाये पाम जाये दरयाजा खोलनेका दंडगर्तसे कीमाड खोलने लगा उम बखत देयतार्थाने कहा कि वारह चक्रवर्ति हो गया है तुम पीछे दृजार्थो नही ता यहा कोइ उपद्रव होगा परन्तु भवितव्यताके आधिन हो कोणकने यह यात नही मानी तत्र अन्दरसे अग्निकि जाला निकली जीमसे कोणक घहा ही थालकर छठी तम प्रभा नरकमे जा पहुंचा ।

एक स्थलपर एसाभि उल्लेख है कि कोणकका जीय चौदा भव कर मोक्ष जायेगा तत्थ केवली गम्ये ।

प्रसगोपात् सत्रध समाप्त ।

इति श्रीनिरयानलिंगासूत्र सक्षिप्त माग समाप्तम् ।



१ काण्ड १९ वष क्रि अत्रथामे राजगारी बडाथा ३६ वर्षा क्रि सर्व आयुष्य थी । एसा उल्लेख कराम है ।

यहमेरे तपश्चर्याका प्रभाय है, उस औपधिके प्रयोगसे साधुको टटी और उलटी इतनी होगी कि अपना होश भुल गया, तब वेश्याने उस साधुके हीफाजितकर सचेतनकिया साधुउसका उपकार मानके गोलाकि तेरे कुछ काम दोतां मुझे कहे, तेरे उपकार ब्राह्मण देउ । वेश्या घोड़ीके चलीये । यस । राजा कोणके पास ले आइ, कोणकने कहाकि हे मुनि इस नगरीका भंग करा दो । यह साधु वहासे नगरीमें गया नगरीके लोक १२ वर्ष हो जानेसे बहुत व्याकुल हो रहे थे उस निमत्तीयाका रूप धारण करने वाले साधुसे लोकोंने पुच्छा कि हे साधु इस नगरीको सुख थव होगा । उत्तर दिया कि यह मुनि सुव्रतस्वामिका स्थुभको गिरा दीग तब तुमका सुख होगा । सुवाभिलाषी लोकोंने उस स्थुभको गिरा दीया तत्र राजा कोणकने उस नगरीका भंग करना प्रारभ कर दीया, मुनि अपना फर्ज अदा कर वहासे चलधरा ।

यह बात देख चेटकराजा एक कुँवाके अन्दर पढ आपघात करना शुरू कीया था परन्तु भुयनपति देव उसका अपने भुयन में ले गया यस । चेटकराजाने वहा पर ही अतमन कर देवगति को प्राप्त हो गये ।

राजा कोणक निराश हो क चम्पानगरी चला गया, यह न सारकि स्थिति है कहा द्वार, कहा हस्ती, कहा यहलकुमर, कहा चेटकराजा, कहा कोणक, कहा पद्मावती राणी, घोड़ों मनुष्या की हत्या होने पर भी कीस वस्तुका लाम उठाया ? इस लिये ही महान पुढपोने इस ससारका परित्याग कर योगवृत्ति स्वीकार करी है ।

चम्पानगरी आनेक बाद कोणक राजाको भगवान श्रीर प्रभुका दर्शन हुया और भगवानका उपदेशसे कोणकको इतना ती

असर हुआ कि भगवानका पूण भक्त बन गया उपपातिक सूत्र मे पमा उल्लेख है कि कोणक राजाको पसा नियम था कि जयतक भगवान कहा धिराजते है उसका निर्णय नही हो वहातरु भूहपे अन्न जलभी नही लेता था अर्थात् प्रतिदिन भगवानकि खबर भगवाके ही भोजन करता था । जय भगवान चम्पा नगरी पधारतेथे तत्र घडा ही आडम्बरसे भगवानको वन्दन करनेको जाता था । इत्यादि पुर्ण भक्तियान था । चन्दनाधिकारमे जहा तहा कोणक राजाकि औपमा दि जाती है, इसका सविस्तार व्याख्यान उचथाइ सूत्रमे है ।

अन्तिम 'अधस्था में कोणक राजा पृतस्य रत्नोंसे आप चम्पति हो देश माधन करनेको गया था तमस्रप्रभा गुफाके पाम ज्ञाके दरवाजा खोलनेको दडरत्नसे फीमाड खोलने लगा उम बखत देयतायोने कहा कि बारह चम्पति हो गया है तुम पीरुटे दडजायो नही तौ यहा कोई उपद्रय होगा परन्तु भवितव्यताके आधिन हो कोणकने चह घात नही मानी तय अन्दरसे अग्निकि जाला निकली जीमसे कोणक घहा ही कालकर छटी तम प्रभा नरकमे जा पहुँचा ।

एक स्थलपर पमाभि उल्लेख है कि कोणकका जीय चौंदा भव कर मोक्ष जायंगा तस्य केवली गम्ये ।

प्रसगोपात सत्रध समाप्त ।

इति श्रीनिग्यारलिङ्गसूत्र सक्षित मार् समाप्तम् ।



१ कोणक १० वय कि अस्थामें राजगार्गी वरुग २६ वर्षो कि सर्व आयुष्य थी । एमा अत्रेय कथामें है ।

कप्पवडिसिया सूत्र



(दश अध्ययन)

प्रथमाध्ययन—चम्पा नगरी पुर्णभद्र उद्यान पुणभद्रयक्ष
कोणक राजा पद्मावती राणी श्रेणक राजाकि काली राणी जिस्के
काली कुमार पुत्र इस सबका वर्णन प्रथम अध्ययनसे समझना ।

कालीकुमार क प्रभावति राणी जिमको सिंह रूपन सूचित
पद्मनामका कुमारका जन्म हुआ माता पिताने बडाही महोत्सव
किया यावत् युवक अवस्था होनेसे आठ राजक-यावोंके साथ
पाणिग्रहन करा दिया यावत् पन्नेन्द्रियके मुख भागवते हुये
काल निगमन कर रहे थे ।

भगवान वीर प्रभु अपने शिष्य मडलके परिवारसे भव्य
आर्थाका उद्धार करते हुये चम्पानगरी क पुर्णभद्र उद्यानमें पधारे ।

कोणक राजा बडाही उत्सावसे च्यार प्रकारकी सेना ले
भगवानको घ-दन करनेको जारहा था, नगर निवासी लोगभी
एकत्र मीलके भगवानको घन्दन निमित्त मध्य बजारमें आरहे थे
इस मनुष्या के वृ-द को पद्मकुमार देखके अपने अनुचरोने पुच्छा
कि आज चम्पानगरी के अन्दर क्या महोत्सव है ? अनुचरने
उत्तर दीया कि हे स्वामिन् आज भगवान वीर प्रभु पधारे हैं
घास्ते जनसमूह एकत्रही भगवानको घ-दन करनेको जारहे हैं ।
यह सुनके पद्मकुमार भी च्यार अश्वोंके रथपर आरूढ हो भग
वानको घन्दन करनेका सर्व लोकाके साथमें गया भगवानका
प्रदिक्षणा दे घन्दना कर अपने अपने योग्य स्थानपर बैठ गये ।

भगवान् धीरप्रभुने उस विस्तारवाली परिपदाका विचित्र प्रकारसे धर्मदेशना सुनाई मौख्य यह उपदेश दीयाथा कि हे भव्य जीवो! इस घोर संसारके अन्दर परीधमन करते हुये प्राणी योंको मनुष्यजन्मादि सामग्री मीलना दुर्लभ्य है अगर फीसी पुन्योदयसे मील भी जाये तो उसको सफल करना अति दुर्लभ्य है वास्ते यथाशक्ति व्रत प्रत्याग्यान कर अपनि आत्मको निर्मल बनाना चाहिये । इत्यादि—

परिपदा धीरवाणीका अमृतपान कर यथाशक्ति त्याग धैराग धारण कर भगवानको वन्दन नमस्कार कर अपने अपने स्थानपर समन करने लगे ।

पद्मकुंभार भगवानकि देशना श्रवणकर परम धैरागको प्राप्त हुआ उठके भगवानको वन्दन नमस्कार कर बोलाकि हे भगवान आपने फरमाया यह सत्य है मैं मेरे मातापितायोका पुच्छ आ पकि समिप दीक्षा लेउगा भगवानने फरमाया “जहा सुखे” जैसे गौतमकुंभरने मातापितायोसे आज्ञा ले दीक्षा लीयी इसी मा फीक पद्मकुंभरभी मातापितायोसे नम्रता पूर्वक आज्ञा प्राप्त करी, मातापितायोने बडाही महोत्सव कर पद्मकुंभरको भगवानके पास दीक्षा दरादी । पद्म अनगर इयांसमिति यावत् साधु बन गया तथा रूपके स्थविराधि पास दिनय भक्ति कर इग्यारा अङ्का अध्ययन कीया ओरभी अनेक प्रकारकि तपश्चर्या कर अपने शरीरको खदककी माफक कृप बना दीया अन्तिम एक मासका अर्त्सन कर समाधि पूर्वक काश्रकर प्रथम मौधर्म देवलोकमें दोय सागरोपमकि स्थितिवाला दिव्यता हुआ यह देवतोके सुयोका

१ २३१ गव्याम उत्पद्य द्वात हे उस समय अगुलक धनन्यातमें नाग प्रमाण अवगाहना हानी है । अन्तर मनुर्नेमें आहार पयाही, गरिष पयाही, इन्द्रिय पयाही, आमाशय पर्यामी, भाषा और मनपयासा साथही म बाधते हे वान्त शास्त्रमार्गेन

अनुभवकर महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाति-कुलमें जन्म धारण कर
फीर वहाभी वैशलीप्रस्तुत धर्म संघनकर दीक्षा ग्रहणकर वैश्या
ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा इति प्रथम अध्ययन समाप्त ।

न	सुमात्र अध्वयन	माताका नाम	पिताका नाम	वक्ताक मय	श्रीभाकार
१	पद्म कुमार	पद्मावती	काग कुमार	सौधम स्वर्गाक	५
२	महापद्म	महापद्मावती	मकाली	इशान	५
३	भद्र	भद्रा	महाकाली	मनन्वुमार	४
४	सुभद्र	मभद्रा	कृष्ण	माता	४
	पद्मभद्र	पद्मभद्रा	सुकृष्ण	प्रद्य	४
५	पद्मधेन	पद्मधना	महाधेन	राजक	३
६	पद्मगुल्म	पद्मगुल्मा	काधेन	महागुल्म	३
७	निलनिगु०	निलनिगुल्मा	रामकृष्ण	गन्ध	३
८	आनन्द	आनन्दा	पद्मभण्ड	प्राणन	२
९	नन्दा	मन्दना	महाभण्ड	अच्युत	२

यह दशा सुमार ध्वजक राजाके पाते हैं भगवान वीर प्रभुकी
देशना सुन संभारका त्याग कर भगवानके पास दीक्षा ग्रहण कर
अतिम एकेक मामका अनशन कर देखलोकमें गये हैं । वहासे
सीधे ही महाविदेह क्षेत्रमें मनुष्यभय कर फीर दीक्षा ग्रहण कर
कमरीपुकी जीत वैशलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा इति ।

इति श्री कप्पण्डिसीया सूत्र सचित्र सार ममात्मम् ।



पांच पर्याप्ती अन्तर महूर्तमें बाधक पदकम युक्तावय धारण कर लना कहा है जनें
नवपण उपन होना अधिकार आवे ज्ञानपर प्पाना ममज्ञान ।

श्रवणी

पुष्पिका सूत्रम् ।



(दश अध्ययन)

(१) प्रथम अध्ययन । एक समयकी बात है कि श्रमण भगवान् धीरप्रभु गजगृह नगरके गुणशील उद्यानमें पधारे । राजा श्रणिकादि पुत्र्यामी लाय भगवानको बन्दन करनेका गये । विधाधर तथा चार निकायके देव भी भगवानकी अमृतमय देशना भिठापी हो बहा पर उपस्थित हुये थे ।

भगवान् धीरप्रभु उस थारह प्रश्नारकी परिपक्षाका विचित्र प्रकारका धर्म सुनाया श्रोतागण धर्मदेशना श्रवण कर त्याग वैगम्य प्रत्याख्यान आदि यथाशक्ति धारण कर स्वस्वस्थान गमन करते हुये ।

उसी समयकी बात है कि न्यार हजार सामानिक देव, सौ गहजार आत्मरक्षक देव, तीन परिपक्षाके देवा च्यार महत्तरिक देवागना सपरिधाग अन्य भी चन्द्र वैमान्यासी देवता देवीयोके घुन्दमें बैठा हुवा ज्योतीपीर्याका राजा ज्योतीपीर्योका इन्द्र अपना चद्रवतस वैमानकी सौधर्मी सभामें अनेक प्रकारक गीत ग्यान यार्जीत्र तथा नाटकादि देव मंत्रधी ऋद्धिको भोग्य रहा था ।

उस समय चन्द्र अधिष्ठानसे इस जम्बुद्वीपके भरतक्षेत्रमें राजगृह नगरके गुणशीलोद्यानमें भगवान् धीरप्रभुको तिराजमान देखके आत्मप्रदेशोमें प्रहाही हर्षित हुवा, सिंहासनमें उठके जिस दिशामें भगवान् विराजते थे उस दिशामें नात आठ षट्म

सामने जाके भगवानको वन्दन नमस्कार कर बोला कि हे भगवान आप वहा पर विराजमान हैं मैं यहा पर घेठा आपको वन्दन करता हु आप मेरी वन्दन स्वीकृत करावे। यहा पर मय अधिकार सूर्याभ देवताकी माफीक कहना। कारण देव आग मनके अधिकारमें सचिन्तर अधिकार रायप्पसेनी सूत्र सूर्याभा धिमाग्में ही कीया है इतना विशेष है कि सुस्वर नामकी घटा यजाइ थी वैश्वयसे पक्क हजार योजन लगा चौडा साडा घासठ योजन उंचा पैमान बनाया था पचमीम योजनकी उची महद्र ध्वजा थी इत्यादि बहुतसे देवी देवताओंके वृन्दसे भगवानको वन्दन करनेको आया, वन्दन नमस्कार कर देशना सुनी फिर सूर्याभकी माफीक गौतमादि मुनियोंको भक्तिपूर्वक बत्तीस प्रकारका नाटक बतलाके भगवानको वन्दन नमस्कार कर अपने स्थान जानेको गमन किया।

भगवानसे गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे षड्रणामिन्धु यह चन्द्रमा इतने रूप कहासे बनाये कह प्रवेश कर दीये।

प्रभुने उत्तर दिया कि हे गौतम! जैसे बुडागशाल (गुप्तघर) होती है उसके आदर मनुष्य प्रवेश भी हो सक्ता है और निकल भी सक्ता है इसी माफीक देवोंको भी वैश्विय लब्धि है जिससे वैश्विय शरीरसे अनेक रूप बनाय भि मके और पीछा प्रवेश भी कर सके।

पुन गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे दयातु! इम वन्दन पूर्वभघमें इतना क्या पुण्य किया था कि जिसके जरिये यह देव-रुद्धि प्राप्त हुए है?

भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम! सुन। इम जम्बुद्विपका भरतक्षेत्रके आदर साधत्यी नामकी नगरी थी वहा पर जय-

शुभ्रु नामका राजा गज करता था उसी नगरीके अन्दर आग-
तिया नामका एक गाथापति धमता था वह उडा ही धनाश्व
और नगरीमें एक प्रतिष्ठित था “ जेमे आनन्द गाथापति ”

उम समय तेषीममें तीर्थकर पार्थर्यनाथ प्रभु विहार करते
साथतयी नगरीके कोष्ठनोगानमे पधारे राजादि सब लोग भग
वानको धन्दन करनेको गये इधर आगतिया गाथापति इम
यातकी ध्रषण कर यह भी भगवानको धन्दन करनेको गया। भग-
वानने धर्मदेशना फरमाइ समारका असार पना और चारित्रका
महत्व बतलाया आगतिया गाथापति धर्म सुनके संसारको अ
सार जाण अपने जेष्ठपुत्रको गृहकार्यमें स्थापन कर आप भगदत्त
कि माफीक घटे ही महोत्मवके साथ भगवानके पास च्यार महा-
व्रत रूप दीक्षा धारण करी।

आगतिया मुनि पाचममिति समता, तीन गुतीगुप्ता यायत्
मग्नगुप्ति ब्रह्मचर्य व्रत पालन करता हुया, तथा रूपके स्वधीगेके
पाम मामाधिकादि इग्यारा अगका ज्ञानाभ्याम किया। धादमें
यहुतसी तपधर्या करते हुये बहुत धर्यो तक चारित्रपर्याय पालन
करके अन्तमें पन्दरा दिनोंका अनमन किया, परन्तु जो उत्तर
गुणमें दोष' लगा था उसकी आलोचना नहीं करी धाम्ते, धिरा-
धिक अथस्थामें काल कर ज्योतिषियोंके इन्द्र ज्योतिषीयाके
राजा यह चन्द्रमा हुया है पूर्यभधमे चारित्र ब्रह्मण करनेका यह
फल हुया कि देयता मम्यन्धी रुद्धि ज्योती कान्ती यायत् देय भध
उदय हुया है परन्तु साथमें धिरोधि होनेसे ज्योतिषी होना पडा
है कारण आराधि माधुकि गति वैमानिक देयतायो कि है।

१ मूल पाच मग्नव्रत है इनके सिवाय पिंडविगुद्धि तथा दश प्रत्याख्यान पाँच
समिति प्रतिबन्धनादि यह सब उत्तएगुणमें है चन्द्र सूर्यने जा दोष लगाया था वह
उत्तएगुणमें ही लगाया था।

गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवान! चन्द्रदेवकी स्थिति कितनी है।

हे गौतम! एक पल्योपम और एक वर्ष वर्षिक स्थिति चन्द्रकी है।

पुन प्रश्न किया कि हे भगवान! यह चन्द्रदेव ज्योतिषीया का इन्द्र यद्दामे भव स्थिति आयुष्य भय होन पर कदा जावेगा ?

हे गौतम! यद्दामे आयुष्य क्षय कर चन्द्रदेव महाविदेह क्षत्रमे उत्तम जाति-कुलके अद्दर जन्म धारण करेगा। भोगवि लाससे विरक्त हो बधली प्रस्पीत धर्म श्रवण कर मनार त्याग कर दीक्षा ग्रहण करेगा। च्यार घनघाती कम क्षय कर बधलज्ञान प्राप्त कर निधा ही माभ जावेगा। इति प्रथम अध्ययन समाप्तम्।

(२) दुसरा अध्ययनमें, ज्योतिषीयाका इन्द्रसूयका अधिकार है चन्द्रकि माफीक सूयभि भगवानकी धन्दन करनेकी आयाथा बत्तीस प्रकारका नान्य कियाथा, गौतमस्वामिकी पृच्छा भगवानका उत्तर पवत् परन्तु सूय पूर्वभवमें माधथी नगरीका सुप्रतिष्ठ नामका गाथापति था। पाश्यप्रभुं पास दीभा, इग्यारा अगका ज्ञान, बहुत धप दीक्षा पाली, अन्तिम आधा मामका अनसा, धि राधि भावमे कालकरसूर्य दृवा है एक पल्योपम एक हजार वर्षिक स्थिति यद्दामे चयके महाविदेह क्षत्रमें चन्द्रकि माफीक केवल ज्ञान प्राप्त कर मोभ जावेगा इति द्वितीयाध्ययन समाप्तम् ॥

(३) तीसरा अध्ययन। भगवान धीर प्रभु राजगृह नगर गुणशीला चैयके अद्दर पधारे राजादि ध दनकी गया।

चन्द्रकि माफीक महाशुक्र नामका गृह देवता भगवानकी धन्दन करन को आया यावत् उन्नीम प्रकारका नाटककर वापिस चला गया।

गौतमस्वामिने पुत्रभयकी वृच्छा करी

भगवानने उत्तर फरमाया कि हे गौतम ! इम जम्बुद्विप के भरत क्षेत्रमें बनारस नामकि नगरी थी । उम नगरी के अन्दर बडाही धनाढ्य च्याग वेद इतिहास पुगणका ज्ञाता सोमल नामका ब्राह्मण उमता था वह अपने ब्राह्मणकी धर्म में उडाही श्रद्धावन्त था ।

उमी समय पार्श्व प्रभुका पधारणा बनारसी नगरी के उधा नमें हुवा था च्याग प्रकारके देवता, विद्याधर और राजादि भगवानको घन्दन करनेको आयाथा ।

भगवानने आगमन कि वार्ता सोमल ब्राह्मणने सुनके विचारा कि पार्श्वप्रभु यहापर पधारे हैं तो चलके अपने दीलके अन्दर जो जो शक है वह प्रश्न पुच्छे । एसा इरादा कर आप भगवानके पास गया (जैसे कि भगवतीसूत्रमें सोमल ब्राह्मण श्रीप्रभुके पास गया था) परन्तु स्तना विशेष है कि इसके साथ कोई शिष्य नहीं था ।

सोमल ब्राह्मण पार्श्वनाथ प्रभुके पास गया था, परन्तु घन्दन-नमस्कार नहीं करता हुवा प्रश्न किया ।

हे भगवान् ! आपका यात्रा है ? जपनि है ? अव्यायाध है ? फासुक विहार है ।

भगवानने उत्तर दिया हा सोमल ! हमारे यात्रा भी है जपनि भि है अव्यायाध भि है और फासुक विहार भी है ।

सोमलने कहा कि कौनसे कौनसे है ?

भगवानने कहा कि ह सोमल—

(१) हमारे यात्रा—जा कि तप नियम संयम म्यध्याय ध्यान आश्रयकादि के अन्दर योगाका व्यापार यत्न पुत्रक करना यह यात्रा है। यहा आदि शब्द मे औरभी बोल समावेश हो सकते हैं।

(२) जपनि हमारे दोय प्रकारकि है (१) इन्द्रियापेक्षा (२) नाइन्द्रियापेक्षा। जिस्में इन्द्रियापेक्षाका पाच भेद है (१) श्रोत्रेन्द्रिय (२) चक्षुइन्द्रिय (३) घ्राणेन्द्रिय (४) रसेन्द्रिय (५) स्पर्शेन्द्रिय यह पाचो इन्द्रिय स्व स्व विषयमें प्रवृत्ति कर ती हुइको ज्ञानके जगिये अपने कर्जे कर लेना इन्को इन्द्रिय जपनि कहते है, और बाध मान माया लाभ उच्छेद हा गया है उम कि उदिरणा नही हातो है अर्थात् इस इन्द्रिय आग कपाय रूपी याधोका हम जीतलिये है।

(३) अव्यावाध ? जे वायु पित कफ मल्लिपान आदि मद्य राग श्रय तथा उपमम है किन्तु उदिरणा नहीं है।

(४) फासुक विहार। जहा आगम उत्थान देवकुल मभा पाणी धींगरे के पथ, जहा खि नपुसक पशु आदि नहो एमी घस्ती हा यह हमारे फासुक विहार है।

(प्र०) हे भगवान ? मरमथ आपके भक्षण करण याग्य है या अभय है ?

(उ०) हे सोमल ? मरमथ भक्षभी है तथा अभक्ष भी है।

(प्र०) हे भगवान ! क्या कारण है ?

(उ०) हे सोमल ? मांमको विशेष प्रतितिके लिये कहते है कि तुमारे ब्राह्मणोंके न्यायशास्त्रमें मरमव दो प्रकारे है (१) मित्र मरमवा (२) धान्य सरसवा। जिस्में मित्र मरमवाका तीन भेद है (१) साथमें जन्मा (२) साथमे वृद्धिहुइ (३) साथमें धूलादिमें खेलना। यह तीन हमारे श्रमण निग्रथाका अभक्ष है और

जा धान्य मरस्य है यह दोय प्रकारसे है (१) शस्त्र लगा हुआ अग्नि प्रमुग्धा । जिससे अचित्त हो जाता है । (२) शस्त्र नहीं लगा हा (मचित) यह हमारे श्र० नि० अभक्ष है । जो शस्त्र लगाहुया है उसका दो भेद है (१) पपणीक जेयात्मा दोष गहीत (२) अनेपणीक जो अनेमणीक है यह हमारे श्र० नि० अभक्ष है । जो पपणीक है उसका दोय भेद है (१) याचीहुइ (२) अयाचीहुइ, जो, अयाचीहुइ है वह श्र० नि० अभक्ष है । जो याचीहुइ है उसका दो भेद है (१) याचना करनेपर भी दाता देवे यह लड्डिया और न-देवे यह अलड्डिया, जिसमें अलड्डिया तो श्र० नि० अभक्ष है और लड्डिया है वह भक्ष है इम वास्ते हे सोमल मरस्य भक्षभि है अभक्षभि है ।

(प्र०) हे भगवान ! मामा अपको भक्ष है या अभक्ष है ?

(उ०) हे सोमल ! म्यात् भक्ष भी है म्यात् अभक्ष भी है ।

(प्र०) क्या कारण है पमा होनेका ?

(उ०) हे सोमल ! तुमारे ब्रह्मणाके न्याय प्रथमें मामा दाय प्रकारके है (१) द्रव्यमासा (२) कालमासा, जिसमें कालमासा तो श्रायणमासा से यायत् आसाढमासा तक पर्यं पारहमासा श्र० नि० अभक्ष है और जो द्रव्यमासा है जिसका दोय भेद है (१) अय-मासा (२) धान्नमासा अर्थमासा तो जैसे सुषर्ण चादीके साथ तोल कीया जाता है वह श्र० नि० अभक्ष है और धान्नमासा, उडद) मरमजरी माफीक जो लड्डिया है वह भक्ष है । इसवास्ते हे मा-मल मामा भक्ष भी है अभक्ष भी है ।

(प्र०) हे भगवान ! तुल्य भक्ष है या अभक्ष है ।

(उ०) हे सोमल ? तुल्य भक्ष भी है अभक्ष भी है ।

(प्र०) हे भगवान ! पमा होनेका क्या कारण है ?

(३०) हे सामल ! तुमारे ब्राह्मणाके न्यायशास्त्रमें कुलथ दोय प्रकारका कहा है (१) खिकुलथ (२) धाग कुलथ । जिस्म खिकुलथके तीन भेद है । कुलवन्या कुम्बहु, कुम्माता, यह धम ण निग्रन्थाका अभय है आर धागकुलथ जो सरसध धात्रकि माफक जो लड्डिया है यह भक्ष है शेष अभक्ष है इसवास्ते हे सो मल कुलथ भक्ष भी है तथा अभय भी है ।

(३०) हे भगवान ! आप पकाहो ? दायहा ? अथयहा ? अवेद हो ? अवस्थितहो ? अनेक भावभूतहो ?

(३०) हा सोमल ! मैं एक भिहु यावत अनेक० ।

(३०) हे भगवान ! ऐसा होनेका क्या कारण है ।

(३०) हे सोमल ! इव्यापेक्षामें एक हू । ज्ञानदशनापेक्षामें दाय हू आत्मप्रदेशापेक्षामें अक्षय, अवेद, अवस्थित हू० और उप योग अपेक्षामें अनेक भावभूत ह, कारण उपयोग लोकालोक व्या प्त है वास्ते हे सामल एक भी मैं हु यावत् अनेक भावभूत भी मैं हु

इस प्रश्नाका उत्तर श्रवणकर सोमल ब्राह्मण प्रतिधाधीत हा- गया । भगवान को उन्दन नमस्कार कर योग जि हे प्रभु ! मैं आपकि वाणीका प्यामा हू वाग्ते कृपाकर मुझ धम सुनाया

भगवानने सोमलका विचित्र प्रकारका धर्म सुनाया सोमल धम श्रवणकर यागकि हे भगवान ! धन्य है आपने पाम मसारीक उपाधिया छाड दीक्षा लेते हैं उन्दका ।

हे भगवान । मैं आपने पाम दीक्षा लेनेमें तो असमथ ह । किन्तु मैं आपकेपास धायकत्रत ग्रहन करगा । भगवानने परमा या कि “ जहासुव ” सामल ब्राह्मण परमेश्वर पाश्र्वनाथजाणे

समिप प्रायश्चित्त ग्रहणकर भगवानका उन्दन नमस्कारकर अपने स्थानपर गमन करता हुआ ।

तत्पश्चात् पार्श्वप्रभु भी वनारसी नगरीके उद्यानमें अन्य जनपद० देशमें विहार कोया

भगवान पार्श्वप्रभु विहार करनेके बाद में पीतनेही समय वनारसी नगरीमें साधुघोषा आगमन नहीं होनेसे मोमल ब्राह्मणकी धृद्धा शीतल होती रहा, आग्विर यह नतीजा हुआकि पर्यकी माफिक (मम्यकतका त्यागकर) मिथ्यान्वी बन गया ।

एक समय कि घात है कि मोमलको रात्रीकि उखत कुटम्ब ध्यान करते हुये एसा विचार हुआ कि मैं इस वनारसी नगरीके अन्दर पवित्र ब्राह्मणकुलमें जन्म लिया है विनाह-मादी करी है मैंने पुत्रभि हुआ है मैं नेद पुगणादिका पठनपाठनभि कीया है अश्वमेधादि पशु होमने यज्ञभि कराया है । वृद्ध ब्राह्मणों का दक्षणादेके यज्ञस्थभ भि रापा है इत्यादि प्रहुतसे अच्छे अच्छे कार्य किया है अग्नीभि सूर्याद्य होनेपर इस वनारसी नगरीके गार्ग आम्नादि अनेक जातिने वृक्ष तथा लताघो पुष्प फलादि-वाला सुन्दर वगेचा वनारसे नामप्रगीकरू । एसा विचारकर सूर्याद्य प्रममर एसाही शीया अर्थात् वगेचा तैयार करघायने उसकी वृद्धिचे लिये भरण करतें हुये, यह वगेचा स्वल्पही समयमें वृक्ष लता पुष्प फलकर अच्छा मनोहर बनगया । जिसमें मोमल ब्राह्मणकि दुनियामे तारीफ होने लग गई । तत्पश्चात् मोमल ब्राह्मण एक समय रात्रीमें कुटम्ब चिंतयन करताहुयाको एसा विचार हुआ कि मैंने बहुतने अच्छे अच्छे काम करलिया है यायत् जन्मने लैके वगेचे तक । अत्र मुझे उचित है कि बल सूर्याद्य दातेही बहुतने तापसो भयन्धी भडोषकरण बनघायके बहुतने प्रकारका अशमादि भाजन बनघारने न्यातजातके लोकाको भो-

जनप्रसाद करवायके मेरा जष्टपुत्रकी गृहभार सुप्रतकरक । ताप
 भी सगन्धा, भडामत्त कारण, उनघाकर जा गगा नदीपर रहेने
 बाल तापस है उमक नाम (१) हामकरनेवाले (२) यख धारण
 करनेवाले (३) भूमि शयन करनेवाले (४) यज्ञ करनेवाले (५) ज
 नोह धारण करनेवाले (६) श्रद्धाधान (७) ब्रह्मचारी (८) लहिर
 उपकरणवाले (९) एक कमडल रखनेवाले (१०) फलाहार (११)
 एकवार पाणीमे पसनिक्ल भाजन करे (१२) पय बहुतवार (१३)
 स्वल्पकाल पाणीमे रहे (१४) दीघकाल रहे (१५) मटी घमके
 स्नान करे (१६) गगाके दक्षिण तटपर रहेनेवाले (१७) पय उत्तर
 तटपर रहेनेवाले (१८) मख बाजाक भाजन करे (१९) गृहस्थ
 कुलम जाके भाजन करे (२०) भृगा मारक उमका भाजन करे (२१)
 हस्ती मारक उमका भोजन करे (२२) उष्वदड रखनेवाले (२३)
 दिशापोषण करनेवाले (२४) पाणीमे यमनेवाले (२५) धील गुफा
 वामी (२६) वृक्षनिचे बसनेवाले (२७) बल्कलके यख वृक्षके छा
 लक यख धारण करनेवाले (२८) अथु भक्षणकरे (२९) वायु भक्षण
 करे (३०) सेयाल भक्षण करे (३१) मूल कन्द पत्र पत्र पुष्प फल
 बीजका भक्षण करनेवाले तथा मडे हुय विध्वम हुय एसा कन्द
 मूल फल पुष्पादि भक्षण करनेवाले (३२) जलाभिषेप करनेवाले
 (३३) यम कायड धारण करनेवाले (३४) आतापना लेनेवाले
 (३५) पचामि तापनेवाले (३६) इगाले कालमे, कष्टशय्या इत्यादि
 जा कष्ट करनेवाल तापस है जिस्के अन्दर जा दिशापोषण कर
 नेवाले तापस है उन्हाके पास मेरे तापसी दीक्षा लेना और भा
 शमे एसा अभिग्रहभि करना, कि कल्पे मुझे जायजीव तक सूयके
 सन्मुख आतापना लेताहुवा छठ छठ पारणा करना आतरा ग्ही
 त, पारणाके दिन च्यागतप क्रम मर दिशावाके मालक देवीदेव
 है उन्हाका पापण करना जैसे जिमराज छठवा पारणा आउ उस

गेज आतापनाकि भूमिमें निचा उतरणा यागलघ्छ पहेरने अप-
 नि जुटी (जुपडी) में घामकि कायड लेना पूवदिशोने मालक
 मोमनामके दिगपालकि आशा लेना कि हे देय । यह मोमल महा-
 नक्रुपि अगर तुमागी दिशामें जोरुच्छ कन्दमूलादि ग्रहन करे तो
 आशा है । एसा कहके पूवदिशामें जाके यह कन्दमूलादिमें कायड
 भरने अपनि जुटीमें आना कायड घहापर ग्व डाभका तृण उमके
 उपर रगे । एक डाभका तृण लेने गगानदीपर जाना घहापर
 जलमज्जन, जलाभिषेक, जलक्रीडाकर परमसूचि हारे, जलकलस
 भर उसपर डाभतृण रखने पीच्छा अपनि जुटीपर आना । घहापर
 एक गेलु रेतकी रेदिका बनाना, अरण्यके काष्ठमें अग्नि प्रज्वलित
 करना ममाधिने लकडी प्रक्षेप करना अग्निने दक्षिणपामे दड-
 क मडदादि सात उपकरण रखना, फीर आहुती देताहुआ धृतमधु
 तदुल आदिका हाम करना इत्यादि प्रथाना करताहुवा यलीशा
 न देनेके बाद यह कन्दमूलादिका भोजन करना एसा रिचार साम
 लने रात्री समय किया जेसा रिचार कियाथा जेमाहि सूर्यादय
 होतेही आप तापनी दीक्षाले दी छठ छठ पारणा प्रारंभ करदीया ।
 प्रथम छठने पारणा मत्र पूरयाहुइ कियाकर फीर छठका निय
 मकर आतापना जेने लगगया, जत्र दुसरा छठका पारणा आयातत्र
 यहही किया करी परन्तु यह दक्षिणदिशा यमलोकपाल कि आशा
 लीयी । इमी माफीक तीसरे पारणे परन्तु पश्चिमदिशा वरुण
 लोकपालकी आशा और चौथे पारणे उत्तरदिशा कुनेदिगपा
 लकि आशा लीयी, इमीमाफीक पूरादि च्यारों दिशोमें क्रम मत्र
 पारणा करताहुवा मोमल माहणक्रुपि रिहार करता था ।

एक समयकि रात है कि मोमल माहणक्रुपि रात्री समयमें
 अनित्य जागृणा करते हुयेको एसा रिचार उत्पन्न हुवा कि मैं
 यनाग्नी नगरीने अन्त ब्राह्मणकुलमें जन्म पाके मत्र अछे काम

कीया है यावत् तापसी दीक्षा लेली है तो अत्र मुझे सूर्यादय हा-
तेही पूर्वसगातीया तापस तथा पीच्छेम मगती करनेवाला ताप-
स औरभि आश्रमस्थितोंका पुच्छव जागल्यन्न, यामकि कावड
लेव, काएकि मुहपति मुहपग बन्धने उत्तरदिशात्रि तफे मुह कर
व प्रस्थान करे एमा विचारकरा।

सूर्यादय हातेहो अपने रात्रीमें कियाहुवा विचारमाफीक
जागल्यन्न पहेरके यामकी कावड लेने काएकि मुहपतिमे मुहव
न्धवे उत्तरदीशा न-मुख मुहकरने मामल महाणऋपि चलना
प्रारभकीया उस समय औरभि अभिग्रह करगिया कि चलते
चलते, जल आवे, स्थल आवे, पधत आवे, खाडआवे दरी आवे
त्रिपमस्थान आवे अर्थात् कोइ प्रकारका उपद्रव आवे तोभी
पीच्छा नही हटना एमा अभिग्रहकर चला जाते जाते चरम प
होरहुवा उससमय अपने नियमानुस्मार अशाकधृश्वे निचे पक
वेतुरेतीकी वेदका रची उसपर कावडधरी डायतण रखा आप
गगानदीमें जाके पूषवत् जलमज्जन जलप्रीडा करी फीर उस अ
शोकधृश्वे नीचे आके काएकि मुहपतिसे मुहवन्ध लगावे न्यूप
चाप बैठगया।

आदी रात्रीके समय मामल ऋपिवे पास एक देवता आया
वह देवता मामल ऋपिप्रते एमा बोलताहुवा। भो ! मोमल माह-
णऋपि ! तेरी प्रवृज्जा (अर्थात् यह तापसी दीक्षा) है वह दुष्ट प्रवृ
ज्जा है मामलने सुना परन्तु कुछभी उत्तर न दीया, मौन कर
ली। देवताने दुमरी-तीसरीवारकहा परन्तु सामल इस धातपर
ध्यान नही दीया। तत्र देव अपने स्थान धला गया

सूर्यादय होतेही मामल जागल्यन्न पहेर कावडादि उप
करण ले काएकी मुहपतिसे मुहवन्ध उत्तरदिशाका स्वीकारकर
चलना प्रारभ करदीया, चलते चलते पीच्छले पदार सीतावनवृक्ष-

वे निचे पूर्वकि रीती निधास कीया, देवता आया पूर्वघत् द्योय ती-
 नघार कहके अपने स्थान चलागया पथ तीमरेदिन अशोकवृक्षके
 निचे बहाभी देवताने दोतीनघार कहा, चौथेदिन घडवृक्षके निचे
 निधाम किया बहाभी देव आया दोतीन दपे कहा परन्तु सो-
 मलतो मौनमेही रहा देव अपने स्थान चला गया । पाचमेदिन
 उम्बरवृक्षके निचे सोमलने निवास कीया मत्र म्रिया पहेले दिन
 वे माफीक करी । रात्री समय देवता आया और बोलाकि हे
 सोमल ! तेरी प्रवृज्जा हे सो दुष्ट प्रवृज्जा है पसा द्योय तीनघार कहा
 इसपर सोमलमहाणऋषि त्रिचार कियाकि, यह कौन है और
 किसवास्ते मेरी उत्तम तापसी प्रवृज्जाको दुष्ट बतलाता है ?
 वास्ते मुझे पुच्छना चाहिये सोमल० उम देवप्रते पुच्छाकि तुम
 मेरी उत्तम प्रवृज्जाको दुष्ट क्यों कहते हो ? उत्तरमे देवता जवाब
 दियाकि हे सोमल पेस्तर तुमने पार्श्वनाथस्वामिके समिप था
 वकके व्रत धारण कियाथा बाद मे साधुओंके न आनेमे मिथ्या-
 न्धी लोकोकि सगतकर मिथ्यात्वी बन यावत् यह तापसी दीक्षा
 ले अज्ञान बटकर रहा है तो इसमे तुमकोक्या फायदा है तु
 साधु नाम धराके अनन्तजीवों मयुक्त कन्द मूलादिका भक्षण कर-
 नेहे अग्नि जलके आरभ करतेहे वास्ते तुमारी यह अज्ञान
 मय प्रवृज्जा दुष्टप्रवृज्जा है ।

सोमल देवताका बचन सुनके बोलाकि अब मेरी प्रवृज्जा
 कैसे अच्छी हो सकता है, अर्थात् मेरा आत्मकल्याण कैसे हो
 सकता है ।

देवने कहा कि हे सोमल अगर तु तेरा आत्मकल्याण करना
 चाहता है तो जो पूर्य पार्श्वप्रभुकेपास भावकके चारह व्रत धारण
 किये थे उसको अंगी भि पालन करो और इस तंगी कर्मद्वारा

छोड़ दे तब तुमारी सुन्दर प्रवृत्ता होसकती है। देवने अपने ज्ञानसे सामलके अच्छे प्रणाम जान घन्दन नमस्कारकर निज स्थानकों गमन करता हुआ।

मोमलने पूर्य प्रहन किये हुवे श्रावकप्रताका पुन स्वीका कर अपनि श्रद्धाका मज्जुत बनाक पार्श्वप्रभुसे प्रहन किया हुआ तध्वज्ञानमे रमणता करताहुवा विचरने लगा।

मोमल श्रावक बहुतसे चोत्थ छठ अठम अधमान मामल मणकी तपश्चर्या करता हुआ बहुत कालतक श्रावकव्रत पालता हुआ अतिम आधा मास (१५ दिन) का अनमन किया परन्तु पहले जो मिथ्यात्यकी क्रिया करीथी उसकी आलोचना न करी, प्रायश्चित्त नलिया त्रिराधिक अवस्थामें काठशर महाशुक्र वैमान उत्पात सभाकि देवशय्यामें अगुलने अमर्यात भागकि अवगाह नामे उत्पन्न हुआ, अन्तरमहुतमें पार्चा पर्याप्तीको पूर्णकर युधक वय धारण करता हुआ देवभयका अनुभव करने लगा।

हे गौतम ! यह महाशुक्र नामका गृह देवका जा ऋद्धि ज्योती कान्ती मीली है यावत् उपभोगमें आइ है इसका मूल कारण पूय भवमे धीतरागकि आशा संयुक्त श्रावकव्रत पालथा। यद्यपि श्रावककी जघन्य सौधम देवलोष, उत्कृष्ट अच्युत देवलाककि गति है परन्तु सामलने आलोचना न करीसे ज्यातीपी देवो में उत्पन्न हुआ है। परन्तु यहासे धवके महाविदेह क्षत्रमें 'दृढपइ ज्ञा कि माफीक मोश जावेगा इति तीमराध्ययन समाप्तम्।

(४) अध्ययन चौथा—राजग्रहागर के गुणशीलोघानमें भगवान धीरप्रभुका आगमन हुआ राजा श्रणकादि पौरजन भगवानको घन्दन करनेको गये।

उम समय च्यार हजार सामानिकदेव सोग हजार आत्म

रक्षकदेव, तीन परिपदाके देव, चार महसरीक देवीयाँ और
 भि बहुपुत्तीया वैमानयासी देव देवीयाँ वृन्दसे परियुत बहु
 पुत्तीया नामकि देवी मौधर्म देवलोकरे बहुपुत्तीय वैमानकी
 सौधर्मी सभाअ अन्दर नाना प्रकारके गीतग्यान नाटकादि देव
 सयन्धी सुख भोगव रही थी, अन्यदा अवधिज्ञानसे आप जम्बुद्वि
 पत्र भरतक्षेत्र राजग्रहनगरका गुणशीलोद्यानमे भगवान वीरप्र
 भुको विराजमान देख, हर्ष-मंतोप का प्राप्त हो सिंहासनम उ
 तर मात आठ कदम सन्मुख जाके वन्दन नमस्कार कर धोली
 कि, हे भगवान ! आप यहापर विराजते हैं मैं यहापर उपस्थित
 हो आपको वन्दन करती हूँ आप सवश है मेरी वन्दन स्वीकार
 कराये ।

बहुपुत्तीयादेवीने भगवन्तका वन्दनकी तैयारी जेसे सूरिया
 भदेयने करीथी इसी माफीक करी । अपने अनुचर देवोंको आज्ञा
 दि कि तुम भगवानके पास जाओ हमारा नामगौत्र सुनाये वन्दन
 नमस्कार करके एक जोजन परिमाणका मडला तैयार करो जि
 नमे साफकर सुगन्धी जल पुष्प रूप आदिसे देव आने योग्य न
 नाथों देव आज्ञा स्वीकारकर बहा गये और कहनेके माफीक
 सब कार्यकर वापीम आवे आज्ञा सुप्रत कर दी

बहुपुत्तीयादेवी एकद्वार जोजनका वैमान उनायके अपने
 सब परिवारवाले देवता देवायाको साथ लै भगवानके पास
 आई भगवानको वन्दन नमस्कारकर सेवा करने लगी

भगवानने उस तरह प्रकारकी परिपदाको विचित्र प्रका
 रका धर्म सुनाया । देशना सुन लोकोंने यथाशक्ति व्रतप्रत्याख्यान
 कर अपने अपने स्थान जानेकी तैयारी करी ।

बहुपुत्तीयादेवी भगवानके धर्म सुन भगवानको वन्दन नम

स्कार कर बोली कि हे भगवान ! आप सधस हा मेरी भक्ति का समय समय जानने हों परन्तु गौतमादि छदमस्थ मुनियोंका हम हमारी भक्तिपूषक घत्तीम प्रकारका नाटक उतलायेगी भगवानने मौन रखीथी ।

भगवानने निषेध न करनेसे बहुपुत्तीयादेयी एकान्त जाय वैक्रिय समुद्घातकर जीमणी भूजासे एकसो आठ देवजुमार डाबी भुजासे एकसो आठ देवजुमारी और भी बालक रूपवाले अनेक देवदेयी वैक्रिय बनाये तथा ४९ जातिके धार्जात्र और उन्हाक घ जानेवाला देवदेयी बनाक गौतमादि मुनियोंक आगे घतीस प्रकारका नाटककर अपना भक्तिभाव दर्शाया, तत्पश्चात् अपनी सध ऋद्धिको शरीरमें प्रवेशकर भगवानको धदन नमस्कारकर अपने स्थान गमन करती हुई ।

गौतमम्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवान ! यह बहुपुत्तीया देयी इतनि ऋद्धि कहासे निकाली और कहा प्रवेश करो ।

भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम ! यह वैक्रिय शरीरका महत्व है कि जैसे कुडागशालामे मनुष्य प्रवेश भी करसक्ते है और निकट भी सक्ते है । यह प्रणत गायपसेनीसूत्रमें सविस्तार कहा गया है ।

गौतमम्वामीन औरभी प्रश्न किया कि हे करूणासिन्धु ! इस बहुपुत्तीयादेयीने पुष भयमें पसा क्या पुत्र्य उपार्जन कियाथा कि जिस्के जरिये इतनि ऋद्धि प्राप्त हुई है ।

भगवानने फरमाया कि हे गौतम ! इस जम्बुद्विपके भरतक्षेत्रमे धनारसी नगरीथी, उस नगरीके पादार आन्नशाल नामका उद्यान था, धनारसी नगरीके अदर भद्र नामका एक धडाही धनाव्य सेठ (साथवाह) नियाम करता था, उम भद्र सेठके सुभद्रा नाम

की सेठानि थी। यह अच्छी स्वरूपवान थी परन्तु अध्या अर्थात् इसके पुत्रपुत्री कुछ भी नहीं था। एक समय सुभद्रा सेठानी ग्रीमें कुछुम्य चिन्ता करती हुई जो एसा रिचार हुआ कि मैं मेरा पतिके साथ पचेन्द्रिय मगन्धी उहुत कालसे सुख भाग्य रहीहु परन्तु मेरे अभीतक एकभी पुत्रपुत्री नहीं हुआ है, चास्ते धन्य है यह जगतमें कि जो अपने पुत्रकी जनम देती है-गान्त्रीडा करा ती है-स्तनोंका दुध पीलाती है-गीतग्यानकर अपने मनुष्यभक्तको सफ्ट करती है, मैं जगतमें अधन्य अपुन्य अकृताथ हू, मेरा जन्मही निरर्थक है कि मेरेका एक भी उचा न हुआ एसा आत ध्यान करने लगी।

उसी समयकी बात है कि उहुश्रुति बहुत परिवारसे विहार करती हुई सुत्रताजी नामकी साध्विजी बनारसी नगरीमें पधारी साध्विजी एक मिघाडेसे भिक्षा निमित्त नगरीमें भ्रमन करती सुभद्रा सेठानीके घहा जा पहुची। उम साध्विजीको आते हुये देख आप आमनसे उठ सात आठ कदम सामने जा बन्दन कर अपने चाकामें ले जायके विविध प्रकारका अशन-पाण-स्त्रादिम स्वादिम प्रतिलाभा (दानदीया) ” नितीज्ञ लोगोमे धिनयभक्ति तथा दान देनेका स्वाभाविक गुन होता है ’ बादमे साध्विजीसे अर्ज करी कि हे महाराज मैं मेरे पतिके साथ उहुत काग्ने भोग भोग यनेपर भी मेरे एकभी पुत्रपुत्री नहीं हुआ है तो आप बहुत शाखने जानकर है, उहुतमे ग्राम नगरादिमें विचरते है ता मुझे कोड एसा मत्र यंत्र तत्र धमन विरेचन औषध भैमज्ज पतलाया कि मेरे एकाद पुत्रपुत्री होये जिससे मैं इस उध्यापणके कल्कमे मुक्त हो जाउ। उत्तरमे साध्विजीने कहा कि हे सुभद्रा! हम भ्रमणि निघन्थी इयांसमिति याधत् गुन ब्रह्मचारिणी है हमारेको एसा शब्द भ्रमणोहाग भ्रमण कग्नाही मना है तो मुहसे कहना कहा रहा ?

हमलाग ता मोक्षमाग माधन करनेके लिये केरली प्ररूपीत धम सुनानेका यापार करते है । सुभद्रान कहा कि गेर! अपना धर्म-ही सुनाइये ।

तब साधिवजीने उस पुत्रपीपामी सुभद्राको खडे खडे धम सुनाना प्रारभ किया है सुभद्रा! यह ममार असार है एकेक जीव जगतके मत्र जीवाक साथ माताका भव पिताका भव पुत्रका भव पुत्रीका भव इत्यादि अनन्ती अनन्तीवार मबन्ध किया है अनन्तीवार देखतार्याकी ऋद्धि भोगधी है अनन्तीवार नरक निगा दका दु ख भी महन किया है परन्तु दीतरागका धर्म जिम प्री ध्यान अगीकार नही किया है यह जीव भविष्यक लिये ही इम समारमे परिभ्रमन करता ही रेहगा घास्ते हे सुभद्रा ! तु इम म सारको अनित्य-अमार समज दीतरागके धमको स्वीकार करता जीससे तेरा फल्याण हा इत्यादि ।

यह शान्ति रसमय देशना सुन सुभद्र हय-सतोपको प्राप्त हो बोली कि हे आय ! आपने आज मुझे यह अपूव धर्म सुनाके अच्छी कृताथ करी है। हे आय ! इतना तो मुझे विचार हुया है कि जो प्राणी इस ससारके अन्दर दु खी है, तृष्णाकि नदीमें झूल रहे है यह सब मोहनियकमकाही फल है। हे महाराज ! आपका वचनमे श्रद्धा है मुझे प्रतित आइ है मेरे अन्तरआत्मामें रुची हुई है धन्य है आपके पास दीक्षा लेते है। मैं इस घातमें तो अम मर्थ हु परन्तु आपके पास मैं श्रायकधमको स्वीकार करुगी ।

साधिवजीने कहा कि हे यहन ! सुखहो घसा करो परन्तु शुभ कायमें विलम्ब करना ठीक नहीं है। इसपर सुभद्रा सेठानीने श्रायकके चारह व्रतको यथा इच्छा मर्यादकर धारण करलिया ।

सुभद्राको श्रायकव्रत पालन करते कितनायक काल निर्ग-

मन होनेसे यह भावना उत्पन्न हुई कि मैं इतने काल मेरे पतिके साथ भोग भोगवनेपर मेरे एक भी बालक न हुआ तो अब मुझे माध्वीजीके पास दीक्षा लेनाही ठीक है । जमा विचारकर अपने पति भद्रसेठसे पुच्छा कि मेरा विचार दीक्षालेनेका है आप मुझे आह्वा दीराय

भद्रसेठने कहा हे सेठानी ! दीक्षाका काम बड़ाहि कठिन है तुम हालमें मेरे साथ भोग भोगों फीर भुक्तभोगी होनेपर दीक्षा लेना । इत्यादि बहुत समझाइ पगन्तु दृढ करना चिरियोंके अन्दर एक म्याभायीक गुण होताहै । जाम्ने अपने पतिकी एक भी बातको न मानि तब भद्रसेठ दीक्षाका अच्छा माहत्सयकर हजार पुरुष उठाये पत्नी श्रीश्रीकाके अन्दर घेठाके घडेही मोहत्सयके साथ माध्वीजीके उपानरे जाके अपनी इष्ट भायाको माध्वियोंको शिष्यणीरूप भिक्षा अर्पण करदी अर्थात् सुभद्रा सेठानी सुव्रतासाध्वीजीके पास दीक्षा लेली । सुभद्राने पहले भी कुछ ज्ञान ध्यान नहीं कीया था अब भी ज्ञान ध्यान कुछ भी नहीं केवल पुत्रके दु गके मारी दु गगभित वैरागसे दीक्षा ली थी पेंस्तर एक स्त्रधरमें ही नियास करती थी अब तो अनेक श्रायक श्रायिकायोका घरोंमें गमनागमन करनेका अवसर प्राप्त हा गया था ।

सुभद्रामाध्वी आहारपाणी निमित्त गृहस्थ लोगोंके घरोंमें जाती है वहा गृहस्थोंके लडके लडकियोंको देख अपना स्नेहभावसे उमकाँ अपने उपानरेमें एकत्र करती है फीर उम बच्चाके लिये बहुतसा पाणी स्नान करानेको अलताका रग उम बच्चाके हाथपग रगनेको दुध दही खाद ग्वाजा आदि अनेक पदार्थ उम बच्चोंके मीलानेके लिये तथा अनेक खेलखीलुने उस बच्चोंको खेलनेके लिये यह सब गृहस्थियोंके यहासे याचना करलाना प्रारभ करदीया । अर्थात् सुभद्रामाध्वी उस गृहस्थोंके लडके लड-

कीयांको रमाडना खेलाना स्नानमज्जन कराना काजलट्टीकी क रना इत्यादि घातिक्रममें अपना दिन निगमन करने लगी

यह बात सुभद्रासाधियजीकी खबर पढी तब सुभद्राको कह ने लगी । हे आर्य ! अपने महाप्रतरूप दीक्षा ग्रहणकर धमणी नि ग्रन्थी शुभ्र शस्त्रचयग्रत पालन करनेवागी है तो अपनेको यह गृह स्थकार्य धृतीपणा करना नही कपते है इसपरभी तुमने यह क्या काय करना प्रारम्भ कीया है ! क्या तुमने इस कार्योंक लिये ही दीक्षा ली है ? है भद्र इस अमृत्यकार्यकि तुम आलोचना करे और आगके लिये त्याग करो । पत्ता दाय तीनघार कहा परन्तु सुभद्रासाधि इस बातपर कुच्छ भि लभ नही दीया । इसपर मय साधियरी उम सुभद्राकां धार धार रोक टाक करनेलगी अर्थात् कहने लगीकि हे आर्य ! तुमने ममारयो अमार जानके त्याग कीया है ता फीर यह समारके कायको क्या स्थीकार करती हो ? इत्यादि

सुभद्रासाधियने विचार किया कि जबतक मैं दीक्षा नही ली थी तबतक यह सब साधियरी मेरा आदरमन्कार करती थी आज मैं दीक्षा ग्रहण करनेक बाद मेरी अयहेलना निद्रा घृणा कर मुझे धार धार रोक टाक करती है ता मुझे इन्हाक साधही क्या ? रहना चाहिये वल एक दुमरा उपामराकि याचना कर अपने बहापर नियाम करदेना । यम ! सुभद्राने एक उपामरा याचके आप बहापर निवास करदीया । अय तो कीमीका कहना भि न रहा । दृढकना थरजना भि न रहा इमीसे म्यछदे अपनी इच्छा नुस्तार धरताथ करनेवाली हो क गृहस्थाक बालप्रचाकी लाना खेलाना रमाना स्नान मज्जन कराना इत्यादि कायमें मुचिंछत बन गई । माधु आचारसेभी शीथिल हो गई । इस हालतमें बहुतसे यथ तपश्रयादिकर अन्तिम आधा मानका अनमन किया परन्तु

उम धातिकर्मके कार्यकी आलाचना न करती हुई विराधिभाजमें कालकर मीधमें देवलोकाके बहुपुत्तीया वैमानमें बहुपुत्तीया देवी-पणे उत्पन्न हुई है वहापर च्यार पल्योपमकी स्थिति है

हे भगवान्! देवतावोंमें पुत्रपुत्रीतो नहीं होते हैं फिर इन देवीका नाम बहुपुत्तीया कैसे हुआ !

हे गौतम! यह देवी शम्भेन्द्रकी आज्ञाधारक है । जिस वखत शम्भेन्द्र इन देवीका दोशते है उन समय पूषभजकी पीपामा वालीदेवी बहुतसे देवकुँभर देवकुँमारी बनाके जाती है इसवा स्ते देवतायोंने भी इनका नाम बहुपुत्तीया रग्य दीया है ।

हे भगवान्! यह बहुपुत्तीयादेवी यहासे चत्रके कहा जायगी ?

हे गौतम! इसी जम्बुद्विपके भरतक्षेत्रमें विद्याचल नामका पर्यतने पाम धैभिल नामका सन्निवेमके अन्दर एक ब्राह्मणकुलमें पुत्रीपणे जन्म लेगी उसका मातापिता मोहत्सवादि करता हुआ मोमा नाम रखेगा अच्छी सुन्दर स्वरूपवन्त होगी यह लडकी यौवन वय प्राप्त करेगी उन समय पुत्रीका मातापिता अपने कुलने भाणेज रष्टकुटके साथ पाणीग्रहन करा देगा । रष्टकुट उस मोमा भार्याको उडे ही द्विफाजतने साथ रखे गा । मोमा भार्या अपने पति रष्टकुटके साथ मनुष्य सत्रधि भोग भोगवते प्रतिघर्ष एकेक युगलका जन्म होनेसे सोला वर्ष में उन साम्राज्यणीके यत्तीस पुत्र पुत्रीयाका जन्म होगा । जब मोमा उन पुत्र पुत्रीयाका पुरण तौरपर पालन कर न सकेगा । यह यत्तीस बालक मोमामातासे कोई दुद्ध मागेगा कोई खाद मागेगा कोई ग्याजा मागेगा, कोई हसेगा कोई छीवेगा, कोई मोमाका ताडना करेगा, कोई तरजन करेगा कोई घरमें

टटी करेगा कोइ पेशाव करेगा कोइ प्रलेप करेगा इम पुत्र पुत्रीयाके मारे मोमा महा दु गणि होगी उमका घर घडाही, दु गन्ध घाला होगा इम बाल बचाइ अत्रादामे मौमा अपने पति रष्टकुटके साथ मनोइच्छित सुख भोगवनेमें अनमथ होगी । उस समय सुव्रता नामकि माध्वी एक मिथाडासे गौचरी आवेगी, उ नको भिक्षा देके घट मोमा गोलेगी कि हे आर्य ! आप बहुत शास्त्रका जानकर हो मुझे घडाही दु न है कि मैं इम पुत्र पुत्रीयोके मारी मेरे पतिके साथ मनुष्य संवधि भोग भोगव नही सकती हु वास्ते कोइ एमा उपाय बतलाया कि अब मेरे बालक नहो इत्यादि, साध्वि पूर्ववत् केवली ग्रहपित धर्म सुनाया मामा धर्म सुन दीक्षा लेनेका विचार करेगी साध्विजीसे कहा कि मेरे पतिकी आज्ञा ले मैं दीक्षा लेहुगी । पतिसे पुच्छने पर ना कहेगा कारण माता दीक्षा ले तो बालकोका पौषण कौन करे ।

सोमा साध्विजीके वन्दन करनेका उपासरे जायेगी धर्मदे देशना सुनेगी श्रावकधम बारह व्रत ग्रहन करेगी । जीयादि पदार्थका अच्छा ज्ञान करेगी ।

साध्वि घहासे विहार करेगी मोमा अच्छी जानकार हो जायगी कितनेक समयके बाद घट सुव्रता साध्विजी फीर आवेगी मोमा श्राविका घादनका जायेगी धम देशना धरणकर अपने पतिके अनुमति लेके उम साध्विजीके पान्न दीक्षा धारण करेगी विनय भक्तिकर इग्यारा आगका अभ्यास करेगी । बहुतसे चोय छट, अष्टम मासखमण अदमासखमणादि तपश्चर्या कर अतिम आलोचन कर आदा मामका अनमन कर समाधिमें काल कर मौधम देवलोकमें शक्रेन्द्रके सामानिक देव दो सागरोपमकि स्थितिमें देवपणे उत्पन्न होगी । घहापर देवसंरन्धि सुखाका

अनुभोगकर चरगी यह महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जातिकुलमें अवतार लेगी यहा भी बैरली प्ररूपित धर्म स्वीकार कर कर्मश-पुर्षाका पराजय कर वैश्वज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगी । इति चतुर्याध्ययन समाप्तम् ।

(-) अध्ययन—भगवान् वीरप्रभु गजग्रहन करक गुणशी लोचन में त्रिगजमान है परिपदाका भगवानकी घन्दन करनेका जाना भगवानका धर्मदेशना देना यह सब पूर्णयत् समझना ।

उम समय मौधर्म कल्पके पूर्णभद्रयमान में पूर्णभद्रदेव अपन देव देवीयोके साथ भोगचिलाम नाटक आदि देव मयधि सुख भोगर रहाया ।

पूर्णभद्र देव अग्रधिज्ञानसे भगवानका देगा सूरियाभदेवकि माफीक भगवानकी घन्दन करनेकी आना प्रतीम प्रकारका नाटक कर पीन्ठा अपने स्वानपर गमन करना । गौतमस्यामिका पूर्णभय पृन्छाका प्रश्न करना उमपर भगवानके मुगार्थिन्दसे उत्तर का देना यह सब पूयकि माफिक समझना ।

परन्तु पूर्णभद्र पूर्णभयमें । मणिवति नगरी चन्द्रोत्तर उद्यान पूर्णभद्र नामका बडा धनाढ्य गाथापति स्थितर भगवानका आगमन पणभद्र धमदेशना ध्रयण करना जेष्ट पुत्रकी गृहभार सुप्रतकर आप दीक्षा ग्रहन करके इग्यार अगका ज्ञानाम्यामरर अत्तिम आलोचना पुत्रक एक मामका अनमन कर समाधि पुर्व-य काल कर मौधर्म देवलोकमे पूर्णभद्र देव हुया है ।

हे भगवान ! यह पुर्णभद्र देव यहासे चयके कहा जायेगा ?

हे गौतम ! महा विदहक्षेत्रमें उत्तम जाति कुलके अन्दर जन्म धारणकर बैरली पररूपित धर्मका अगीकार कर, दीक्षा धारणकर, वैश्वज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा इति पाचमाध्ययन समाप्तम् ।

(६) इसी माफीक मणिभद्र देवका अध्ययन भी समझना, यह भि पुत्रभर्तृ मणिषति नगगीर्तं मणिभद्र गाथापतिथा स्थि चरति पाम दीक्षा लेके सौधर्म कल्पमे देवता हुनाया वदाने महाविदेहम मोक्ष जावेगा इति । ६ ।

(७) एउ दत्तदेउ (८) बलनाम देव (९) शिष्यदेव (१०) अनादीत देउ पुत्रभर्तृ मय गाथा पति थे दीक्षा ले सोधम देउ लाकमे देय हुये है भगवानको धन्दन कग्नेको गयेथे, बत्तीम प्रकारक नाटक कर भक्ति करीथी देवभधसे चउने महा विदेह क्षत्रमे सउ माथ जावेगा इति । ७ ।

॥ इति श्री पुष्किया नामका सूत्रका सचिप्त सार ॥



॥ अथश्री ॥

पुष्पचूलिया सूत्रका संक्षिप्त सार.

(दश अध्ययन)

(१) प्रथम अध्ययन । श्री घोरप्रभु अपने शिष्यमण्डलके परिचारसे एक नमय राजग्रह नगरके गुणशीलोद्यानमें पधारे च्यार जातिके देवता, विद्याधर, राजा श्रेणक और नगरनिवासी लोक भगवानकी घन्दन करनेको आये ।

उस नमय मौधर्मकल्पके, धीवतम घैमानमें च्यार हजार मामानिक देव, सोलाहजार आत्म रक्षक देव, च्यार महत्तनिक देवीयों और भी स्त्रैमानवामी देवदेवीयोंके अन्दर गीतग्यान नाटकादि देव सबन्धी भोग भोगप्रती श्रीनामकि देवी अवधिहान से भगवानको देव यावत् यह पुत्तीयादेवीके माफीक भगवानको घन्दन करनेको गइ यतीम प्रकारका नाटककर अपने स्थानपर गमन किया ।

गीतमस्वामिने उन श्रीदेवोंका पूर्यभर पुच्छा ।

भगवानने फरमाया । कि इसी राजग्रह नगरके अन्दर जय-शशुराजा राज करता था उस समयकि घात है कि इन नगरीमें उडाही धनाढ्य और नगरमें प्रतिष्ठत एक सुदशन नामका गाथा-पति निराम करता था उसके प्राया नामकि भार्या थी और दम्प-तितसे उत्पन्न हुइ भूता नामकि पुत्री थी वह पुत्री केनी थी के यु-वकहानेपरभी वृद्धवय सादश जिस्का शरीर झन्नरसा दीखाइ देता

था जिस्का कटिका भाग नम गया था जघा पतली पड गई थी स्तनका अदर्श आकार अर्थात् घीलकुलही दीखाई नही देता था इत्यादि, जिस्को षोड्भी पुरुष परणनेकि इच्छाभी नही करता था

उनी समय, निलयण, नौ ऋ (हाथ) परिमाण शरीर, देवा दिसे पुजित तवीमया तीर्थकर श्री पार्श्वनाथ प्रभु मोल हजार मुनि अडतीस हजार साध्वियकि परिवारसे पृथ्वी मडलका प-वित्र करते हुय राजप्रहोयानमें पधारे । राजादि सभे लाय भगवानकी वन्दन करनेकी गये ।

यह बात भूतानेभी सुनी अपने माता पिताकि आवा ले स्नान मज्जनकर च्यार अश्वका रथ तैयार करवाके बहुतसे दाम दासीया नोकर चाकरकि परिवारसे राजप्रह नगरके मध्यभागमे निकलक बगचेमें आई भगवानक अतिशय देवक रथसे निचे उत्तर पादाभिगमसे भगवानकी वन्दन नमस्कार कर सेवा क रने लगी

उम जिस्तारवाली परिपदाकी भगवानन त्रिचित्र प्रज्ञासे धमदेशना सुनाइ अन्तिम भगवानने फरमायाकि हे भयजीवा ! ससारक अदर जीव-सुख-दु ख गजारक रागी निरोगी स्वरूप कुरूपवान, धनाढ्य दालीप्र उच गौत्र निच गौत्र इत्यादि प्राप्त करते हैं यह सब पुष उपाजन त्रिये हुये सुभासुभ कर्मोंराही फल है । वास्ते पेन्तर कर्मस्वरूपकी ठीक ठीक समझक नवा कर्म आनेके आश्रय द्वार है उसकी गेकी और तपश्रया कर पुराण कर्मोंकी क्षय करो ताक पुन इन ससारमे आनाही न पडे इत्यादि ।

देशना श्रवण कर परिपदा आनन्दीत हा यथाशक्ति व्रत प्र-त्याख्यान कर वन्दन नमस्कार स्तुति करते हुय स्व स्व स्थान गमन करने गये ।

भूताकुमारी देशना श्रवण कर हर्ष सतुष्ट हो बोलीकि हे भगवान आपका चेहना मत्स्य है सुख और दुःख पुर्वकृत कर्मकाही फल है परन्तु अपने कर्म क्षय करनेका भी उपाय अच्छा घतलाया है मैं उस रहस्तेकों सचे दीलसे श्रद्धा है मुझे प्रतितभी आइ है आपका चेहना मेरे अन्तर आत्मामें रूच भी गया है हे करुणा सिन्धु ! मैं मेरे मातापितायोंकों पुच्छके आपकि समिप दीक्षा ग्रहन करुंगा । भगवानने फरमाया ' जहा सुगम् ' भूता भगवानको वन्दन नमस्कार कर अपने रथ परारूढ हो अपने घरपर आइ । मातापितायोंसे अर्ज करीकि मैं आज भगवानकि अमृतमय देशना सुन समारसे भयभ्रात हुइ हु अगर आप आज्ञा देवे तौ मैं भगवानके पाम दीक्षा ग्रहन कर मेरी आत्माका वन्द्याण करू ? माता पितायाने कहाकि खुशीसे दीक्षा लें ।

नाट—समारकी केमी स्वार्थवृत्ति होती है इस पुत्रीके साथ मातापिताका स्वार्थ नहीं था यत्ने इसीका कोइ परणताभी नहीं था इस हालतमे खुशीसे आज्ञा देदीयी ।

भूताका दीक्षा लेनेका दील होते ही मातापितायोंने (लग्नके वदलेमे) घडा भारी दीक्षा महोत्मवकर हजार मनुष्य उठाये एमी मेयिकाके अन्दर भूताको घेठा कर घडाही आडम्बरके साथ भगवानके पाम आये और भगवानसे वन्दन कर अर्ज करीकि है प्रभु यह मेरी पुत्री आपकी देशना सुन समारसे भयभ्रात हा आपके पाम दीक्षा लेना चाहति है हे दयातु ! मैं आपको शिष्यणी रूपभिक्षा देता हु आप क्मे स्वीकार कराये

भूताने अपने वस्त्र भूषण अपने मातापिताकदि मुनियेपको धारणकर भगवानके समिप आये नम्रता पुषक अर्ज करी हे भगवान समारके अन्दर अगीता (जन्म) पलिता (मृत्यु) का म-

हान् तु ख है जैसे किसी गाथापत्तिवे गृह जलता हो-उसके अन्दरसे अमार वस्तु छोड़के सार वस्तु निकाल लेते हैं यह मार वस्तु गृहस्थाकीं सुप्तमे महायता भूत हो जाती है एसे मैं भी असार ममार पदार्थोंकी छोड़ मयम मार ग्रहन करती हु इत्यादि धीनती करी ।

भगवानने उन भूताको न्याग महाव्रतरूप दीक्षा देके पुष्प-चूला नामकि साधिजीकीं सुप्रत करदि ।

भूतासाधिव दीक्षा लेनेके बाद फासुक पाणी लाके कधी हाथ धोये, कधी पग धोये, कधी खाख धावे, ऋषी स्तन धोये, ऋषी मुख नाक आखे शिर आदि धोना तथा जहापर बेठे उठे वहापर प्रथम पाणीके छडकाव करना इत्यादि शरीरकि सुश्रुपा करना प्राग्भ कर दीया ।

पुष्पचूलासाधिजी भूतासाधिवने कहाकि हे आर्य ! अपने श्रमणी निग्रन्थी है अपनेकीं शरीरकि सुश्रुपा करना नही कल्पता है तथापि तुमने यह क्या ढगमड रखा है कि कधी हाथ धोती है ऋषी पग धोती है यावत् शिर धोती है हे साधिवी ! हम अकृत्य कार्य कि आलोचन करों और आइदासे एसे कायका परित्याग करों एसा गुरुणीजीके कथन का आदर न करती हुई भूताने अपना अकृत्य कार्यको चातु ही रखा । इसपर बहुतसी साधिवियां उन भूताको राकटोर करने लगी है साधिव ! तुं बडेही आदम्य एसे दीक्षा ग्रहन करीथी तां अत्र इस तुच्छ सुखोंके लिये भगवान आज्ञाकि विराधि हो अपने मींग हुआ चारित्र्य चुडामणिकों कयो मी रही है ?

गुरुणिजी तथा अन्य साधिवियांकि हितशिक्षाकां नही मानती सोमाकि माफीक दुसरा उपामराके अन्दर निवासकर स्व-

इच्छा स्वच्छंदे पास्तथपणे विहार करती हुइ जहुत यपों तव तप
 धर्या कर अन्तमे आहा मासका अनसनधर पापस्थान अनाआलां-
 चीत कालकर सौधर्म देवलोकमें श्रीयतंस धैमात्रमें श्री देवीपणे
 उत्पन्न हुइ है घहा च्यार पत्योपमका आयुग्य पुरण कर महाधि
 देह क्षेत्रमें उत्तम जाति तुल्य उत्पन्न हागा वेधली परूपित धर्म
 स्वीकार कर दीक्षा ग्रहन करेगी शुद्ध चारित्र्य पालने केवलज्ञान
 प्राप्त कर मोक्ष जावेगी इति प्रथमा ययन समाप्तम् ।

पय हरीदेवी, धृतिदेवी, कीर्तिदेवी, बुद्धिदेवी लक्ष्मिदेवी,
 पलादेवी, सुरादेवी, रसादेवी, गन्धादेवी यह दशों देवीयों भ-
 गवानका घन्दन करनेकी आह यतीस प्रकारका नाटक किया
 गीतमस्वामि इन्होंने पूर्यभयकि पुच्छा करी भगवानने उत्तर
 परमाया दशों पद्य भयमें गाथापतियोंने पुत्रीयों थी जैसेकि भूता
 दशों पाश्र्वनाथ प्रभुके पास विक्षा ग्रहन कर शरीररि सुश्रुषा
 कर पिराधि हो सौधर्म देवलाक गइ घहासे चयके महाधिदह
 क्षेत्रमें आराधिपद ग्रहन कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगी ।
 इति दशाध्ययन ।

॥ इति पुष्कचूलिया सूत्र सच्चिन् मार समाप्तम् ॥



॥ अथश्री ॥

विन्दिदसा सूत्र संक्षिप्तसार ।

(वारहा अध्ययन)

(१) प्रथम अध्ययन—चतुर्थ आराके अन्तिम परमेश्वर नेमिनाथप्रभु इस भूमडलपर विहार करतेथे उम समयकि घात है कि, द्वारकानगरी, रेघन्तगिरि पयत्, नन्दनधनाधान, सुर पिय यक्षका यक्षायतन, श्रीकृष्णराजा मपरिवार इस सबका यणन गौतम कुमराध्ययनसे देखा ।

उम द्वारकानगरीमे महान् प्राक्रमी बलदेव नामका राजाया उम बलदेवराजाके रेघन्ती नामकि राणी महिलागुण सयुक्त थी ।

एक समय रेघन्ती राणी अपनि सुखशय्याके अ दर नि हका स्वप्न देखा यावत् कुमरका जन्म मोहनस्थ कर निपेढ नाम रमाया ७२ कला प्रणिण हानेसे ५० राजगन्यायाक साथ पाणि ग्रहन दत्ता दायर्चा यावत् आनन्द पुत्रक ममारके सुख भोगव रहाथा जैसे गौतमाध्ययने विन्तारपुत्र लिप्ता है वास्ते यहासे देगना चाहिये ।

यादयकुल शृंगार देवादिक पजनिय घायीसये तीर्थकर श्री नेमिनाथ भगवानका पधारना द्वारकानगरीके नन्दनधनमे हुआ ।

श्रीकृष्ण आदि मय लाख मपरिवार भगवानको बन्दन करनेको गया उस समय निपेढकुमर भी गौतम कि माफीक बन्दन करनेका गये । भगवानने उम विशाल परिपदाका विचित्र

प्रकारसे धर्मदेशना दी अन्तमे फरमाया कि हे भय जीवों हम नमारके अन्दर पौदगलीक, अस्थिर सुखोंका, दुनिया सुग मान रही है परन्तु वस्तुतः यह पकड़ु नका घर है वास्ते आत्मतत्त्व वस्तुको पहचान हम कर्म सुखोंका त्यागकर अपने अनाधित सुखोंका ग्रहण करो अक्षय सुखोंका प्राप्त करनेवालेका पेस्तर चाग्नि राजासे मीलना चाहिये अर्थात् दीक्षा लेना चाहिये । इत्यादि ।

आतामण देशना सुन यथाशक्ति व्रत प्रत्याग्यान ग्रहणकर भगवानको वन्दन नमस्कार कर निज स्थान गमा करते हुये ।

निपेढकुंमर देशना सुन वन्दन नमन कर बोला कि हे भगवान आप फरमाया यह मत्य है यह नाशमान पौदगलीक सुग दु खोंका राजाना ही है । हे प्रभु धन्य है जो राजा महाराजा सेठ सेनापति जोकि आपके समिप दीक्षा लेते है हे दयालु मैं दीक्षा लेनेमे असमर्थ हु परन्तु मैं आपकि नमीप श्रावकधम अर्थात् गारहव्रत ग्रहण करंगा । भगवानने फरमाया कि “ जहासुखम् ”

निपेढकुंमर स्वइच्छा मयाद् रक्वः श्रावकः गारह व्रत धारण कर भगवानका वन्दन न० कर अपने गथ पराम्द हो अपने स्थान पर चला गया ।

भगवान नेमिनाथ प्रभुका जेष्ठ शिष्य वरदत्त नामका मुनि भगवानको वन्दन नमस्कार कर प्रश्न करता हुआ कि हे प्रभो ! यह निपेढ कुंमर पुत्र भवमें क्या पुन्य किया है कि बहुतमे लो गोंको प्रिय लगता है सुन्दर स्वरूप यश कीर्ति आदि सामग्री प्राप्त हुई है ।

भगवानने फरमायाकि हे वरदत्त ! इम जन्मुद्धिपये भगवत्से

त्रमें धन धान्यसे समृद्ध पना राइनडा नामका नगर था, जि
मके बाहार मधवनोदान मणिदत्त नामके यक्षका सुन्दर यक्षा
यतन था ।

उस नगरमे बडाही प्राक्षमी न्यायशील प्रजापालक महा
रल नामका राजा राज करता था । जिन राजाके महिला गुण स
युक्त सुशीला पद्मावती नामके राणी थी । उस राणीके मिह न्यपन
सूचित कुमरका जन्म हुआ अनेक गहात्मय कर कुमरका नाम
' वीरगत ' दीया था सुख पुत्रक चम्पकलताके माफीक वृद्धिका
प्राप्त होता रहोत्तर फामे निपुण हो गया ।

जय वीरगत कुमरके युवक अवस्था हुई देगके राजाने उ
त्तीम राज कन्याकाक साथ पाणिग्रहन करा दिया इतनाही दत्त
आया, कुमर निरायाधित सुग्न भागय रहाया कि जिस्का काल
जानेके खबरही नही थी ।

उनी समय त्रेमी भ्रमणके माफीक यह श्रुति बहुत शिग्याके
परिधारसे प्रवृत्त मिद्धार्थ नामका आचार्य महाराज उस राहीमडे
नगरके उद्यानमें पधारे राजाके नगरलाक और वीरगत कुमर
आचार्य महाराजका वन्दन करनका गये । आचार्यश्रीने विस्तार
पुर्वक धमदेशना प्रदान करी । परिपदा यथाशक्ति त्याग वैराग
धारण कर विसर्जन हुई ।

वीरगत राजकुमार, देशना सुन परम वैराग रगमें रगाहुया
माता-पिताके आज्ञा पुत्रक घडेही मोहत्सयके साथ आचार्यश्रीके
पास दीभा ग्रहन करी इर्याममिति यायत् गुप्त प्रद्वचय व्रत पा
लन करने लगा विशेष विनय भक्ति कर स्थिवरासे इग्यारा अ
गका ज्ञानाभ्यास कीया । विचित्र प्रकार तपश्चर्या कर अ तम
आगेचना पुर्वक ४० वर्ष दीभा पालके दोय मासका अनसन कर

समाधि पुर्नक काल कर पाचवा ब्रह्मदेवलोंकमे दश मागरोपमकि स्थितिके स्थान देवतापणे उत्पन्न हुआ। घहासे आयुष्य पुर्ण कर इम द्वारकानगरीमें उलदेवराजाकि रेवन्ती नाम की राणीके पुत्र पणे उत्पन्न हुआ है हे वरदत्त पुत्र भवमें तप मयमका यह प्रत्यक्ष फल मीला है।

वरदत्तमुनिने प्रश्न कीयाकि हे भगवान यह निपेढकुँमर आवक पाम दीक्षा लेगा ? भगवानने उत्तर दीयाकि हा यह वरदत्त मेरे पाम दीक्षा लेगा। पमा सुन वरदत्तमुनि भगवानका उन्दन नमस्कार कर आत्मव्यानमे रमनता करने लगा। अन्यदा भगवान घहासे विहार कर व अन्य देशमें विचरने लगे।

निपेढकुँमर श्रावक होनेपर जाना है जीवाजीव पुन्य पाप आश्रय सयर निर्जारा उन्ध मोक्ष तथा अधिकरणादि क्रियाके भेदोंको समझा है यावत्। श्रावक व्रतोंका निर्मल पालन करने लगा।

एक समय चतुर्दशी आदि पत्र तीर्थके रोज पौषदशालामे युवदु कुमारवि माफीष 'पौषदकर धर्म चिंतन करता' यह भावना व्याप्त हुईकि धन्य है जिस ग्राम नगर यावत् जहापर नेमिनाथप्रभु विहार करते है अर्थात् उस जमीनको धन्य है कि जहापर भगवान चरण रखते है। एउ धन्य है जिस राजा महा राजा सेठ सेनापतिका की जा भगवानके समीप दीक्षा लेते है। धन्य है जो भगवानके समीप श्रावक व्रत धारण करते है। धन्य है जो भगवानके देशना श्रवण करते है। अगर भगवान यहापर पधार जावे तो मैं भगवानके पाम दीक्षा ग्रहन करू पमा विचार रात्रीमें हुआथा।

सूर्यादय होते ही भगवान पधारणे कि वधाइ आगइ, राजा प्रजा और निपेढकुँमर भगवानका उन्दन करनेको गया भगवा

नने देशना दी निपेढकुंमर देशना मुनि मातापिता कि आज्ञा प्राप्त कर घटे ही आडम्बरन माथ मातापिताने थात्रचा पुत्र कुंमर कि भाफीक मोहत्मज कर भगवाननं समिप दीक्षा दीरादी। निपेढमुनि सामायिकादि इग्यारा अगका ज्ञानाभ्यास कर पुण नौ वष दीशा पाल अन्तिम आलोचना पुर्वक इक्वीस दिनका अन मनकर समाधि महीत जालकर सर्वार्थसिद्ध नामका महावैमान तेतास सागरापमकि स्थितिमे देवपणे उत्पन्न हुवा।

वहा देवताजामे आयुष्य पुणकर महाविदेहक्षेत्रम उत्तम जातिकुल विशुद्ध धर्मम कुंमरपणे उत्पन्न होगा भोगोंसे अरुची हागा केवली प्ररूपित धर्म स्वीकारकर, दीक्षा ग्रहनकर घोर तप अर्या करेगा जिस कार्यके लिये वह दीक्षाके परिसह सहन करेगा उस कार्यको साधन करलेगा अर्थात् कवलज्ञान प्राप्तकर अन्तिम श्वासोश्वास ओर इस 'समारका त्यागकर मोक्ष पधार' जावेगा इति प्रथम अध्ययन समाप्त।

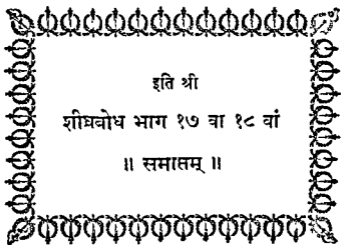
इसी भाफीक (२) अनिघहकुंमर (३) वहकुंमर (४) अगति कुंमर (५) युक्तिकुंमर (६) दशरथकुंमर (७) दठरथकुंमर (८) महाधणुकुंमर (९) सप्तधणुकुंमर (१०) द्वाधणुकुंमर (११) नाम कुंमर (१२) शतधणुकुंमर।

यह त्रारहकुंमर त्रलदेवराजाकिरेवतीगणीके पुत्र हैं पचास पचास अत्तेवर त्याग धी नेमिनाथ प्रभु पासे दीक्षा ले अन्तिम सर्वार्थसिद्ध वैमान गये थे वहासे चक्रके महाविदेह क्षेत्रमे निपेढकी भाफीक सब मोक्ष जावेगा।

इति श्री विन्दिदसाम्ब्रका सच्चिद सार समाप्तम्







इति श्री

शीघ्रबोध भाग १७ वा १८ वां

॥ समाप्तम् ॥

प्रस्तावना.



इस समय जैनशासन में प्राय ४५ आगम माने जाने हैं-
यथा—भ्यारह अग, बारह उपाग, अश पयन्ना, छे उेद, चार मूल,
नदी और अनुयोग द्वार एव ४५

यहा पर हम छे उेद सूत्रो क विषय म ही कुछ लिखना
चाहते हैं एतु निशिथ, महानिशिथ, और पचमस्य इन तीन सूत्रो
के मूल कर्ता पचम गणधर मौधर्मस्वामी हैं तथा वृहत्कल्प, व्यवहार
और दशाश्रुतम्बध इन तीन सूत्रो क मूल कर्ता भद्रबाहु स्वामी हैं
इन सूत्रो पर नियुक्ति, भाष्य, बृहत्भाष्य, चूर्णि, जपचूरी और
टिप्पनादि भिन्न २ जाचार्योंने रचे हैं

इन छ उेदोमें प्राय सातु, माध्वीयोने आचार, गोचार, कल्प,
क्रिया और कायदादि मार्गोका प्रतिपादन क्रिया हैं इसके साथ २
द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, उत्सर्ग, जपवाटादि मार्गोकाभी समयानुसार
निरूपण क्रिया है और इन उओ छेदोके पठन पाठनका अधिकार
उहीको है जो गुरुगम्यता पूर्वक गभीर शैलीमें स्याद्वात्मार्गको अच्छी
तरहसे जाने हुवे है और गीतार्थ महात्मा है और वेही अपने शिष्योको
योग्यता पूर्वक अध्ययन व पठन पाठन क्वाते है ।

भगवान् वीरप्रभुका हुकम है कि जनतक जाचाराग और एतु-
निशिथ सूत्रोका जानकार न हो ततक उन मुनिराजोको आगेजान

होके विहार करना, भिक्षाग्न करना और व्याख्यान देना नहीं
कल्पता

आचाराग, लुनिशिय मूत्रमे अनभिन साधु यदि पूर्वोक्त
कार्य करे तो उसे चतुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है और गच्छनायक
आचार्यादि उक्त अज्ञात साधुवोंको पूर्वोक्त कार्योंके विषय आना भी
न दे और यदि दे तो उन आना देनेवालोंकोभी चतुर्मासिक प्राय
श्चित्त होता है उमलिय सर्व साधु साधियोंको चाहिये कि वे योग्यता
पूर्वक गुस्मतासे इन छे छेदोका अवश्य पठन पाठन करें, विना
इनके अध्ययन किये साधु मार्गका यथावत् पालन भी नहीं कर सकते
कारण जनतक जिस वस्तुका यथावत् चान १ हो उसका पालन भी
ठीक ठीक कैसे हो सका है ?

अगर कोट शीथिलाचारी खुद स्वच्छन्दताको स्वीकार कर अपने
साधु साधियोंको आचारक अन्धकारमें रख अपनी मन मानी प्रवृत्ति
करना चाहे, उमको यह कहना आसान होगा कि साधु साधियोंको
छेदसूत्र न पठाने चाहिये उनमे यह पूछा जाय कि छेदसूत्र है किम
लिये ? अगर ऐसाही होता तो चौरासी आगमोंमेंसे पैंतालीस आगमका
पठन पाठन न रखकर उन चालीसका ही रख देते तो क्या हरज थी ?

अब समझ यह रहा कि छेद सूत्रोंमें कइ बातें ऐसी अपवाद
है कि वह अल्पजोंको नहीं पढ़ार जाती (समाधान) मूल सूत्रोंमें
तो ऐसी कोईभी अपवादकी बात नहीं है कि जो साधुवोंको न पढ़ाई

जाय अगर भाष्य चूर्णि जादि विवरणोमें द्रव्य क्षेत्र समयानुमार दुष्कालादिके कारणसे अपवाद मार्गना प्रतिपादन किया है वह “ अ-मक्त परिहार ” उस विरुद्ध अवस्थाने लिये ही है, परन्तु सूत्रोंमें “सुत्यो रसलु पदमो” ऐसाभी तो उल्लेख है कि प्रथम सूत्र और सूत्रका शब्दार्थ कहना इस जादेशमे अगर मूल सूत्र और सूत्रका शब्दार्थमे ही शिष्यको छेद सूत्रोकी वाचना दे तो क्या हर्ज है ? क्योंकि टटने-मे मुनियोनो अपने मार्गना सामान्यत बोध हो सकता है

उहोतमे ग्रन्थोंमें छेदसूत्रोके परिमाणकी आवश्यकता होनेपर मूल सूत्रोका पाठ लिग उसका शब्दार्थ कर देते है इस तरह अगर सम्पूर्ण छेद सूत्रोकी भाषा कर दी जाय तो मेरे ख्यालसे कोइ प्रकारकी हानी नहीं है, बल्कि अनानके अन्धेरेमें गिरे हुवे महात्माओंके लिये सूर्यके समान प्रकाश होगा

दूसरा सवाल यह रहा कि छेदसूत्रोके पठन पाठनके अधिकारी केवल मुनिराज ही होते है और छपवाके प्रसिद्ध करा दिये जानेपर सर्व साधारण (श्रावक) लोकभी उनके पढनेके अधिकारी हो जावेंगे इस बातके लिये फिर करनेकी आवश्यकता नहीं है यह कायदा जबकि सूत्रोकी मालकी अपने पास थी याने सूत्र अपनेही स्वजेमे रक्ते हुवे थे, तन तनचल सनती थी, परन्तु आज वे सूत्र हाथोहाथ दिसाई देते है तो फिर इस बातकी दाक्षिण्यता क्यों ? अन्य लोक भी जैन-शास्त्रोंको पढते है तो फिर श्रावक लोगोने ही क्या नुकसान किया है कि उनकों सूत्रोंकी भाषा भी पढनेका अधिकार नहीं

सूत्रोम ऐसा भी पाठ दिखाई देता है कि भगवान् वीरप्रभुने वदुतमे साधु, साध्वि, श्रावक, श्राविना, देव और देवागनाओंकी पण्डित्यमं इन सूत्रोका व्याख्यान किया है अगर ऐसा है तो फिर हमारे पढ़ेंगे यह भ्राति ही क्यों होनी चाहिये ?

उद्दसूत्रोमें जैसे विशेषतासे साधुओंके आचारका प्रतिपादन है, वैसे सामान्यतासे श्रावकोके आचारका भी व्याख्यान है श्रावकोके सम्यक्त्व प्रतिपादनका अधिकार जैसा उद्दसूत्रोमें है, वसा साथ ही हमारे सूत्रोमे होगा और श्रावकोकी ग्यारह प्रतिभाका सविस्तार तथा गुणकी तेतीस आशातना टालना और निमी आचारको पदवीका देना वह योग्य न होनेपर पद्धिका छोडाना तथा आलोचना करवाना इत्यादि आचार उद्दसूत्रोमें है इसलिये श्रावकभी सुननेके अधिकारी हो सकने हैं

अब तीसरा सवाल यह रहा की श्रावकलोका मूत्र मूत्र वा अनेक अधिकारी है या नहीं ? इस विषयम हम इतना ही कहेंगे कि हम इन उद्दसूत्रोकी केवल भाषाही लिखना चाहते हैं और भाषाका अधिकारी हरएक मनुष्य हो सक्ता है

प्रमगत इन उद्दसूत्रोका कितनाक विभाग भिन्न २ पुस्तको द्वारा प्रकाशित हो चुका है जैसे मेनप्रश्न, हीरप्रश्न, प्रश्नोत्तरमाला, प्रश्नोत्तरचिन्तामणी, विशेषशतक, गणधरसार्द्धशतक और प्रश्नोत्तरसार्द्धशतकादि ग्रन्थोमे आवश्यकता होनेपर इन उद्दसूत्रोके कतिपय मूलपाठोको उद्धृत कर उनका शब्थार्थ और विस्तारार्थमें उल्लेख किया है-

इसमें जैन समाजको बड़ा ही लाभ हुआ और यह प्रवृत्ति भव्यात्माओं के मोक्षके लिये ही की गई थी

इस लिये अब क्रमशः सम्पूर्ण सूत्रोंकी भाषाद्वारा प्रामाणिक ऋग्वा लिया जाय तो विशेष लाभ होगा, इसी हेतुमें इन सूत्रोंकी भाषा की जाती है इसको लिखते समय हमको यह भी प्राक्षिण्यता न रखनी चाहिये कि सूत्रोंमें बड़े ही उच्च मोटीमें मूर्तिमार्गको उतलाया है और इस समय हममें ऐसा कठिन मार्ग पल नहीं सक्ता, इसलिये इन सूत्रोंकी भाषा प्रामाणिक न करे जाय हम नितना पालते हैं, भविष्यमें मल सहननवालोमें इतनाभी पलना कठिन होगा, तथापि सूत्र तो यही रहेंगे शास्त्रकारोंने यह भी फरमाया है कि “ज सक्त्त करइ ज न सक्त्त सन्द्द, सद्द माणो जीवो पावई सासयठाण” भावार्थ—जितना बने उतना करना चाहिये, अगर जो न बन सके उसके लिये श्रद्धा रखनी चाहिये, श्रद्धा रखनेहीसे जीवोंको शाश्वत स्थानकी प्राप्ति हो सक्ती है

उत्पष्ट मुनिमार्गका जो प्रतिपादन आचाराग, सूत्रवृत्ताग, प्रश्नव्याकरण, ओषनिर्युक्ति, पिंडनिर्युक्ति आदि सूत्रोंके छपनेमें जाहिर हो चुका है, तो फिर हमसे सूत्रोंका तो कहनाही क्या?

कितनीक तो म्दी भ्रातियें पड जाती है अगर उसे दीर्घदृष्टी से देखा जाय तो सिवाय नुकसानके दूसरा फोड भी लाभ नहीं है

हम हमारे पाठन वर्गसे अनुरोध करते हैं कि आप एक दृष्टे

इन शीघ्रबोधकभागोको क्रमश आद्योपान्त पद्धतिये इसप्र पढनेमे जा पको ज्ञात हो जायगा कि सूत्रोंमे ऐसा नोनसा विषय है कि जो जन समानक पढने योग्य नहीं है? अर्थात् वीतगगकी वाणी भयजीवोंका उद्धार करनेके लिये एक असाधारण कारण है, इसके आराधन करने बीमे भयजीवोंको अक्षय सुरकी प्राप्ति हुई है—होती है—और होगी

अन्तमें पाठकोंसे मेरा यह निवेदन है कि छद्मस्थोसे मूल होनेका स्वाभाविक नियम है निमपर मेरे सरीसे अल्पनसे मूल हो इसमें आश्चर्य ही क्या है? परन्तु सज्जन जन मेरी मूलकी अगर सूचना देगे तो में उनका उपकार मान कर उमे स्वीकार करूंगा और द्वितीया वृत्तिमे सुधारा वधारा कर दिया जायगा

इत्यन्तम्—

लेखक



। श्रीरत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला पुष्प न ६२ ।

। श्रीकृष्णसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ।

श्रीब्रह्मवैवर्त पुराण १८ वां.



श्रीबृहत्कल्पसूत्रका संक्षिप्त सार



(उद्देशा ६ छे)

प्रथम १ उद्देशा—इम उद्देशामें मुख्य माधु साध्वीयोंका आचारकल्प है । जो कर्मबंधके हेतु और समयको माधु करनेवाले पदार्थ है, उसको निषेध करते हुवे शास्त्रकारोंने “ नो कल्पइ ” अर्थात् नहि कल्पते, और समयके जो माधु पदार्थ है, उसको “ कल्पइ ” अर्थात् यह कल्पते है । वह दोनो प्रकार “ नो कल्पइ ” “ कल्पइ ” इमी उद्देशामें कहेंगे । यथा:—

(१) नहि कल्पै—साधु साध्वीयोंको कच्चा तालवृक्षका फल ग्रहण करना न कल्पे । भावार्थ—यहा मूलसूत्रमें तालवृक्षका फल कहा है यह किमी देश विशेषका है । क्यों कि भिन्न भिन्न देशमें भिन्न २ मापा होती है । एक देशमें एक वृक्षका अमुरु नाम है, तो दुसरे देशमें उसी वृक्षका अन्यही

नाम प्रचलित है। यहा पर तालवृक्षके फलकी आकृति लची और गोल समझनी चाहिये। प्रचलित भाषामें जैमी केलेकी आकृति होती है। साधु साध्वीयोंको ऐसा कच्चा फल लेना नहि कल्पै।

(२) कल्पै—साधु साध्वीयोंको कच्चा तालवृक्षका फल, जो उस फलको छेदन भेदन करके निर्जंग कर दीया है, अथात् वह अचित्त हो गया हो तो लेना कल्पै।

(३) कल्पै—साधुओंको पका तालवृक्षका फल, चाहे वह छेदन भेदन कीया हुआ हो, चाहे छेदन भेदन न भी कीया हो, कारण—वह पका हुआ फल अचित्त होता है।

(४) नहि कल्पै—साध्वीयोंको पका तालवृक्षका फल, जो उमरों छेदन भेदन नहि कीया हो, कारण—उस पूर्ण फलकी आकृति लची और गोल होती है।

(५) कल्पै—साध्वीयोंको पका तालवृक्षका फल, जिसको छेदन भेदन कीया हो, वह भी विधिमयुक्त छेदन भेदन कीया हुआ हो, अथात् उस फल ऊभा नही चीरता हुआ, बीचमेंसे टुकड़े किये गये हो, ऐसा फल लेना कल्पै।

(६) कल्पै—साधुओंको निम्न लिखित १६ स्थानों, शहरपना (कोट) सयुक्त और शहरके बहार वस्ती न हो, अर्थात् उस शहरका विभाग अलग नहीं हुवे ऐसा ग्रामादिमें साधुओंको शीतोष्णकालमें एक मास रहना कल्पै।

१६ स्थानोंके नाम —

- (१) ग्राम—जहा रहनवाले लोगोंकी संख्या स्वल्प है, खान, पान, भापा हलकी है और जहापर ठहरनेसे बुद्धिमानोंकी बुद्धि मलिन हो जाती है, वो ग्राम कहा जाता है।
- (२) आकर—जहापर सोना, चादी और रत्नोंकी रयाणें हो।
- (३) नगर—शहरपना (कोट) से संयुक्त होके गोलाकार हो, वो नगर कहा जाता है और लम्बी जादा, चौड़ी कम हो वो नगरी कही जाती है।
- (४) गेड—धूलकोट तथा राइ संयुक्त हो।
- (५) करवट—जहापर कुत्सित मनुष्यों वसते हैं।
- (६) पट्टण—जहापर व्यापारी लोगोंका विशेष निवास हो।
 (१) गीनतीसे नालीयरादि (२) तोलसे गुल शर्करादि,
 (३) मापसे कपडा कीनारी इत्यादि, (४) परीचासे रत्नादि-ऐसा चार प्रकारके पदार्थ मिले और विक्रयमी हो मके, उसे पट्टण कहते हैं।
- (७) मडप—जिसके घहार अढाइ अढाइ कोशपर ग्राम न हो।
- (८) द्रोणीमुख—जहापर जल और स्थलका दोनोंरस्ता मौजूद हो।
- (९) आश्रम—जहापर तापसोंका बहुत आश्रम हो।
- (१०) सन्निवेश—बड़े नगरके पासमें वस्ती हो।

- (११) निगम—जहापर प्रायः वैश्य लोगोंकी अधिक वस्ती हो ।
- (१२) राजधानी—जहापर खाम करके राजाकी राजधानी हो ।
- (१३) सवहन—जहापर प्रायः किरसानादिककी वस्ती हो ।
- (१४) घोपासि—जहापर प्रायः घोपी लोगों वस्ते हो ।
- (१५) एशीया—जहापर आये गये मुसाफिर ठहरते हैं ।
- (१६) पुडभोय—जहा खेतीवाडीके लीये अन्य ग्रामोंसे लोगों आकरके वास करते हो ।

भावार्थ—एक माससे अधिक रहनेसे गृहस्थ लोगोंका अधिक परिचय होता है और जिससे राग द्वेषकी वृद्धि होती है। सुरक्षीलीयापना बढ जाता है । वास्ते तन्दुरस्तीके कारन त्रिना मुनिकों शीतोष्ण कालमें एक माससे अधिक नहि ठहरना ।

(७) पूर्वोक्त १६ गठ, कोट शहरपनासे सयुक्त हो । कोटके बहार पुरा आदि अन्य वस्ती हो, ऐसे स्थानमें साधुको शीतोष्ण कालमें दोय मास रहेना कल्प, एक मास कोटकी अन्दर और एक मास कोटकी बहार, परतु एक मास अन्दर रहे वहा भित्ता अन्दर करे, और बहार रहे तब भित्ता बहारकी करे । अगर अन्दर एक मास रहेते हुये एक रोजही बहारकी भित्ता करी हो, तो अन्दर और बहार दोनो स्थानमें एकही मास रहेना कल्पनीय है । अगर अन्दर एक मास रहके बहार

रहते हुए अन्दरकी भिचा लेने, तो कल्पातिक्रम दोष लगता है। यास्ते जहा रहे वहाकी भिचा करनेकीही आज्ञा है।

(८) पूर्वोक्त १६ स्थानोंकी बहार वस्ती न हो, तो शीतोष्णकालमें साधुओंको दो मास रहेना कल्पै, भापना पूर्ववत्।

(९) पूर्वोक्त १६ स्थान कोट सयुक्त हो, बहार पुरादि वस्ती हो, तो शीतोष्ण कालमें साधुओंको चार मास रहेना कल्पै। दो मास कोटकी अन्दर और दो मास कोटकी बहार। अन्दर रहे बहातक भिचा अन्दर करे और बहार रहे बहातक भिचा बहार करे।

(१०) पूर्वोक्त ग्रामादिके एक कोट, एक गड, एकही दरवाजा, एकही निकास, प्रवेशका रस्ता हो, ऐसा ग्रामादिमें साधु, साधुओंको एकत्र रहेना उचित नहि। कारण-दिन और रात्रिमें स्थण्डिलादिकके लीये ग्रामसे बहार जाना हो, तो एकही दरवाजेसे आने जानेमें परिचय बढ़ता है, इस लीये लोकापवाद और शासन लघुतादि दोषोंका भय है।

(११) पूर्वोक्त ग्रामादिके बहुतमें दरवाजे हो, निकास, प्रवेशके बहुतसे रस्ते हो, बहापर साधु, साधु, एक ग्राममें निवास कर सकते हैं। कारण-उन्हींको आने जानेको अलग अलग रस्ता मिल सकता है।

(१२) बाजारकी अन्दर, व्यापारीयोंकी दुकानकी

अन्दर, चोरा (हथाइकी घंटक), चाँकके मकानमें और जहा-
पर दोय तीन न्यार तथा बहुतसे रस्ते एकत्र होते हो, ऐसे
मकानमें साध्वीयोंको उतरना और स्वल्प या बहुत काल ठह-
रना उचित नहीं है । कारण ऐसे स्थानोंमें रहनेसे ब्रह्मचर्यकी
गुप्ति (रक्षा) रहनी मुश्कील है ।

भावार्थ—जहापर बहुतसे लोगोंका गमनागमन हो
रहा है, वहापर साध्वीयोंको ठहरना उचित नहि है ।

(१३) पूर्वोक्त स्थानोंमें साधुयोंको रहना कल्पे ।

(१४) जिस मकानके दरवाजोंके किवाड न हो अर्थात्
रात दिन खुला ग्हेते हो, ऐसे मकानमें साध्वीयोंको शीलरक्षाके
लीये रहेना कल्पे नहीं ।

(१५) उक्त मकानमें साधुयोंको रहेना कल्पे ।

(१६) साध्वीयों जिस मकानमें उतरो हो उसी मकानका
किवाड अगर खुला रखना चाहती हो तो एक बख्खा छेडा
अन्दर बाधे और दुसरा छेडा बहार बाधे । कारण—अगर कोई
पुरुष कारणवशात् साध्वीयोंके मकानमें आना चाहता हो,
तोभी एकदम वो नहीं आसकता ।

भावार्थ—यह छत्र साध्वीयोंके शीलकी रक्षाके लीये
फरमाया है ।

(१७) घडाके मुख माफिक सकुचित मुखवाला मात्राका

भाजन अन्दरसे लीपा हुआ, माधुत्राको रखना कल्पे नहीं ।
कारण-पिसाव करते बखत चित्तवृत्ति मलिन न हो ।

(१८) उक्त भाजन साध्वीयोंको रखना कल्पे ।

(१९) उपरसे सुपेतादिसे लिप्त किया हुआ नालीका
आकार समान मात्राका भाजन साध्वीयोंको रखना कल्पे नहीं ।
भावना पूर्ववत् ।

(२०) उक्त मात्राका भाजन साधुओंको कल्पे ।

(२१) साधु साध्वीयोंको वस्त्रकी चलमीली अर्थात्
आहारादि करते समय मुनिको वो गुप्त स्थानमें करना चाहिये ।
अगर ऐसा मकान न मिले तो एक वस्त्रका पडदा बाधके
आहार करना चाहिये । उस वस्त्रको शास्त्रकारोंने चलमील
कहा है ।

(२२) साधु, साध्वीयोंको पाणीके स्थान जैसे नदी,
तलाव, कुवा, कुण्ड, पाणीकी पोवाआदि स्थानपर बैठके
नीचे लिखे हुये कार्य नहीं करना । कारण-इसीसे लोगोंको
शका उत्पन्न होती है कि साधु वहापर कचा पानीका
उपयोग करते होंगे ? इत्यादि ।

(१) मलमूत्र (टटी पिसाव) वहापर करना, (२)
बैठना, (३) उभा रहेना, (४) सोना, (५) निद्रा लेना, (६)
विशेष निद्रा लेना, (७) अशनादि च्यार प्रकारके आहार
करना, (११) स्वाध्याय करना, (१२) ध्यान करना, (१३)

कायोत्सर्ग करना, (१४) आसन लगाना, (१५) धर्मदेशना देना, (१६) वाचना देना, (१७) वाचना लेना—यह १७ गोल जलाश्रय पर न करनेके लीये है ।

(२३) साधु साध्वीयोंको सचित्र—अर्थात् नाना प्रकारके चित्रोंसे चित्रा हुआ मकानमें रहेना कल्पे नहीं ।

भारार्थ—स्वाध्याय ध्यानमें वह चित्र विघ्नभूत है, चित्तवृत्तिको मलिन करनेका कारण है ।

(२४) साधु साध्वीयोंको चित्र रहित मकानमें रहेना कल्पे । जहापर रहनेसे स्वाध्याय ध्यान समाधिपूर्वक हो सके ।

(२५) साध्वीयोंको गृहस्थोंकी निश्रा विना नहीं रहेना, अर्थात् जहा आसपास गृहस्थोंका घर न हो ऐसे एकातके मकानमें साध्वीयोंको नहीं रहेना चाहिये । कारण—अगर केइ ऐसेभी ग्रामादि होये कि जहापर अनेक प्रकारके लोग बसते है, अगर रात दिनमें कारण हो, तो किसके पास जाये । वास्ते आसपास गृहस्थोंका घर होये, ऐसे मकाममें साध्वीयोंको रहना चाहिये ।

(२६) साधुओंको चाहे एकान्त हो, चाहे आसपास गृहस्थोंका घर हो, कैसाही मकान हो तो साधु ठहर सके । कारण—साधु जगलमेंभी रह सकता, तो ग्रामादिकका तो कहना ही क्या ? पुरुषकी प्रधानता है ।

(२७) साधु साध्वीयोंको जहापर गृहस्थोंका धन-द्रव्य,

भूषणादि कीमती माल होने, ऐसा उपाश्रय-मकानमें रहेना कल्पे नहीं। कारण अगर कोड तस्करादि चोरी कर जाय तो साधु रहनेके कारणसे अन्य साधुवोंकी भी अप्रतीति हो जाती है, इसलिये दूसरी दफे वस्ती (स्थान) मुश्किलीसे मिलता है।

(२८) साधु साध्वीयोंको जो गृहस्थोंका धन, धान्यादिसे रहित मकान हो, वहांपर रहेना कल्पै।

(२९) साधुओंको जो स्त्री सहित मकान होवे, वहां नहीं ठहरना चाहिये। (३०) अगर पुरुष सहित होवे तो कल्पै भी।

(३१) साध्वीयोंको पुरुष सयुक्त मकानमें नहीं रहेना। (३२) अगर ऐसाही हो तो स्त्रीसंयुक्त मकानमें ठहर सके।

भावार्थ—प्रथम तो साधु साध्वीयोंको जहां गृहस्थ रहेते हो, ऐसा मकानमें नहीं रहेना चाहिये। कारण—गृहस्थसे परिचयकी बिलकुल मना है। अगर दूसरे मकानके श्रभापसे ठहरना हो तो उक्त चार सूत्रके अमलसे ठहर सके।

(३३) साधुओंको जो पामके मकानमें ओरता रहेती हो ऐसा मकानमें भी ठहरना नहीं चाहिये। कारण—रात्रिके समय पेमात्र निगरे करनेको आति जाते वरत लोगोंकी अप्रतीतिका कारण होता है।

(३४) साध्वीयों उक्त मकानमें ठहर सकती है।

(३५) साधुओंको जो गृहस्थोंके घर या मकानके घीचमें हो के आने जानेका रस्ता हो, ऐसा मकानमें नहीं ठहरना

चाहिये । कारन—गृहस्थोंकी बहिन, बेटा, बहुवोंका हरदम वहां रहेना होता है । वह किस अवस्थामें बैठ रहेती है, और महिला परिचय होता है ।

(३६) साध्वियोंको ऐसा मकान हो, तो भी ठहरना कल्पे ।

(३७) दो साधुओंको आपसमें कषाय (क्रोधादि) हो गया होवे, तो प्रथम लघु (शिष्यादि) को वृद्ध (गुर्वादि) के पास जाके अपने अपराधकी क्षमा याचनी चाहिये । अगर लघु शिष्य न जाये तो वृद्ध गुर्वादिको जाके क्षमा देनी लेनी चाहिये । वृद्ध जावे उस समय लघु साधु उस वृद्ध महात्माका आदर सत्कार करे, चाहे न भी करे, उठके खडा होवे चाहे न भी होवे; उन्दन नमस्कार करे चाहे न भी करे, साथमें भोजन करे, चाहे न भी करे, साथमें रहे, चाहे न भी रहे, तोभी वृद्धोंको जाके अपने निर्मल अन्त करणसे खमायना चाहिये ।

प्रश्न—स्थान स्थान वृद्धोंका विनय करना शास्त्रकारोंने बतलाया है, तो यहांपर वृद्ध मुनि सामने जाके खमावे इसका क्या कारन है ?

उत्तर—सयमकासार यह है कि क्रोधादिको उपशमाना, यहापर बडे छोटके कारन नहीं है । जो उपशमावेगा—खमत-खामण करेगा, उसकी आराधना होगी, और जो वैर विरोध रखेगा अर्थात् नहीं खमावेगा, उसकी आराधना नहीं होगी । चास्ते सर्व जीवोंसे मैत्रीभाज रखना यही सयमका सार है ।

(३८) साधु साध्वीयोंको चतुर्मासमें विहार करना नहीं कल्पे । कारण-चातुर्मासमें जीवादि कृती उत्पत्ति अधिक होती है ।

(३९) शीतोष्णकालमें आठ मास विहार करना कल्पे ।

(४०) साधु साध्वीयोंको जो दोय राजाओंका विरुद्ध पक्ष चलता हो, अर्थात् दोय राजाका आपसमें युद्ध होता हो, या युद्धकी तैयारी होती हो, ऐसे क्षेत्रमें बार बार गमनागमन करना नहीं कल्पे । कारण-एक पक्षवालोंको शका होवे कि यह साधु बार बार आते जाते हैं, तो क्या हमारे यहाँके समाचार परपक्षवालोंको कहते होंगे ? इत्यादि । अगर कोई साधु साध्वी दोय राजाओंके विरुद्ध होनेपर बार बार गमनागमन करेगा, उसीको तीर्थत्रेकी और उस राजाओंकी आज्ञाका भंग करनेका पाप लगेगा, जिससे गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त आवेगा ।

(४१) साधु गृहस्थोंके वहा गोचरी जाते हैं । अगर वहा कोई गृहस्थ वस्त्र, पात्र, कनक रजोहरनकी आमंत्रणा करे, तो कहना कि यह वस्तु हम लेते हैं, परन्तु हमारे आचार्यादि बृद्ध मुनियोंके पास ले जाते हैं । अगर खप होगा तो खप लेंगे खप न होगा तो तुमही वापिस ला देंगे । कारण-आहारादि वस्तु लेनेके बाद वापिस नहीं दी जाती है, परन्तु वस्त्र पात्रादि वस्तु उस रोजके लिये करार कर लाया हो, तो खप न होनेपर वापिस भी दे सकते हैं । वस्त्रादि लाने आचा-

यादि वृद्धोको सुप्रत कर देता, फिर वह आज्ञा देनेर वह वस्त्रादि काममें ले सकते है । भावार्थ—यहा स्वच्छदताका नियेध, और वृद्ध जनोका विनय बहुमान होता है ।

(४२) इसी माफिक विहारभूमि जाते हुयेको, स्वाध्याय करनेके अन्य स्थानमें जाते हुयेको आमत्रणा करे तो ।

(४३) एव साध्वी गोचरी जाती हो ।

(४४) एव साध्वी विहारभूमि जातीको आमत्रणा करे, परन्तु यहा साध्वीयां अपनी प्रवर्तिनी—गुरुणीके पास लाये और उसीकी आज्ञामे प्रवर्ते ।

नोट.—इस दोयमत्रमें विहारभूमिका लिखा है, तो विहार शब्दका अर्थ कोइ स्थानपर जिनमदिरका भी कीया है । साधु स्वाध्याय तो मकानमें ही करते है, परन्तु जिनमदिर दर्शनके लीये प्रतिदिन जाना पडता है । वास्ते यहापर जिन मदिर ही जाना अर्थ ठीक सम्य होता है ।

(४५) साधु साध्वीयांको रात्रिममय और पैकालिक (प्रतिक्रमण समय) अशनादि च्चार आहार ग्रहन करना नहीं कल्पै । कारन—रात्रि—भोजनादि कार्य गृहस्थोंके लीये भी महापाप मतलाया है, तो साधुओंका तो कइना ही क्या ? । रात्रिमें जीवोकी जतना नहीं हो सकती । अगर साधुओको निर्वाह होने योग्य ठहरनेको मकान नहीं मिले उस हालतमें रूपडे आदिके व्यापारी लोग दुकान मडते हो, उसको देनेमें दृष्टि

प्रतिलेखन करी हो, तो वह दुकानों रात्रिमें ग्रहन कर सुनेके काममें ले सकते है ।

(४६) साधु साध्वीयोको रात्रिसमय और वैकालिक समय वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरन लेना नहीं कल्पै । परन्तु कोइ निशाचर साधुवोके वस्त्रादि चोरके ले गया हो, उसको धोया हो, रंगा हो, साफ गडीबध करा हो, धूप दीया हो, फिर उसके टिलमें यह विचार हो कि 'साधुवोका वस्त्रादि नहीं रखना चाहिये' एसा इरादासे वह दाक्षिण्यका मारा दिनको नहीं आता हुआ रात्रिमें आके कपडा वापिस देवे तो मुनि रात्रि में भी ले सकता है । फिर वह वस्त्रादि किसी भी काममें क्यों न लो, परन्तु असयममें नहीं जाने देना । वास्ते यह कारनसे वो रात्रिमें भी ले सके ।

(४७) साधु साध्वीको रात्रिमें विहार करना नहीं कल्पै । कारन-रात्रिमें इर्यासमितिका भग होता है, जीवा-दिकी रचा नहीं होती है ।

(४८) साधु साध्वीको किसी ग्रामादिमें जिमणवार मुनके-जानके उस गामकी तर्फ विहार करना नहीं कल्पै । इससे लोलुपताकी वृद्धि, लोकापनाद और लघुता होती है ।

(४९) साधुवोको रात्रि समय और वैकालिक समय-पर स्थण्डिल या मात्रा करनेको जाना हो तो एकेलेको जाना नहीं कल्पै । कारन-राजादि कोइ साधुको दरल करे, या

एकेला साधु कितना बख्त और कहापर जाते हैं इत्यादि ।
 रास्ते चाहिये कि आपसहित दो या तीन साधुओंको साथ
 जाना । कारन—दूसरेकी लजासे भी टोप लगाते हुये रुक जाते
 हैं । तथा एक साधुको राजादिके मनुष्य दरखल करता हो तो
 दूसरा साधु स्थानपर जाके गुर्नादिको इतन्ला कर सकता है ।

(५०) इसी भाफिक साध्वीया दोष हो तो भी नहीं
 कल्पे, परन्तु आप सहित तीन चार साध्वीयोको साथमें रात्रि
 या वैकालमें जाना चाहिये । इसीसे अपना आचार (तल्लचर्य)
 ब्रत पालन हो सकता है ।

(५१) साधुसाध्वीयोंको पूर्व दिशामें अगदेश चपा-
 नगरी, तथा राजगृह नगर, दक्षिण दिशामें कोसम्भी नगरी,
 पश्चिम दिशामें स्थूणा नगरी, और उत्तर दिशामें कुणाला
 नगरी, चार दिशामें इस मर्यादा पूर्वक विहार करना कल्पै ।
 कारन—यहापर प्राय आर्य मनुष्योंका निवास है, इन्हके सिवा
 अनार्य लोगोकारहेना हैं, वहा जानेसे ज्ञानादि उत्तम गुणोंका
 घात होता है, अर्थात् जहापर जानेसे ज्ञानादिकी हानि होती हो,
 वहा जानेके लीये मना है । अगर उपकारका कारन हो, ज्ञाना-
 दि गुणकी वृद्धि हो, आप परीषह सहन करनेमें मजबूत हो,
 विद्याका चमत्कार हो, अन्य मिथ्यात्वी जीवोंको मोघ देनेमें
 समर्थ हो, शासनकी प्रभावना होती हो, अपना चरित्रमें दोष
 न लगता हो, वहापर विहार करना योग्य है ।

। इति श्री बृहन्कल्पसूत्रमें प्रथम उद्देशाका मक्षित मार ।

दूसरा उद्देशा.



(१) साधु साध्वी जिम मकानमें ठहरना चाहते है, उम मकानमें शालि आदि धान डधर उधर पसरा हुवा हो, जहापर पात्र रखनेका स्थान न हो, वहापर हाथकी रेखा सुभे इतना बसत भी नहीं ठरना चाहिये। अगर वह धानका एक तर्फ ढग किया हो, उमपर राख डालके मुद्रित किया गया हो, कपडेमे ढका हुवा हो, तो साधुको एक मास और साध्वीको दोय मास ठहरना कल्पै, परन्तु चातुर्मास ठहरना नहीं कल्पै। अगर उस धानको किसी कोठेमें डाला हो, ताला कुचीसे जायता किया हो, तो चातुर्मास रहेना भी कल्पै। भाग्यार्थ-गृहस्थका वानादि अगर कोई चोर ले जाता हो तो भी उसको रोक-टोक करना साधुको कल्पे नहीं। गृहस्थको नुकशान हो नेसे साधुकी अप्रतीति हो और दुसरी दफे मकान मिलना दुष्कर होता है।

प्रश्न—जो ऐसा हो तो साधु एक मास कैमे ठहर सकता है ?।

उत्तर—आचारागसूत्रम ऐसे मकानमें ठहरनेकी विल

१ गृहस्थ लोग अपने उपभोगके लीये बनाया हुवा मकानम गृहस्थोकी आक्षा लेके साधु ठहर सकता है। उस मकानको शास्त्रकारोंने उपासरा (उपाश्रय) कहा है।

कुल मना की गड़ है, परन्तु यद्वापर अपवाद है कि दुसरा मकान न मिलता हो या दुसरे गाम जानेमें असमर्थ हो तो ऐसे अपवादका सेवन करके मुनि अपना समयका निर्वाह कर सकता है ।

(२) साधु साध्वीयों जिस मकानमें ठहरना चाहते हैं, उस मकानमें सुरा जातिकी मदिरा, सोबीर जातिकी मदिराके पात्र (बरतन) पड़ा हो, शीतल पाणी, उष्ण पाणीके घडे पडे हो, रात्रि भर अग्नि प्रज्वलित हो, सूर्य रात्रि दीपक जलते हो, ऐसा मकानमें हाथकी रेखा सुभे वहा तक भी साधु साध्वीयोंको नहीं ठहरना चाहिये । अपने ठहरनेके लिये दुसरा मकानकी याचना करनी । अगर याचना करनेपर भी दुसरा मकान न मिले और ग्रामान्तर विहार करनेमें असमर्थ हो, तो उक्त मकानमें एक रात्रि या दोय रात्रि अपवाद सेवन करके ठहर सकते हैं, अधिक नहीं । अगर एक दो रात्रिमें अधिक रहै तो उस साधु साध्वीको जितने दिन रहै, उतने दिनका छेद तथा तपका प्रायश्चित्त होता है । ३ । ४ । ५ ।

(६) साधु साध्वीयों जिस मकानमें ठहरना चाहे उम मकानमें लड्ड, शीरा, दुध, दही, घृत, तेल, सकुली, तील, पापडी, गुलधाणी, सीरसण आदि खुले पडे हो ऐसा मकानमें हाथकी रेखा सुभे वहातक भी ठहरना नहीं कल्पे । भा-

१—दीक्षात्री अन्दर छेद कर देना अर्थात् इतने दिनोंकी दीक्षा कम समजी जाती है ।

पना पूर्ववत्। अगर दूसरा मकानकी अप्राप्ति होवे, तो वहा लड्डु आदि एक तर्फ रखा हुआ हो, राशि आदि करी हुई हो तो शीतोष्ण कालमें साधुको एक मास और साध्वियोंको दोय मास रहेना कल्पे। अगर कोठेमें रखके तालेसे ऋध करके पका नदोस्त किया हो वहापर चातुर्मास करना भी कल्पे इसमें भी लाभालाभका कारन और लोगोंकी भावनाका विचार विचक्षण मुनियोंको पेस्तर करना चाहिये।

(७) साध्वियोंको (१) पन्थी लोग उतरते हो एसा मुत्ताफिरखानेमें, (२) वशादिकी भाडीमें, (३) वृक्षके नीचे, और (४) चोतर्फ खुला हो ऐसा मकानमें रहेना नहीं कल्पे। कारन—उक्त स्थान पर शीलादिकी रक्षा कभी कभी मुरकीलसे होती है।

(८) उक्त जगहों स्थान पर साधुओंको रहेना कल्पे।

(९) मकानके दाता शय्यातर कहा जाता। ऐसा शय्यातरके वहाका आहार पाणी साधु साध्वियोंको लेना नहीं कल्पे। अगर शय्यातरके वहा भोजनादि तैयार हुआ है उन्होने अपने वहासे किसी दुमरे सज्जनको देनेके लिये भेजा नहीं है और सज्जनने लिया भी नहीं है, केवल शय्यातर एक पात्रमें रख भोजनेका विचार किया है, वह भोजन साधु साध्वियोंको लेना नहीं कल्पे। कारन—वह यमी तरु शय्यातरका ही है।

(१०) उक्त आहार शय्यातरने अपने वहासे सज्जनके

वहा भेन दीया, परन्तु अभी तक सज्जने पूर्ण तोर पर स्वी-
कार नहीं कीया हो, जैसे कि-भोजन आनेपर कइते है कि यहा
पर रख दो, हमारे कुटुम्बवालोंकी मरजी होगी तो रख लेंगे,
नहीं तो चापिस भेन देंगे ऐमा भोजन भी साधु साध्वीयोंको
लेना नहीं कल्पै ।

(११) उक्त भोजन सज्जने रख जिया हो, उसके
अन्दरमे नीकला हो, और प्रवेश किया हो तो वह भोजन साधु
साध्वीयोंको ग्रहण करना कल्पै ।

(१२) उक्त भोजनमें सज्जने हानि वृद्धि न करी हो,
परन्तु साधु साध्वीयोंने अपनी आम्नायमे प्रेरणा करके उसमें
न्यूनार्धिक करवायके वह भोजन स्वयं ग्रहण करे तो उसको
दोय आज्ञाका अतिक्रम दोष लगता है, एत गृहस्थकी और
दूसरी भगवान्की आज्ञा निरुद्ध दोष लगै । जिसका गुरु चतु-
र्मासिक प्रायश्चित्त होता है ।

(१३) जो दोय, तीन, चार या बहुत लोग एकत्र
होके भोजन बनया है, जिस्में शग्पातर भी सामेल है, जैसे
सर्व गामकी परायत और चन्दाकर भोजन बनयते है, उसमें
शग्पातर भी सामेल होता है, वह भोजन साधु साध्वीयोंको
ग्रहण करना नहीं कल्पै । अगर शग्पातर सामेल न हो तथा
उसका विभाग अलग कर दीया हो, तो लेना कल्पै ।

(१४) जो कोइ शय्यातरके सज्जनने अपने वहामे सुखडी प्रभुर शय्यातरके वहा भेजी है, उसको शय्यातरने अपनी करके रख ली हो, तो साधु साध्वीयोंको लेना नहीं कल्पै ।

(१५) अगर शय्यातरने नहीं रखी हो तो कल्पै ।

(१६) शय्यातरने अपने वहासे सुजनके (स्वजनके) वहा भेजी हो वह नहीं रखी हो तो साधुको लेना नहीं कल्पै ।

(१७) अगर रख ली हो तो साधुको कल्पै ।

(१८) शय्यातरके मिजवान कलाचार्य निगेरे आये हो उसको रमोइ मनवानेको शय्यातरने सामान दीया है, और कहा कि—‘ आप रमोइ वनायो, आपको जरूरत हो वह आप काममें लेना, शेष वचा हुआ भोजन हमारे सुप्रत कर देना ’ । उम भोजनमे अगर वो शय्यातर देवे, तो साधुओंको लेना नहीं कल्पै ।

(१९) मिजवान देवे तो नहीं कल्पै ।

(२०) सामान देते वखत कहा होने कि ‘ हमें तो आपको दे दिया है अब वचे उम भोजनको आपकी इच्छानुसुमार काममें लेना ’ । उस आहारसे शय्यातर देता हो तो साधुको नहीं कल्पै । कारन—दुसराका आहार भी शय्यातरके हाथसे साधु नहीं ले सकते है ।

(२१) परन्तु शय्यातरके सिवा कोइ देता हो तो साधु-

आको कल्प ग्रहन करना। शय्यातरका इतना परेज रखनेका कारन-अगर जिस मकानमें साधु ठहरे उसके घरका आहार लेनेमें प्रथम तो आधाकर्मी आदि दोष लगनेका सभव है, दुसरा मकान मिलना दुर्लभ होगा इत्यादि।

(२२) साधु साध्वीयोंको पाच प्रकारके वस्त्र ग्रहन करना कल्पै (१) कपासका, (२) उनका, (३) अलसीकी छालका, (४) सणका, (५) अर्कतूलका।

(२३) साधु साध्वीयोंको पाच प्रकारके रजोहरन रखना कल्पै (१) उनका, (२) थोटीजटका, (३) सणका, (४) मुजका, (५) तृणोंका।

। इति श्री बृहत्कल्पसूत्रमें दूसरा उद्देशाक्षा मंक्षिप्त मार।



तीसरा उद्देशा



(१) साधुओंको न कल्पै कि वो साध्वीयोंके मकान पर जाके उभा रहै, बैठे, सोवे, निद्रा लेवे, विशेष प्रचला करे, अशन, पान, खादिम, स्नादिम करे, लघुनीति या बडी नीति करे, परठे, स्वाध्याय करे, ध्यान या कायोत्सर्ग करे, आसन लगावे, धर्मचिन्तन करे-इत्यादि कोई भी कार्य वहा पर नहीं करना चाहिये।

(२) उक्त कार्य सा गीयों भी साधुके मकान पर न करे-कारन इमीसे अधिक परिचय गढ जाता है । दूसरे भी अनेक दूषण उत्पन्न होते हैं । अगर माधुओंके स्थान पर व्याख्यात और आगमवाचना होती हो, तो माधुयों जा सकती हैं, व्यवहारमूलमें एमा उल्लेख है ।

(३) साधुयोंको रोमयुक्त चर्मपर ठठना नहीं कल्पै ।
भाषार्थ—अगर कौड शरीरके कारनसे चर्म रचना पडे तो भी रोमयुक्त नहीं कल्पै ।

(४) साधुओंको अगर किसी कारणवशात् चर्म लाना हो तो गृहस्थोंके वहा गपरा हुआ, यह भी एक रात्रिके लिये मागके लाने । यह रोमयुक्त हो तो भी साधुओंको कल्पै ।

(५) साधु साधुयोंको सपूर्ण चर्म, (६) सम्पूर्ण वस्त्र, (७) अमेदा हुवा वस्त्र लेना और रचना-गपरना नहीं कल्पै ।
भाषार्थ—सम्पूर्ण चर्म और वस्त्र कामती होता है, उससे चौरादिका भय रहेता है, ममत्वभाजकी वृद्धि होती है, उपधि अधिक बढती है, गृहस्थोंको शका होती है । वास्ते (८) चर्मखण्ड, (९) वस्त्रखण्ड, (१०) अगर अधिक खप होनेमे सम्पूर्ण वस्त्र ग्रहण किया हो तो भी उसका काममें आने योग्य खण्ड, खण्ड करके साधु रख सकता है ।

(११) साधुयोंको काच्छपाट (कच्छपटा) और कञ्चुवा रचना कल्पै । स्त्रीजाति होनेसे शीलरचाके लिये

(१२) यह दोनो उपकरण साधुओंको नहीं कल्पे ।

(१३) साधुओंको गोचरी गमन समय अगर वस्त्र याचनाका प्रयोग हो तो स्वयं अपने नामसे नहि, किन्तु अपनी प्रतिनी या बृद्धा हो उसके नामसे याचना करनी चाहिये । इसीसे विनय धर्मका महत्त्व स्पच्छन्दताका नियारण और गृहस्थोंको प्रतीति इत्यादि गुण प्राप्त होते है ।

(१४) गृहस्थ पुरुषको गृहनासको त्याग करनेके समय (१) रजो हरण (२) मुखवासिका (३) गुच्छा (पात्रोंपर रखनेका) भोली पात्र तीन सपूर्ण वस्त्र इसकी अदर सत्र वस्त्र हो सकते है ।

(१५) अगर दीक्षा लेनाली स्त्री हो तो पूर्ववत् । परन्तु वस्त्र च्यार होना चाहिये । इसके सिवा केड उपकरण अन्य स्थानों पर भी कहा है । केड उपगृही उपकरण भी होते है । अगर साधु साधुओंको दीक्षा लेनेके बाद कोई प्रायश्चित स्थान सेवन करनेसे पुनः दीक्षा लेनी पडे तो नये उपकरण याचनेकी आवश्यकता नहीं । वह जो अपने पास पूर्वसे ग्रहण किये हुये उपकरण है, उन्हेसे ही दीक्षा ले लेनी चाहिये ऐसा कल्प है ।

(१६) साधु साधुओंको चतुर्मासमें वस्त्र लेना नहि

१ पात्र तीन । २ एक वस्त्र ३ हाथका लबा, एक हाथका पना एवं ७२ हाथ ।

कल्पें। भावार्थ-चतुर्मास चेत्रपाले लोगोंको भक्तिके लिये
पद्मादि मगवाना पडता, उससे कृतगट आदि दोषका समन है।

(१७) अगर वस्त्र लेना हों, तो चतुर्मासिक प्रतिक्रमण
करनेसे पहिले ग्रहण कर लेना, अर्थात् शीतोष्णकाल या ठ
मासमें साधु साध्वीयोंको वस्त्र लेना कल्पें।

(१८) साधु साध्वीयोंको उपयोग रखना चाहिये कि
वस्त्रादि प्रथम रत्नत्रयसे वृद्ध होये उन्हांके लिये क्रमशः
लेना। एव

(१९) शय्या-सस्तारक भी लेना।

(२०) एव प्रथम रत्नादिको वन्दन करना। इसीमें वि-
नय धर्मका प्रतिपादन हो सकता है।

(२१) साधु साध्वीयोंको गृहस्थके घरपे जाके बैठना,
उभा रहेना, सो जाना, निद्रा लेना, प्रचला (विशेष निद्रा)
करना, अशनादि च्यार आहार करना, टटी पेसाय जाना,
सज्जाय ध्यान, कायोत्सर्ग और आसन लगाना तथा धर्म-
चिंतन करना नहीं कल्पें। कारन-उक्त कार्य करनेमें साधु धर्म-
में पतित होगा। दशबैकालिकके छठे अध्यायन-प्राचारसे
अष्ट, और निशीथसूत्रमें प्रायश्चित्त कहा है। अगर कोई वृद्ध
साधु हो, अशक्त हो, दुर्बल हो, तपस्वी हो, चक्र आते हो,
व्याधिमें पीडित हो-ऐसी हालतमें गृहस्थोंके वहा उक्त कार्य
कर सकते हैं।

(२२) साधु साध्वीयोंको गृहस्थके घरपे जाके चार पाच गाथ (गाथा) विस्तार सहित कहना नहीं कल्पै । अगर कारण हो तो सक्षेपसे एक गाथा, एक प्रश्नका उत्तर एक वागरणा (सक्षेपार्थ) कहेना, सो भी उमा रहके कहेना, परन्तु गृहस्थोंके वर पर बैठके नहीं कहेना । कारण—मुनिधर्म है सो निःस्पृही है । अगर एकके घरपे धर्म सुनाया जाय तो दुसरेके वहा जाना पडेगा, नहीं जावे तो राग द्वेषकी वृद्धि होगी । वास्ते अपने स्थान पर आये हुंकेको यथासमय धर्मदेशना देनी ही कल्पै ।

(२३) एउ पाच महात्रत पचवीश भावना सयुक्त विस्तारसे नहीं कहेना । अगर कारन हो तो पूर्ववत् । एक गाथा एक वागरणा कहना सो भी खडे खडे ।

(२४) साधु साध्वीयोंने जो गृहस्थके वहाँमे शय्या (पाट पाटा), सस्तारक, (तृणादि) वापरनेके लिये लाया हो, उसको वापिस दिया बिना विहार करना नहीं कल्पै । एव उस पाटो पर जीवोत्पत्तिके कारनसे लेप लगाया हो, तो उस लेपको उतारे बिना देना नहीं कल्पै । अगर जीव पड गया हो, तो जीव सहित देना भी नहीं कल्पै । (२६) अगर उस पाटादिको चोर ले गया हो, तो साधुको उसकी तलास करनी चाहिये, तलास करने पर भी मिल जावे, तो गृहस्थसे कहके दुसरी बार आज्ञा लेनी, अगर नहीं मिले तो गृहस्थसे कह देना कि—'तुमारा पाटादि चौर ले गया हमने तलास की परन्तु क्या करे मिला नहीं । एसा कहके दुसरा पाटादिकी

याचना करनी कल्पै। कारन-जीवोंकी यतना और गृहस्थोंकी प्रतीति रहे।

(२७) साधुओं जिस मकानमें ठहरे है, उसी मकानसे शय्या, मस्तारक आज़ासे ग्रहण किया था, वह अपने उपभोगमें न आनेसे उमी मकानमें वापिस रख दिया, उसी दिन अन्य साधु आये और उन्हको उम शय्या सस्वारकको आवश्यकता हो, तो प्रथमके साधुसे रजा लेके भोगये। कारन-पहिलेके साधुने अबतक गृहस्थको सुप्रत नहीं कीया। अगर पहिलेके साधुओंका मास कल्पादि पूर्ण हो गया तो पुन गृहस्थोंकी आज़ा लेके उस पाटादिको वापर सकते है, तीसरे प्रतकी रत्ना निमित्ते।

(२८) पहिलेके साधु निहार कर गये हो, उन्होका बस्तादि कोइभी उपकरण रह गया हो, तो पीछेके साधुओंको गृहस्थकी आज़ासे लेना और जब वो साधु मिलजावे अगर उन्हका हो तो उसको दे देना चाहिये अगर उन्हका न हो, तो एकान्त स्थानपर परठ देना। भागार्थ-ग्रहण करते समय पहिले साधुओंके नामपर लिया था, अब अपना सत्यप्रत रखनेके लिये आप काममें नहीं लेते हुवे परठना ही अच्छा है।

(२९) कोइ ऐसा मकान हो कि जिसमें कोइ रहता न हो, उसकी देखरेख भी नहीं करता हो, किसीकी मालिकी न हो, कोइ पंथी (मुसाफिर) लोक भी नहीं ठहरता हो, उंम

मकानकी आजा भी कोई नहीं देता हो, अर्थात् वह मकानमें देवादिकका भय हो, देवता निवास करता हो, अगर ऐसा मकानमें साधुओंको ठहरना हो, तो उस मकान निवामी देवकी भी आजा लेना, परतु आजा गिना ठहरना नहीं। अगर कोई मकान पर प्रथम भिक्षु (साधु) उतरे हो, तो उस भिक्षुकी भी आजा लेना चाहिये जिसमे तीसरे ऋतकी रक्षा और लोकव्यवहारका पालन होता है।

(३१) अगर कोई काट (गढ) के पासमें मकान हो, भीत, खाइ, उद्यान, राजमार्गादि किसी स्थानपरके मकानमें साधुओंको ठहरना हो तो जहातक घरका मालिक हो, जहातक उसकी आजास ठहरे, नहि तो पूर्व उतरे हुवे मुसाफिरकी भी आजा लेना, परतु गिना आजा नहीं ठहरना। पूर्ववत्

(३२) जहा पर राजाकी सैनाका निवास हो, तथा सार्थवाहके साथका निवास हो, वहा पर साधु-साध्वी अगर भिक्षाको गया हो, परतु भिक्षा लेनेके बाद उम रात्रि वहा ठहरना न कल्पै। कारण-राजादिको शका हो, आधारुमी दोषका सभव है, तथा शुभाशुभ होनेसे अप्रतीतिका कारण होता है। ऐसा जानके वहा नहीं ठहरे। अगर कोई ठहरे तो उमको एक तीर्थकरोंकी दुसरी राजा और सार्थवाह-इन्ह दोनों की आजाका अतिक्रम दोष लगनेसे गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित होता है।

(३३) जिस ग्राम याचत् राजधानीमें रहे हुवे साधु-साध्वीयोंको पांच गाउ तक जाना कल्पै । कारण-दोय कोश तक तो गोचरी जाना आना हो सकता है, और दोय कोश जाने के बाद आधा कोश वहासे स्थडिल (बडी नीति) जा सकता है. एवं अढाइ कोश पश्चिमका मिलाके पाच कोश जाना आना कल्पै । अधिक जाना हो तो, शीतोष्ण कालमें अपने भद्रोपकरण लेके विहार कर सकते है । इति ॥

इतिश्री गृह्यसूत्र-तीमरा उद्देशाका मक्षित मार्ग ।



चौथा उद्देशा

(१) साधु-साध्वीयों जो स्वधर्माकी चौरी^१ करे, परधर्माकी चौरी करे, साधु आपसमें मारपीट करे—इस तीनों कारणों से आठवा प्रायश्चित्त अर्थात् पुनः दीक्षा लेनका प्रायश्चित्त होता है

(२) हस्तकर्म करे, मैथुन सेने रात्रिभोजन करे, इस तीन कारणों से नौवा प्रायश्चित्त, अर्थात् गृहस्थलिंग करवाके पुनः दीक्षा दी जावे

१ चौरी १ सचित्त-शिष्य, २ अचित्त प्रह्वपात्रादि द्रव्य,
३ मिश्र-उपधि सहित शिष्य अर्थात्-विगर आक्षा कोइ भी वस्तु लेना, उसको चौरी कहते है

(३) दुष्टता-जिसका दोय भेद. (१) कयाय जैसा कि एक माधुने मृत-गुरुका दात पत्थर से तोड़ा विषय दुष्टता-जैसा कि राजाकि राणी और माभरीसे भेषन करे प्रमाद-जो पाचमी स्त्यानाद्वि निद्रावाला, वह में सग्रामादिभी कर लेता है अन्योन्य-साधु-माधुके अकृत्य कार्य करे. इस तीनों कारणों मे दशवा प्रा होता है, अर्थात् गृहस्थलिंग करवाके सबको ज्ञात लीये दुःखानोंमे कौडी प्रमुख भगवाना, इत्यादि. भ मोहनीय कर्म बडाही जघरजस्त है बडे बडे महात्म श्रेणिमे गिरा देता है गिरनेपरभी अपनी दशाको स प्रथात्ताप पूर्वक आलोचना करनेसे शुद्ध हो मकता प्रायश्चित्त जनसमूहकी प्रसिद्धिमें सेवन कीया हो तो विश्वास के लीये जनसमूहके सामने हि प्रायश्चित्त देना कारणे फरमाया है इस समय नौग दशवा प्रायश्चित्त है आठवा प्रायश्चित्त देनेकी परपरा अभी चलती है

(४) नपुसक हो, स्त्री देखनेपर अपने वीर्यक नेमें असमर्थ हो, स्त्रीयोंके कामक्रीडाके शब्द श्रवण कर कामातुर हो जाता हो, इस तीन जनोंको दीक्षा न देने हिये. अगर अज्ञातपनेसे देदी हो, पीछेमे ज्ञात हुवा उसे मुडन न करना चाहिये. अज्ञातपनेसे मुडन कीया

साथमें भोजन न करना चाहिये भागार्थ—असे अयोग्यको गच्छमें रखनेमे शासनकी हीलना होती है. दुसरे साधुओंको भी चेपी रोग लग जाता है वास्ते जिस समय ज्ञात हो कि तीनों दुर्गुणोंसे कोईभी दुर्गुण है, तो उसे मधुर वचनों द्वारा हित शिक्षा देके अपनेमे अलग कर देना विशेष विस्तार देखो प्रवचन सारोद्वार.

(५) अग्निव्यग्रत हो, विगड़के लोलुपी हो, निरतर कपाय करनेवाला हो, इस तीन दुर्गुणोंवालोंको आगम वाचनादि ज्ञान नहीं देना चाहिये. कारण—सर्पको दुध पीलानाभी विपवृद्धिका कारण होता है.

(६) विनयवान हो, विगड़का प्रतिवधी न हो, दीर्घ कपायवाला न हो, इस तीन भव्य गुणोंवालोंको आगम ज्ञानकी पाचना देना चाहिये. कारण—वाचना देना, यह एक शासनका स्तम्भ—आलम्बन है.

(७) दुष्ट—जिसका हृदय मलीन हो, मूढ—जिसको हिताहितका रयाल न हो, और कदाग्रही—इम तीनोंको बोध लगना असम्भव है.

(८) अदुष्ट, अमूढ और भद्रिक—सरल स्वभागी—इम तीनोंको प्रतिबोध देना सुमाध्य है.

(९) साधु बीमार होनेपर तथा किसी स्थानमे गिरिते हुयेको दुसरे साधुके अमानसे उसी साधुकी सत्कार अवस्थाकी

माता बहिन और पुत्री-उम साधुको ग्रहण करे उसका कोमल स्पर्श हो तो अपने दिलमें अकृत्य (मैथुन) भावना लाये तो गुरुचातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है

(९०) एव साध्वीको अपना पिता, भाइ या पुत्र ग्रहण कर सकै.

(११) साधु-साध्वीयोको जो प्रथम पोरसीमें ग्रहण कीया हुआ अशनादि च्यार प्रकारके आहार, चरम (छेल्ली) पोरसी तक रखना तथा रखके भोगना नहीं कल्पे अगर अनजान (भूल) से रहभी जावे, तो उसको एकात निर्जात्र भूमिका देख परठे और आप भोगये या दुसरे साधुयोको देवे तो गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है

(१२) साधु-साध्वीयोको जो अशनादि च्यार प्रकार के आहार जिस ग्रामादिमें किया हो, उसीसे दोय कोस उपरात ले जाना नहीं कल्पे अगर भूलसे ले गया हो, तो पूर्ववत् परठ देना, परंतु नहीं परठके आप भोगये या अन्य साधुयोको देने तो गुरुचातुर्मासिक प्रायश्चित्त आता है

(१३) साधु-साध्वी भिक्षा ग्रहण करते हुये, अगर अनजानसे दोपित आहार ग्रहण कीया, बादमें ज्ञात होनेपर उस दोपित आहारको स्वयं नहीं भोगये, किन्तु कोई नव दिक्षित साधु हो (जिसको अर्धी बडी दीक्षा लेनी है) उमको देना कल्पे अगर असा न हो तो पूर्ववत् परठ देना चाहिये

(१४) प्रथम और चरम तीर्थकरोंके साधुयोके लीये

किसी गृहस्थोंने आहार बनाया हो तो उम साधुओंको लेना नहीं कल्पै.

(१५) मध्यके २२ जिनोंके साधुओंको प्रज्ञावत और ऋजु (मरल) होनेसे कल्पै

(१६) मध्य जिनोंके साधुओंके लीये बनाया हुआ अशनादि नाशीश तीर्थंकरोंके साधुओंको लेना कल्पै

(१७) परन्तु प्रथम-चरम जिनोंके साधुओंको नहीं कल्पै.

(१८) साधु कभी ऐसी इच्छा करे कि मे स्वगच्छसे निकलके परगच्छमें जाऊ, तो उस मुनिको—

(१) आचार्य-गच्छनायक, (२) उपाध्याय-आगमवाचनाके दाता, (३) स्थविर-सारणा वारणा दे, अस्थिरको मधुर वचनोंसे स्थिर करे (४) प्रवर्त्तक-साधुओंको अच्छे रस्तेमें चलनेकी प्रेरणा करे. (५) गणी-जिसके समीप आचार्यने सूत्रार्थ धारण कीया हो (६) गणधर-जो गच्छको धारण करके उसकी सार-समाल करते हो, (७) गणविच्छेदक-जो चार, पाच साधुओंको लेकर विहार करते हो. इस सात पढी-धरोंको पुछने विगर अन्य गच्छमें जाना नहीं कल्पै. पूछनेपर भी उक्त सातों पढीधर विशेष कारण जान, जानेकि आज्ञा देवे, तो अन्य गच्छमें जाना कल्पै. अगर आज्ञा नहीं देवे तो, जाना नहीं कल्पै

(१९) गणविच्छेदक स्वगच्छको छोडके परगच्छमें-

जानेका इरादा करे तो उसको अपनी पट्टी दूसरेको दीया बिगर जाना नहीं कल्पै, परतु पट्टी छोडके सात पट्टीगालोंको पूछे, अगर आज्ञा दे, तो अन्य गच्छमें जाना कल्पै, आज्ञा नहीं देवे तो नहीं कल्पै

(२०) आचार्य, उपाध्याय, स्वगच्छ छोडकर परगच्छमें जानेका इरादा करे, तो अपनी पट्टी अन्यको दीया बिना अन्य गच्छमें जाना नहीं कल्पै अगर पट्टी दूसरेको देनेपरभी पूर्ववत् सात पट्टीगालोंको पूछे, अगर वह सात पट्टी धर आज्ञा दे, तो जाना कल्पै, आज्ञा नहीं देवे तो जाना नहीं कल्पै भागार्थ—अन्य गच्छके नायक कालधर्म प्राप्त हो गये हो पीछे साधु समुदाय बहुत है, परतु सर्व साधुओंका निर्वाह करने योग्य साधुका अभाव है, इस लीये साधु गणविच्छेदक तथा आचार्य महालाभका कारण जान, अपने गच्छको छोड उपकार निमित्त परगच्छमें जाके उसका निर्वाह करे आज्ञा देनेवाले अन्य गच्छका आचार धर्म आदिकी योग्यता देखे तो जानेकी आज्ञा देवे, अथवा नहींभी देवे

(२१) इसी माफिक साधु इरादा करेकि अन्य गच्छ ग्रासी साधुओंसे समोग (एक मडलेपर साथमें भोजनका करना) करे, तो पेस्तर पूर्ववत् सात पट्टीधरोंमें आज्ञा लेवे, अगर आचारधर्म, क्षमाधर्म, विनयधर्म अपने सदृश होनेपर आज्ञा देवे, तो परगच्छके साथ समोग कर मने, अगर आज्ञा नहीं देवे, तो नहीं करे

(२२) एव—गणनिच्छेदक.

(२३) एव—आचार्योपाध्यायभी समझना

(२४) साधु इच्छा करोकि मैं अन्य गच्छमें साधुओंकी वैयावध करनेको जाउ, तो कल्पै—उस साधुओंको, पूर्ववत् मात पढीधरोंको पूछे, अगर वह आज्ञा देवे तो जाना कल्पै, आज्ञा नहीं देवे तो नहीं कल्पै.

(२५) एव गणनिच्छेदक

(२६) एव आचार्योपाध्याय. परन्तु अपनी पढी अन्यको देके जा मक्ते हैं.

(२७) साधु इच्छा करे कि मैं अन्य गच्छमें साधु-वोंको ज्ञान देनेको जाउ, पूर्ववत् मात पढीधरोंको पूछे, अगर आज्ञा देवे तो जाना कल्पै और आज्ञा नहीं देवे तो जाना नहीं कल्पै

(२८) एव गणनिच्छेदक

(२९) एव आचार्योपाध्याय परन्तु अपनी पढी दुसरेको देके आज्ञा पूर्वक जा मक्ते हैं भावार्थ—अन्य गच्छके गीतार्थ साधु काल धर्म प्राप्त हो गये हो, शेष साधुवर्ग अगीतार्थ हो, इस हालतमें अन्याचार्य विचार कर सकते हैं, कि मेरे गच्छमें तो गीतार्थ साधु बहुत है, मैं इस अगीतार्थ साधुनाले गच्छमें जाके इसमें ज्ञानाभ्यास करनेवाले साधुओंको ज्ञानाभ्यास करा के योग्य पदपर स्थापन कर, गच्छकी अच्छी व्यवस्था करदु

इसीसे भविष्यमें बहुत ही लाभका कारन होगा इस इरादेसे अन्य गच्छमें जा सकते हैं

(नोट) इन्ही महात्मावोंकी कितनी उच्च कोटिकी भावना और शासनोन्नति, आपसमें धर्मस्नेह है ऐसी प्रवृत्ति होनेसे ही शासनकी प्रभावना हो सकती है

(३०) कोई साधु रात्रीमें या वैकाल समयमें काल धर्म प्राप्त हो जाय तो अन्य साधु गृहस्थ समधी एक उपकरण (वास) सरचीना याचना करके लाये और कबली प्रमुखकी भोली बनाके उस वामसे एकांत निर्जीन भूमिकापर परठै भावार्थ—वास लाती बखत हाथमें उभा वासको पकड़े, लाते समय कोई गृहस्थ पूछै कि—‘ हे मुनि ! इस वासको आप क्या करोगे ? ’ मुनि कहै—‘ हे भद्र ! हमारे एक साधु कालधर्म प्राप्त हो गया है, उसके लीये हम यह वास ले जाते हैं इतनेमें अगर गृहस्थ कहै कि—हे मुनि ! इस मृत मुनिकी उत्तर क्रिया हम करेंगे, हमारा आचार है तो साधुओंको उस मृत कलेवरको वहापर ही बसिराय देना चाहिये. नहि तो अपनी रीति माफिक ही करना उचित है

(३१) साधुओंके आपसमें क्रोधादि कषाय हुआ हो तो उस साधुओंको बिना समतस्वामणा—(१) गृहस्थों के घरपर गौचरी नहीं जाना, अशनादि च्यार प्रकारका आहार करना नहीं कल्पै. टटी पैसाध करना, एक गामसे दुसरे गाम जाना, और एक गच्छ छोडके दुसरे गच्छमें जाना नहीं कल्पै. अलग

चातुर्मास करना नहीं कल्पै मागार्थ—कालका विश्वास नहीं है. अगर औसीही अवस्थामें काल करै, तो विराग्नक होता है. चास्ते खमतखामणा कर अपने आचार्योपाध्याय तथा गीतार्थ मुनियोंके पास आलोचना कर प्रायश्चित्त लेके निर्मल चित्त रखना चाहिये

(३२) आलोचना करने परभी गग-द्वेषके कारणमे आचार्यादि न्यूनाधिक प्रायश्चित्त देने, तो नहीं लेना, अगर सूत्रानुसार प्रायश्चित्त देनेपर शिष्य स्वीकार नहीं करता हो, तो उसको गच्छके अन्दर नहीं रखना कारण—औसा होनेमे दुसरे साधुभी औसाही करेंगे इसीसे भविष्यमें गच्छ-मर्यादा, और समय त्रत पालन करना दुष्कर होगा, इत्यादि

(३३) परिहार विशुद्ध (प्रायश्चित्तका तप करता हुआ) साधुको आहार पाणी एक दिनके लीये अन्य माधु साथमें जाके दिला सकै, परन्तु हमेशा के लीये नहीं कारण एक दिन उसको विधि बतलाय देवे परन्तु वह साधु व्याधिग्रस्त हो झुन्नर हो, कमजोर हो, तो उसको अन्य दिनोंमें भी आहार-पाणी देना दिलाना कल्पै जब अपना प्रायश्चित्त पूर्ण हो जावे, तब वैयाग्नच करनेवाला माधु भी प्रायश्चित्त लेवे, व्यवहार रखनेके कारणमे

(३४) साधु-साध्वीयोंको एक मामकी अन्दर दोय, तीन, चार, पाच महानदी उतरणी नहीं कल्पै यथा—(१) गंगा, (२) यमुना, (६) सरस्वती, (४) कोशिका, (५) मही,

इस नदीयोंकी अन्दर पाणी बहुत रहेता है, अगर आधी जघा प्रमाण पानी हो, कारणात् उसमें उतरणा भी पडे, तो एक पग जलमें और दुसरा पगको उचा रखना चाहिये. दुसरा पग पाणीमें रखा जाये तत्र पहिलाका पग पाणीसे निकाल उचारखे, जहातक पाणीकी बुद उस पगसे गिरनी बघ हो जाय इस विधिसे नदी उतरनेका कल्प है इसी माफिक कुनाला देशमें औरावती नदी है

(३५) तृण, तृणपुज, पलाल, पलालपुज, आदिसे जो मकान बना हुवा है, और उसकी अन्दर अनेक प्रकारके जीवोंकी उत्पत्ति हो, तो असा मकानमें साधु, साध्वीयोंको ठहरना नहीं कल्पै

(३६) अगर जीवादिरहित हो, परन्तु उभा हुवा मनुष्यके कानोंमें भी नीचा हो, असा मकानमें शीतोष्ण काल ठहरना नहीं कल्पै. कारण उभा होनेपर और क्रिया करते हर समय शिरमें लगता, मकानको नुकशानी होती है

(३७) अगर कानोंसे उचा हो, तो शीतोष्ण कालमें ठहरना कल्पै

(३८) उक्त मकान मस्तक तक उचा हो तो वहां चातुर्मास करना नहीं कल्पै

(३९) परन्तु मस्तकसे एक हस्त परिमाण उचा हो तो साधु साध्वीयोंको उस मकानमें चातुर्मास करना कल्पै

। इति श्री बृहत्सल्पसूत्रका चौथा अध्यायका अंशित्त मार ।

पांचवा उद्देशा.

(१) किसी देवताने स्त्रीका रूप प्रकिय बनाके किसी साधुको पकडा हो, उसी समय उस प्रकिय स्त्रीका स्पर्श होनेमे साधु मैथुनसज्ञाकी इच्छा करे, तो गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है.

(२) एउ देव पुरुषका रूप करके साधुको पकडने पर भी.

(३) एउ देवी स्त्रीका रूप बनाके साधुको पकडें तो

(४) देवी पुरुषरूप बनाके साधुको पकडने पर भी समग्रना. भावार्थ—देव देवी मोहनीय कर्म—उदीरण विषय परीपह देवे, तो भी साधुको अपने प्रतीमें मजबुत रहना चाहिये.

(५) साधु आपसमे कपाय—क्रोधादि करके स्वगच्छमे नीकलके अन्य गच्छमें गया हो तो उम गच्छके आचार्यादिको जानना चाहिये कि उस आये हुये साधुको पाच रोजका छेद प्रायश्चित्त देके स्नेहपूर्वक अपने पासमें रखे मजुर वचनोंमे हितशिक्षा देके गपिम उमी गच्छमें भेज देने कारण असी घृत्ति रखनेसे साधु स्वच्छन्द न गने एक दुमरे गच्छकी प्रतीति विश्वास बना रहै, इत्यादि.

(६) साधु—साधुओंकी भिचाघृत्ति मूर्खोंदयमे श्रम तक है अगर कोई कारणात् ममर्थ साधु निःशकपणे—अर्थात्

इस नदीयोंकी अन्दर पाणी बहुत रहेता है, अगर आधी जघा प्रमाण पानी हो, कारणात् उसमें उतरणा भी पडे, तो एक पग जलमें और दुमरा पगको उचा रखना चाहिये दुसरा पग पाणीमें रखा जावे तब पहिलाका पग पाणीमें निकाल उचा रखे, जहांतक पाणीकी चुद उस पगसे गिरनी बघ हो जाय इस विधिसे नदी उतरनेका कल्प है इसी माफिक बुनाला देशमें औरावती नदी है

(३५) तृण, तृणपुज, पलाल, पलालपुज, आदिसे जो मकान बना हुवा है, और उसकी अन्दर अनेक प्रकारके जीवोंकी उत्पत्ति हो, तो ऐसा मकानमें माधु, साधियोंको ठहरना नहीं कल्पै

(३६) अगर जीवादिरहित हो, परन्तु उभा हुवा मनुष्यके कानोंसे भी नीचा हो, अमा मकानमें शीतोष्ण काल ठहरना नहीं कल्पै कारण उभा होनेपर और क्रिया करते हर समय शिरमें लगता, मकानको नुकशानी होती है.

(३७) अगर कानोंसे उचा हो, तो शीतोष्ण कालमें ठहरना कल्पै

(३८) उक्त मकान मस्तक तक उचा हो तो वहां चातुर्मास करना नहीं कल्पै

(३९) परन्तु मस्तकसे एक हस्त परिमाण उचा हो तो साधु साधियोंको उस मकानमें चातुर्मास करना कल्पै

। इति श्री बृहत्कल्पसूत्रका चौथा उद्देशाका मंक्षिप्त मार ।

पांचवा उद्देशा



(१) किसी देवताने स्त्रीका रूप प्रकिय बनाके किसी साधुको पकडा हो, उसी समय उस प्रकिय स्त्रीका स्पर्श होनेसे साधु मैथुनसज्ञाकी इच्छा करे, तो गुरु चातुर्मासिक प्राय चित्त होता है.

(२) एउ देउ पुरुषका रूप करके साधुकी पकडने पर भी

(३) एउ देवी स्त्रीका रूप बनाके साधुको पकडै तो

(४) देवी पुरुषरूप बनाके साधुकी पकडने पर भी समझना. भाग्यार्थ—देव देवी मोहनीय कर्म—उदीरण विषय परीपह देवे, तो भी साधुको अपने त्रतोंमें मजबुत रहना चाहिये

(५) साधु आपममे कपाय—कोवादि करके स्वगच्छमे नीरुलके अन्य गच्छमें गया हो तो उस गच्छके आचार्यादिकोंको जानना चाहिये कि उस आये हुये साधुको पाच रोजका छेद प्रायश्चित्त देके स्नेहपूर्वक अपने पासमें रखे मजुर वचनोंसे हितशिखा देके वापिस उमी गच्छमें भेज देवे कारण अस्ती वृत्ति रखनेसे साधु स्वच्छन्द न बने एक दुसरे गच्छकी प्रतीति विश्वास बना रहै, इत्यादि.

(६) साधु—साधुकी भिचावृत्ति मर्यादयमे अस्त तक है अगर कोड कारणात् ममर्थ साधु निःशकपणे—अर्थात्

चादला या पर्वतका आडसे सूर्य नहीं दिखा, परन्तु यह जाना जाता था कि सूर्य अवश्य होगा तथा उदय हो गया है, इस डरादासे आहार-पानी ग्रहण किया जादमें मालुम हुआ कि सूर्य अस्त हो गया तथा अभी उदय नहीं हुआ है, तो उस आहारको भोगवता हो, तो मुहका मुहमे हाथका हाथमें और पात्रका पात्रम रखे, परन्तु एक बिन्दु मात्र भी खावे नहीं, सबको अचित्त भूमिपर परठ देना चाहिये, परन्तु आप खावे नहीं, दुसरेको देवे नहीं, अगर खर पडनेके बाद आप खावे, तथा दुसरेको देवे तो उस मुनियोंको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त थात्रे

(७) एव समर्थ शकावान्

(८) एव असमर्थ नि शक

(९) एव असमर्थ शकावान् । भावार्थ—कोइ आचार्यादिक बैयावच्च के लीये शीघ्रता पूर्वक विहार कर मुनि जा रहा है किसी ग्रामादिमे सनेरे गोचरी न मिलीथी श्यामको किमी नगरमें गया उस समय पर्वतका आड तथा चादलमें सूर्य जानके भिचा ग्रहण की और सनेरे सूर्योदय पहिले तक्रादि ग्रहण करी हो, ग्रहन कर भोजन करनेको बैठनेके बाद ज्ञात हुआ कि शायद सूर्योदय नहीं हुआ हो अथवा अस्त हो गया हो असा दुसरोसे निश्चय हो गया हो तो उस मुहका, हाथका और पात्रका सब आहारको निर्जीव भूमिपर परठ देनेसे आज्ञाका उन्लघन नहीं होता है

(१०) अगर रात्रि या वैकाल समयमें मुनिको भात-पाखीका उगाला आ गया हो, तो उमको निर्जीव भूमिपर यत-नापूर्वक परठ देना चाहिये अगर नहीं परठे और पीछा गले उतार देवे, तो उम मुनिको रात्रि भोजनका पाप लगनेमे गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है

(११) साधु-साधियोंको जीव सहित आहार-पानी ग्रहण करना नहीं कर्ण्य अगर अनजानपणे आ गया हो, जेमे साकर-खाडमे कीडी प्रमुख उमको साधु ममर्य है कि जीवोंको अलग कर सके. तो जीवोंको अलग करके निर्जीव आहारको भोगवे कदाच जीव अलग नहीं होता हो तो उम आहारको एकान्त निर्जीव भूमिका देखके यतनापूर्वक परठे.

(१२) साधु-साध्वी गौचरी लेके अपने स्थानपर आ रहै है, उम समय उस आहारकी अन्दर कचे पानीकी जुद गिर जावे, अगर वह आहार गरमागरम हो तो आप स्वयं भोगवे दुसरेको भी देवे कारण-उस पानीके जीव उष्णाहारसे चव जाते हैं परन्तु आहार शीतल हो तो न आप भोगवे, और न तो अन्य साधुओंको देवे उम आहारको विधिपूर्वक एकात स्थानपर जाके परठे

(१३) सात्री रात्रि तथा वैकाल समय टटी-पेसाज करते समय किसी पशु-पक्षी आदिके इन्द्रिय स्पर्श हो, तो आप हस्त कर्म तथा मैथुनादि दुष्ट भावना करै, तो गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है

(१४) एउ शरीर शुद्धि करते बखत पशु-पचीकी इद्रियसे अकृत्य कार्य करनेसे भी चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है यह दोनों सूत्र मोहनीय कर्मापेक्षा है. कारण-कर्मोकी विचित्र गति है चास्ते अमे अकृत्य कार्योंके कारणोंको प्रथम ही शास्त्रकारोंने निषेध कीया है

(१५) साधुओंको निम्नलिखित कार्य करना नहीं कल्पै.

(१६) एकेलीको रहना,

(१७) एकेलीको टटी-परमाय करनेको जाना

(१८) एकेलीको विहार करना,

(१९) वस्त्ररहित होना,

(२०) पात्ररहित गाँचरी जाना,

(२१) प्रतिभा कर ध्यान निमित्त कायाको घोसिरा देना,

(२२) प्रतिज्ञा कर एक पसचा (वा)डे सोना,

(२३) ग्राम यात्रत् राजधानीसे बाहार जाके प्रतिव्रा-पूर्वक ध्यान करना नहीं कल्पै अगर ध्यान करना हो तो अपने उपामरेकी अन्दर दरवाजा बन्ध कर ध्यान कर सकते है

(२४) प्रतिमा धारण करना,

(२५) निषद्या-जिसके पाच भेद है-दोनों पाँव बरा-बर रख बैठना, पाव योनिसे स्पर्श करते बैठना, पात्रपर पाव चढ़ाके बैठना, पालटी मारके बैठना, अद् पालटी मारके बैठना,

(२६) वीरासन करना,

(२७) दडासन करना,

- (२८) ओकहु आसन करना,
- (२९) लगड आसन करना,
- (३०) आम्रगुजासन करना,
- (३१) उर्ध्व मुख कर सोना,
- (३२) अधोमुख कर सोना,
- (३३) पाँव उर्ध्व करना,

(३४) ढींचणोंपर होना-यह सर्व साध्वीके लीये निषेध कीया है. वह अभिग्रह-प्रतिज्ञाकी अपेक्षा है कारण-प्रतिज्ञा करनेके बाद कितने ही उपमार्ग क्यों नहीं हो ? परन्तु उससे चलित होना उचित नहीं है. अगर ऐसे आसनादि करनेपर कोई अनार्य पुरुष अकृत्य करनेपर ब्रह्मचर्यका रक्षण करना आवश्यक है. नास्ते साध्वीयोंको ऐसे अभिग्रह करनेका निषेध कीया है. अगर मोक्षमार्ग ही साधन करना हो तो दुसरे भी अनेक कारण है उसकी अन्दर यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिये.

- (३५) साधु उक्त अभिग्रह-प्रतिज्ञा कर सकते है.
- (३६) साधु गोडाचालक ही लगाके बैठ सकता है.
- (३७) साध्वीयोंको गोडाचालक ही लगाके बैठना नहीं कल्पै.

(३८) साधुओंको पीछाडी भाटो सहित (खुरसीके आकार) पाटपर बैठना कल्पै.

(३६) असे माध्वियोंको नहीं कल्पै

(४०) पाटाके शिरपर पागारोंका आकार होते हैं,
असा पाटापर साधुवोंको बैठना सोना कल्पै

(४१) साध्वियोंको नहीं कल्पै

(४२) साधुवोंको नालिका सहित तुमडा रखना और
भोगवना कल्पै

(४३) साध्वियोंको नहीं कल्पै

(४४) उघाडी डडीका राजेहरण (कारणात् १॥
मास) रखना और भोगवना कल्पै.

(४५) साध्वियोंको नहीं कल्पै

(४६) साधुवोंको डाडी सयुक्त पुजणी रखना कल्पै

(४७) साध्वियोंको नहीं कल्पै

(४८) साधु-साध्वियोंको आपसमें लघु नीति (पेसान) देना
लेना नहीं कल्पै. परन्तु कोई अतिकारन हो, तो कल्पै भी
भावार्थ—किसी समय साधु एकेला हो और सर्पादिका कारण
हो, असे अग्रमरपर देना लेना कल्पै भी.

(४९) साधु साध्वियोंको प्रथम ग्रहरमे ग्रहन कीया
हुवा अशनादि आहार, चरम ग्रहरमे रखना नहीं कल्पै. परन्तु
अगर कोई अति कारन हो, जैसे साधु विमार होवे और बत-
लाया हुआ भोजन दुसरे स्थानपर न मिले इत्यादि अपवादमें
कल्पै भी सही

(५०) साधु-साध्वीयोंको ग्रहन कीये स्थानसे दो कोश उपरात ले जाना अगनादि नहीं कल्पै, परन्तु अगर कोई विशेष कारण हो तो—जैसे किसी आचार्यादिकी वैयाच के लीये शीघ्रतापूर्वक जाना है क्षुधासहित चल न सकै, रस्तेमें ग्रामादि न हो, तो दौय कोश उपरात भी ले जा सकते हैं.

(५१) साधु-साध्वीयोंको प्रथम प्रहरमे ग्रहन कीया हुवा त्रिलेपनकी जाति चरम प्रहरमे नहीं कल्पै. परन्तु कोई विशेष कारन हो तो कल्पै. (५२) एव तेल, घृत, मखन, चरमी (५३) काकण द्रव्य, लोद्र द्रव्यादि भी समझना.

(५४) साधु अपने दोपका प्रायश्चित कर रहा है अगर उस साधुको किसी स्थविर (वृद्ध) मुनियोंकी वैयाचम भेजे, और वह स्थविर उस प्रायश्चित तप करनेवाले साधुका लाया आहार पानी करै, तो व्यवहार रखनेके लीये नाम मात्र प्रायश्चित उस स्थविराको भी देना चाहिये. इससे दुमरे साधुओंको क्षोभ रहेता है.

(५५) साध्वीयों गृहस्थोके वहा गौचरी जानेपर किसीने सरस आहार दीया, तो उस साध्वीयोंको उस रोज इतना ही आहार करना, अगर उस आहारमे अपनी पूरती न हुइ, ज्ञान-ध्यान ठीक न हो, तो दुसरी दफे गौचरी जाना. भावार्थ—सरस आहार आने पर प्रथम उपासरेमें आना चाहिये.

सबसे पृथक्ता चाहिये कारण-फिर ज्यादा हो तो परठनेमें महान् दोष है वास्ते उद्योदरी तप करना

॥ इति श्री बृह-सप्त मूत्रका पाचया उद्देशाका मन्त्रित्त सार ॥

—०००—

छद्दा उद्देशा

- (१) साधु-साध्वीयों किसी जीवोंपर
- (१) अछता-रूडा कनक देना,
 - (२) दुसरेकी हीलना-निंदा करना,
 - (३) किसीका जातिदोष प्रगट करना,
 - (४) किसीकोंभी कठोर वचन बोलना,
 - (५) गृहस्थोंकी माफिक हे माता, हे पिता, हे मामा, हे मासी-इत्यादि मकार चकारादि शब्द बोलना.
 - (६) उपशमा हुना क्रोधादिककी पुन. उदीरणा करनी यह छे वचन बोलना साधु-साध्वीयोंको नहीं कल्पे कारण-इमसे परजीवोंको दु ख होता है, साधुकी भाषासमितिका भग होता है

(२) साधु-साध्वीयों अगर किसी दुमरे साधुओंका दोषको जानते हो, तोभी उसकी पूर्य जाच करना, निर्णय करना, ग्याह करना, वादहीमे गुर्वादिकको कहना चाहिये अगर ऐमा न करता हुवा एक साधु दुसरे साधुपर आक्षेप कर देवे, तो गुर्वादिकको जानना चाहियेकि आक्षेप करनेवालेको प्राय-

श्रित देवे अगर प्रायश्चित न देवेगा तो, कोईभी साधु किसीके साथ स्वल्पही द्वेष होनेसे आक्षेप कर देगा. इसके लीये कल्पके छे पत्थर कहा है. (१) कोई साधुने आचार्यसे कहाकि अमुक साधुने जीव मारा है. जीस साधुका नाम लीया, उसको आचार्य पूछेकि—हे आर्य ! क्या तुमने जीव मारा है ? अगर वह साधु स्त्रीकार करेकि—हा महाराज ! यह अकृत्य मेरे हाथसे हुवा है, तो उस मुनिको आगमानुसार प्रायश्चित देवे, अगर वह साधु कहेकि—नहीं, मैंने तो जीव नहीं मारा है. तब आक्षेप करनेवाले साधुको पूछना, अगर वह पूर्ण साधुती नहीं देवे, तो जितना प्रायश्चित्त जीव मारनेका होता है, उतनाही प्रायश्चित्त उस आक्षेप करनेवाले साधुको देना चाहियेकि दुसरी बार कोईभी साधु किसीपर जूठा आक्षेप न करै. भावार्थ—निर्बल साधु तो जूठा आक्षेप करेही नहीं, परन्तु कर्मोंकी विचित्र गति होती ह. कभी द्वेषका मारा करभी देवे, तो गच्छ निर्वाहकारक आचार्यको इस नीतिका प्रयोग करना चाहिये. (२) एव मृषावाद आक्षेपका, (३) एव चौरा आक्षेपका, (४) एवं मैथुन आक्षेपका, (५) एव नपुंसक आक्षेपका (६) एव नातिहीन आक्षेपका—सर्व पूर्वजन्तु समजना.

(३) साधुके पावमें काटा, सीला, फस, काच—आदि भागा हो, उस समय साधु निकालनेको त्रिशुद्धि करनेको असमर्थ हो, औसी हालतमें साधुी उस काटा याजन्तु काचसडको पगसे निकाले, तो जिनाज्ञा उल्लघन नहीं होता है. भावार्थ—

गृहस्थोंका सर्व योग साव्य है, वास्ते गृहस्थोंसे नहीं निकल-
वाना, धर्मबुद्धिसे साध्वीयोंसे निकलाना चाहिये कारन-ऐसा
कार्यतो कभी पडता है अगर गृहस्थोंसे काम करानेमें छुट
होगा, तो आखिर परिचय बढनेका सभ्य होता है

(४) साधुके आँखों (नेत्रों) मे कोई ठण, कुस, रज,
बीज या सुक्ष्म जीवादि पड जावे, उम समय साधु निकाल-
नेमें अममर्थ हो, तो पूर्ववत् साध्वीयों निकाले, तो जिनाजाका
उल्लघन नहीं होता है. (कारणवशात्) एव (५-६) दोय
अलापक साध्वीयोंके काटादि या नेत्रोंमे जीवादि पड जानेपर
साध्वीयों असमर्थ हो तो, साधु निकाल सक्ता है, पूर्ववत्

(७) साध्वी अगर परतसे गिरती हो, निपम स्थानसे
पडती हो, उस समय साधु धर्मपुत्री समज, उमको आलघन
दे, आधार दे, पकड ले, अर्थात् समय रक्षण करता हुवा
जिनाजाका उल्लघन नहीं होता है अर्थात् वह जिनाजाका
पालन करता है

(८) साध्वीयों पाणी सहित कर्दममें या पाणी
रहित कर्दममें सुची हो, आप बहार निकलेमें अममर्थ हो,
उस साधु धर्मपुत्री समज हाथ पकड बाहार निकाले तो भग-
वानकी आवा उल्लघन नहीं करै, किन्तु पालन करे.

(९) साध्वी नौकापर चढती उतरती, नदी में डूबती
को साधु हाथ पकड निकाले तो पूर्ववत् जिनाजाका पालन
करता है.

(१०) साधुवीर्यो दत्तचित्त (विषयादिसे),

(११) वित्त चित्त (चोभ पानेमे),

(१२) यक्षाधिष्ठित,

(१३) उन्मत्तपनेसे,

(१४) उपसर्ग के योगमे,

(१५) अधिकरण-क्रोधादिसे,

(१६) सप्रायश्चित्तसे.

(१७) अन्नशन करी हुई ग्लानपनासे,

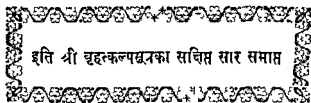
(१८) सलोभ धनादि देखनेसे, इन कारणोंसे संयमका त्याग करती हुई, तथा आपघात करती हुईको साधु हाथ पकड रखे, चित्तको स्थिर करे, संयमका साहित्य देवे तो भगवानकी आज्ञाका उल्लंघन न करे, अर्थात् आज्ञाका पालन करे.

(१९) साधु साधुवीर्योके कल्पके पलिमन्थु छे प्रकार के होते हैं. जैसे सूर्यकी कातिको बादले दबा देते हैं, इसी प्रकार छे बातों साधुवीर्योके संयमको निस्तेज कर देती हैं. यथा (१) स्थान चपलता, शरीर चपलता, भाषा चपलता—यह तीनों चपलता संयमका पलिमन्थु है अर्थात् (कुकड़) संयमका पलिमन्थु है. (२) बार बार घोलना, सत्यभाषाका पलिमन्थु है. (३) तुण्य तुणाट अर्थात् आतुरता करना गोचरीका पलिमन्थु है. (४) चक्षु लोलुपता—इर्यासमितिका पलिमन्थु है. (५)

इच्छा लोलुपता अर्थात् तृष्णाको बढाना, वह सर्व कार्योंका पलिमन्थु है (६) तप-सयमादि कृत कार्यका बार बार निदान (नियाणा) करना, यह मोक्ष मार्गका पलिमन्थु है अर्थात् वह छे बातों साधुओंको नुकसानकारी है वास्ते त्याग करना चाहिये

(२०) छे प्रकार के कल्प हैं (१) सामायिक कल्प, (२) छेदोपस्थापनीय कल्प, (३) निवृत्तमाण, (४) निवृत्तकाय, (५) जिनकल्प, (६) स्थिरकल्प इति

इति श्री बृहत्कल्पसूत्र—छट्टा उद्देशाका सञ्चित्त सार



॥ श्री देवगुप्तसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ॥

अथश्री

शीघ्रबोध ज्ञाग १० वा ।



अथश्री दशाश्रुतस्कन्धसूत्रका संक्षिप्त सार

(अध्ययन दश)

(१) प्रथम अध्ययन—पुरुष अपनी प्रकृतिसे प्रतिकूल आचरण करनेसे असमाधिका कारण होता है. इसी माफिक मुनि अपने सयम-प्रतिकूल आचरण करनेसे सयम-असमाधिको प्राप्त होता है. जिसके २० स्थान शास्त्रकारोंने बतलाया है. यथा—

- (१) आतुरतापूर्वक चलनेसे असमाधि-दोष
- (२) रात्रि समय त्रिगर पुजी भूमिकापर चलनेमे असमाधि दोष.
- (३) पुजे तोमी अग्निधिसे कहांपर पुजे, कहापर नहीं पुजे तो असमाधि दोष.
- (४) मर्यादामे अधिक शय्या, सस्तारक भोगने तो अस० दो०

- (५) रत्नत्रयादिसे वृद्ध जनोंके सामने बोले, अविनय करे तो अस० दोष०
- (६) स्थिर मुनियोंकी घात चिंतवे, दुर्ध्यान करे तो अस० दोष०
- (७) प्राणभूत जीव-सत्त्वकी घात चिंतवे, तो अस० दोष०
- (८) किसीके पीछे अवगुण-वाद बोलनेसे अस० दोष०
- (९) शकाकारी भाषाको निश्चयकारी बोलनेसे अम० दोष०
- (१०) धार धार क्रोध करनेसे अस० दोष०
- (११) नया क्रोधका कारण उत्पन्न करनेसे अस० दोष०
- (१२) पुराणे क्रोधादिकी उदीरणा करनेसे अम० दोष०
- (१३) अकालमे सज्जाय करनेसे अस० दोष०
- (१४) प्रहर रात्रि जानेके बाद उच स्वरसे बोले तो अस० दोष० लगे
- (१५) सचित्त पृच्छ्यादिसे लिप्त पात्रोसे आसनपर बैठे तो अस० दोष० लगे
- (१६) मनसे भ्रूक करे किसीका खराब होना इच्छे तो अस० दोष०
- (१७) वचनसे भ्रूक करे, किसीको दुर्वचन बोले तो अम० दोष० लगे
- (१८) कायासे भ्रूक करे अग भोडे रुटका करे, तो अस० दोष०
- (१९) सूर्योदयसे अस्ततक लाना, खानेमे मस्त रहे तो अम० दोष०

(२०) भात-पाणीकी शुद्ध गणेषणा न करनेसे अस्व० दोष. इस गोलोको सेवन करनेसे साधु, साध्वियोंको अस्व-माधि दोष लगता है अर्थात् सयम अस्वमाधि (कम-जोर) को प्राप्त करता है. वास्ते मोक्षार्थी महात्माओंको सदैवके लीये यतना पूर्वक सयमका रूप करना चाहिये.

॥ इति प्रथम अध्ययनका मक्षिप्त मार ॥

(२) दूसरा अध्ययन

जैसे सग्राममें गये हुये पुरुषको गोलीकी चोट लगनेसे अथवा सबल प्रहार लगनेसे बिलकुल कमजोर हो जाता है; इसी माफिक मुनियोंके सयममें निम्न लिखित २१ सबल दोष लगनेसे चारित्र बिलकुल कमजोर हो जाता है यथा—

- (१) हस्तकर्म (कुचेष्टा) करनेसे सबल दोष.
- (२) मैथुन सेवन करनेसे सबल दोष
- (३) रात्रिभोजन करनेसे " "
- (४) आदाकर्मी आहार, वस्त्र, मकानादि सेवन करनेसे सबल दोष.
- (५) राजपिंड भोगनेसे* सबल दोष.
- (६) मूल्य देके लाया हुना, उधारा हुवा, निर्बलके पाससे

* राजपिंड—(१) राज्याभिषेक करते समय, (२) राजाना बलिष्ठ आहार ज्यो तत्काल वीर्यवृद्धि करे, (३) राजाना भोजन समये बचा हुवा आहारमें पडे लोगोका विभाग होता है

जवरदस्तीसे लाया हुआ, भागीदारकी विगर मरजीसे लाया हुआ, और सामने लाया हुआ—अग्ने पांच दोष सयुक्त आहार—पाणी भोगनेसे सबल दोष लगे

- (७) प्रत्याख्यान कर बार बार भग करनेसे सबल दोष
 (८) दीक्षा लेके छे माममें एक गच्छमे दुसरे गच्छमें जानेसे सबल दोष लगे
 (९) एक मासमें तीन उदग (नदी) लेप+लगानेसे सबल दोष
 (१०) एक मासमें तीन मायास्थान सेवे तो सबल दोष
 (११) शय्यातरके वहांका अशनादि भोगनेसे सबल दोष
 (१२) जानता हुआ जीवको मारनेसे सबल दोष लगे
 (१३) जानता हुआ जूठ बोले तो सबल दोष
 (१४) जानता हुआ पृथ्व्यादिपर बैठ—सोने तो सबल दोष लगे
 (१६) स्नाघ पृथ्व्यादि पर बैठ, सोने, सज्भाय करे तो सबल दोष,
 (१७) त्रस, स्थावर, तथा पाच वर्णकी नील, हरी अरु यावत् कलौडीयें जीवोंके भालोंपर बैठ, सोने तो सबल दोष लगे
 (१८) जानता हुआ कची वनस्पति, मूलादिको भोगनेसे सबल दोष
 (१९) एक बरसमें दश नदीके लेप लगानेसे सबल दोष

+ लेप—देखो नल्पमंत्रमे

- (२०) एक वर्षमें दश मायास्थान सेवन करनेमें सबल दोष
 (२१) सचित्त पृथ्वी-पाणीसे स्पर्श हुवे हाथोंमें भात, पाणी
 ग्रहण करे तो सबल दोष लगता है दोषोंके साथ परि-
 णामभी देखा जाता है और सब दोष सदृश भी नहीं
 होते हैं. इमकी आलोचना देनेवाले उडेही गीतार्थ
 होना चाहिये
 इस २१ सबल दोषोंमें मुनि महाराजोंको सदैव धचना
 चाहिये.

इति श्री दशा श्रुत म्यन्ध—दुमरे अध्ययनका मक्षित मार

(३) तीसरा अध्ययन

गुरु महाराजकी तेतीस आशातना होती है यथा—

- (१) गुरु महाराज और शिष्य राहस्ते चलते समय शिष्य
 गुरुसे आगे चले तो आशातना होवे
 (२) बराबर चले तो आशातना, (३) पीछे चले परन्तु गु-
 रुसे स्पर्श करता चले तो आशातना,—एव तीन आ-
 शातना बैठनेकी, एव तीन आशातना उभा रहनेकी—
 कुल आशातना ६ ।
 (१०) गुरु और शिष्य साथमें जगल गये कारणवशात् एक
 पात्रमें पाणी ले गये, गुरुसे पहिला शिष्य शूचि करे
 तो आशातना, (११) जगलसे आयके गुरु पहिला
 शिष्य इरियावही पतिक्रमे तो आशातना.

- (१२) कोड विदेशी श्रावक आया हुआ है, गुरु महाराजसे वार्तालाप करनेके पत्र उम विदेशीसे शिष्य वात करे तो आशातना.
- (१३) रात्रि समय गुरु पूछते हैं—भो शिष्यो ! कौन सोते कौन जागते हो ? शिष्य जाग्रत होने परभी नहीं बोले. भावार्थ—शिष्यका इरादा हो कि अर्थात् गोलुगा तो लघुनीति परठनेको जाना पड़ेगा. आशातना
- (१४) शिष्य गौचरी लाके प्रथम लघु साधुओंको बतलावे पीछे गुरुको बतलावे तो आशातना
- (१५) एव प्रथम लघु मुनियोंके पास गौचरी की आलोचना करे पीछे गुरुके पास आलोचना कर तो आशातना
- (१६) शिष्य गौचरी लाके प्रथम लघु मुनियोंको आमंत्रण करे और पीछे गुरुको आमंत्रण करे तो आशातना
- (१७) गुरुको प्रिय पूछे अपना इच्छानुसार आहार साधुओंको भेट देवे, जिसमें भी किसीको सरस आहार और किसीको नीरस आहार देवे तो आशातना.
- (१८) शिष्य और गुरु साथमें भोजन करनेको बैठे. इसमें शिष्य अपने मनोऽनु भोजन कर लेवे तो आशातना.
- (१९) गुरुके बोलानेसे शिष्य न बोले तो आशातना.
- (२०) गुरुके बोलानेपर शिष्य आमनपर बैठा हुआ उत्तर देवे तो आशातना

- (२१) गुरुके बोलानेपर शिष्य कहे—क्या कहते हो ? दिन-भर क्या कहे तो हो ? आशातना.
- (२२) गुरुके बोलानेपर शिष्य कहे—तुम क्या कहते हो ? तुम क्या कहे ? असा तुच्छ शब्द बोले तो आशातना.
- (२३) गुरु धर्मकथा कहै शिष्य न सुने तो आशातना
- (२४) गुरु धर्मकथा कहै, शिष्य सुशी न हो तो आशातना.
- (२५) गुरु धर्मकथा कहै शिष्य परिपदमें छेद भेद करे, अर्थात् आप स्वयं उस परिपदको रोक रखे तो आशातना.
- (२६) गुरु कथा कह रहे हैं, आप विचमे बोले तो आशातना.
- (२७) गुरु कथा कह रहे हैं, आप कहे—असा अर्थ नहीं, इसका अर्थ आप नहीं जानते हो, इसका अर्थ असा होता है आशातना.
- (२८) गुरुने कथा कही उसी परिपदमे उसी कथाको विस्तारसे कहके परिपदका दिलको अपनी तरफ आकर्षण करे तो आशातना.
- (२९) गुरुके जाति दोषादिकों प्रगट करे तो आशातना.
- (३०) गुरु कहै—हे शिष्य ! इस ग्लान मुनिकी वैयासच करो, तुमको लाभ होगा शिष्य कहै—क्या आपको लाभ नहीं चाहिये ? असा कहै तो आशातना.
- (३१) गुरुसे उचे आसनपे बैठे तो आशातना
- (३२) गुरुके आसनपर बैठे तो आशातना.

(३३) गुरुके आसनको पाप आदि लगनेपर समासना दे
अपना अपराध न समाये तो शिष्यको आशातना
लगती है

इम तेतीस (३३) आशातना तथा अन्य भी आशा-
तनासे बचना चाहिये क्योंकि आशातना मोधिरीजका नाश
करनेवाली है गुरुमहाराजका कितना उपकार होता है, इस
ससारसमुद्रसे तारनेवाले गुरुमहाराज ही होते हैं

॥ इति दशाधृतम्यन्ध तीमरा अन्ययनका मक्षिप्त भार ॥

(४) चौथा अध्ययन

आचार्य महाराजकी आठ संप्रदाय होती हैं अर्थात्
इस आठ संप्रदाय कर संयुक्त हो, वह आचार्यपदको योग्य
होते हैं वह ही अपनी संप्रदाय (गच्छ) का निर्वाह कर
सक्ते हैं वह ही शासनकी प्रभावना-उन्नति कर सक्ते हैं
कारण-जैन शासनकी उन्नति करनेवाले जैनाचार्य ही हैं.
पूर्वमें जो बड़े २ विद्वान् आचार्य हो गये, जिन्होंने शासन-
सेवाके लिये कैम २ कार्य किये हैं, जो आजपर्यंत प्रख्यात हैं.
विद्वान् आचार्यों बिना शासनोन्नति होनी असंभव है. इस-
लिये आचार्योंमें कौन २ सी योग्यता होनी चाहिये और शास्त्र-
कार क्या फरमाते हैं, वही यहापर योग्यता लिखी जाती है
इन योग्यताओंके होनेही से शास्त्रकारोंने आचार्यपदके योग्य
कहा है. यथा (१) आचार सपदा, (२) सूत्र सपदा, (३) शरीर

सपदा, (४) उचन सपदा, (५) वाचना सपदा, (६) मति सपदा, (७) प्रयोग संपदा, (८) सग्रह सपदा—इति।

(१) आचार संपदा के चार भेद

(१) पच महाव्रत, पच समिति, तीन गुप्ति, मत्त प्रकार-के समय, दश प्रकारके यतिधर्मादिसे अखण्डित आचारव्रत हो, सारणा, धारणा, वारणा, चोयणा, प्रतिचोयणादिसे सत्रको अच्छे आचारमें प्रवर्ताने। (२) आठ प्रकारके मद और तीन गारवमे रहित—ग्रहृत लोकोंके माननेमे अहकार न करे और क्रोधादिसे अग्रहित हो। (३) अप्रतिबध—द्रव्यसे भडोमत्तोपगरण वस्त्र—पात्रादि, क्षेत्रसे ग्राम, नगर उपाश्रयादि, कालसे शीतो-ष्णादि कालमे नियमसर जगह रहना और भावसे राग, द्वेष (एकपर राग, दूसरेपर द्वेष करना) इन चार प्रकारके प्रति बध रहित हो (४) चचलता—चपलता रहित, इंद्रियोंको दमन करे, हमेशा त्यागवृत्ति रखे, और बडे आचारव्रत हो

(२) सूत्र संपदाका चार भेद यथा—

(१) बहुश्रुत हो (क्रमोत्क्रम गुरुगमसे वाचना ली हो)

(२) स्वसमय, परसमयका जाननेवाला हो याने जिस कालमें जितना सूत्र है, उनका पारगामी हो और प्राची प्रतिप्राचीको उत्तर देने समर्थ हो (३) जितना आगम पढे या सुने उसको निश्चल धारण कर रखे, अपने नाम माफिक कभी न भूले। (४) उदात्त, अनुदात्त, घोष—उच्चारण शुद्ध स्पष्ट हो।

(३) शरीर सपदाके चार भेद यथा—

(१) प्रमाणोपेत (उचा पूरा) शरीर हो (२) दृढ सहननवाला हो. (३) अलज्भत शरीर हो, परिपूर्ण इन्द्रियायुक्त हो (४) हस्तादि अगोपाग सौम्य शोभनीक हो, और जिनका दर्शन दूसरोंको प्रियकारी हो. हस्त, पादादिम अच्छी रेखा वा उचित स्थानपर तील, ममा लक्षण गिरे हो

(४) वचन सपदाके चार भेद यथा—

(१) आदेय वचन—जो वचन आचार्य निकाले, वह निष्फल न जाय सर्वलोक मान्य करे. इसलिये पहिलेहीसे विचार पूर्वक बोले (२) मधुर वचन, कोमळ, सुस्वर, गभीर और श्रोतारजन वचन बोले (३) अनिश्रित—राग, द्वेषसे रहित द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव देखकर बोले. (४) स्पष्ट वचन—सब लोक समझ सकै वैया वचन बोले परन्तु अप्रतीतिकारी वचन न बोले

(५) वाचना सपदाके चार भेद यथा—

(१) प्रमाणिक शिष्यको वाचना देनेकी आज्ञा दे [वाचना उपाध्याय देते हैं] यथायोग (२) पहिले दी हुई वाचना अच्छी तरहसे प्रणमावे उपराउपरी वाचना न दे क्योंकि ज्यादा देनेसे धारणा अच्छी तरह नहीं हो सक्ती. (३) वाचना लेनेवाले शिष्यका उत्साह बढ़ावे, और वाचना

ऋमश' दे, बीचमें तोड़े नहीं, जिससे सबध बना रहे (४) जितनी वाचना दे, उसको अच्छी रीतिसे भिन्न २ कर समजावे. उत्सर्ग, अपवादका रहस्य अच्छी तरहसे बतावे

(६) मति संपदाका चार भेद यथा—

(१) उगग (शब्द सुने), (२) इहा (विचारे), (३) अपाय (निश्चय करे), (४) धारणा (धारणा रखे).

(१) उगग—क्रिमी पुरुषने आ कर आचार्यके पाम एक बात कही, उसको आचार्य शीघ्र ग्रहण करे. बहुत प्रकारसे ग्रहण करे, निश्चय ग्रहण करे, अनिश्चय (दूसरोंकी सहाय बिना) पहिले कमी न देखी, न सुनी हो, अमी बातको ग्रहन करे इसी माफिक शास्त्रादि मय नियम समझ लेना (२) इहा—इमी माफिक मय विचारणा करे (३) अपाय—इसी माफिक वस्तुका निश्चय करे. (४) जिस वस्तुको एरुवार देखी या सुनी हो, उसको शीघ्र धारे, बहुत विधिसे धारे, चिरकाल पर्यंत धारे, कठिनतासे धारने योग्य हो उसको धारे, दूसरोंकी सहाय बिना धारे.

(७) प्रयोग सपदाके चार भेद यथा—

कोइ वादीके साथ शास्त्रार्थ करना हो, तो इस रीतिसे करे—

(१) पहिले अपनी शक्तिका विचार करे, और देखे कि मैं इस वादीका परानय कर सकता हू या नहीं ? मुझमें कितना ज्ञान है और वादीमें कितना है ? इसका विचार करे. (२) यह क्षेत्र किम पक्षका है नगरका राजा न प्रजा सुशील है या दु शील है और जैनधर्मका रागी है वा द्वेषी है ? इन सब बातोंका विचार करे (३) स्व और परका विचार करे इस विषयमें शास्त्रार्थ करता हू परन्तु इसका फल (नतीजा) पीछे क्या होगा ? इस क्षेत्रमें स्वपक्षके पुरुष कम हैं, और परपक्षमाले ज्यादा है, वे भी जैनपर अच्छा भाव रखते हैं, या नहीं ? अगर राजा और प्रजा दुर्लभमोधि होगा तो शास्त्रार्थ करनेसे जैनोंका इस क्षेत्रमें आना जाना कठिन हो जायगा ऐसी दशामें तीर्थादिकी रक्षा कौन करेगा ? इत्यादि बातोंका विचार करे (४) वादी किस विषयमें शास्त्रार्थ करना चाहता है और उस विषयका ज्ञान अपनेमें कितना है ? इसको विचार कर शास्त्रार्थ करे ऐसे विचार पूर्वक शास्त्रार्थ कर वादीका पराजय करना

(८) सग्रह सपदाके चार भेद यथा—

(१) क्षेत्र सग्रह—गच्छके साधु ग्लान, वृद्ध, रोगी आदिके लीये क्षेत्रका सग्रह याने अमुक साधु उम क्षेत्रमें रहेगा, तो वह अपनी समय यात्राको अच्छी तरहसे निर्वाह मकेगा और श्रोतागणकोभी लाभ मिलेगा (२) शीतोष्ण या उर्षा-

कालके लिये पाठ-पाठलादिका संग्रह करे, क्योंकि आचार्य गच्छके मालिक है. इस लिये उनके दर्शनार्थी साधु बहुतसे आते हे, उन मन्की यथायोग्य भक्ति करना आचार्यका काम है और पाठ-पाठलाके लिये ध्यान रखे कि इस श्रावकके वहा ज्यादाभी मिल सकता है. जिसमे काम पडे जम ज्यादा फिर-नेकी तकलीफ न पडे (३) ज्ञानका नया अभ्यास करते रहें. अनेक प्रकारके विद्यार्थीओंका संग्रह करे. और शासनमें काम पडनेपर उपयोगमें लाये. क्योंकि शासनका आवार आचार्यपर हे. (४) शिष्य—जोकि शासनको शोभानेवाले हो, और देशों देशमें विहार करके जैनधर्मकी वृद्धि करनेवाले जैसे सुशिष्योंकी सपदाको संग्रह करे.

इति आचार्यकी आठ सपदा समाप्त



आचार्यने सुविनीत शिष्यको चार प्रकारके विनयमें प्रवृत्ति करानी चाहिये. यथा—(१) आचार विनय, (२) सप्त-विनय, (३) विज्ञेपण विनय, (४) दोष निग्घायणा विनय.

(१) आचार विनयके ४ भेद

(१) मयम सामाचारीमें आप बर्ते, दूसरेको वर्तवि, और वर्ततेको उत्तेजन दे. (२) तपस्या आप करे, दूसरोंमे करवाये और तपस्या करनेवालोंको उत्तेजन दे. (३) गण-गच्छका कार्य आप करे, दूसरोंसे करवाये और उत्तेजन दे.

(४) योग्यता प्राप्त होनेसे अकेला पडिमा धारण करे, करवाने, और उत्तेजन दे क्यों कि जो वस्तुओंकी प्राप्ति होती है, वह अकेलेमें ध्यान, मौनादि उग्र तपसे ही होती है

(२) सूत्र विनयके ४ भेद

(१) सूत्र वा सूत्रकी वाचना देनेवालोंका बहु मानपूर्वक विनय करे, क्यों कि विनय ही से शास्त्रोंका रहस्य शिष्यको प्राप्त हो सकता है. (२) अर्थ और अर्थदाताका विनय करे (३) सूत्रार्थ या सूत्रार्थको देनेवालोंका विनय करे. (४) जिस सूत्र अर्थकी वाचना प्रारम्भ करी हो, उसको आदि-अन्त तक सपूर्ण करे

(३) विक्षेपणा विनयका ४ भेद

(१) उपदेश द्वारा मिथ्यात्वकी मिथ्यात्वको टुडावे (२) सम्यक्त्वकी जीवको श्रान्तक व्रत या ससारसे मुक्त कर दीक्षा दे (३) धर्म या चारित्रसे गिरतेको मधुर वचनोंसे स्थिर करे (४) चारित्र पालनेवालोंको एषणादि दोषसे बचा कर शुद्ध करे

(४) दोष निग्घायणा विनयके ४ भेद

(१) क्रोध करनेवालेको मधुर वचनसे उपशांत करे (२) निषयभोगकी लालसावालेको हितोपदेश करके समयगुण और वैषयिक दोष बता कर शांत करे (३) अन्वशन किया

हुवा साधु असमाधि चित्तसे अस्थिर होता हो उसको स्थिर करे या मिथ्यात्वमें गिरते हुए को स्थिर कर. (साहित्य दे.)
(४) स्वयं (आप) शातपणे बर्ते और दूसरोंको बर्तावे. इति.

और भी आचार्यके शिष्यका ४ प्रकारका विनय कहा है.

(१) साधुके उपगरण विषय विनयका ४ भेद

(१) पहिलेके उपगरणका सरक्षण करे और वस्त्र, पात्रादि फुटा, तुटा हो उसको अन्धा करके वापरे (काममें लावे). (२) अति जरूरत हो तो नवा उपगरण निर्वध लेवे और जहातक हो बहातक अल्प मूल्यवाला उपगरण ले. (३) उस्त्रादिक फाट गया हो तो भी जहातक बने बहातक उमीसे काम ले मकानमें (उपासरेमें) जीर्ण वस्त्र वापरे. ग्राह्य आना-जाना हो तो सामान्य उस्त्र (अन्धा) वापरे. इमी माफिक आप निर्वाह करे, परन्तु दूसरे साधुको अन्धा वस्त्र दे. (४) उपगणादि वस्तु गृहस्थसे याच के लाया हो, उसमेंसे दूसरे साधुको भी विभाग करके देवे

(२) साहिष्ण्वीय विनयके ४ भेद

(१) गुरुमहाराजके बुलानेपर तहकार करता हुआ नम्रतापूर्वक मधुर वचनसे बोले. (२) गुरुमहाराजके काममें अपने शरीरको यतनापूर्वक विनयसे प्रवर्तावे (३) गुरुमहाराजके कार्यको विश्रामादि रहित करे, परन्तु विलग्न न करे.

(४) गुरुमहाराज या अन्य साधुओंके कार्यमें नम्रता-पूर्वक प्रवर्ते

(३) वपण सजलणता विनयके ४ भेद

(१) आचार्यादिका छता गुण दीपावे. (२) आचार्यादिका अवगुण बोलनेवालेको शिचा करे (वारे) याने पहिले मधुर वचनसे समभावे और न माननेपर कठोर वचनसे तिरस्कार करे, परन्तु आचार्यादिका अवगुण न सुने (३) आचार्यादिके गुण बोलनेवालेको योग्य उत्तेजन दे या साधुको छत्रार्थकी वाचना दे (४) आचार्यके पाम रहा हुवा विनीत शिष्य हमेशा चढते परिणामसे सयम पाले

(४) भारपञ्चरुहणता विनयके ४ भेद

(१) सयम भार लीया हुवा स्थितोस्थित पहुचावे (जावजीव सयममें रमणता करे), और सयमपतकी सार-सभाल करे (२) शिष्यको आचार-विचारमें प्रवर्तावे, अकार्य करतेको वारे और कहे-भो शिष्य ! अनत सुखका देनेनाला यह चारित्र तेरेको मिला है, इसकी चिन्तामणि रन्नके समान यतना कर, प्रमाद करनेसे यह अरसर निरुल जायगा-इत्यादिक मधुर वचनोंसे समभावे (३) स्वधर्मी, ग्लान, रोगी, बुद्धकी वैयावद्य करनी (४) सद्य या साधर्मीकमे वलेश न करे, न करावे, कदाचित् वलेश हो गया हो तो मध्यस्थ (कोडका पक्ष न करते) होकर वलेशको उपशांत करे इति

यह आठ प्रकारकी सपदा आचार्यकी तथा आठ प्रकारका विनय शिष्यके लिये कहा. क्योंकि विनय प्रवृत्ति रखने-हीमे शासनका अधिकारी और शासनका कुछ कार्य करने योग्य हो सक्ता है इस प्रवृत्तिमें चलना और चलाना यह कार्य आचार्य महाराजका है

इति श्री दशाश्रुत स्कन्ध—चतुर्थाध्ययनका सश्लिष मार'



(५) पंचम अध्ययन



चित्त समाधिके दश स्थान है —

राणियाग्राम नगरके दुतिपलासोद्यानमें परमात्मा वीर-प्रभु अपने शिष्यरत्नोंके परिवारसे पधारे, राजा जयशत्रु चार प्रकारकी सेना सयुक्त और नगर निवासी लोक बडेही आडम्बरके साथ भगवानको वन्दन करने आये. भगवानने उस विशाल परिपदको विचित्र प्रकारमे धर्मकथा सुनाइ जीवादि पदार्थका स्वरूप समजाते हुये आत्मकल्याणमें चित्तसमाधिकी प्राप्त आवश्यक्ता ततलाइथी परिपदने प्रेमपूर्वक देशना श्रवण कर आनन्द सहित भगवानको वन्दन नमस्कार कर आये जिस दिशामें गमन कीया

भगवान् वीरप्रभु अपने साधु-साध्वीयोंको आमत्रण कर आदेश करते हुवे कि-हे आर्यो ! साधु, माध्वी पाच स-

(५) अग्रधिज्ञान—पूर्व उत्पन्न नहीं हुआ ऐसा उत्पन्न होनेसे जघन्य अगुलके अस्वर्थाते भागे उत्कृष्ट सपूर्ण लोक जाने, निमसे चित्तसमाधि होती है अग्रधिज्ञान किमको प्राप्त होता है ? जो तपस्वी मुनि सर्व प्रकारके कामविकार, त्रिपय कपायमे विरक्त हुआ हो, देव, मनुष्य, तिर्यचादिका उपसर्गोंको सम्यक् प्रकारसे सहन करे, ऐसे मुनियोंको अग्रधिज्ञान होनेसे चित्तसमाधि होती है

(६) अग्रधिदर्शन—पूर्व उत्पन्न न हुआ ऐसा अग्रधिदर्शन उत्पन्न होनेसे जघन्य अगुलके अस्वर्थाते भागे अर्थात् उत्कृष्ट लोकके रूपीद्रव्योंको देखे अग्रधिदर्शनकी प्राप्ति किमको होती है ? जो पूर्व गुणोंवाले, शात स्वभावी, शुद्ध लेश्याके परिणामवाले मुनि उर्ध्वलोक, अधोलोक और तिर्यक् लोकमें अग्रधिज्ञान द्वारा रूपीपदार्थोंके देखनेसे चित्तमें समाधि उत्पन्न होती है

(७) मन पर्यवज्ञान—पूर्व प्राप्त नहीं हुआ ऐसा अग्रधिमन पर्यवज्ञान उत्पन्न होनेसे अद्वाऽद्वीपके सञ्जीपर्याप्ता जीवोंके मनोभासको देखते हुवे चित्तसमाधिको प्राप्त होता है मन पर्यवज्ञान किमको उत्पन्न होता है ? सुप्तसमाधिबन्त, शुद्ध लेश्याबन्त, जिनप्रचनमें निश्चक, अभ्यन्तर और बाह्य शक्ति हका सर्वथा त्यागी, सर्व सगरहित, गुणोंका रागी इत्यादि गुणसयुक्त हो, उस अप्रमत्त मुनिको मन पर्यवज्ञान उत्पन्न होता है

(८) कैवलज्ञान—पूर्व नहीं हुआ वह उत्पन्न होने

चित्तको परम समाधि होती है. केवलज्ञानकी प्राप्ति किसको होती है ? जो मुनि अप्रमत्त भावसे सयम आराधन करते हुवे ज्ञानापरणीय कर्मका सर्वाश क्षय कर दीया है, ऐसा क्षपकश्रेणिप्रतिपन्न मुनियोंको केवलज्ञान उत्पन्न होता है वह सर्व लोकालोकके पदार्थोंको हस्तामलककी माफिक जानते हैं

(६) केवलदर्शन—पूर्व नहीं हुवा ऐसा केवलदर्शन होनेसे लोकालोकको देखते हुवेको चित्तसमाधि होती है. केवलदर्शनकी प्राप्ति किसको होती है ? जो मुनियों अप्रमत्त गजारूढ हो, क्षपकश्रेणि करते हुवे गारहने गुणस्थानके अन्तमें दर्शनापरणीय कर्मका सर्वाश क्षय कर, केवलदर्शन उत्पन्न कर लोकालोकको हस्तामलककी माफिक देखते हैं.

(१०) केवलमृत्यु—(केवलज्ञान सयुक्त) पूर्व नहीं हुवा ऐसा केवलमृत्युकी प्राप्ति होनेसे चित्तमें समाधि होती है. केवलमृत्युकी प्राप्ति किसको होती है ? जो गारह प्रकारकी भिक्षुप्रतिमाका विशुद्धपणसे आराधन कीया हो और मोहनीय कर्मका सर्वाश क्षय कीया हो, वह जीव केवलमृत्यु भरता हुवा, अर्थात् केवलज्ञान सयुक्त पंडित मरण भरता हुवा सर्व शारीरिक और मानसिक दुःखोंका अंत करते, गली समाधि जो शाश्वत, अव्याग्राध सुखोभं विराजमान हो जाता है. मोहनीय कर्म क्षय हो जानेसे शेष कर्मोंका जोर नहीं चलता है इस पर शास्त्रकारोंने दृष्टान्त उतलाया है जैसेकि—

(१) तालवृक्षके फलके शिरपर सुइ (सूचि) छेद चिटका

नय वह तत्काल गिर पड़ता है, इसी माफिक मोहनीय कर्मका शिरच्छेद करनेसे सर्व कर्मोंका नाश हो जाता है (२) सेनापति भाग जानेसे सेना स्वयही कमजोर होकर भग जाती है इसी माफिक मोहनीय कर्मरूप सेनापति क्षय होनेसे शेष कर्मो-रपी सैन्य स्वयही भाग जाता है (क्षय हो जाता है) (३) धूम रहिन अग्नि इन्धनके अभावसे स्वय क्षय होता है इसी माफिक मोहनीय कर्मरूप अग्निको राग-द्वेषरूप इन्धन न मिलनेसे क्षय होता है, मोहनीयकर्म क्षय होनेपर शेष कर्मक्षय होता है (४) जैसे सुके हुवे वृक्षके मूल जल सिंचन करनेसे कमी नय-पल्लवित नहीं होते हैं इसी माफिक मोहनीयकर्म छक (क्षय) जानेपर दूसरे कर्मोंका कमी अकुर उत्पन्न नहीं हो सक्ता है (५) जैसे बीजको अग्निसे दग्ध कर दीया हो, तो फिर अकुर उत्पन्न नहीं हो सक्ता है इसी माफिक कर्मोंका बीज (मोहनीय) दग्ध करनेसे पुन भगरूप अकुर उत्पन्न नहीं होते हैं

इस प्रकारसे केवलज्ञानी आयुष्यके अन्तमें औदारिक, वैजस, और कार्मण शरीर तथा वेदनीय, आयु, नामकर्म और गोत्रकर्मको सर्वथा छेदन कर कर्मरज रहित सिद्धम्यानको प्राप्त कर लेते हैं

भगवान् गीरप्रभु आमंत्रण कर कहते हैं कि—भो आयुष्मान् ! यह चित्त समाधिके कारण उत्तलाये है इसको विशुद्ध भावोंसे आराधन करो, सन्मुख रहो, स्वीकार करो इ

सीसे मोक्षमन्दिरके सोपानकी श्रेणि उपागत हा, शिवमन्दिरको प्राप्त करो.

इति दशाश्रुत स्कन्ध—पचम अव्ययनका सक्षिप्त मार

[६] छठ्ठा अध्ययन

पचम गणधर अपने ज्येष्ठ शिष्य जम्बू अणुगारको श्रावकोंकी इग्यारा प्रतिमाका विवरण सुनाते हैं. इग्यारा प्रतिमाकी अन्दर प्रथम दर्शनप्रतिमाका व्याख्यान करते हैं.*

वादीयोंमें अज्ञानशिरोमणि, नास्तिकमति, जिसको अक्रियावादी कहते हैं. हेय, उपादेय कोई भी पदार्थ नहीं है, ऐसी उन्हांकी प्रज्ञा है, ऐसी उन्हांकी दृष्टि है. वहां सम्यक्त्त वादी नहीं है, नित्य (मोक्ष) वादी भी नहीं है जो शाश्वत पदार्थ है उसको भी नहीं मानते हैं उस अक्रियावादी नास्तिकोंकी मान्यता है कि यहलोक, परलोक, माता, पिता, अरिहत, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव, नारक, देवता कोई भी नहीं है, और सुकृत करनेका सुकृत फल भी नहीं है दुष्कृत करनेका दुष्कृत फल भी नहीं है, अर्थात् पुण्य-पापका फल नहीं है. न परभवमें कोई जीव उत्पन्न होता है, वास्ते नरक

* प्रथम मिथ्यात्वका स्वरूप ठीक तौरपर न समझा जावे, यहातक मिथ्यात्वसे अरुचि और सम्यक्त्वपर रुचि होना असम्भव है इसी लिये शास्त्रकारों दर्शनप्रतिमाकी आदिमें वादीयोंके मतका परिचय कराते है

नहीं है, यावत् मिद्व भी नहीं है अक्रियावादीयोंकी ऐसी प्रज्ञा-दृष्टि प्ररूपणा है ऐसा ही उन्होंनेका छद्दा है, ऐसा ही उन्होंनेका राग है, और ऐसा ही अभीष्ट है, ऐसे पाप-पुण्यकी नास्तिक करते हुवे वह नास्तिकलोक महारम, महापरिग्रहकी अन्दर मूर्च्छित है. इसीसे वह लोक अधर्मी, अधर्मानुचर, अधर्मको सेवन करनेवाले, अधर्मको ही इष्ट जाननेवाले, अधर्म बोलनेवाले, अधर्म पालनेवाले, अधर्मका ही जिन्होंका आचार है, अधर्मका प्रचार करनेवाले, रातदिन अधर्मका ही चिंतन करनेवाले, सदा अधर्मकी अन्दर रमणता करते हैं.

नास्तिक कहते हैं—इम अमुरु जीवोंको मारो, खड्गादिसे छेदो, भालादिसे भेदो, प्राणोंका अंत करो, ऐसा अकृत्य कार्य करते हुवे के हाथ सदैव लोही (रौद्र) से लिप्त रहते हैं वह स्वभाससे ही प्रचंड क्रोधवाले, रौद्र, क्षुद्र पर दुःख देनेमें तथा अकृत्य कार्य करनेमें साहसिक, परजीवोंको पाशमे डाल ठगनेवाले, गूढ माया करनेवाले, इत्यादि अनेक कुप्रयोगमें प्रवृत्ति करनेवाले, जिन्होंका दुःख शील, दुराचार, दुर्नयके स्थापक, दुर्गतपालक, दूमरोंका दुःख देखके आप आनन्द माननेवाले, आचार, गुप्ति, दया, प्रत्याख्यान, पौषधोपवास रहित हैं असाधु, मलिनवृत्ति, पापाचारी, प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, रति अरति, मायामृषावाद और मिथ्यात्वशल्य—इस अठारा पापोंमे

निवृत्त नहीं, अर्थात् जानजीवतक अठारा पापको सेवन करने-वाले, सर्व कपाय, स्नान, मञ्जन, दन्तधावन, मालीस, तिले-पन, माला, अलकार, शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्शसे जान-जीवतक निवृत्त नहीं अर्थात् किमी कीस्मका त्याग नहीं है।

सर्वप्रकारकी असजारी गाड़ी, गाडा, रथ, पालखी, तथा पशु, हस्ती, अश्व, गौ, महिष [पाडा] ज़ाली, तथा गवाल, दामदासी, कामकारी-इत्यादिमेभी निवृत्ति नहीं करी है

सर्व प्रकारके क्रय-विक्रय, गणित्य, व्यापार, कृत्य, अकृत्य तथा सुवर्ण, रूपा, रत्न, माणिक, मोती, धन, धान्य इत्यादि, तथा सर्व प्रकारसे कुडा तोल कुडा मापसेभी निवृत्ति नहीं करी है

सर्व प्रकारके आरभ, सारभ, समारभ, पचन, पचावन, करण, करावण, परजीवोंको मारना, पीटना, तर्जना करना, बध बधनसे परको क्लेश देना-इत्यादिमे निवृत्ति नहीं करी है।

जैसा वर्णन किया है, वैसेही सर्व सावद्य कर्त्तव्य के करनेवाले, मोधिबीज रहित, परजीवोंको परिताप उत्पन्न करनेसे जानजीव पर्यंत निवृत्त नहीं है जैसे दृष्टान्त-कोइ पुरुष बटाणा, मखर, चीणा, तील, मुग, उटद-इत्यादि अपने भक्ष्यार्थ दलते है, चरण करते है इसी माफिक मिथ्यादृष्टि, अनार्य, मासभची ज्यों तीतर, बटेवर, लबोक, पारेगा, कपींजल, मयूर, मृग, छुवर, महिष, कान्छप, सर्प-आदि जानवरोंको

बिना अपराध मार डालते हैं निध्वंस परिणामी, किसी प्रकारकी घृणा रहित ऐसे अनार्य नास्तिक होते हैं

ऐसे अक्रियानादीयोंके बाहिरकी परिपद जो दास-दासी, प्रेषक, दूत, भट्ट, सुभट, भागीदार, कामदार, नोकर, चाकर, मेता, पुरुष, कृपीकार-इत्यादि जो लघु अपराध किया हो, तो उसको बडा भारी दड देते हैं जैसे इसको दडो, मुडो, तर्जना, ताडना करो, मारो, पीटो मजबूत बन्धन करो इसको खाडेमें भाखसीमें डाल दो, इसके शरीरकी हडीयों तोड दो-एव हाथ, पाव, नाक, कान, ओष्ठ, दान्त-आदि अगोपागको छेदन करो, एव इसका चमडा निकालो, हृदयको भेदो, आस, दान्त, जीभको छेदन करो, शूली दो, तलवारसे खड खड करो, इसको अग्निमें जला दो, इनको सिंहकी पूछमें बांधो, हस्तीके पांव नीचे डालो, इत्यादि लघु अपराध कर नेपर अपराधीको अनेक प्रकारके कुमोतसे मारनेका दड देते हैं ऐसी अनार्य नास्तिकोंकी निर्दय वृत्ति है

आभ्यन्तर परिपद् जैसे माता, पिता, बान्धव, भगीनी, भार्या, पुत्री, पुत्रवधु-इत्यादि. इन्होंने कभी किंचिन्मात्र अपराध हो जाय, तो आप स्वयं भारी दड देते हैं जैसे शीतकालमें शीतल पाणी तथा उष्णकालमें उष्ण पाणी इसके शरीरपर डालो, अग्निकी अन्दर शरीर तपावों, रसीकर, बेंत कर, नाडीकर, चामक कर, छडीकर, लताकर, शरीरके पसवाडे प्रहार करो, चामडीको उखेडो, हडीकर, लकडीकर, मुष्टिकर,

ककर कर, केहलू कर, मारो, पीटो, परिताप करो, इसी माफिक स्वजन, परजन, परको स्वल्प अपराधका महान् दड करनेवाले, ऐसे क्रुर पुरुषोंसे उन्होंके परिवारवाले दूर निवास करना चाहते हैं, जैसे वीलीसे चुहें दूर रहते हैं, ऐसे निर्दय अनायोंका इस लोकमें अहित होता है, हमेशा कोपित रहता है, और परलोकमें भी दुःखी होता है अनेक ज्ञेश, शोक, सताप पाता है, वह अनार्य दूसरोंकी संपत्ति देख महान् दुःख करता है, उसको नुरुशान पहुचानेका इरादा करता है, वह दुष्ट परिणामी उभय लोकमें दु खपरपराको भोगता है

ऐसा अक्रियावादी पुरुष, स्त्री संनधी (मँथुन) काम-भोगोंमें मूर्च्छित, गृद्ध, अत्यत आसक्त, ऐसा च्यार, पाँच, छे दश वर्ष तथा स्वल्प या बहुतकाल ऐसे भोगोपभोग भोगवता हुवा बहुत जीवोंके साथ वैर-विरोध कर, बहुत जबर पापकर्म उपार्जन कर, कृतकर्म-प्रेरित तत्काल ही उस पापकर्मोंका भोक्ता होता है जैसे कि लोहाका गोला पानीपर रखनेसे वह तत्काल ही रसातलको पहुच जाता है, इसी माफिक अक्रियावादी वज्रपापके सेवनसे कर्मरूप धूली और पापरूप कर्मसे चीकणा बन्ध करता हुवा बहुत जीवोंके साथ वैर, विरोध, धूर्तबाजी, माया, निमिड मायासे परवचन, आशातना, अयश, अप्रतीतिवाले कार्य करता हुवा बहुत त्रस, स्थावर प्राणीयोंकी घात कर दुर्ध्यान अत्रस्थामें कालअनसरमें

पिना अपराध मार डालते हैं निधिस परिणामी, किसी प्रकार की घृणा रहित ऐसे अनार्य नास्तिक होते हैं

ऐसे अक्रियावादीयोंके बाहिरकी परिपद जो दास-दासी, प्रेपक, दूत, भट्ट, सुभट, भागीदार, कामदार, नोकर, चाकर, मेता, पुरुष, कृपीकार-इत्यादि जो लघु अपराध कीया हो, तो उसको बडा भारी दड देते हैं. जैसे इसको दडो, मुडो, तर्जना, ताडना करो, मारो, पीटो मजबूत बन्धन करो इसको खाडेमें भारसीमें डाल दो, इसके शरीरकी हडीयों तोड दो-एव हाथ, पाव, नाक, कान, ओष्ठ, दान्त-आदि अगोपागको छेदन करो, एव इसका चमडा निकालो, हृदयको भेदो, आस, दान्त, जीभको छेदन करो, शूली दो, तलवारसे खड खड करो, इसको अग्निमें जला दो, इनको सिंहकी पूछमें बांधो, हस्तीके पांज नीचे डालो, इत्यादि लघु अपराध कर नेपर अपराधीको अनेक प्रकारके कुमोतसे मारनेका दड देते हैं ऐसी अनार्य नास्तिकोंकी निर्दय वृत्ति है

आभ्यन्तर परिपद् जैसे माता, पिता, बान्धव, भगीनी, भार्या, पुत्री, पुत्रवधु-इत्यादि इन्होंने कभी किंचिन्मात्र अपराध हो जाय, तो आप स्वयं भारी दड देते हैं जैसे शीतकालमें शीतल पाणी तथा उष्णकालमें उष्ण पाणी इसके शरीरपर डालो, अग्निकी अन्दर शरीर तपावों, रसीकर, बेंत कर, नाडीकर, चाबक कर, छडीकर, लताकर, शरीरके पसवाडे प्रहार करो, चामडको उखेडो, हडीकर, लकडीकर, मुष्टिकर,

ककर कर, केदलू कर, मारो, पीटो, परित्याप करो, इसी माफिरू स्वजन, परजन, परको स्वल्प अपराधका महान् दड करनेवाले, ऐसे क्रूर पुरुषोंसे उन्होंके परिभारवाले दूर निवास करना चाहते हैं. जैसे बीलीसे चुहें दूर रहते हैं. ऐसे निर्दय अनार्योंका इस लोकमें अहित होता है, हमेशा कोपित रहता है, और परलोकमें भी दुःखी होता है अनेक क्रेश, शोक, सताप पाता है. वह अनार्य दूसरोंकी संपत्ति देख महान् दुःख करता है. उसको नुरुशान पहचानेका इरादा करता है वह दुष्ट परिणामी उभय लोकमें दुःखपरपराको भोग्यता है

ऐसा अक्रियावादी पुरुष, स्त्री सवधी (मैथुन) काम-भोगोंमें मूर्च्छित, गृद्ध, अत्यंत आसक्त, ऐसा च्यार, पांच, छे दश वर्ष तथा स्वल्प या बहुतकाल ऐसे भोगोपभोग भोगवता हुवा बहुत जीवोंके साथ वैर-विरोध कर, बहुत जबर पापकर्म उपार्जन कर, कृतकर्म-प्रेरित तत्काल ही उस पापकर्मोंका भोक्ता होता है जैसे कि लोहाका गोला पानीपर रखनेसे वह तत्काल ही रसातलको पहुच जाता है. इसी माफिरू अक्रियावादी वज्रपापके सेवनसे कर्मरूप धूली और पापस्व कर्मसे चीरुणा बन्ध करता हुवा बहुत जीवोंके साथ वैर, विरोध, धूर्तबाजी, माया, निमिड मायासे परवचन, आशातना, अयश, अप्रतीतिवाले कार्य करता हुवा बहुत ब्रस, स्थावर प्राणीयोंकी घात कर दुर्ध्यान अस्थामें कालअसरमें

काल कर घोर अधकार व्याप्त धरणीतले नरकगतिको प्राप्त होता है

वह नरकावास अन्दरसे वर्तुल (गोलाकार) बाहरसे चोरस है. जमीन डुरी-अस्तरे जैसी तीक्ष्ण है. मदैव महा अन्धकार व्याप्त, ज्योतिषीयोंकी प्रभा रहित और रौद्र, मांस, चरबी, मेद, पीपपडलसे व्याप्त है. श्वान, सर्प, मनुष्यादिक मृत कलेवरकी दुर्गन्धसे भी अधिक दुर्गन्ध दशों दिशामें व्याप्त है स्पर्श बडा ही कठिन है सहन करना बडा ही मुश्कील है. अशुभ नरक, अशुभ नरकाला बहापर नारकीके नैरिय किंचित् भी निद्रा-प्रचला करना, सुना, रतिवेदनेका तो स्वप्न भी कहासे होवे ? सदैवके लिये निस्तरण प्रकारकी उज्वल, प्रकृष्ट, कर्कश, कडुक, रौद्र, तीव्र, दुःख सहन कर सके ऐसी नारककी अन्दर नैरिया पूर्वकृत कर्मोंको भोगवते हुवे विचरते है

जैसे दृष्टान्त—पर्वतका उन्नत शिखरपरसे मूल छेदा हुवा घृत्त अपने गुरुत्वपनेसे नीचे स्थान खाडे, खाइ, विषम, दुर्गम स्थानपर पडते है, इसी माफिक अक्रियावादी अपने किये हुवे पापकर्मरूप शस्त्रसे पुन्यरूप वृक्षमूलको छेदन कर, अपने कर्मगुरुत्व कर स्वय ही नरकादि गतिमें गिरते है. फिर अनेक जाति-योनिमें परिभ्रमण करता हुवा एक गर्भसे दूसरे गर्भमें सक्रमण करता हुवा दक्षिणदिशागामी नारकी कृष्ण-पत्नी भविष्यकालमें भी दुर्लभबोधि होगा, इति अक्रियानादी.

(२) क्रियावादी—क्रियावादी आत्माका अस्तित्व मानते हैं. आत्माका हितवादी है. ऐसी उसकी प्रज्ञा है, बुद्धि है. आत्महित साधनरूप सम्यग्दृष्टिपना होनेसे समवादी कहा जाते हैं सर्व पदार्थोंको यथार्थपने मानते हैं सर्व पदार्थोंको द्रव्यास्तिक नयापेक्षामे नित्य और पर्यायास्तिक नयापेक्षासे अनित्य मानते हैं. सत्यवाद स्थापन करनेवाले हैं, उन्होंकी मान्यता है कि यह लोक, परलोक अरिहत, चक्रवर्ती, नलदेव, वासुदेव हैं. अस्तिरूप सुकृतका फल है, दुष्कृतका भी फल है, पुण्य है, पाप है. परलोकमें जीव उत्पन्न होते हैं पापकर्म करनेमे नरकमें और पुण्यकर्म करनेमे देवलोकमें उत्पन्न भी होते हैं नरकसे यावत् सिद्धि तक सर्व स्थान अस्तिभाव है. ऐसी जिसकी प्रज्ञा, दृष्टि, छन्दा, राग. मान्यता है; वह महारभी यावत् महा इच्छानाला है. तथापि उत्तर दिशाकी नरकमें उत्पन्न होता है. शुक्रपत्नी, स्वल्प ससारी भविष्यमें सुलभमोधि होता है

नोट—आस्तिक सम्यग्वादी होनेपर क्या नरकमें जाते हैं? (उत्तर)—प्रथम मिथ्यात्वावस्थामें नरकायुष बांधा हो, पीछेसे अच्छा सत्सग होनेसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति हुई हो. वह जीव नरकमें उत्तर दिशामें जाता है. परन्तु शुक्रपत्नी होनेसे भविष्यमें सुलभमोधि होता है.

इसी प्रकार अक्रियावादीयोंका मिथ्यामत, और क्रियावादीयोंका सम्यक्त्वका जानकार हो, उत्तम धर्मकी अन्दर

फाल कर घोर अधकार व्याप्त धरणीतले नरकगतिको प्राप्त होता है

वह नरकावास अन्दरसे वर्तुल (गोलकार) बाहरसे चोरस है जमीन छुरी-अस्तरे जैसी तीक्ष्ण है सदैव महा अन्धकार व्याप्त, ज्योतिषीयोंकी प्रभा रहित और रौद्र, मांस, चरबी, मेद, पीपपडलसे व्याप्त है श्वान, सर्प, मनुष्यादिक मृत कलेवरकी दुर्गन्धसे भी अधिक दुर्गन्ध दशों दिशामें व्याप्त है स्पर्श बड़ा ही कठिन है. सहन करना बड़ा ही मुश्किल है अशुभ नरक, अशुभ नरकवाला वहापर नारकीके नैरिय किंचित् भी निद्रा-प्रचला करना, सुना, रतिवेदनेका तो स्वप्न भी कहासे होवे ? सदैवके लिये विस्तरण प्रकारकी उज्वल, प्रकृष्ट, कर्कश, कडुक, रौद्र, तीव्र, दुःख सहन कर सके ऐसी नारकी अन्दर नैरिया पूर्वकृत कर्मोंको भोगवते हुवे विचरते है.

जैसे दृष्टान्त—पर्वतका उन्नत शिखरपरसे मूल छेदा हुआ वृक्ष अपने गुरुत्वपनेसे नीचे स्थान खाडे, खाइ, विषम, दुर्गम स्थानपर पडते है, इसी माफिक अक्रियावादी अपने किये हुवे पापकर्मरूप शस्त्रसे पुन्यरूप वृक्षमूलको छेदन कर, अपने कर्मगुरुत्व कर स्वय ही नरकादि गतिमें गिरते है. फिर अनेक जाति-योनिमें परिभ्रमण करता हुआ एक गर्भसे दूसरे गर्भमें सक्रमण करता हुआ दक्षिणदिशागामी नारकी कृष्ण-पत्नी भविष्यकालमें भी दुर्लभबोधि होगा इति अक्रियावादी

(२) क्रियावादी—क्रियावादी आत्माका अस्तित्व मानते हैं. आत्माका हितवादी है. ऐसी उसकी प्रज्ञा है, बुद्धि है. आत्महित साधनरूप सम्यग्दृष्टिपना होनेसे समवादी कहा जाते हैं सर्व पदार्थोंको यथार्थपने मानते हैं सर्व पदार्थोंको द्रव्यास्तिक नयापेक्षामें नित्य और पर्यायास्तिक नयापेक्षासे अनित्य मानते हैं सत्यवाद स्थापन करनेवाले हैं, उन्हींकी मान्यता है कि यह लोक, परलोक अरिहत, चक्रवर्ती, गलदेव, वासुदेव है अस्तित्व सुकृतका फल है, दुष्कृतका भी फल है, पुण्य है, पाप है. परलोकमें जीव उत्पन्न होते हैं पापकर्म करनेसे नरकमें और पुण्यकर्म करनेसे देवलोकमें उत्पन्न भी होते हैं. नरकसे यावत् सिद्धि तक सर्व स्थान अस्तिभाव है. ऐसी जिसकी प्रज्ञा, दृष्टि, छन्दा, राग. मान्यता है; वह महारभी यावत् महा इच्छावाला है. तथापि उत्तर दिशाकी नरकमें उत्पन्न होता है. शुक्लपक्षी, स्वल्प ससारी भविष्यमें सुलभयोधि होता है

नोट:—आस्तिक सम्यग्वादी होनेपर क्या नरकमें जाते हैं? (उत्तर)—प्रथम मिथ्यात्वावस्थामें नरकायुष बांधा हो, पीछेमें अन्धा सत्सग होनेसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति हुई हो. वह जीव नरकमें उत्तर दिशामें जाता है. परन्तु शुक्लपक्षी होनेसे भविष्यमें सुलभयोधि होता है.

इसी प्रकार अक्रियावादीयोंका मिथ्यामत, और क्रियावादीयोंका सम्यक्त्वका जानकार हो, उत्तम धर्मकी अन्दर

काल कर घोर अधकार व्याप्त धरणीतले नरकगतिको प्राप्त होता है

वह नरकावास अन्दरसे वर्तुल (गोलाकार) बाहरसे चोरस है जमीन छुरी-अस्तरे जैमी तीक्ष्ण है. मदैव महा अन्धकार व्याप्त, ज्योतिषीयोंकी प्रभा रहित और रौद्र, मांस, चरवी, मेद, पीपपडलसे व्याप्त है श्वान, सर्प, मनुष्यादिक मृत कलेवरकी दुर्गन्धसे भी अधिक दुर्गन्ध दशों दिशाम व्याप्त है. स्पर्श बडा ही कठिन है सहन करना बडा ही मुश्किल है. अशुभ नरक, अशुभ नरकजाला बहापर नारकीके नैरिय किंचित् भी निद्रा-प्रचला करना, सुना, रतिवेदनेका तो स्वप्न भी कहासे होवे ? सदैवके लिये विस्तरण प्रकारकी उज्वल, प्रकृष्ट, कर्कश, कडुक, रौद्र, तीव्र, दुःख सहन कर सके ऐसी नारककी अन्दर नैरिया पूर्वकृत कर्मोंको भोगवते हुये विचरते है

जैसे दृष्टान्त—पर्वतका उन्नत शिखरपरसे मूल छेदा हुआ वृक्ष अपने गुरुत्वपनेसे नीचे स्थान खाडे, खाइ, विषम, दुर्गम स्थानपर पडते है, इसी माफिक अक्रियावादी अपने किये हुवे पापकर्मरूप शस्त्रसे पुन्यरूप वृक्षमूलको छेदन कर, अपने कर्मगुरुत्व कर स्वय ही नरकादि गतिमें गिरते है. फिर अनेक जाति-योनिमें परिभ्रमण करता हुआ एक गर्भसे दूसरे गर्भमें सक्रमण करता हुआ दक्षिणदिशागामी नारकी कृष्ण-पत्नी भविष्यकालमें भी दुर्लभबोधि होगा. इति अक्रियावादी

(२) क्रियावादी—क्रियावादी आत्माका अस्तित्व मानते हैं. आत्माका हितवादी है. ऐसी उसकी प्रज्ञा है, बुद्धि है. आत्महित साधनरूप सम्यग्दृष्टिपना होनेसे समवादी कहा जाते हैं. सर्व पदार्थोंको यथार्थपने मानते हैं. सर्व पदार्थोंको द्रव्यास्तिक नयापेक्षामे नित्य और पर्यायाम्तिक नयापेक्षासे अनित्य मानते हैं. सत्यवाद स्थापन करनेवाले हैं, उन्हींकी मान्यता है कि यह लोक, परलोक अरिहत, चक्रवर्ती, जलदेव, वासुदेव है. अस्तिरूप मुक्तका फल है, दुष्कृतका भी फल है, पुण्य है, पाप है. परलोकमें जीव उत्पन्न होते हैं. पापकर्म करनेसे नरकमें और पुण्यकर्म करनेसे देवलोकमें उत्पन्न भी होते हैं. नरकसे यावत् सिद्धि तक सर्व स्थान अस्तिभाव है. ऐसी जिसकी प्रज्ञा, दृष्टि, छन्दा, राग, मान्यता है; वह महारभी यावत् महा इच्छावाला है. तथापि उत्तर दिशाकी नरकमें उत्पन्न होता है. शुक्लपची, स्वल्प ससारी भविष्यमें सुलभभोगि होता है.

नोट —आस्तिक सम्यग्वादी होनेपर क्या नरकमें जाते हैं? (उत्तर)—प्रथम मिथ्यात्वावस्थामें नरकायुष चांधा हो, पीछेमे अच्छा सत्सग होनेसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति हुई हो. वह जीव नरकमें उत्तर दिशामें जाता है. परन्तु शुक्लपची होनेसे भविष्यमें सुलभभोगि होता है.

इसी प्रकार अक्रियावादीयोंका मिथ्यामत, और क्रियावादीयोंका सम्यक्त्वका जानकार हो, उत्तम धर्मकी अन्दर

रुचिवान् वने, तीर्थंकर भगवानने फरमाये हुये पवित्र धर्ममें दृढ श्रद्धा रखे जीनादि पदार्थका स्वरूपको निर्णयपूर्वक समझे हेय, ज्ञेय और उपादेयका जानकार बने यह प्रथम सम्यक्त्व प्रतिमा चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीनोंको होती है सम्यक्त्वकी अन्दर देवादि भी चोभ नहीं कर सके निरति-चार सम्यक्त्वका आराधन करे परन्तु नवकारसी आदि व्रत प्रत्याख्यान जो जानता हुआ भी मोहनीय कर्मके उदयसे प्रत्याख्यान करनेको असमर्थ है. इति प्रथम सम्यक्त्व प्रतिमा

(२) दूसरी व्रत प्रतिमा—जो पूर्वोक्त धर्मकी रुचि-वाला होते हैं, और शील-आचार, व्रत-नवकारसी आदि दश प्रत्याख्यान, गुणव्रत, निरमण, प्रत्याख्यान, पौषध (अवैपारादि), ज्ञानादि गुणोंसे आत्माको पुष्ट बनानेको उपवास कर सकते परन्तु प्रत्याख्यानी मोहनीय कर्मोदयसे सामायिक और दिशावगासिक करनेको असमर्थ है इति दूसरी प्रतिमा.

(३) सामायिक प्रतिमा—पूर्वोक्त सम्यक्त्वरुचि व्रत, प्रत्याख्यान, सामायिक, दिशावगासिक सम्यक् प्रकारसे पालन कर सके परन्तु अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावास्या, (कल्याणक तिथि) प्रतिपूर्णा पौषध करनेमें असमर्थ है इति तीसरी सामायिक प्रतिमा

(४) चौथी पौषध प्रतिमा—पूर्वोक्त धर्मरुचिमें यावत् प्रतिपूर्णा पौषध कर सके, परन्तु एक रात्रिकी जो प्रतिमा (एक

रात्रिका कायोत्सर्ग करना) यहा पाच गोल धारण करना पडता है वह करनेमें अममर्थ है यह प्रतिमा जघन्य एक दोय, तीन रात्रि, यात्रत् उत्कृष्ट न्यार माम तककी है. इति चौथी पाँपघ प्रतिमा

(५) पाचमी एक रात्रिकी प्रतिमा—पूर्वोक्त यावत् पाँपघ पाल कर और पाच गोल जो—(१) स्नान मज्जनका त्याग (२) रात्रिभोजन करनेका त्याग (३) घोरीकी एक चाम राट बारा घरे. (४) दिनको कुशीलका त्याग (ब्रह्मचर्य पालन करे) (५) रात्रि ममय मर्यादा करे. इम पाँच नियमोंको पालन करे इति पाचमी प्रतिमा उत्कृष्ट पाच मास घरे

(६) छठी ब्रह्मचर्य प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व कर्म करते हुये मर्यत ब्रह्मचर्यत्रत पालन करे इति छठी ब्रह्मचर्य प्रतिमा. छ मास धारण करे.

(७) सचित्त प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व पालन कर और सचित्त वस्तु खानेका त्याग करे, यावत् सात मास करे इति सातवी सचित्त प्रतिमा.

(८) आठमी आरंभ प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व नियम पालन करे और अपने हाथोंसे आरंभ न करे यावत् आठ मास करे. इति आठवी आरंभ प्रतिमा.

(९) नौवी सारभ प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व नियम पाले, और अपने वास्ते आरंभमादि करे, यह पदार्थ अपने काममें

नहीं आने. अर्थात् त्याग करे. यावत् नव मास करे इति नौवीं सारंभ प्रतिमा.

(१०) प्रसारभ प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व नियम पाले और प्रतिमाधारीके निमित्त अगर कोई आरभ कर थशनादि देवे, तोभी उसको लेना नहीं कल्पै. विशेष इतना है कि इस प्रतिमाका आराधन करनेवाले श्रावक खुरमुडन-शिरमुडन कराके हजामत करावे, परन्तु शिरपर एक शिरा (चोटी) रखावे ताके साधु श्रावककी पहिचान रहे अगर कोई करम्बगाला आके पृछे उस पर प्रतिमाधारीको दो मापा बोलनी कल्पै अगर जानता हो तो कहेकि मैं जानता हु और न जानता हो तो कहे कि मैं नहीं जानु ज्यादा बोलना नहीं कल्पै यावत् दश मास धरे. इति दशवी प्रतिमा.

(११) श्रमणभूत प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व क्रिया साधन करे खुरमडन करे. स्वशक्ति शिरलोचन करे साधुके माफिक वस्त्र, पात्र रखे, आचार विचार साधुकी माफिक पालन करते हुवे चलता हुवा इर्यासमिति सयुक्त च्यार हस्त प्रमाण जमीन देखके चले अगर चलते हुए राहस्ते उस प्राणी देखें तो मत्त करे जीव हो तो अपने पाओंको उचा नीचा तिरछा रखता हुवा अन्य मार्गमें प्राक्रम करे भिच्चा के लिये अपना पेजवन्ध मुक्त न होनेसे अपने न्यातके घरोंकी भिच्चा करनी कल्पै इसमें भी जिस घरपे जल है, पूर्वे चावल तैयार हो और दाल तैयार पीछेसे होती रहे, तो चावल लेना कल्पै, दाल

नहीं कल्पे अगर पूर्वे दाल तैयार हुइ हो, तो दाल लेना कल्पे, तथा पूर्व दोनों तैयार हुआ हो, तो दोनों लेना कल्पे. और पूर्वे कमी तैयार न हुवा हो तो दोनों लेना नहीं कल्पे. जिस कुलमें भिन्ना निमित्त जाते है वहांपर कहना चाहिये कि—मैं प्रतिमाधारक श्रावक हू, अगर उस प्रतिमाधारी श्रावकको देख कोइ पूछे कि—तुम कौन हो ? तब उत्तर देना चाहिये, मैं इग्यारमी प्रतिमाधारक श्रावक हू. इसी माफिक उत्कृष्ट इग्यार मास तक प्रतिमा आराधन करे, इति.

नोट—प्रथम प्रतिमा एक मासकी है एकान्तर तपश्चर्या करे दूसरी प्रतिमा उत्कृष्ट दोय मासकी है. छठ छठ पारणा करे. एव तीसरी प्रतिमा तीन मासकी, तीन तीन उपवासका पारणा करे चौथी प्रतिमा च्यार मासकी—यावत् इग्यारवी प्रतिमा इग्यारा मासकी और इग्यार इग्यार उपवासका पारणा करे

आनन्दादि १० श्रावकोंको इग्यारा प्रतिमा बहानेमें साठे पांच वर्षकाल लगाथा. इसी माफिक तपश्चर्याभी करीथी.

प्रथमकी च्यार प्रतिमा सामान्य रूपसे गृहमासमें साधन होती है. पांचवी प्रतिमा कार्तिकशेठने १०० वार बहन करीथी. प्रायः इग्यारवी प्रतिमा बहनकर आयुष्य अधिक हो तो दीक्षा ग्रहन करते है. इति

इति छट्टा अध्ययनका सक्षिप्त सार

(७) सातवा भिक्षुप्रतिमा नामका अध्ययन.

(१) प्रथम एक मासकी भिक्षु प्रतिमा. (२) दो मासकी भिक्षु प्रतिमा. (३) तीन मासकी भिक्षु प्रतिमा (४) चार मासकी भिक्षु प्रतिमा (५) पाच मासकी भिक्षु प्रतिमा. (६) छे मासकी भिक्षु प्रतिमा. (७) सात मासकी भिक्षु प्रतिमा. (८) प्रथम सात अहोरात्रिकी आठमी भिक्षु प्रतिमा. (९) दूसरी सात अहोरात्रिकी नौवीं भिक्षु प्रतिमा (१०) तीसरी सात अहोरात्रिकी दशमी भिक्षु प्रतिमा (११) अहोरात्रिकी इग्यारवीं भिक्षु प्रतिमा (१२) एक रात्रिकी बारहवीं भिक्षु प्रतिमा

(१) एक मासकी प्रतिमा स्वीकार करनेवाले मुनिको एक मास तक अपने शरीरकी चिंता (सरक्षण) करना नहीं कल्पै. जो कोई देव, मनुष्य, तिर्यक, सबन्धी परीपह उत्पन्न हो, उसे सम्यक् प्रकारसे सहन करना चाहिये

(२) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिको प्रतिदिन एक दात भोजनकी, एक दात आहारकी लेना कल्पै. वह भी अज्ञात कुलसे शुद्ध निर्दोष लेना, आहार ऐसा लेना कि जिसको बहुतसे दुपद, चतुष्पद, श्रमण, ब्राह्मण, अतिथि, कृपण, भगा भी नहीं इच्छता हो, वह भी एकला भोजन करता हो वहासे लेना कल्पै परन्तु दोग, तीन, चार, पांच या बहुतसे भोजन करते हो, वहांसे लेना नहीं

कल्पै. तथा गर्भवतीके लिये, बालकके लिये किया हुआ भी नहीं कल्पै जो स्त्री अपने बच्चेको स्तनपान कराती हो, उन्हके हाथसे भी लेना नहीं कल्पै. दोनों पांव डेलीकी अन्दर हो, दोनों पांव डेलीकी बाहार हो, तो भी भिचा लेना नहीं कल्पै. अगर एक पाव बाहार, एक पाव अन्दर हो तो भिचा लेना कल्पै.

(३) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुये मुनिको गौचरी निमित्ते दिनका आदि, मध्यम और अन्तिम-ऐमे तीन काल कल्पै. जिसमें भी जिस कालमें भिचाको जाते हैं, उसमें भिचा मिले, न मिले तो इतनेमें ही मन्तोप रखे. परन्तु शेषकालमें भिचाको जाना नहीं कल्पै.

(४) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुये मुनिको छे प्रकारसे गौचरी करनी कल्पै—(१) पेला सम्पूर्ण सदुकके आकार च्यारों कौनोंके घरोंसे भिचा ग्रहन करे (२) अदपेला, एक तर्फके घरोंसे भिचा ग्रहन करे. (३) गौमूरिका—एक इधर एक उधर घरोंमे भिचा ग्रहन करे. (४) पतगीया—पतगकी मासिक एक घर किसी महोलाका तो दूसरा किमी महोलाका घरसे भिचा ग्रहन करे. (५) सखावर्तन—एक घर उचा, एक घर नीचासे भिचा ग्रहन करे (६) सम—सीधा-पक्तिसर घरोंकी भिचा करे.

(५) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुये मुनिको

जहांपर लोग जान जावे कि यह प्रतिमाधारी मुनि हैं, तो उहा एक रात्रिसे अधिक नहीं ठहर सके, अगर न जाने तो दोय रात्रि ठहर सके इसीसे अधिक जितने दिन ठहरे उतना ही छेद या तपका प्रायश्चित्त होते है यहापर ग्रामादि अपेक्षा है, न कि जगलकी

(६) मासिक प्रतिमा स्वीकार कीये हुवे मुनिकों च्यार प्रकारकी भाषा बोलनी कल्पै. (१) याचनी—अशनादिककी याचना करना (२) पृच्छना—प्रश्नादि तथा मार्गका पूछना. (३) अणवणि—गुर्वादिकी आज्ञा तथा मकानादिकी आज्ञाका लेना (४) पूछा हुवा प्रश्नादिका उत्तर देना

(७) मासिक प्रतिमा स्वीकार कीये हुवे मुनिको तीन उपासरोकी प्रतिलेखना करना कल्पै (१) आराम—बगी-चाँके बगलादिके नीचे (२) मडप—छत्री आदि विकट स्थानोंमें. (३) वृक्षके नीचे

(८) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों उक्त तीनों उपासरोकी आना लेना कल्पै

(९) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों उक्त तीनों उपासरोमें निवास करना कल्पै

(१०) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों तीन सथारा (विद्वाना) कि प्रतिलेखना करना कल्पै (१)

पृथ्वीशिलाका पट. (२) काष्ठका पाट. (३) यथा तैयार किया हो वैसे.

(११) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनि जिस मकानमें ठहरे हो, वहापर कोई स्त्री तथा पुरुष आया हो तो उसके लिये मुनिको उस मकानसे नीकलना तथा प्रवेश करना नहीं कल्पै. भावार्थ—कोई पुन्यवान् आया हो, उमको सन्मान देना या दानके लिये उस मकानसे अन्य स्थानमें नीकलना तथा अन्य स्थानमें प्रवेश करना नहीं कल्पै

(१२) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनि ठहरा हो उसी उपाश्रयमें अग्नि प्रज्वलित हो गई हो तो भी उस अग्निके भयसे अपना शरीरपर ममत्त्वभावके लिये वहासे नीकलना तथा अन्य स्थानमें प्रवेश करना नहीं कल्पै. अगर कोई गृहस्थ मुनिको देखके विचार करे कि इस अग्निमें यह मुनि जल जायगा. मैं इसको निकालु ऐसा विचारसे मुनिकी बाह पकडके निकाले तो उस मुनिको नहीं कल्पै कि उस निकालनेवाले गृहस्थको पकडके रोक रखे. परन्तु मुनिको कल्पै कि आप इर्यासमिति महित चलता हुना इस मकानसे निकल जाये

भावार्थ—प्रतिमाधारी मुनि अपने लिये परिपह सहन करे, परन्तु दूसरा अपनेको निकालनेको आया हो, अगर उस समय आप नहीं नीकले, तो आपके निष्पन्न उस गृहस्थको

जहाँपर लोग जान जावे कि यह प्रतिमाधारी मुनि है, तो वहा एक रात्रिसे अधिक नहीं ठहर सके, अगर न जाने तो दोय रात्रि ठहर सके इसीसे अधिक जितने दिन ठहरे उतना ही छेद या तपका प्रायश्चित होते है यहाँपर ग्रामादि अपेक्षा है, न कि जगलकी

(६) मासिक प्रतिमा स्वीकार कीये हुवे मुनिकों च्यार प्रकारकी भाषा बोलनी कल्पै (१) याचनी—अशनादिककी याचना करना. (२) पृच्छना—प्रश्नादि तथा मार्गका पूछना (३) अणवणि—गुर्नादिकी आज्ञा तथा मकानादिकी आज्ञाका लेना (४) पूछा हुवा प्रश्नादिका उत्तर देना

(७) मासिक प्रतिमा स्वीकार कीये हुवे मुनिको तीन उपासरोकी प्रतिलेखना करना कल्पै (१) आराम—बगी-चोंके बगलादिके नीचे. (२) मडप—छत्री आदि विकट स्थानोमें (३) वृक्षके नीचे

(८) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों उक्त तीनों उपासरोकी आज्ञा लेना कल्पै.

(९) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों उक्त तीनों उपासरोमें निवास करना कल्पै

(१०) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों तीन सथारा (विछाना) कि प्रतिलेखना करना कल्पै (१)

पृथ्वीशिलाका पट. (२) काष्ठका पाट. (३) यथा तैयार किया हो वैसा.

(११) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनि जिस मकानमें ठहरे हो, वहापर कोई स्त्री तथा पुरुष आया हो तो उसके लिये मुनिको उस मकानमे नीकलना तथा प्रवेश करना नहीं कल्पै. भावार्थ—कोई पुन्यवान् आया हो, उसको सन्मान देना या द्वापके लिये उस मकानसे अन्य स्थानमें नीकलना तथा अन्य स्थानमें प्रवेश करना नहीं कल्पै

(१२) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनि ठहरा हो उसी उपाश्रयमें अग्नि प्रज्वलित हो गई हो तो भी उस अग्निके भयसे अपना शरीरपर ममत्प्रभापके लिये वहामे नीकलना तथा अन्य स्थानमें प्रवेश करना नहीं कल्पै. अगर कोई गृहस्थ मुनिको देखके विचार करे कि इस अग्निमें यह मुनि जल जायगा मैं इसको निकालु, ऐमा विचारसे मुनिकी बाह पकडके निकाले तो उस मुनिको नहीं कल्पै कि उस निकालनेवाले गृहस्थको पकडके रोक रखे. परन्तु मुनिको कल्पै कि आप इर्यासमिति सहित चलता हुवा इस मकानसे निकल जाये

भावार्थ—प्रतिमाधारी मुनि अपने लिये परिपह सहन करे, परन्तु दूसरा अपनेको निकालनेको आया हो, अगर उस समय आप नहीं नीकले, तो आपके निष्पन्न उस गृहस्थकीं

भगवान् वीरप्रभुके पाच हस्तोत्तर नक्षत्र (उत्तरा फाल्गुनि नक्षत्र था) (१) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें दशवा देवलोकमे च-
वके देवानदा नाक्षत्रीकी कुक्षिमें अतार धारण किया. (२)
हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानका सहरण हुवा, अर्थात् देवानदाकी
बुझसे हरिणगमेपी देवताने त्रिशलादे राणीकी बुझमें सहरण
कीया (३) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानका जन्म हुवा
(४) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानने दीक्षा धारण करी
(५) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानको केन्द्रज्ञान उत्पन्न हुवा
यह पांच कार्य भगवानके हस्तोत्तरा नक्षत्रमें हुवा है और स्वा-
ति नक्षत्रमे भगवान् वीर प्रभु मोक्ष पधारेथे शेषाधिकार पर्यु-
पणाकल्प अर्थात् कल्पघ्नमें लिखा है श्रीभद्रबाहुस्वामी यह
दशाश्रुत स्कन्ध रचा है. जिसका आठवा अध्यायन रूप कल्पघ्न
है. उमके अर्थरूप भगवान वीरप्रभु बहुतमे माधु, साध्वीयों,
श्रावक, श्राविका, देव, देवीयोंके मध्यमे निरानमान हो फर-
माया है उपदेश किया है. विशेष प्रकारमे प्ररुपणा करते हुवे
बारवार उपदेश किया है.

इति आठवा अध्यायन

[९] नौवा अध्यायन

महा मोहनीय कर्म बन्धके ३० स्थान है.

चपानगरी, पूर्णभद्रोद्यान, कोणिकराजा, जिसकी धा-
रिणी राणी, उम नगरीके उद्यानमें भगवान् वीर प्रभुका आग-

मन हुआ, राजा कोणिक सपरिवार न्यार प्रकारकी सेना सहित तथा नगरीके लोक भगवानको उन्दन करनेको आये भगवानने विचित्र प्रकारकी धर्मदेशना दी परिषद देशनामृतका पान कर पीछे गमन कीया

भगवान् अपने माधु, साध्वीयोंको आमत्रण कर कहते हुयेकि—हे आर्यो ! महा मोहनीय कर्मबन्धके तीस स्थान अगार पुरुष या स्त्रीयों तारतार इसका आचरण करनेसे समाचरते हुये महामोहनीय कर्मका बन्ध करते हैं. वही तीस स्थान में आज तुमको सुनाता हु, ध्यान देके सुनो—

(१) त्रस जीवोंको पाणीमें डुगा हुआ के मारता है वह जीव महामोहनीय कर्म उपार्जन करता है. (२) त्रस जीवोंका श्वासोश्वास बन्धकर मारनेसे—(३) त्रस जीवोंको अग्नि या धूमसे मारनेसे—(४) सर्व अगमें मस्तक उत्तम अग है, अगर कोई मस्तकपर घाव कर मारता है, वह जीव महा मोहनीय कर्म उपार्जन करता है. (५) मस्तकपर चर्म चीटके जीवोंको मारता है, वह महामोहनीय कर्म उपार्जन करता है. (६) कोई बाजले, गूगे, लूले, लगडे या अज्ञानी जीवोंको फल या दडसे मारे या हांसी, ठट्टा, मशकरी करते है, वह महा मोहनीय कर्म बान्धता है. (७) जो कोई आचारी नाम धराता हुवे, गुप्तपणे अनाचारको सेवन करे, अपना अनाचार गुप्त रखनेके लीये असत्य बोले तथा वीतरागके वचनोंको गुप्त रख आप उत्सृजोंकी प्ररूपणा करे, तो महा मोहनीय कर्म बांधे.

(८) अपने किया हुआ अपराध, अनाचार, दूसरेके शिरपर लगा देनेसे—(९) आप जानत है कि यह बात जटी है तौ भी परिपत्की अन्दर घँठके मिश्र भाषा बोलके क्लेशकी वृद्धि करनेसे—(१०) राजा अपनी मुख्त्यारी प्रधानको तथा श्रेष्ठ मुनिमको मुख्त्यारी देदी हो, यह प्रधान, तथा मुनिम उस राजा तथा श्रेष्ठकी दोलत-धन तथा स्त्री आदिकों अपने स्वाधीन करके राजा तथा श्रेष्ठका विधासघात कर निराधार बना उन्हका तिरस्कार करे, उसके कामभोगोंमें अन्तराय करे, उसको प्रति-कूल दुःख देवे, रुदन करावे, इत्यादि तो महामोहनीय कर्म उपार्जन करे (११) जो कोई बाल ब्रह्मचारी न होनेपरभी लोगोंमें बालब्रह्मचारी कहाता हुआ स्त्रीभोगोंमें मूर्च्छित बन स्त्रीसग करे, तो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे (१२) जो कोई ब्रह्मचारी नहीं होनेपरभी ब्रह्मचारी नाम धराता हुआ स्त्रियोंके कामभोगमें आसक्त, जैसे गायोंके टोलेमें गर्दभकी माफिक ब्रह्मचारीओंकी अन्दर साधुके रूपको लजित-शरमिदा करनेवाला अपना आत्माका अहित करनेवाला, बाल, अज्ञानी, मायासयुक्त, मृषावाद सेवन करता हुआ, कामभोगकी अभिलाषा रखता हुआ महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे (१३) जो कोई राजा, श्रेष्ठ तथा गुर्वादिकी प्रशसासे लोगोंमें मानने पूजने योग्य बना है, फिर उसी राजा, श्रेष्ठ तथा गुर्वादिकके गुण, यश कीर्तिको नाश करनेका उपाय करे, अर्थात् उन्होंसे प्रति कूल बर्ताव करे, तो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे. (१४)

जो कोई अनीश्वरको राजा अपना राज्य लक्ष्मी दे के तथा नगरके लोक मिलके उसको मुखीया (पच) बनाया हो फिर राज्य-लक्ष्मी आदिका गर्व करता हुआ उस लोगोंको दडे मारे, मरगावे तथा उ-होंका आहित करे, तो महा मोहनीय कर्म बान्धे. (१५) जैसे सर्पिणी इडा उत्पन्न कर आपही उ-सीका भक्षण करे, इसी माफिक स्त्री भर्तारकों मारे, सेनापति राजाकों मारे, शिष्य गुरुको मार, तथा विश्वासघात करे, उ-न्होंसे प्रतिकूल बरते तो महा मोहनीय (१६) जो कोई देशा धिपति राजाकी घात करनेकी इच्छा करे तथा नगरशेठ आदि महा पुरुषोंकी घात चिन्तवे तो महा मोहनीय -(१७) जैसे समुद्रमें द्वीप आधारभूत होते है, इसी माफिक बहुत जीवोंका आधारभूत ऐमा बहुतमें देशोंका राजाकी घात करनेकी इच्छा-वाला जीव महामोहनीय (१८) जो कोई जीव परम वैराग्यको प्राप्त हो, सुसमाधिगन्त साधु बनना चाहे अर्थात् दीक्षा लेना चाहे, उसकों कुयुक्तियोंसे तथा अन्य कारणोंसे चारित्रसे परिणाम शीतल करवा दे, तो महा मोहनीय. (१९) जो अनत ज्ञान-दर्शनधारक सर्वज्ञ भगवानका अवर्यवाद बोले तो महा मोहनीय (२०) जो सर्वज्ञ भगवत तीर्थकरोंने निर्देश किया हुआ स्याद्वादरूप भवतारक धर्मका अवर्य-वाद बोले, तो महामोहनीय. (२१) जो आचार्य महा-राज, तथा उपाध्यायजी महाराज, दीक्षा, शिक्षा तथा सूत्रज्ञा-नके दातार, परमोपकारीके अपयश करे, हीलना, निंदा, खी-

सना करे, वह बाल अज्ञानी महा मोहनीय—(२२) जो आचार्योपाध्यायके पास ज्ञान, ध्यान कर आप अभिमान, गर्वका मारा उमी उपकारी महा पुरुषोंकी सेवा भक्ति, विनय, वैयावच, यश कीर्ति न करे तो महा मोहनीय (२२) जो कोई अविद्वुत होनेपरभी अपनी तारीफ बढ़ाने कारण लोगोंसे कहैकि— मैं बहुश्रुत अर्थात् सर्व शास्त्रोंका पारगामी हू, ऐसा अमद्वाद वदे तो महा मोहनीय. (२४) जो कोई तपस्वी होनेका दावा रखे, अर्थात् अपना कृश शरीर होनेमे दुनीयांको कहै कि मैं तपस्वी हू—तो महा मोह (२५) जो कोई साधु शरीरादिसे सुदृढ सहननवाला होनेपरभी अभिमानके मारे विचारैकि— मैं ज्ञानी हू, बहुश्रुत हू, तो ग्लानादिकी वैयावच क्यों करे ? इसनेभी मेरी वैयावच नहीं करीथी, अथवा ग्लान, तपस्वी, बुद्धादिकी वैयावच करनेका कसूल कर फिर वैयावच न करे तो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे (२६) जो कोई चतुर्विध सधमें क्लेशवृद्धि करना, छेद, भेद डलाना, फुट पाड देना—ऐसा उपदेश दे कथा करे कराये तो महा मोहनीय—(२७) जो कोई अधर्मकी प्रहृष्टता करे तथा यत्र, मत्र, तत्र, वशीकरण प्रयुजे ऐसे अधर्ममर्धक कार्य करे, तो महामोहनीय (२८) जो कोई इस लोक—मनुष्य सन्धी परलोक—देवता मन्धी, कामभोगसे अतृप्त अर्थात् सदैव कामभोगकी अभिलाषा रखे, जहाँ मरणावस्था आगइ हो, वहातकभी कामाभिलाषा रखे, तो महा मोहनीय (२९) जो कोई देवता महान्द्वि, ज्योति, कान्ति, महाबल, महायशका धर्मी देव है, उसका अवर्णवाद बोले,

निन्दा करे, कथवा कोई त्रत पालके देवता हुआ है, उमका
अवर्णनाद गले तो, महामोहनीय. (३०) जिसके पास देवता
नहीं आता है, जिन्होंने देवताओंको नहीं देखा हो और अपनी
पूजा, प्रतिष्ठा मान बढ़ानेके लीये जनसमूहके आगे कहेकि-
न्यार जातिके देवताओंमे अमृक जातिका देवता मेरे पास
आता है, तो महामोहनीय कर्म उपार्जन करे.

यह ३० कारणोंमे जीव महा मोहनीय कर्म उपार्जन
(बन्ध) करता है नास्ते मुनिमहाराज इष कारणोंको सम्यक्
प्रकारमे जानके परित्याग करे. अपना आत्माका हितार्थ शुद्ध
चारित्रका रप करे अगर पूर्वावस्थामें इम मोहनीय कर्म बन्धके
स्थानोंको सेवन कीया हो, उम कर्मक्षय करनेको प्रयत्न करे.
आचरन्त, गुणन्त, शुद्धात्मा चान्त्यादि दश प्रकारका प
वित्र धर्मका पालन कर पापका परित्याग, जैमा सर्प काचलीका
त्याग करता है, इमी माफिकु को इम लोक और परलोकमे
कीर्तिभी उभी महा पुरुषोंकी होती है कि जिन्होंने ज्ञान, दर्शन
चारित्र, तप कर इम मोहनरेन्द्रका मूलमे पराजय कीया है
अहो शूरवीर ! पूर्ण पराक्रमधारी ! तुमारा अनादि कालक
परम शत्रु जो जन्म, जरा, मृत्युरूप दुःख देनेवालाका जब्दी
दमन करो. जिमसे चेतन अपना निवस्थानपर गमन करत
हुवेमें कोई विघ्न न करे अर्थात् शाश्वत सुखोंमे विराजमान
होवे ऐसा फरमान सर्वज्ञका है.

॥ इति नौषा अध्ययन समाप्त ॥

(१०) दशवा अध्ययन.

नौ निदानाधिकार

राजगृह नगर, गुणशीलोद्यान, श्रेणिक राजा, चेलणा राणी, इस सबका वर्णन जैसा उग्रदाइजी सूत्रके माफिक समझना

एक समय राजा श्रेणिक स्नान मञ्जन कर, शरीरको चन्दनादिकका लेपन किया, कठकी अन्दर अच्छे सुगन्धिदार गृष्पोंकी मालाको धारण कर सुवर्ण आदिमे मडित, मणि आदि रत्नोंसे जडित भूषणोंको धारण किये, हाथोंकी अंगुलियोंमें मुद्रिका पहनी, कम्मरकी अन्दर कदोरा धारण किया है, मुगटमे मस्तक सुशोभनीक बना है, इत्यादि अच्छे रत्न भूषणोंसे शरीरको कल्पवृक्षकी माफिक अलंकृत कर, शिरपर कौरटवृक्षकी माला संयुक्त छत्र धरायता हुआ, जैसे ग्रहगण, नक्षत्र, तारोंके सुपरिवारसे चन्द्र आकाशमें शोभायमान होता है इसी माफिक भूमिके भूषणरूप श्रेणिक नेन्द्र, निषका दर्शन लोगोंको परमप्रिय है यह एक समय बाहारकी आस्थानशालाकी अन्दर आ कर राजयोग्य सिंहासनपर बैठके अपने अनुचरोंको बुलवायके ऐसा आदेश करता हुआ—
तुम इस राजगृह नगरकी बाहार आराममें जावो, जहां स्त्री-पुरुष क्रीडा करते हो, उद्यान जहां नानाप्रकारके वृक्ष, पुष्प, पत्रादि होते हैं कुम्भकारादिकी शाला, यक्षादिके देवालय,

समाके स्थानोंमें पाणीके पर्यकी शाला, करियाणकी शाला, बैपारीयोंकी दुकानोंमें, रथोंकी शालाओंमें, तुनादिकी शालामें, सुतारोंकी शालामें, तुनारोंकी शालामें, इत्यादि स्थानोंमें जाके कहो कि—राजा श्रेणिक (अपरनाम भमसार) की यह आज्ञा है कि श्रमणभगवन्त वीरप्रभु पृथ्वीमडलको पवित्र करते हुये, एक ग्रामसे दूसरे ग्राम विहार करते हुये, सुखे सुखे तप-सयमकी श्रन्दर अपनी आत्माको भावते हुये, यहाँपर पधार जावे तो तुम लोग उन्हींको बडा आदरसत्कार करके स्थानादि जो चाहिये उन्हींकी आज्ञा दो, भक्ति करो, आठमे भगवान् पधारनेको सुश रघर राजा श्रेणिकको शीघ्रता पूर्ण देना, ऐसा हुकम राजा श्रेणिकका है.

आदेशकारी पुरुषों इस श्रेणिकराजाका हुकमको मचिनय सादर कर—कमलोंसे अपना गिरपर चढाके बोलेकि—हे घराधिप ! यह आपका हुकम मैं शीघ्रता पूर्णक सार्थक करुगा. ऐसा कहके वह कूटम्भीक पुरुष राजगृह नगरके मध्य भाग होके नगरकी बाहार जाके जो पूर्वोक्त स्थानोंमें राजा श्रेणिकका हुकमकी उद्घोषणा कर शीघ्रतासे राजा श्रेणिकके पास आके आज्ञाको सुप्रत करदी

उसी समय भगवान् वीरप्रभु, जिन्होंका धर्मचक्र आकाशमें चल रहा है, चौदा हजार मुनियों, छत्तीस हजार साध्वियों कोटिगमे देव-देवीयोंके परिवारमें भूमडलको पवित्र करते हुये राजगृह नगरके उद्यानमें समवसरण करते हुये

राजगृह नगरके दो, तीन, चार यात्रु बहुतसे राहस्ते-पर लोगोंको खबर मिलनेही बड़े उत्साहमें भगवान्को वन्दन करनेको गये वन्दन नमस्कार कर, सेवा भक्ति कर अपना जन्म पवित्र कर रहेथे

भगवान्को पधारे हुये देखके महत्तर वनपालक भगवान्के पास आया, भगवान्का नाम—गोत्र पूछा और हृदयमें धारण कर वन्दन नमस्कार कीया बादमें वह सत्र वनपालक लोक एकत्र मिल आपसमें कहने लगे—श्रद्धो ! देवाणुप्रिय ! राजा श्रेणिक जिस भगवान्के दर्शनकी अभिलाषा करते थे वह भगवान् आज इस उद्यानमें पधार गये है तो अपनेको शीघ्रता पूर्वक राजा श्रेणिकसे निवेदन करना चाहिये

सब लोक एकत्र मिलके राजा श्रेणिकके पास गये और कहते हुये कि—हे स्वामिन् ! जिस भगवान्के दर्शनकी आपको प्यास थी अभिलाषा करते थे, वह भगवान् वीरप्रभु आज उद्यानमें पधार गये है यह सुनकर राजा श्रेणिक बडाही हर्ष सतोषको प्राप्त हुआ सिंहासनसे उठ जिस दिशामें भगवान् विराजमान थे, उमी दिशामें मात आठ कदम जाके नमोऽर्पुण देके बोला कि—हे भगवान् ! आप उद्यानमें विराजमान हो, मैं यहांपर रहा आपको वन्दन करता हूँ आप स्वीकार करीये

बादमें राजा श्रेणिक उम खबर देनेवालोंका पडाही

आदर, मत्कार कीया और चधाइकी अन्दर इतना द्रव्य दीया कि उन्होंकी कितनी परपरा तक भी खाया न जाय. आदमें उन्होंको विसर्जन किया और नगर गुतीया (कोटवाल) को गुलाबके आदेश करते हुवे कि तुम जागो राजगृह नगर अभ्यतर और गहारमे साफ करवायो, सुगन्धि जलमे छटकाय करवायो, जगे जगेपर पुष्पोंके ढेर लगवायो, सुगन्धि वृषमे नगर व्याप्त कर दो-इत्यादि आज्ञाको शिरपर चढाके कोटवाल अपने कार्यमें प्रवृत्ति करता हुआ

राजा श्रेणिक मैनापतिको गुलाबके आज्ञादि कि तुम जागे-हस्ती, अश्व, रथ और- पैदल-यह चार प्रकारकी मैना तैयार कर हमारी आज्ञा वापस सुप्रत करो. मैनापति राजाकी आज्ञाको सहर्ष स्वीकार, अपने कार्यमें प्रवृत्ति कर आज्ञा सुप्रत कर दी.

राजा श्रेणिक अपने रथकारको गुलाब हुकम किया कि-घार्मिक रथ तैयार कर उत्थानशालामें लाके हाजर करो राजाके हुकमको शिरपर चढाके सहर्ष रथकार रथशालामें जाके रथकी सर्व सामग्री तैयार कर, महलशालामें गया वहामे अच्छे, देखनेमें सुंदर चलनेमे शीघ्र चात्राले युक्त वृषमोंको निकाल, उसको स्नान कराके अच्छे भूरण मूत्र (भूनों) धारण करा रथके साथ जोड, रथ तैयार कर, राजा श्रेणिकसे अर्ज करी कि-हे नाथ ! आपकी आज्ञा माफिक यह रथ तैयार है. रथकारकी यह बात श्रवण कर अर्थात् रथकी मजबूतको देख-

कर राजा श्रेणिक बडाही हर्षको प्राप्त हुआ आप मञ्जन घरमें प्रवेश करके स्नान मञ्जन कर पूर्वकी माफिक अच्छे सुन्दर वस्त्रभूषण धारण कर, कल्पवृक्षकी माफिक उनके जहाँपर चेलणा राखी थी, वहाँपर आया और चेलणा राखीसे कहा कि—हे प्रिया ! आन भ्रमणभगवान् वीरप्रभु गुणशीलोद्यानमें पधारे हुवे है. उन्हाँका नाम—गोत्र श्रवण करनेका भी महाफन है, तो भगवान्को वन्दन करना, नमस्कार करना और श्रीमुखसे देशना श्रवण करना इसके फलका तो कहेना ही क्या ? रास्ने चलो भगवान्को वन्दन-नमस्कार करे, भगवान् महामगल है देवताके चैत्यकी माफिक उपामना करने योग्य है राखी चेलणा यह वचन सुनके बडा ही हर्षको प्राप्त हुई अपने पतिकी आज्ञाको शिरसे चढाके आप मञ्जन घरमें प्रवेश किया वहाँपर स्वच्छ सुगन्धि जलसे सप्रिधि स्नान मञ्जन कर शरीरको चन्दनादिसे लेपन कर (कृतबलिर्कर्म—देवपूजन करी है) शरीरमें भूषण, जैसे पायोंमें नेपुर, कम्मरमें मणिमडित कदोरा, हृदयपर हार, कानोंमें चमकते बुडल, अगुलीयोंमें मुद्रिका, उत्तम खलकती चुडीयें, मादलीये—इत्यादि रत्नजडित भूषणोंसे सुशोभित, जिसके कुडलोंकी प्रभाने वदनकी शोभामे वृद्धि करी है पहने है कान्तिकारी रमणीय, बडा ही सुकुमाल जो नाककी हवासे उड जावे, मकीके जाल जैसे वस्त्र, और भी सुगन्धि पुष्पोंके बने हुने तुरे गजरे, सेहरे, मालानों आदि धारण किया है चर्चित चन्दन कान्तिकारी है दर्शन त्रिन्हाँका, जिसका रूप

विलास आश्चर्यकारी है—इत्यादि अच्छा सुन्दर रूप शृंगार कर बहुतसे दाम-दामीयों नाजर फोजोंके परिवारसे अपने घरमे नीरूले बाहारकी उत्थानशालामें चेलणा राणी आइ है.

राजा श्रेणिक चेलणा राणी माथमें रथपर बैठके राज-गृह नगरके मध्य बाजार होके जैसे उवनाइनी सूत्रमें कोणिक वन्दनाधिकारमें वर्णन किया है इमो माफिक बडे ही आड-म्वरसे भगवानको वन्दन करनेको गये भगवानके छत्रादि अतिशयको देख आप मवारीमे उतर पैदल पांच अभिगम धारण करते हुये जहा भगवान् निराजमान थे वहांपर आये. भगवानको तीन प्रदक्षिणा दे वन्दन-नमस्कार कर राजा श्रेणिकको आगे कर चेलणा आदि मय लोग भगवानकी सेवा-भक्ति करने लगे

उस समय भगवान् वीरप्रभु राजा श्रेणिक, राणी चेलणा आदि मनुष्य परिपद, यति परिपद, मुनि परिपद, देव परिपद, देवी परिपद—इत्यादि १२ प्रकारकी परिपदकी अन्दर विस्तारसे धर्मकथा सुनाइ. विस्तार उवनाइजी सूत्रसे देखे

परिपद भगवान्की मधुर अमृतमय देशना श्रवण कर बटा ही आनन्द पाया, यथाशक्ति त्रत, प्रत्याख्यान कर अपने अपने स्थानकी तर्फ गमन किया. राजा श्रेणिक राणी चेलणा भी भगवानकी भगतारक देशना सुन, भगवान्को वन्दन-नमस्कार कर अपने स्थानपर गमन किया

वहापर भगवान्के समयसरणमें रहे हुये कितनेक साधु-

माघीयों राजा श्रेणिक और राणी चेलणाको देखके उसी साधु माघीयोंके ऐसे अध्ययनाय, मनोगत परिणाम हुआकि—
 अहो ! आश्चर्य ! यह श्रेणिक राजा बड़ा महद्विक, महाशक्ति, महा ज्योति, महाकान्ति, यावत् महासुरके धर्णी, जिन्होंने किया है स्नान मञ्जन, शरीरको उन्न भूपणसे कल्पवृक्ष सदृश बनाया है और चेलणा राणी यहभी इसी प्रकारसे एक शृंगारका घर है जिसके राजा श्रेणिक मनुष्य सवन्धी कामभोग भोगवता हुआ विचर रहा है. हमने देवता नहीं देखे हैं, परन्तु यह प्रत्यक्ष देव देवताकी भाँतिही देख पडते हैं अगर हमारे तप, अनशनादिसयम व्रतरूप तथा ब्रह्मचर्यके फल हो, तो हमभी भविष्यकालमें राजा श्रेणिककी भाँति मनुष्य सवन्धी भोग भोगवते विचरे अर्थात् हमकोभी श्रेणिक राजा सदृश भोगोंकी प्राप्ति हो । इति साधु-माधुवोंने ऐसा निदान (निघाणा) किया

अहो ! आश्चर्य ! यह चेलणा राणी स्नान मञ्जन कर यावत् सर्व अग सुन्दर कर शृंगार किया हुआ, राजा श्रेणिकके साथ मनुष्य सवन्धी भोग भोग रही है हमने देवताको नहीं देखा है, परन्तु यह प्रत्यक्ष देवताकी भाँति भोग भोगवते है इसलिये अगर हमारे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो हमभी भविष्यमें चेलणा राणीके सदृश मनुष्य सवन्धी सुख भोगवते विचरे अर्थात् हमकोभी चेलणा राणीके जैसे भोग

विलास मिले। माध्वीयोंने भगवानके समनसरणमें ऐसा निदान किया था।

भगवान् वीर प्रभु समनसरण स्थित साधु, माध्वीयोंके यह अकृत्य कार्य (निदान) को अपने केवलज्ञान द्वारा जानके साधु, साध्वीयोंको आमरण कर (जुलनाय कर) कहेने लगे—
 अहो ! आर्य ! आज राजा श्रेणिकको देखके तुमने पूर्वोक्त निदान किया है इति माधु. हे साध्वीयों ! आज राणी चेलणाको देख तुमने पूर्वोक्त निदान किया है। इति साध्वीयों हे साधु साध्वीया ! क्या यह बात सची है ? अर्थात् तुमने पूर्वोक्त निदान किया है ? साधु, साध्वीयोंने निष्कपट भावसे कहा—हा भगवान् ! आपका फरमान सत्य है हम लोगोंने ऐसाही निदान किया है

हे आर्य ! निश्चयकर मैंने जो धर्म (द्वादशागरूप) प्ररूपा है, वह सत्य, प्रधान, परिपूर्ण, निःकेवल राग द्वेष रहित शुद्ध-पवित्र, न्यायमयुक्त, सरल, शल्य रहित, सर्व कार्यमें मिद्धि करनेका राहस्ता है, ससारमें पार होनेका मार्ग है, निर्धृतिपुरीको प्राप्त करनेका मार्ग है, अस्थित स्थानका मार्ग है, निर्मल, पवित्र मार्ग है, शारीरिक मानसिक दुःखोंका अन्त करनेका मार्ग है, इस पवित्र राहस्ते चलता हुआ जीव सर्व कायोंको सिद्ध कर लेता है लोकालोकके भावोंको जाना है, सकल कर्मोंसे मुक्त हुवे है. सकल कषायरूप तापसे शीतलिभूत हुना है. सर्व शारीरिक मानसिक दुःखोंका अन्त किया है

इस धर्मकी अन्दर ग्रहण और आमेवन शिक्षाके लीये सावधान साधु, क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण आदि अनेक परीपह-उपसर्गको सहन करते, महान् सुमट कामदेवका परालय करते हुवे सयम मार्गमे निर्मल चित्तमे प्रवृत्ति करे, प्रवृत्ति करता हुआ उग्रकुलमें उत्पन्न हुवा उग्रकुलके पुत्र, महामाता अर्थात् उच जाति की मातावासे जिन्होंका जन्म हुवा है. एव भोगकुलोत्पन्न हुवा पुरुष जो बाहारसे गमन कर नगरमें आते हुवे को तथा नगरसे बाहार जाते हुवे को देखे जिन्होंके आगे महा दासी दास, नोकर चाकर, पैदलके परिवारसे कितनेक छत्र धारण क्रिये है एव भडारी, दडादि, उसके आगे अश्व, अशवार, दोनो पाम हस्ती, पीछे रथ, और रथधर, इसी माफिक बहुतसे हस्ती, अश्व रथ और पैदलके परिवारसे चलते है. जिसके शिरपर उज्ज्वल छत्र हो रहा है, पासमे रहे के श्वेत चामर टोलते है, जिसको देखनेके लीये नर नारीयो घरसे बाहार आते है, अन्दर जाते है, जिन्होंकी कान्ति-प्रभा शोभनीय है, जिन्होंने किया है स्नान, मञ्जन, देवपूजा, यावत् भूषण वस्त्रोंसे अलंकृत हो महा विस्तारवन्त, कोठागार, शास्त्राके सामान्य मकानकी अन्दर यावत् रत्न जडित सिंहासनपर रोशनीकी ज्योतिके प्रकाशमें स्त्रीयोके वृन्दमे, महान् नाटक, गीत, वाजिन, तत्री, ताल, तूटीत, मृदंग, पड्डा—इत्यादि प्रधान मनुष्य सन्नन्धी भोग भोगवता विचरता है, वह एक मनुष्यको बोलाता है, तन च्यार पांच स्त्री पुरुष आके खडे

होते हैं, वह कहते हैं कि हे नाथ ! हम क्या करें ? क्या आपका हुकम है ? क्या आपकी इच्छा है ? किसपर आपकी रुचि है ? इत्यादि उस कुलादिके उत्पन्न हुए पुरुष पुण्यवन्तकी ऋद्धिका ठाठ देख अगर कोई साधु निदान करे कि हमारे तप, संयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें हमको मनुष्य सवन्धी ऐसे भोग प्राप्त हों, इति साधु ।

हे श्रमण ! आयुष्यवन्त ! अगर साधु ऐसा निदान कर उसकी आलोचना न करे, प्रतिक्रमण न करे, पापका प्रायश्चित्त न लेने और विराधक भावमें काल करे, तो वहाँमें मरके महा ऋद्धिवन्त देवता होंगे, वहापर दिव्य ऋद्धि ज्योति यावत् महा सुखोंको प्राप्त करे, उन देवताओं सवन्धी दीर्घ काल सुख भोगकरे, वहाँमें चरके इस मनुष्य लोकमें उग्र कुलमें उत्तम वंशमें पुत्रपण्ये उत्पन्न हुये, जो पूर्व निदान कियाथा, ऐसी ऋद्धि प्राप्त हो जाये यावत् स्त्रियोंके वृन्दमं नाटक होते हुये, वाजिन वाजते हुये मनुष्य सवन्धी भोग भोगवते हुये निचरे.

हे भगवन् ! उस कृत निदान पुरुषको केवली प्ररूपित धर्म उभयकाल सुनानेवाला धर्मगुरु धर्म सुना शके ?

हा, धर्म सुना शके, परन्तु वह जीव धर्म सुननेको अयोग्य होते हैं, वह जीव महारभ, महा परिग्रह, स्त्रियोंका काम-भोगकी महा इच्छा, अधर्मी, अधर्मका व्यापार, अधर्मका स-

कल्प यावत् मरके दक्षिणकी नरकमे जाये भविष्यके लीयेभी दुर्लभ बोधी होता है

हे आयुष्यवत श्रमणो ! तथारूपके निदानका यह फल हुआ कि वह जीव केवली प्ररुपित धर्म श्रमण करनेके लीयेभी अयोग्य है अर्थात् केवली प्ररुपित धर्मका श्रमण करनाही दुष्कर हो जाता है. इति प्रथम निदान.

(२) अहो श्रमणों ! मैंने जो धर्म प्ररुपित किया है, वह यावत् सर्व शारीरिक और मानसिक दुःखोंका अन्त करनेवाला है इस धर्मकी अन्दर प्रवृत्ति करती हुई साधुओं बहुतसे परीपह—उपमर्गोंको सहन करती हुई, काम विकारका पराजय करनेमे पराक्रम करती हुई विचरती है, सर्व अधिकार प्रथम निदानकी माफिक समझना.

एक समय एक स्त्रीको देखे, वह स्त्री कैसी है कि जगतमे वह एकही अद्भुत रूप लाक्षण्य, चतुराङ्गाली है, मानो एक मातानेही ऐसी पुत्रीको जन्म दीया है. रत्नोंके आभरण समान, तेलकी सीमीकी माफिक उसको गुप्त रीतिसे सरक्षण किया हे, उत्तम जरी खीनछाप आदि वस्त्रकी भिंदुकी माफिक उन्हका सरक्षण किया है, रत्नोंके करडकी माफिक परम अमूल्य जिन्हको सर्व दुखोंसे बचाके रक्षण किया है वह स्त्री अपने पिताके घरसे निकलती हुई, पतिके घरमें जाती हुई, जिसके आगे पीछे बहुतसे दाम, दासी, नोकर, चाकर, यावत् एकको

बुलानेपर चार पाच हजार होते हैं. यावत् सर्व प्रथम निदानकी माफिक उम स्त्रीको देख साध्वीयों निदान करेकि—मेरे तप, समय, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो मैं भविष्यमें इस स्त्रीकी माफिक भोग भोगवती निचरु. इति साध्वीका निदान.

हे आर्य ! वह साध्वीयों निदान कर उसकी आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न ले, विराधरु भावमें काल कर महद्विक देवतापण उत्पन्न होने, वहासे जो निदान किया था, ऐसी स्त्री होने, ऐमाही सुख-भोग प्राप्त करे, यावत् भोग भोगवती हुई निचरे, उम स्त्रीको दोनों कालमें धर्म सुनानेवाला मिलने परभी धर्म नहीं सुने, अर्थात् धर्मश्रवण करनेकोभी अयोग्य है. वह महारभ यावत् कामभोगमें मूर्च्छित हो, कालकर दक्षिण दिशाकी नारकीमें उत्पन्न होवे, भविष्यमेंभी दुर्लभ बोधि होवे.

हे मुनिर्या इस निदानका यह फल हुआकि केवली प्ररूपित धर्मका श्रवण करनाभी नहीं उने, अर्थात् धर्म श्रवण करनेके लीयेभी अयोग्य होती है.

(३) हे आर्य ! मैं जो धर्म प्ररूपण किया है, उसकी अन्दर यावत् पराक्रम करता हुआ साधु कोइ स्त्रीको देखे, वह अति रूप-यौवनवती यावत् पूर्ववत् वर्णन करना. उसको देख, साधु निदान करेकि निश्चय कर पुरुषपणा बडाही सराम है, कारण, पुरुष होनेसे उडे बडे सग्राम करना पडता है. जिसकी अन्दर तीक्ष्ण शस्त्रसे प्राण देना पडता है. औरभी व्यापार

करना, द्रव्योपार्जन करना, देश देशान्तर जाना, सब लोगों (आश्रितों) का पोषण करना—इत्यादि पुरुष होना अच्छा नहीं है. अगर हमारे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें हम स्त्रीपनेको प्राप्त करे, वहभी पूर्ववत् रूप, यौवन, लावण्य, चतुराई, जोकि जगतमें एकही पाई जाय ऐसी फिर पुरुषोंके साथ निर्विघ्नतासे भोग भोगवती विचरे । इति साधु । यह निदान साधु करे, उस म्यानकी आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न लेवे. विराधक भावसे काल कर महर्दिक देवताओंमें उत्पन्न हुवे. वह देव सवन्धी दिव्य सुख भोगके आयुष्य पूर्ण कर मनुष्य लोकमें अच्छा कुल-जातिको अच्छे रूप, यौवन, लावण्यको प्राप्त हुई, उस पुत्रीको उच कुलमें भार्या करके देवे, पूर्व निदानकृत फलसे मनुष्य सवन्धी कामभोग भोगवती आनन्दमें विचरे

उस स्त्रीको अगर कोई दोनो काल धर्म सुनानेवाला मिले, तोभी वह धर्म नहीं सुने, अर्थात् धर्म सुननेके लीये अयोग्य है बहुत काल महारम, महा परिग्रह, महा काम भोगमें गृद्ध, मूर्च्छित हो काल कर दक्षिणकी नारकीमें नैरियापने उत्पन्न होगा भविष्यके लीयेभी दुर्लभबोधि होगा

हे आर्य ! इस निदानका यह फल हुआकि वह धर्म सुननेके लीयेभी अयोग्य है. अर्थात् धर्म सुननाभी उदय नहीं आता है । इति ।

(४) हे आर्य ! मैं धर्म प्ररूपण किया है. वह या सर्व दुःखोंका अन्त करनेवाला है. इस धर्मको धारण कर ध्वीया अनेक प्रकारके परीपह सहन करती हुई किसी स पुरुषोंको देखे, जैसे उग्र कुलकी महामातमे जन्मा हुआ, भो कुलकी महामातासे जन्मा हुआ, नगरसे जाते हुवे तथा नग प्रवेश करते हुये जिन्होंकी अद्वि-साहिनी, पूर्वकी माफिक कको बोलानेपर च्यार पाच हाजर होवे ऐसे अद्विअन्त पुरुषों देखे, साध्वी निदान करेकि-अहो ! लोकमं स्त्रीयोंका ज महा दुःख दाता है. अर्थात् स्त्रीपना है, वह दुःख है क्यों ग्राम यावत् राजधानी सन्निवेशकी अन्दर खुल्ली रहके फिर नहीं. अगर फिरे तो, स्त्री जाति कैसी है. सो दृष्टान्त—आ के फल, आगलिके फल, बीजोरेके फल, भमपेसी, इक्षुके ख सबलीषुचके सुन्दर फल, यह पदार्थों बहुतसे लोग को आस्नादनीय लगते है इस पदार्थोंको बहुत ले खाना चाहते हैं, बहुत लोक इसकी अपेक्षा रखते बहुत लोक इसकी अभिलाषा रखते है. हमी माफि स्त्री जातिकों बहुतसे लोक आस्नादन (भोगवना) करना च हते है. यावत् स्त्रीजातिको कहामी सुख—चैन नहीं है. स गृहकार्य करना पडता है. औरभी स्त्रीजातिपन एक दुःख खजाना है. वास्ते स्त्रीपन अच्छा नहीं है. परन्तु पुरुषपन जात अच्छा है, स्वतन्त्र है, अगर हमारे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फ हो, तो भविष्यमें हम पुरुष उग्र कुल, भोगकुल यावत् मह

ऋद्धिमान् पुरुष हो, स्त्रीयोंके साथ मनुष्य सबन्धी भोग भोग-वते विचरे, इति साध्वी निदान कर उसकी आलोचना न करे यावत् प्रायश्चित्त न लेवे, काल कर महार्द्धिक देवपने उत्पन्न हो वह देवसबन्धी सुख भोग आयुष्यके अन्तमे वहाँसे चक्के कृतनिदान माफिरु पुरुषपने उत्पन्न होये, वह धर्म सुननेके लीये अयोग्य अर्थात् धर्म सुननाभी उदय नहीं आता वह कृत निदान पुरुष महारभ, महापरिग्रह, महा भोग भोगवनेमें गृह्य मूर्च्छित हो, अन्तमे काल कर दक्षिण दिशाकी नारकीमे नैरियपने उत्पन्न हुवे, भविष्यमेभी दुर्लभ बोधि होये

हे आर्य ! इस निदानका यह फल हुआकि यह जीव केवली प्ररुपित धर्मभी सुन नहीं सके अर्थात् धर्म सुननेकोभी अयोग्य होता है । इति ।

(५) हे आर्य ! मैं जो धर्म प्ररुपित किया है, यावत् उस धर्मकी अन्दर साधु-साध्वी अनेक परीपह सहन करते हुये, धर्ममे पराक्रम करते हुये मनुष्य सबन्धी कामभोगोंसे विरक्त हुआ ऐसा विचार करोकि-अहो ! आश्चर्य ! यह मनुष्य सबन्धी कामभोग अधुन, अनित्य, अशाश्वत, सडन पडन विध्वसन हमका सदैव धर्म है, अहो ! यह मनुष्यका शरीर मल, मूत्र, श्लेष्म, मस, चरबी, नारुमेल, वमन, पित्त, शुक्र, रक्त, इत्यादि अशुचिका स्थान है देखनेसेही विरुप दिखता है, उश्वास निश्वास दुर्गन्धिमय है मल, मूत्र कर भरा हुआ है

व्याधिका रजाना है. वहभी पहिले व पीछे अवश्य छोडना पडेगा. इससे तो वह उर्ध्वलोक निवास करनेवाले देवता-वाँ अच्छे है, कि वह देवता अन्य किसी देवतावाँकी देवीयाँको अपने वशमें कर सर्व कामभोग उस देवीके साथ भोगवते है तथा आप स्वयं अपने शरीरसे देवरूप और देवी-रूप बनाके उसके साथ भोग करे तथा अपनी देवीयाँके साथ भोग करे अर्थात् ऐसा देवपना अच्छा है. वास्ते मेरे तप, स-यम, ब्रह्मचर्यका फल हो तो भविष्य कालमें मैंभी यहासे मरके उस देवाँकी अन्दर उत्पन्न हो. पूर्वोक्त तीनों प्रकारकी देवी-याँके साथ मनोहर भोग भोगवते हुये विचरु. । इति ।

हे आर्य ! जो कोई साधु-साध्वीयाँ ऐसा निदान कर उसकी आलोचना न करे, यावत् पापका प्रायश्चित्त न लेवे और काल करे, वह देवाँमें उत्पन्न हुवे. वह महर्द्धिक, महा-ज्योति यावत् महान् सुखवाले देवता होवे वह देवता अन्य देवतावाँकी देवीयाँको तथा अपने शरीरसे वैक्रिय बनाइ हुइ देवीयाँसे और अपनी देवीयाँमे देवता सबन्धी मनोवाँछित भोग भोगवे. चिरकाल देवसुख भोगवके अन्तमें वहासे चक्के उग्रकुलादि उत्तम कुलम जन्म धारण करे यावत् आते जातेके साथे बहुतसे दाम-दासीयाँ, वहातककी एक बुलानेपर च्यार पाँच आके हाजर होवे.

हे भगवन् ! उस पुरुषकोँ कोई केवली प्ररुपित धर्म सुना सके ? हाँ, धर्म सुना सकते है. हे भगवन् ! वह धर्म

श्रवण कर श्रद्धा प्रतीत रुचि कर सके? धर्म सुन तो मक, परन्तु श्रद्धा प्रतीत रुचि कर सके? धर्म सुन तो सके परन्तु श्रद्धा प्रतीत रुचि नहीं ला सके, वह महारभी, यात्रत् काम-भोगकी इच्छाजाला मरके दक्षिणकी नरकमें उत्पन्न होता है. भविष्यमें दुर्लभप्राप्ति होगा

हे आर्य ! उस निदानका यह फल हुवा कि वह धर्म श्रवण करनेके योग्य होता है, परन्तु धर्मपर श्रद्धा प्रतीत रुचि नहीं कर सके ॥ इति ॥

(६) हे आर्य ! मैं जो धर्म प्ररुपा है वह सर्व दु खोंका श्रन्त करनेवाला है इस धर्मकी श्रन्दर साधु-साध्वी पराक्रम करते हुवेकों मनुष्य सबन्धि कामभोग अनित्य है. यावत् पहिले पीछे श्रवश्य छोडने योग्य है । इससे तो उर्ध्वलोकमें जो देवों है, वह श्रन्य देवतावोंकी देवीयोंको वश कर नहीं भोगवते है, परन्तु अपनी देवीयोंको वश कर भोगवते है तथा अपने शरीरसे वैक्रिय देव-देवी बनाके भोग भोगवते है. वह श्रच्छे है. वास्ते हमारे तप, समय, ब्रह्मचर्यका फल हो तो हम उस देवोंमें उत्पन्न हुवे. ऐसा निदान कर श्रालोचना नहीं करता हुवा काल कर वह देवता होते है. पूर्वकृत निदान माफिक देवतावों सबन्धी सुख भोगवके वहासे चवके उत्तम कुल-जातिमें मनुष्यपण्ये उत्पन्न होते है. यावत् महाश्रद्धिवन्त जहांतक एकको बोलानेपर पांच आके हाजर हुवे.

हे भगवन् ! उसको केजलीप्ररूपित धर्म सुना सके ? हां, धर्म सुना सके. हे भगवन् ! वह धर्म श्रवण कर श्रद्धा प्रतीत रुचि करे ? नहीं करे. परन्तु वह अरण्यवासी तापस तथा ग्राम नजदीकवासी तपस्वी रहस्य (गुप्तपने) अत्याचार सेवन करनेवाले विशेष समयप्रत यद्यपि व्यवहार क्रियाकल्प रखते भी हो, तो भी सम्यक्त्वं न होनेसे वह कष्टक्रिया भी अज्ञानरूप है, और सर्व प्राणभूत जीव-सत्त्वकी घातसे नहीं निर्वृति पाइ है, अपने मान, पूजा रखनेके लीये मिश्रभाषा बोलते है, तथा आगे कहेंगे-ऐसी विपरीत भाषा बोलते है हम उत्तम है, हमको मत मारो, अन्य अधर्मी है, उसको मारो इमी माफिक हमको ढडादिका प्रहार मत करो, परि-ताप मत दो, दुःख मत दो, पकडो मत, उपद्रव मत करो, यह सब अन्य जीवोंको करो, अर्थात् अपना सुख बाछना और दूसरोको दुःख देना, यह उन्होंका मूल सिद्धान्त है, वह बाल, अज्ञानी, स्त्रीयों सबन्धी कामभोगमें गृह्य मूर्च्छित हुवे काल प्राप्त हो, आसुरीकाय तथा किन्चिपीया देवोंमें उत्पन्न हो, वहासे मरके चारवार हलका बकरे (मीठे) गुगे, लूले, लगडे, घोबडेपनेमें उत्पन्न होगा. हे आर्य ! उक्त निदान करनेवाला जीव धर्मपर श्रद्धाप्रतीत रुचि करनेवाला नहीं होता है. ॥ इति ॥

(७) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा है, वह सर्व दुःखोंका

अन्त करनेवाला है उस धर्मकी अन्दर पराक्रम करते हुवे मनुष्य सबन्धी कामभोग अनित्य है, यावत् जो उर्ध्वलोकमें देवों है, जो पारकी देवीकों अपने वश कर नहीं भोगते हैं तथा अपने शरीरसे बनाके देवीको भी नहीं भोगते हैं परन्तु जो अपनी देवी है, उसको अपने वशमें कर भोगते हैं अगर हमारे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो हम उक्त देवता हुवे ऐसा निदान कर आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न करते हुवे काल कर उक्त देवोंमें उत्पन्न होते हैं वहा देवतावों सबन्धी चिरकाल मुख भोगके वहामे काल कर उत्तम कुल-जातिकी अन्दर मनुष्य हुवे. वह महर्दिक यावत् एकको बुलानेपर च्यार पाच आहे हाजर हुवे.

हे भगवन् ! उस मनुष्यकों कोइ श्रमण महान् केवली प्ररूपित धर्म सुना शके ? हा, सुना सके. क्या वह धर्मपर श्रद्धाप्रतीति रुचि करे ? हाँ, करे वह दर्शन श्रावक हो सके परन्तु निदानके पाप फलसे वह पाच अणुव्रत, सात शिखाव्रत यह श्रावकके नारहा व्रत तथा नोकारसी आदि प्रत्याख्यान करनेको समर्थ नहीं होते हैं वह केवल सम्यक्त्वधारी श्रावक होते हैं जीवादि पदार्थका जानकार होते हैं. हाडहाड किमीजी-धर्मकी अन्दर राग जागता है. ऐसा सम्यक्त्वरूप श्रावकपणा पालता हुवा बहुत कालतक आयुष्य पाल वहासे मरके देवोंकी अन्दर जाते हैं.

हे आर्य ! इस निदानका यह फल हुआकि वह समर्थ नहीं है कि श्रावकके पांच श्रणुत्रत, सात शिवात्रत, और नो-कारसी आदि तथा पाँपध, उपवामादि करनेको समर्थ न हो सके । इति ।

(८) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा हूँ, वह सर्व दुःखोंका अन्त करनेवाला है. इस धर्मकी अन्दर माधु, माध्वी पराक्रम करते हुवे ऐसा जानेकि—यह मनुष्य सवन्धी कामभोग अनित्य, अशाश्वत, यावत् पहिले या पीछे अवश्य छोडने योग्य है. तथा देवताओं सवन्धी कामभोगभी अनित्य, अशाश्वत है, वह चल चलायमान है. यावत् पहिले या पीछे अग्य छोडनाही होगा. मनुष्य—देवोंके कामभोगपे विरक्त हुआ ऐसा जानेकि—मेरे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें मैं उग्र कुल, भोगकुलकी अन्दर महामाता (उत्तम जाति) की अन्दर पुत्र-पणे उत्पन्ने हो, जीवादि पदार्थका जानकार उन, यावत् माधु, साध्वीयोंको प्राप्तक, निर्दोष, एषणिक, निर्जीव, अशन, पान, त्यादिम, स्वादिम आदि चौदा प्रकारका दान देता हुआ विचरू. ऐसा निदान कर आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न लेवे और काल कर वह महाश्रद्धि यावत् महा सुखवाला देवता हुवे, वहा विरकाल देवताका सुख भोगवके, वहाँसे मरके उत्तम जाति—कुलकी अन्दर मनुष्य हुवे वहाँ पर केवली प्ररूपित धर्म सुने, श्रद्धाप्रतीत रुचि करे, सम्यक्त्व सहित वा-

रहा व्रतोंको धारण कर सके। परन्तु निदानके पापोदयसे 'मुडे भविता' अर्थात् समय-दीक्षा लेनेको असमर्थ है, वह श्रावक हो जीवादि पदार्थोंका जान हुवे, अशनादि चौदा प्रकारका प्रासुक, एषणीय आहार साधु साध्वियोंको देता हुवा बहुतसे व्रत प्रत्याख्यान पापघ, उपवासादि कर अन्तमे आलोचना सहित अनशन कर ममाधिमें काल कर उच देवोंमे उत्पन्न होता है

हे आर्य ! उम पाप निदानका फल यह हुवाकि वह सर्व निरति-दीक्षा लेनेको असमर्थ अर्थात् अयोग्य हुवा । इति ।

(६) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा है, यह सर्व दु खोंका अन्त करनेवाला है उस धर्मकी अन्दर साधु साध्वी पराक्रम करते हुये ऐसा जानेकि-यह मनुष्य सन्धी तथा देवसन्धी कामभोग अधुव, अनित्य, अशाश्वत है, पहिले या पीछे अवश्य छोडने योग्य है. अगर मेरे तप, समय, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें मैं ऐसे कुलमें उत्पन्न हो यथा—

(१) अन्तकुल—स्वल्प कुटुम्ब, सोभी गरीब (२) प्रान्त-कुल—विलकुल गरीब कुल (३) तुच्छकुल—स्वल्पकुटुम्बवाले कुलमें (४) दरिद्रकुल—निर्धन कुटुम्बवाला. (५) कृपणकुल—घन होनेपरमी कृपणता (६) भिक्षुकुल—भिक्षाकर आजीविका करे (७) ब्राह्मणकुल—ब्राह्मणोंका कुल सदैव भिक्षु.

ऐसे कुलमें पुत्रपणे उत्पन्न होनेसे भविष्यमें मैं दीक्षा लेउगा, तो मेरा दीक्षाका कार्यमें कोई भी विघ्न नहीं करेगा. वास्ते मेरेको ऐसा कुल मिले तो अच्छा. ऐसा निदान कर आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न लेता हुवा काल कर उर्ध्वलोकमें महर्द्धिक यावत् महासुखवाला देवता हुवे. वहां चिरकाल देवसुख भोगवके वहासे चवके उक्त कुलोमें उत्पन्न हुवे. उसको धर्मश्रवण करना मिले. श्रद्धाप्रतीत रुचि हुवे. यावत् सर्वविरति-दीक्षाको ग्रहण करे. परन्तु पापनिदानका फलोदयसे उसी भवमें केवलज्ञानको प्राप्त नहीं कर सके.

वह दीक्षा ग्रहण कर इर्याममिति यावत् गुप्त ब्रह्मचर्य पालन करते हुवे बहुत वर्ष चारित्र्य पालके अन्तमें आलोचनापूर्वक अनशन कर काल प्राप्त हो उर्ध्वगतिमें देवतापणे उत्पन्न हुवे. वह महर्द्धिक यावत् महासुखवाला हुवे.

हे आर्य ! इस पापनिदानका फल यह हुआ कि दीक्षा तो ग्रहण कर सके, परन्तु उसी भवकी अन्दर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जानेमें असमर्थ है ॥ इति ॥

(१०) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा है, वह धर्म, शारीरिक और मानसिक एमे सर्व दुःखोंका अन्त करनेवाला है उस धर्मकी अन्दर साधु-साध्वीयों पराक्रम करते हुये सर्व प्रकारके कामभोगसे विरक्त, एव राग द्वेषसे विरक्त, एव

स्त्री आदिके सगसे विरक्त, एव शरीर, स्नेह, ममत्व-
 भावमे विरक्त सर्व चारित्रकी क्रियाओंके परिवारमे प्रवृत्त,
 उस श्रमण भगवन्तको अनुत्तर ध्यान, अनुत्तर दर्शन, यावत्
 अनुत्तर निर्वाणका मार्गको मशोधन करता हुआ अपना आ-
 त्माको सम्यक्प्रकारसे भावते हुएकों निन्दहोंका अन्त नहीं है
 ऐसा अनुत्तर प्रधान, जिसको कोई बाध न कर सके, निमको
 कोई प्रकारका आवरण नहीं आ सके, वह भी सपूर्ण, प्रतिपूर्ण,
 ऐसा महत्ववाला केवलज्ञान, केवलदर्शन उत्पन्न होते हैं.

वह श्रमण भगवन्त अरिहत होते हैं वह जिन केवली,
 सर्वनानी, सर्वदर्शनी, देवता मनुष्य, अमुरादिकमे पूजित,
 यावत् बहुत कालतरु केवलीपर्याय पालके अपना अशेष
 आयुष्य जान, भक्त पानीका प्रत्याख्यान अर्थात् अनशन कर
 फिर चरम श्वासोश्वासकों नोमिराते हुये सर्व शारीरिक और मा-
 नसिक दुःखोंका अन्त कर मोक्ष महलमे बिराजमान हो जाते हैं.

हे आर्य ! ऐसा अनिदान अर्थात् निदान नहीं करनेका
 फल यह हुआकि उँसी भवमें सर्व कर्मोंका मूलोंको उच्छेदन कर
 मोक्षसुखोंको प्राप्त कर लेते हैं ऐसा उपदेश भगवान् वीरप्रभु
 अपने शिष्य साधु-साध्वीयोंको आमाण करके दीया था,
 अर्थात् अपने शिष्योंकी डूबती नाँकाको अपने करकमलोंसे
 पार करी हैं.

तत्पश्चात् वह सर्व साधु-साध्वीयों भगवानकी मधुर देशना-हितकारी देशना श्रवण कर उडा ही हर्षको-आनन्दको प्राप्त हो, अपने जो राजा श्रेष्ठिक और राणी चेलणाका स्वरूप देख निदान किया गया था, उसकी आलोचना कर, प्रायश्चित्त ग्रहण कर, अपना आत्माको विशुद्ध बनाके भगवानको वन्दन-नमस्कार कर अपना आत्माकी अन्दर रमणता करते हुवे विचरने लगे.

यह व्याख्यान भगवान् महावीरप्रभु राजगृह नगरके गुणशीलोद्यानमें बहुतसे साधु, बहुतसी साध्वीयों, बहुत श्रावक, बहुतसी श्राविकायों, बहुतसे देवों, बहुतसी देवीयों, सदैव मनुष्य असुरादिभी परिपदके मध्य निराजमान हो आरयान, भाषण, प्ररूपण, भिणोप प्ररूपण (आत्माको कर्म-बन्ध निदानरूप अध्ययन) अर्थ सहित, हेतु सहित, कारण सहित, सूत्र सहित, सूत्रके अर्थ सहित, व्याख्या सहित यागत् एसा उपदेश चारवार किया है.

। इति निदान नामका दशमा अध्ययन ।



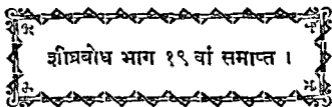
नोट—निदान दो प्रकारके होते है (१) तीत्र रसवाला (२) मन्द रसवाला, जो तीत्र रसवाला निदान किया हो, तो छे निदानवालोंको केवली प्ररूपित धर्मकी प्राप्ति नहीं होती है,

अगर मन्द रसवाला निदान हो तो छे निदानमें सम्यक्त्वादि धर्मकी प्राप्ति होती है जैसे कृष्ण वासुदेव तथा द्रौपदी महा सतीको सनिदानभी धर्मकी प्राप्ति हुईथी

इति श्री दशाश्रुतस्कंध-दशवा अध्यायन



। इति श्री दशाश्रुत स्कंध सूत्रका सच्चित्त सार ।



शीघ्रबोध भाग १९ वां समाप्त ।

अथश्री

शीघ्रबोध भाग २१ वां.



अथ श्री व्यवहारसूत्रका सत्तिप्त सार

(उद्देशा दश)

श्रीमद् आचाराणादि सूत्रोमे मुनियोंने आचारका प्रतिपादन कीया है उस आचारसे पतित होनेवालोंके लीये लघु निशीथ सूत्रमे आलोचना कर, प्रायश्चित्त ले शुद्ध होना बतलाया है ।

आलोचना मुननेवाले तथा आलोचना करनेवाले मुनि कैसा होना चाहिये तथा आलोचना किम भावोंसे करते है, उसको कितना प्रायश्चित्त दीया जाता है, वह इस प्रथम उद्देशा द्वारे बतलाया जायेगा

(१) प्रथम उद्देशा—

(१) किमी मुनिने एक मासिक प्रायश्चित्त योग, दुष्कृतका स्थान सेवन कीया, उसकी आलोचना गीतार्थ आचार्य के पास निष्कपट भावसे करी हो, उस मुनिको एक मासिक प्रायश्चित्त*

१—मासिक प्रायश्चित्त स्थान देखा—लघु निशीथसूत्र

* मासिक प्रायश्चित्त—जैम तप मासिक छद्मासिक, प्रत्याग्यान मासिक इत्क भी लघुमासिक शुभामासिक—दा दा भद है सुलाया देखा लघुनिशीथ सूत्र

प्रायश्चित्तमें ही धृष्टि करना (इसकी विधि निशीथ सूत्रमें है) आलोचना करनेवाला विचार भाग है यथा—आचार्यमहाराजकी आज्ञासे मुनि अन्य स्थल विहार कर कितने अरसेमें यापीस आचार्यमहाराजके ममीप आये, उसमें कितने ही दोष लग थे, उसकी आलोचना आचार्यकी पासमे करते हैं

(१) पहले दोष लगा था, उसकी पहले आलोचना करे, अर्थात् कम मर प्रायश्चित्त लगा होवे, उनी माफिक आलोचना करे

(२) पहले दोष लगा था, परन्तु आलोचना करते समय विस्मृत हो जानेके सत्रसे पहले दूसरे दोषोंकी आलोचना करे फिर स्मृति होनेसे पहले सेवन कीये हुए दोषोंकी पीछे आलोचना करे

(३) पीछे सेवन कीया हुआ दोषोंकी पहले आलोचना करे

(४) पीछे सेवन कीये हुये दोषोंकी पीछे आलोचना करे

आलोचना करते समय परिणामोरी चतुर्भगी

(१) आलोचना करनेवाले मुनि पहला विचार किया था कि अपने निष्कपटभावसे आलोचना करनी इसी माफिक शुद्ध भावसे आलोचना करे ज्ञानवन्त मुनि

(२) मायागदित शुद्ध भावसे आलोचना करनेका इरादा था, परन्तु आलोचना करते समय मायासयुक्त आलोचना करे भावार्थ—ज्यादा प्रायश्चित्त जानेसे अथ लघु मुनियोंसे मुझे लघु होना पड़ेगा, लोगमे मानपूजाकी हानि होगी—इत्यादि विचारोंसे मायासयुक्त आलोचना करे

(३) पहला विचार था कि मायासयुक्त आलोचना करगा-

आलोचना करते समय मायारहित शुद्ध निर्मल भावोंसे आलोचना करे भावार्थ—पहला विचार था कि ज्यादा प्रायश्चित्त आनेसे मेरी मानपूजाकी हानि होगी फिर आलोचना करते समय आचार्यमहाराज जो स्थानाग सूत्रमें आलोचना करनेवालोंके गुण और शुद्ध भावोंसे आलोचना करनेवाला इस लोक और परलोकमें पजनीय होता है लोक तारीफ करते हैं यायत् भोक्तसुखकी प्राप्ति हानी है येना सुन अपने परिणामको बदलावे शुद्ध भावोंसे आलोचना करे

(८) पहले विचार था कि मायामयुक्त आलोचना करुगा, और आलोचना करते समय भी मायामयुक्त आलोचना करे वाला, अज्ञानी, भयाभिनन्दी जीर्वाका यह लक्षण है

आलोचना करनेवालाका भावोंको आचार्यमहाराज जानके जैसा जिनको प्रायश्चित्त होता हो येना उन्हे प्रायश्चित्त देने सबके लीये एकसा ही प्रायश्चित्त नहीं है एक ही दोषके भिन्न भिन्न परिणामवालोंको भिन्न भिन्न प्रायश्चित्त दीया जाता है

(१६) इसी मासिक ऋतुवार चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पच मासिक, माधिक पच मासिक, प्रायश्चित्त सेवन कीया हो उसकी दो चोभगीयो १२ या सूत्रमें लिखी गई है यायत् जिस प्रायश्चित्त के योग्य हो, येना प्रायश्चित्त देना भावना पूर्ययन्

(१७) जो मुनि चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पच मासिक, माधिक पच मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवन कर आलोचना (पूर्ययत् चतुर्भगीसे) करे, उस मुनिको तपशी अन्दर तथा यथायोग्य ध्यायश्चमे स्थापन करे उन तप करते हुएमें और प्रायश्चित्त सेवन करे, तो उस चालु तपमे प्रायश्चित्तकी वृद्धि

करना तथा प्रायश्चित्त तप करके निकलते हुयेका अगर लघु दाप लग जाये, तो उसी तपकी अन्दर सामान्यतासे घृद्धि कर शुद्ध कर देना

(१८) इसी माफिक बहु वचनापेक्षा भी समझना

जा मुनि प्रायश्चित्त सेवन कर निर्मल भाषासे आलोचना करते हैं उमको कारण बतलाते हुये, हेतु बतलाते हुये, अथ बतलाते हुये इस लोक, परलोकके आराधकपनाके अभय सुख बतलाते हुये प्रायश्चित्त देवे, और दीया हुआ प्रायश्चित्तमें सहायता कर उसको यथा निर्वाह हो पसा तप कराके शुद्ध बना लेवे यह फर्ज गीताथ आचार्य महाराजकी है

(१९) बहुतसे मुनि पेसे हैं कि जो प्रायश्चित्त सेवन किया, उसकी आलोचना भी नहीं करी है उसे शास्त्रकाराने 'प्रायश्चित्तीये' कहा है और बहुतसे मुनि निरतिचार व्रत पालन करते हैं, उसे 'अप्रायश्चित्तीये' कहा है, यह दोनों प्रायश्चित्तीये, अप्रायश्चित्तीये मुनि पक्ष रहना चाहे पक्ष बैठना चाहे, पक्ष शय्या परना चाहे, तो उस मुनियोंको पस्तर 'स्थविर महाराजको पुछना चाहिये, अगर स्थविर महाराज किसी प्रकारका खास कारण जानके आज्ञा देये, तो उस दोनों पक्षवाले मुनियोंको पक्ष रहना कल्पे अगर स्थविर महाराज आज्ञा न दे तो उस दोनों पक्षवालोंको पक्ष रहना नहीं कल्पे अगर स्थविर महाराजकी

१ स्थविर तान प्रकारक होत है (१) वय रथविर ६० वर्षकी आयुप्यवाला

(२) दाक्षा स्थविर बीस वर्षका चारित्र पर्यायवाच (३) सूत्र स्थविर स्थानागसूत्र और समवायाम सूत्रक जानकार तथा विनयेक स्थानोंपर आचार्य महाराजको भी स्थविरके नामम ही बतलाय है

आज्ञाका भग कर दोनों पक्षवाले मुनि एकत्र निवास करे, तो जितने दिन वह एकत्र रहे, उतने दिनोंका तप प्रायश्चित्त तथा छेद प्रायश्चित्त आये भाषाय—प्रायश्चित्तीये, अप्रायश्चित्तीये मुनि एकत्र रहनेसे लोकमें अप्रतीतिका कारण होता है। एसा हो तो फिर प्रायश्चित्तीये मुनियोंको शुद्धाचारकी आवश्यकताही क्यों और दोषोंका प्रायश्चित्तही क्यों ले ? इत्यादि कारणोंसे एकत्र रहना नहीं कल्पे अगर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाष देखने आचार्य महाराज आज्ञा दे, उम हालतमें कल्पे भी सही यह ही म्याह्लाद रहस्यका मार्ग है

(२०) आचार्य महाराजको किन्नी अन्य ग्यान साधुकी वैयायश्चके लीये किन्नी साधुकी आवश्यकता होनेपर परिहार तप करनेवाले साधुको अन्य ग्राम मुनियोंकी वैयायश्चके लीये जानेका आदेश दिया, उस समय आचार्य महाराज उस मुनियोंको कहे कि—हे आर्य ! रहस्तेमें चलना और परिहार तप करना यह दो याता होना कठिन है वास्ते रहस्तेमें इस तपका छोड़ देना इसपर उम साधुको अशक्ति होतो तप छोड़ कर जिन दिशामें अपने स्थधमी साधु विचरते हो उसी दिशाकी तरफ विहार करना रहस्तेमें एक रात्रि, दो रात्रिसे ज्यादा रहना नहीं कल्पे अगर शरीरमें व्याधि हो तो जहातक व्याधि रहे, घहातक रहना कल्पे रोगमुक्त होनेपर पहलेके साधुको कहे कि—हे आर्य ! एक दो रात्रि और ठहरो, इससे पुर्ण स्वातरी हो जाय उम हालतमें एक दोय रात्रि ठहरना कल्पे अगर एक दो रात्रिसे अधिक (सुलशीलीयापनासे) ठहरे, तो जितने रोज रहे उतने रोजका तप तथा छेद प्रायश्चित्त होता है भाषाय—ग्यान मुनियोंकी वैयायश्चके लीये भेजा हुआ साधु रहस्तेमें विहार या उपकार निमित्त ठहर नहीं सके तथा रोग मुक्त होनेपर भी ज्यादा ठहर नहीं सके अगर ठहर जाये तो

जिस ग्लानाकी वैयावच्छे लीये भेजा था, उसकी वैयावच्छ कोन करे ? इम लाये उम मुनिको शीघ्रतापूर्वक ही जाना चाहिये

(२१) इसी माफिक रवाने हाते समय आचार्यमहाराज तप छोडनेका न कहा हा, तो उस मुनिको जो प्रायश्चित्तका तप कर रहा था, उमी माफिक तप करते हुये ही ग्लानिकी वैयावच्छमें जाना चाहिये रहस्तेमें विलय न करे

(२२) इसी माफिक पेस्तर आचार्यमहाराजका इरादा था कि विहार समय इस मुनिको कहे कि-रहस्तेमें तप छोड देना, परन्तु विहार करते समय जिसी कारणसे वह नहीं सका हो तो उम मुनिको तप करते हुये ही ग्लानिकी वैयावच्छमें जाना चाहिये पूषवन् शीघ्रतासे

(२३) कौइ मुनि गच्छको छोडक एकल प्रतिमारुप अभिग्रह धारण कर अकेला विहार करे, अगर अकेले विहार करनेमें अनेक परिसह उत्पन्न होते हैं, उमको सहन करनेमें अममथ हो, तथा आचारादि शीथिल हों जानेसे या किसी भी कारणसे पीछे उमी गच्छमें आना चाहे तो गणनायकको चाहिये कि-वह उस मुनिसे फिरसे आलोचना प्रतिग्रमण कराव और उसको छेद प्रायश्चित्त तथा फिरसे उत्थापन देके गच्छर्म लेवे

(२४) इसी माफिक गणधिच्छेदक

(२५) इसी माफिक आचार्यापाध्यायको भी समझना भाचार्य—आठ^१ गुणाका धणी हा, वह अकेला विहार कर सकता है अकेला विहार करनेमें अप्रतियद्ध रहनेसे कमनिजरा ग्रहुत होती है परन्तु इतना शक्तिमान् होना चाहिये अगर परिसह सहन करनेमें असमर्थ हो उसे गच्छमे ही रहना अच्छा है

(२६) समयसे शिथिल हो, समयका पाम रख छोड़े, उसे पामत्या कहा जाता है कोई मुनि गच्छमें कठिन आचारादि पालनेमें अममर्थ होनेसे गच्छ त्याग कर पामत्या धर्मको स्वीकार कर विचरने लगा यादमें परिणाम अच्छा हुआ कि-पौद्गलिक क्षणमात्रके सुखमें दीये मने गच्छ त्याग कर इस भववृष्टिका कारण पामत्यपनेका स्वीकार कर अहृत्य कार्य किया है वास्ते अब पीठे उम्मी गच्छमें जाना चाहिये अगर यह मावु पुन गच्छमें आना चाहे, तो ऐस्तग उमको आगंचना-प्रतिक्रमण करना चाहिये पुन उद्द प्रायश्चित्त तथा पुन दीक्षा देके गच्छमें लेना चाये

(२७) एष गच्छ छोड़के स्वच्छन्द विहारी होनेवा लंका अलायक

(२८) एष कुशील—जिन्हाका आचार मग्न है प्रति दिन विगड सेवन करनेवालोंका अलायक

(२९) एष उमन्ना—क्रियामें शिथिल, पुजन प्रतिलेखनमें प्रमादी, ऋचादि करनेमें अममर्थ, ऐसा उमन्नाका अलायक

(३०) एष सप्तक—आचारगत साजु मिलनेसे आप आचारवन्त बन जावे, पामत्यादि मिलनेसे पामत्यादि बन जावे, अर्थात् दुराचारीयान्से समग रखनेवालोंका अलायक २६, २७, २८, २९, ३० इस पाचों अलायकका भावार्थ—उक्त कारणोंसे गच्छका त्याग कर भिन्न भिन्न प्रवृत्ति करनेवाले फिरने उसी गच्छमें आना चाहे तो प्रथम शालोचना कराके यथायोग्य प्रायश्चित्त तप या उद्द तथा उत्थापन देके फिर गच्छमें लेना चाहिये कि उस मुनिको तथा अन्य मुनियोंका इस बातका क्षोभ रहे. गच्छ मयादा तथा सदाचारकी प्रवृत्ति मजबूत रनी रहै

(३१) जो कोई साधु गच्छ छाड़के पाखंडी लिंगकी स्वीकार करे अर्थात् अन्य यतियोंके लिंगमें रहे और वापिस स्वगच्छमें आना चाहे, तो उसे कोई आलोचना प्रायश्चित्त नहीं फक्त व्यवहारमें उसकी आलोचना सुन ले, फिर उस मुनिको गच्छ में ले लेना चाहिये भाषाथ—अगर कोई गज्रादिका जैन मुनियों पर कोप हो जानेसे अन्य साधुओंका योग न होनेपर अपना मन मया निर्वाह करनेके लीये अन्य यतियोंके लिंगमें रह कर, अपनी साधुश्रिया बराबर साधन करता बबल शासन रक्षणके लीये ही ऐसा कार्य करे, तो उसे प्रायश्चित्त नहीं होता है इस विषयमें स्थानाग सूत्र चतुर्थ स्थानकी चौभगी, तथा भगवती सूत्र निर्ग्रन्थाधिकारे विशेष खुगमा है

(३२) जो कोई साधु स्वगच्छका छाड़के व्रत भंग कर गृहस्थधर्मको सेवन कर लीया हो गइ में उसको परिणाम हो कि मैंने चारित्र्य चिंतामणिको हाथसे गमा दीया है अर्थात् सत्कारसे अरुचि—संयोगकी तफ लक्ष्य कर फिरसे उमी गच्छमें आना चाहे तो आचार्य महाराज उसकी योग्यता देखे, भविष्यके लीये रयाल कर, उसे छेदके तप प्रायश्चित्त कुछ भी नहीं दे, कतु पुन उसी रोजसे दीक्षा देव

(३३) जो कोई साधु अट्टय पेमा प्रायश्चित्त स्थानकी सेवन करे फिरसे शुद्ध भाषना आनेसे आलोचना करनेकी इच्छा करे तो उस मुनिको अपने आचार्यापाध्याय जो बहुश्रुत, बहु आगमका जाणकार, पाच व्यवहारके ज्ञाता हो उन्हाके समीप आलोचना करे, प्रतिव्रमण करे, पापसे विशुद्ध हो, प्रायश्चित्तसे निवृत्त हो, हाथ जोड़के कहे कि—अब मे पेमा पापकर्मको सेवन न करुगा हे भगवन् ! इस प्रायश्चित्तकी यथ्ययोग्य आलोचना दो अर्थात् गुर देये उस प्रायश्चित्तको स्वीकार करे

(३४) अगर अपने आचार्यांप्रत्याय उस समय हाजर न हो तो अपने सभोगी (एक मंडलमें भोजन करनेवाले) साधु जो बहुश्रुत—बहुत आगमोंके जानकार, उन्हांके समीप आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्तकी स्वीकार करे

(३५) अगर अपने सभोगी साधु न मिले तो अन्य सभोगी गवाले गीतार्थ—बहुत आगमोंके जानकार मुनि हों, उन्हांके पास आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्तकी स्वीकार करे

(३६) अगर अन्य सभोगीवाले उक्त मुनि न मिले, तो रूप साधु अर्थात् आचारादि क्रियामें शिथिल है, केवल रजोहरण, मूत्रपचिका साधुका रूप उन्हांके पास है, परन्तु बहुश्रुत—बहुत आगमोंका जानकार है, उन्हांके पास आलोचना यावत् प्रायश्चित्तकी स्वीकार करे

(३७) अगर रूपसाधु बहुश्रुत न मिले तो पीछे कृत श्रावक ' जो पहला दीक्षा लेके बहुश्रुत बहुत आगमोंका जानकार हो फिर मोहनीय कर्म के उदयमें श्रावक हो गया हो ' उसके पास आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्त स्वीकार करे

(३८) अगर उक्त श्रावक भी न मिले तो—' समभावियाई चेइयाइ ' अर्थात् सुविहित आचार्योंकी करि हुई प्रतिष्ठा पेशी जिनेन्द्र देवोंकी प्रतिमाके आगे शुद्ध भावसे आलोचनाकर यावत् प्रायश्चित्त स्वीकार करे *

* समभावियाई चेइयाइ ' का अर्थ—दुःखे लाग श्रावक तथा मन्मथगृष्टि करते हैं यह असत्य है क्योंकि आलोचनामें गीतार्थोंकी आवश्यकता है जिमेंभी छद्म सुखों का ता श्रावक जानकार होना चाहिय और जानकार श्रावकका पाठ तो पहले आ गया है इस वास्तु पूर्व मूर्तिमें ही भव ही भव प्रमाण है

(३९) अगर ऐसा मंदिरमूर्तिका भी जहापर योग न हो, तो फिर ग्राम तथा नगर याथत् सन्नियेश के वाहार अहापर कोइ सुननेवाला न हो, ऐसे स्थलमें जाये पूरे तथा उत्तर दिशाके समुख भुह कर दाय हाथ जोड शिरपे चढाये अैसा शब्द उच्चारण करना चाहिये हे भगवन् ! मैंने यह अहृत्य काय कीया है हे भगवन् ! मैं आपकी साक्षीसे अर्थात् आपके समीप आलोचना करता हु प्रतिप्रमण करता हु मेरी आत्माकी निंदा करता हु घृणा करता हु पापोंसे निवृत्ति करता हु आत्मा विशुद्ध करता हु आइदासे ऐना अहृत्य काय नहीं करगा ऐसा कहे यथायोग स्वयं प्रायश्चित्त स्वीकार करना चाहिये

भावार्थ—जो किंचित् ही पाप लगा हा, उसकी आलोचनाक लीये क्षणमात्र भी प्रमाद न करना चाहिये न जाने आयुष्यका किस समय बन्ध पडता है काल किस समय आता है इन वास्ते आलोचना शीघ्रतापूर्वक करना चाहिये परन्तु आलोचनाके सुननेवाग गीताथ, गभीर, धैर्यवान् होना चाहिये वास्ते शास्त्रकाराने आलोचना करनेकी विधि उतलाइ है इसी भाफिक करना चाहिये इति

श्री व्यपहार मूत्र-प्रथम उद्देशान् मन्त्र सार

—→☞☞☞☞←—

(२) दूसरा उद्देशा

(१) दो स्वधर्मी साधु एकत्र हो विहार कर रहे हैं उसमे एक साधुने अहृत्य काय अर्थात् किसी प्रकारका दोषको सेवन कीया है, तो उस दोषका यथायोग उस मुनिको प्रायश्चित्त देके

उस प्रायश्चित्त तपकी अन्दर स्थापन करना चाहिये, और दुसरा मुनि उसका सहायता अर्थात् धैर्यावश करे

(२) अगर दोनों मुनियोंको साथमें ही प्रायश्चित्त लगा हो, तो उस मुनियोंसे एक मुनि पहले तप करे दुसरा मुनि उसको सहायता करे, जब उस मुनिका तप पूर्ण हो जाय, तब दुसरा मुनि तपधर्या करे और पहला मुनि उसको सहायता करे

(३) एक बहुतसे मुनि एकत्र हो विहार करे जिसमें एक मुनिको दोष लगा हो, तो उसे आलोचना दे तप कराना दुसरा मुनि उसको सहायता करे

(४) एक बहुतसे मुनियोंको एक साथमें दोष लगा हो, जैसे शय्यातरका आहार भूखमें आ गया सर्व साधुओंने भोगध भी गीया बादमें खबर हुई कि इस आहारमें शय्यातरका आहार सामेल था, तो सब साधुओंको प्रायश्चित्त होता है उसमें एक साधुको धैर्यावश करने गीये रगे और शेष सर्व साधु उस प्रायश्चित्तका तप करे उन्हाका तप पूर्ण होनेपर एक साधु रहा था वह तप करे और दुसरे साधु उसकी सहायता करे अगर अधिक साधुओंकी आवश्यकता हो तो अधिकको भी रख सकते है

भावार्थ - प्रायश्चित्त महित आयुष्य पथ करने काल करनेसे जीव विराधक होता है धाम्ने लगे हुये पापको आलोचना कर उसका तप ही शीघ्र कर लेना चाहिये जिससे जीव आराधक हो पारगत हो जाता है

(५) प्रतिहार कल्प साधु—जो पहला प्रायश्चित्त सेवन कीया था, वह साधु तपधर्या करता हुआ अकृत्य स्थानको और सेवन कीया उसकी आलोचना करनेपर आचार्य महाराज उसकी

शक्तिको देख तप प्रायश्चित्त देवे अगर वह साधु नफलीफ पाता हा ता उसकी वैयायश्चर्म एक दुसरे साधुको रखे अगर वह साधु दुसरे साधुकोसे वैयायश्चही कराव और अपना प्रायश्चित्तका तपभी न करे तो वह मातु दुतरफी प्रायश्चित्तका अधिकारी बनता है

(६) प्रायश्चित्त तप करता हुआ साधु ग्लानपनेको प्राप्त हुआ ' गणधिच्छेदक ' के पास आवे ता गणधिच्छेदकको नहीं कल्पै कि उस ग्लान साधुको निकाल देना कि तिरस्कार करना गणधिच्छेदक का फर्ज है कि उस ग्लान मुनिकी अग्लानपणे वैयायश्च कराव जहातक वह रोगमुक्त न हो, यहातक, फिर रोगमुक्त हो जानेपर व्यवहार शुद्धि निमित्त सदोप साधुकी वैयायश्च करनेवाले मुनिको स्तोत्र—नाम मात्र प्रायश्चित्त देवे

(७) अणुदृष्ट्या प्रायश्चित्त (तीन कारणोंसे वह प्रायश्चित्त होता है, देखो, यहत्वल्पसूत्रमें) यहता हुआ साधु ग्लानपनेको प्राप्त हुआ हो, वह साधु गणधिच्छेदकके पास आवे तो गणधिच्छेदकको नहीं कल्पै उसको गणसे निकाल देना या उसका तिरस्कार करना गणधिच्छेदककी फर्ज है कि उस मुनिकी अग्लानपणे वैयायश्च करावे जहातक उस मुनिका शरीर रोगरहित न हा यहा तक फिर रोग रहित हो जाने क बाद जो मुनि वैयायश्च करी थी, उसको नाम मात्र स्तोत्र प्रायश्चित्त देना कारण—वह रोगी साधु प्रायश्चित्त वह रहा था जैन शासनकी पालिहारी है कि आप प्रायश्चित्त भी ग्रहन करे, परन्तु परोपकारके लीये उस ग्लान साधुकी वैयायश्च कर उसे समाधि उपजावे

(८) पच पारचिय प्रायश्चित्त यहता हुआ (दशधा प्रायश्चित्त)

(९) ' लिपचिप ' किसी प्रकारकी वायुके प्रयोगसे विक्षिप्त—विकल चिप हुआ साधु ग्लान हो, उसको गच्छ यहार

करना गणविच्छेदको नहीं कल्पे किन्तु उस मुनिकी अम्लानपणे
वैयायथ करना कल्पे जहातक यह मुनिका शरीर रोग रहित
हो, घहातक यात्रतु पूर्ववत्

(१०) 'दित्तचित्त' कन्दर्पादि कारणोंसे दित्तचित्त होता है

(११) 'जरखाइठ' यक्ष भूतादिके कारणसे ,, ,,

(१२) 'उमायपा' उन्मादको प्राप्त हुआ

(१३) 'उयसग्ग' उपसर्गको प्राप्त हुआ

(१४) 'साधिकरण' किसीके साथ प्रोधादि होनेसे

(१५) 'सप्रायधित्त' किसी कारणसे अधिक प्रायधित्त

आने पर

(१६) भात पाणीका परित्याग (सथारा) करने पर

(१७) 'अर्धज्ञात' किसी प्रकारकी तीव्र अभिलाष हो, तय
अर्थ याने द्रव्यादि देवनेसे अभिलाषा वशात्

उपर लिखे कारणासे साधु अपना स्वरूप भूल वेभान हो
जाता है, ग्लान हो जाता है, उस समय गणविच्छेदको, उस
मुनिको गण याहार कर देना या तिरस्कार करना नहीं कल्पे
किन्तु उस मुनिकी वैयायथ करना कराना कल्पे कारण—
पेमी हालतमें उस मुनिको गच्छ याहार निकाल दीय
जाय तो शामनकी लघुता होती है मुनियोंमें निर्दयत
और अन्य लोगोंका शामन-गच्छमें दीक्षा लेनेका अभा
हो होता है तथा संयमी जीवोंको सहायता देना महा
लाभका कारण है वास्ते गणविच्छेदका चाहिये कि उस मुनि
का शरीर जहातक राग मुक्त न हो घहातक वैयायथ करे कि
उस मुनिका शरीर रोगमुक्त हो जाय तब वैयायथ करनेका

मुनिको व्यवहार शुद्धिये निमित्त नाममात्र प्रायश्चित्त देवे कारण—यह ग्लान साधु उस समय दोषित है, परन्तु घेयायञ्च करनेवाला उत्कृष्ट परिणामसे तीर्थकर गोत्र बाध सकता है

(१८) नौया प्रायश्चित्त सेवन करनेवालेको अगृहस्थपणे दीक्षा देना नहीं कल्पै गणविच्छेदकको

(१९) नौया अनयस्थित नामका प्रायश्चित्त कोई साधु सेवन कीया हो, उसको फिरसे गृहस्थलिंग धारण करवावे ही दीक्षा देना गणविच्छेदकको कल्पै

(२०) दशया प्रायश्चित्त करनेवालेको अगृहस्थपणे दीक्षा देना नहीं कल्पै गणविच्छेदकको

(२१) दशया पारचित नामका प्रायश्चित्त किसी साधुने सेवन कीया हो, उसको फिरसे गृहस्थलिंग धारण करवावे ही दीक्षा देना गणविच्छेदकको कल्पै

(२२) नौया अनयस्थित तथा दशया पारचित नामका प्रायश्चित्त किसी साधुने सेवन कीया हो उसे गृहस्थलिंग करवावे तथा अगृहस्थ (साधु) लिंगसे ही दीक्षा देना कल्पै

भाषार्थ—नौया दशया प्रायश्चित्त (बृहत्कल्पमें देखो) यह एक लौकिक प्रसिद्ध प्रायश्चित्त है इस वास्ते जनसमूहको शासनकी प्रतीतिव लीये तथा दुमरे साधुओंका क्षोभके लीये उसे प्रसिद्धिमें ही गृहस्थलिंग करवाके फिरसे नयी दीक्षा देना कल्पै अगर कोई आचार्यादि महान् अतिशय धार्मिक हो, जिसकी विशाल समुदाय हो अगर कोई भवितव्यताके कारण ऐसा दोष सेवन कीया हो, वह रात गुप्तपणे हो तो उसको प्रायश्चित्त अदर ही देना चाहिये तात्पर्य—शुभ प्रायश्चित्त हो, तो आलोचना भी गुप्त देना और प्रसिद्ध प्रायश्चित्त हो तो आलोचना भी प्रसिद्ध देना परन्तु आलो-

चना बिना आराधक नहीं होता है जैसे गच्छको और मधको प्रतीतिका कारण दो, अँमा करना चाहिये

(२३) दो साधु मद्दश समाचारीवाले साथमें विचरते हैं किसी कारणसे एक साधु दुसरे साधुपर अभ्याख्यान (कलव) देनेके इरादेसे आचार्यादिके पाम जाके अर्ज करे कि-हे भगधन, मैंने अमुक माधुके साथ अमुक अकृत्य काम कीया है इमपर जिस माधुका नाम लीया, उम माधुको आचार्य घुलघाके हित-बुद्धि और मधुरतासे पुछे—अगर यह साधु स्वीकार करे, तो उसको प्रायश्चित्त देवे, अगर यह साधु कहे कि-मैंने यह अकृत्य कार्य नहीं कीया है तो कलकदाता मुनिको उसका प्रमाण पुरसर पुछे, अगर यह साधुती पुरी न दे सके, तो जितना प्रायश्चित्त उम मुनिको आता था, उतना ही प्रायश्चित्त उस कलकदाता मुनिको देना चाहिये अगर आचार्य उम बातका पूर्ण निर्णय न कर, गग द्वेषके घश हों अप्रतिसेवीको प्रतिनेयी बनाके प्रायश्चित्त देवे तो उतना ही प्रायश्चित्तका भागी प्रायश्चित्त देनेवाला आचार्य होता है

भायार्थ—मयम है तो आत्माकी साक्षीमे पलता है और मय्य प्रतिज्ञा अँमा व्यवहार है अगर विगर साधुती किसीपर आक्षेप कायम कर दिया जायगा, तो फिर हरेक मुनि हरेकपर आक्षेप करते रहेगा, तो गच्छ और शासनकी मयादा रहना असंभव हागा वास्ते बात करनेवाले मुनिको प्रथम पूर्ण साधुती या नाच कर लेना चाहिये

(२४) किसी मुनिको मोहकमका प्रबल उदय होनेसे काम-पीडित हो, गच्छको छोडके ससारमें जाना प्रारभ कीया, जात हुवेका परिणाम हुया कि—अहो ! मैंने अकृत्य कीया, पाया हुया चारित्र चिंतामणिको छोड काचका कटका घहन करनेकी अभि-लाषा करता हु ऐसे विचारसे यह साधु फिरसे उसी गच्छमें

आनेकी इच्छा करे, अगर उस समय अन्य मातृ शका करे रि-
 इमने दोष सेवन कीया होगा या नहीं? उ-हाकी प्रतीतिके लीये
 आचार्यमहाराज उसकी जाच करे प्रथम उस मातृको पूछे
 अगर वह साधु कहे कि—मेने अमुक दोष सेवन कीया है तो
 उसको यथायोग्य प्रायश्चित्त देना अगर माधु कहे रि—मेने
 कुछ भी दोष सेवन नहीं कीया है, तो उसकी मृत्युतापर ही
 आधार रखे कारण प्रायश्चित्त आदिव्यवहारमे ही दीया जाता है

भावाथ—अगर आचार्यादिको अधिर शका हो तो जहा
 पर वह साधु गया हो, वहापर तलाम करा लि जाये भगवती
 सूत्र ८-६ मनकी आलोचना मनसे भी शुद्ध हो सकती है

(२५) एक पशुवाले साधुको स्वल्पमात्रके लीये आचार्या
 याध्यायकी पद्वी देना कर्तव्य परन्तु गच्छधामी निर्ग्रन्थको उसकी
 प्रतीति होनी चाहिये

भावाथ—जिन्होंको रागद्वेषमात्र पशु नहीं है अथवा एक
 गच्छमें गुरुकुलग्रामको चिरकात्र सेवन कीया हो प्राय गुरुकु
 लवास सेवन करनेवालेमें अनेक गुण होने हैं नये पुराणे आचार
 व्यवहार, माधु आदिके जानकार होते है, गच्छमर्यादा चलानेमे
 कृशल होते है, उ-होंको आचार्यकी मौजूदगीमे पद्वी दी जाती
 है अगर आचार्य कभी काग्रम पाया हो, तो भी उ-हाके पीछे
 पद्वीका झण्डा न हो, माधु साथ रहै स्वल्पकालकी पद्वी
 देनेका कारण यह है कि—अगर दुसरा कोई योग्य हो तो वह
 पद्वी उ-हाको भी दे सकते है अगर दुसरा पद्वीके योग्य न हो
 तो चिन्कालके लीये ही उसी पद्वीको रख सकते है

(२६) जो कोई मुनि परिहार तप कर रहे है, और कित-
 नेक अपरिहारिक साधु पशु निवास करते है उ-हाको एक

मंडलपर सविभागके साथ भोजन करना नहीं कर्तव्य कहातक ?
 कि जो एक मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, चार मासिक
 पाच मासिक, छे मासिक, जितना तप कीया हो, उतने मास
 और प्रत्येक मासके पीछे पाच पाच दिन पर छे मासके तपया
 लेके साथ तपके निचाय एक मास साथमें भोजन नहीं करे.
 कारण-तपस्याके पारणयालोंको शाताकागी आहार देना चाहिये.
 घाम्ते एकत्र भोजन नहीं करे बादमें मर्ष साधु सविभाग मयुक्त
 सामेल आहार करे

(२७) परिहार तप करनेवाले मुनिके पाग्णादिमें अश-
 नादि चार आहार घट स्वयं ही ले आते हैं दुसरे साधुका
 देना दिखाना नहीं कर्तव्य अगर आचार्यमहाराज विशेष कारण
 जानने आशा दे तो अशनादि आहार देना दिलाना कर्तव्य इसी
 मासिक घृतादि विगड भी नमझना

(२८) किसी स्थविर महाराजको धैयायसमें कोई परिहा-
 रिक तप करनेवाला साधु रहेता है, तो उम परिहारिक तप-
 स्यीके पात्रमें लाया हुआ आहार स्थविरके काममें नहीं आवे
 अगर स्थविर महाराज किसी विशेष कारणसे आशा दे दे कि-
 हे आर्य ! तुम तुमारे गौचरी जाते हो तो हमारे भी इतना आहार
 ले आना तो भी उम परिहारिक साधुके पात्रमें भोजन न करे
 आहार लानेके बादमें आचार्य अपने पात्रमें तथा अपने कमडलमें
 पाणी लेके काममें लेवे (भोगवे)

(२९) इसी मासिक परिहारिक साधु स्वत्रिके लीये
 गौचरी जा रहा है उम समय विशेष कारण जान स्थविर कहे
 कि—हे आर्य ! तुम हमारे लीये भी अशनादि लेते आना आ-
 हारादि लानेके बाद अपने अपने पात्रमें आहार, कमडलमें
 पाणी ले लेवे फिर पूवकी मासिक आहारादि भोगवे

भाषार्थ—प्रायश्चित्त लेवे तप कर रहा है इसी वास्ते वह साधु शुद्ध है धाम्ने उसने लाया हुआ अशनादि स्थविर भोगव सके परन्तु अभी तक तपको पूर्ण नहीं किया है धाम्ने उस साधुके पात्रादिमें भोजन न करे उससे उस साधुको क्षोभ रहता है तपको पूर्णतासे पार पहुँचा सकते हैं इति

श्री व्यवहार सूत्र—दूसरा उद्देशाका सभित्त सार



(३) तीसरा उद्देशा

(१) साधु इच्छा करे कि मैं गणको धारण कर अर्थात् शिष्यादि परिधारको ले आगवान हो के विचरु परन्तु आचाराग और निशीथसूत्रके जानकार नहीं है उन साधुको नहीं कल्पे गणको धारण करना

(२) अगर आचाराग और निशीथसूत्रका ज्ञाता हो, उस साधुको गण धारण करना कल्पे

भाषार्थ—आगेवान हो विचरनेवाले साधुको आचाराग सूत्रका ज्ञाता अर्थात् होना चाहिये, कारण—साधुको आचार, गोचार विनय, वैशाख, भाषा आदि मुनि मागका आचाराग सूत्रमें प्रतिपादन किया हुआ है अगर उस आचारसे स्वल्ना हो जाये, अर्थात् दोष लग भी जावे तो उसका प्रायश्चित्त निशीथ सूत्रमें है धाम्ने उस दोनों सूत्राका जानकार हो, उस मुनिको ही आगवान होके विहार करना कल्पे

(३) आगेवान हो विहार करनेकी इच्छावाले मुनियोंको पेन्तर स्थविर (आचार्य) महाराजने पूछना इसपर आचार्य महाराज योग्य जानके आशा दे तो कल्पे

(४) अगर आज्ञा नहीं देवे तो उस मुनिको आगेघन होके विचरना नहीं कल्पै जो बिना आज्ञा गणधारण करे, आगेघान ही विचरे, उस मुनिको, जितने दिन आज्ञा माहार रहै, उतने दिनका छेद तथा तप प्रायश्चित्त होता है और जो उन्हाके साथ रहनेवाले साधु हैं, उसको प्रायश्चित्त नहीं है कारण यह उस अग्ने श्वर साधु के कहनेसे रहे थे ।

(५) तीन वर्षकी दीक्षा पर्यायवाले साधु आचारमें, संयममें, प्रयत्नमें, प्रज्ञामें, सग्रह करनेमें, अवग्रह लेनेमें कुशल—होशीयार हो, जिसका चरित्र खडित न हुआ हो संयममें सबला दोष नहीं लगा हो, आचार भेदित न हुआ हो, कपाय कर चरित्र सक्रिय नहीं हुआ हो, बहु श्रुत, बहुत आगम तथा विद्याओंके जानकार हो, कमसे कम आचाराग सूत्र, निशीथ सूत्र के अर्थ पर मार्थका जानकार हो, उस मुनिको उपाध्याय पद देना कल्पै

(६) इससे विपरीत जो आचारमें अकुशल यायत् अल्प सूत्र अर्थात् आचाराग, निशीयका अज्ञातकी उपाध्यायपद देना नहीं कल्पै

(७) पाच वर्षोंकी दीक्षा पर्यायवाला साधु आचारमें कुशल यायत् बहुश्रुत हो, कमसे कम दशाश्रुतस्कन्ध, व्यवहार, बृहत्कल्प सूत्रोंके जानकार हो, उस मुनिको आचार्य, उपाध्यायकी पदवी देना कल्पै

(८) इससे विपरीत हो, उसे आचार्य उपाध्यायकी पदवी देना नहीं कल्पै

(९) आठ वर्षोंकी दीक्षा पर्यायवाले मुनि आचार कुशल यायत् बहुश्रुत--बहुत आगमों विद्याओंके जानकार कमसे कम स्थानाग, समथायाग सूत्रोंका जानकार हो, उस महात्मार्योंको

आचार्य, उपाध्याय, प्रवक्तव, स्वयिर, गणि, गणविच्छेदक, पद्मी देना कल्पे और उस मुनिको उक्त पद्मी लेना भी कल्पे

(१०) इससे विपरीत हो तो न सघको पद्मी देना कल्पे, न उस मुनिको पद्मी लेना कल्पे कारण-पद्मीधरके लीये प्रथम इतनी योग्यता प्राप्त करनी चाहिये जो उपर लिखी हुई हैं

(११) एक दिनक दिक्षितको भी आचार्यपद्मी देना कल्पे

भाषार्थ—किसी गच्छके आचार्य कालधर्म प्राप्त हुवे, उस गच्छमें साधु संप्रदाय विशाल है, किन्तु पीछे ऐसा कोई योग्य साधु नहीं है कि जिसको आचार्यपद पर स्थापन कर अपना निर्वाह कर सके उस समय अच्छा, उच्च, उलीन जिस कुलकी अन्दर बड़ी उदारता है, विश्वामकारी उच्च कार्य किया हुआ है, संसारमें अपने विशाल कुटुम्बका दितपूर्वक निर्वाह किया हो, लोकमें पूण प्रतीत हो-इत्यादि उत्तम गुणोवाले कुलका योग्य पुरुष दीक्षा ली हो, ऐसा एक दिनकी दीभाषालेको आचार्यपद देना कल्पे

(१२) वय पर्याय धारक मुनिको आचार्य उपाध्यायकी पद्मी देना कल्पे

भाषार्थ—कोई गच्छमें आचार्यापाध्याय कालधर्म प्राप्त हो गये हो और चिरदिक्षित आचार्यापाध्यायका योग न हो, उस हालतमें पूर्वोक्त जातिधान, कुलधान, गच्छ निर्वाह करने योग्य अचिरकाल दीक्षित है, उसको भी आचार्यापाध्याय पद्मी देनी कल्पे परन्तु यह मुनि आचाराग निशीथका जानकार न हो तो उसे कह देना चाहिये कि-आप पेस्तर आचाराग निशीथका अभ्यास करों इसपर यह मुनि अभ्यास कर आचाराग निशीथ सूत्र पढ़ ले, तो उसे आचार्यापाध्याय पद्मी देना कल्पे अगर

आचाराग निशीथ सूत्रका अभ्यास न करे, तो पढी देना नहीं कल्प कारण-साधुवर्गका स्वाम आचार आचाराग और निशीथ सूत्र परही है

(१३) जिस गच्छमें नवयुवक तरुण साधुवर्गका समूह है, उस गच्छके आचार्योंपाध्याय कालधर्म प्राप्त हो जाये तो उन मुनियोंको आचार्योंपाध्याय विना रहेना नहीं कल्पै उस मुनियोंको चाहिये कि शीघ्रतासे प्रथम आचार्य, फिर उपाध्यायपद पर स्थापन कर, उन्ही की आज्ञामें प्रवृत्ति करना चाहिये कारण-आचार्योंपाध्याय विना साधुवर्गका निर्वाह होना असंभव है

(१४) जिस गच्छमें नव युवक तरुण साधुवर्गका है उन्हाके आचार्य, उपाध्याय और प्रवर्तिनी कालधर्म प्राप्त हो गये हो, तो उन्हांको पहले आचार्यपद, पीछे उपाध्यायपद और पीछे प्रवर्तिनीपद स्थापन करना चाहिये भावना पूर्वक

(१५) साधु गच्छम (साधुवेपमे) रह कर मैथुनको सेवन कीया हो, उस साधुको जायजीवतक आचार्य, उपाध्याय, स्वधिर, प्रवर्तक, गणी, गणधर, गणचिच्छेदक, इस पदियोंमेंसे किसी प्रकारकी पढी देना नहीं कल्पै, और उस साधुको लेना भी नहीं कल्पै जिसको शासनका, गच्छका और वेपकी मर्यादाका भी भय नहीं है, तो वह पढीधर हो के शासनका और गच्छका क्या निर्वाह कर सके ?

(१६) कोई साधु प्रबल मोहनीयकर्मसे पीडित होनेपर गच्छ संप्रदायको छोडने मैथुन सेवन कीया हो, फीर मोहनीयकर्म उपशान्त होनेसे उमी गच्छमें फिरसे दीक्षा लें, ऊर्दान दीक्षा देनेवाला उसे दीक्षायोग्य जाने तो दे उस साधुको तीन वर्षतक पूर्वोक्त सात पढीसे किसी प्रकारकी पढी देना नहीं कल्प

और न तो उस साधुका पट्टी धारण करना कल्पै अगर तीन वर्ष अतिप्रमदके बाद चतुर्थ वर्षमें प्रवेश किया हो, वह साधु कामधिकारसे बिलकुल उपशात हुआ हो, निवृत्ति पाइ हो, इन्द्रियों शांत हो, तो पूर्वाक्त सात पट्टीमेंसे किसी प्रकारकी पट्टी देना और उस मुनिको पट्टी लेना कल्पै

भाषार्थ—भविष्यताके योगसे किसी गाताथको कर्मोदय के कारणसे विकार हो तो भी उसके दिलमें शासन बसा हुआ है कि वह गच्छ, वेप छोड़के अकृत्य काय किया है, और काम उपशात होनेसे अपना आत्मस्वरूप समझ दीमा ली है ऐसेको पट्टी दी जाये तो शासनप्रभायनापूर्वक गच्छका निवाह कर सकेगा-

(१७) इमी माफिक गण विच्छेदक

(१८) एष आचार्यापाध्याय

भाषार्थ—अपने पदमें रहके अकृत्य कार्य करे, उसे जाब-नाथ किसी प्रकारकी पट्टी देना और उन्होको पट्टी लेना नहीं कल्पै अगर अपने पदको, वेपको छोड़ पूर्वाक्त तीन वर्षोंके बाद योग्य जाने तो पट्टी देना और उन्होको लेना कल्पै भायनापूर्वकत

(१९) साधु अपने वेपको बिना छोड़े और देशांतर बिना गये अकृत्य कार्य करे, ता उस साधुको जायजीवतक मात पट्टीमेंसे कोईभी पट्टी देना नहीं कल्पै

भाषार्थ—जिम देश, ग्राममें वेपका त्याग किया है, उसी देश, ग्रामादिमें अकृत्य काय करनेसे शासनकी लघुता करनेवाला होता है यास्ते उसे किसी प्रकारकी पट्टी देना नहीं कल्पै अगर किसी साधुको भोगावली कर्मादियसे उन्माद प्राप्ति हो भी जाये, परन्तु उसके हृदयमें शासन बस रहा है यह अपना वे-शका त्याग कर, देशांतर जा, अपनी कामाभिका शांत कर, फिर

आत्मभाषणा वृत्तिसे पुन उसी गच्छमें दीक्षा ले, बादमें तीन वर्ष हो जाये, काम विकारसे पूर्ण निवृत्त हो जाय, उपशान्त हो, इन्द्रियों शांत हो, उसको योग्य जाने तो मात पद्मीमेंसे किसी प्रकारकी पद्मी देना कल्पे भाषणा पर्यवत

(२०) एष गणविच्छेदक

(२१) एष आचार्योपाध्यायभी समक्षना

(२२) माधु बहुश्रुत (पूर्वांगके ज्ञान) बहुत भागम, विधाके जानकार, अगर कोई जन्म कारण होनेपर मायासयुक्त मृपायाद—उत्सूत्र बोलने अपनी उपजीविका करनेवाला हो, उसे जायजीय तक मात पद्मीमेंसे किसी प्रकारकी पद्मी देना नहीं कल्पे

भाषार्थ—अमन्य बोलनेवालोंकी किमी प्रकारसे प्रतीति नहीं रहती है उत्सूत्र बोलनेवाला शासनका घाती कहा जाता है सभीका पत्ता मिलता है, परन्तु अमन्यवादीयोंका पत्ता नहीं मिलता है धान्ते अमन्य बोलनेवाला पद्मीने अयोग्य है

(२३) एष गणविच्छेदक

(२४) एष आचार्य

(२५) एष उपाध्याय

(२६) बहुतसे माधु एकत्र हो सक्के सब उत्सूत्रादि अमन्य बोलें

(२७) एष बहुतसे गण विच्छेदक

(२८) एष बहुतसे आचार्य

(२९) एष बहुतसे उपाध्याय

(३०) एष बहुतसे माधु, बहुतसे गणविच्छेदक, बहुतसे आचार्य, बहुतसे उपाध्याय एकत्र हुये, माया सयुक्त मृपायाद

घोले, उतचूत्र घोले, आगम विरुद्ध अचरण करे—इत्यादि असत्य
बोले तो मत्रके मद्यको जायजीधतक सात प्रकारमेंसे फोड़भी पढी
देना नहीं कल्पे अर्थात् मद्यके मत्र पढीके अयोग्य है इति

श्री व्यवहारसत्र—तीसरा उद्देशाका सक्षिप्त सार.



(४) चौथा उद्देशा

(१) आचार्यापाध्यायजीका शीतोष्ण कालमें अकेले वि
हार करना नहीं कल्पे

(२) आचार्यापाध्यायजीको शीतोष्ण कालमें आप सहित
दो ठाणेसे विहार करना कल्पे अधिक सामग्री न हो तो उतने
रहे, परन्तु कमसे कम दो ठाणे तो होनाही चाहिये

(३) गणविच्छेदकको शीतोष्ण कालमें आप सहित दो
ठाण विहार करना नहीं कल्पे

(४) आप सहित तीन ठाणेमें कल्पे भाषना पूर्वयत्

(५) आचार्यापाध्यायको आप सहित दो ठाणे चातु-
र्मास करना नहीं कल्पे

(६) आप सहित तीन ठाणे चातुर्मास करना कल्पे भा
षना पश्चयत्

(७) गणविच्छेदकको आप सहित तीन ठाणे चातुर्मास
करना नहीं कल्पे

(८) आप सहित चार ठाणे चातुर्मास रहना कल्पे

भाषार्थ—कमसे कम रहे तो यह कल्प है आचार्योंपाध्या
यसे एक साधु गणविच्छेदकको अधिक रखना चाहिये कारण—

दूसरे साधुर्वाक कारण हो तो आचार्य इच्छा हो तो वैयायश्च करें कराये, परन्तु गणविच्छेदकको नो अयश्य वैयायश्च करना ही पडता है वास्ते एक साधु अधिक रम्यता ही चाहिये

(९) ग्राम-नगर यायत् राजधानी ग्रहृतसे आचार्यापाध्याय, आप सहित दो ठाणे, ग्रहृतसे गणविच्छेदक आप सहित तीन ठाणे शीतोष्णकालमें विहार करना कल्पै

(१०) और आप सहित तीन ठाणे आचार्यापाध्याय, आप सहित चार ठाणे गणविच्छेदकको चातुमास रहना कल्पै परन्तु साधु अपनी अपनी निश्चा कर रहना चाहिये कारण—कभी अग्न अलग जानेका काम पडे तो भी नियत कीये हुये साधुओंको साथ ले विहार कर सरे भायना पूर्णवत्

(११) आचाराग और निशीथसूत्रके जानकार साधुको आगयान कर्के उन्हाके साथ अन्य साधु विहार कर रहे थे कदाचित् यह आगयान साधु कालधर्मका प्राप्त हो गया हो, तो शेष रहे हुये साधुओंकी अन्दर अगर आचाराग और निशीथ सूत्रका जानकार साधु हो तो उसे आगयान कर, मत्र साधु उन्हाकी आज्ञामें विचरना अगर ऐसा न हो, अर्थात् मत्र साधु आचाराग और निशीथसूत्रके अपठित हो तो मत्र साधुओंको प्रतिज्ञापूर्वक यहासे विहार कर जिस दिशामें अपने स्वधर्मों साधु विचरते हो, उसी दिशामें एक रात्रि विहार प्रतिमा ग्रहन कर, उम स्वधर्मोंयात्रे पाम आ जाना चाहिये रहन्तेमें उपकार निमित्त नहीं ठहरना अगर शरीरमें कारण हो तो ठेर मके कारण—निवृत्ति होनेके बाद पूर्वस्थित साधु कहे—हे आर्य ! एक दोय रात्रि और ठहरो कि तुमारे रोगनिवृत्तिकी पूर्ण स्वातरी हो ऐसा मौकापर एक दोय रात्रि ठहरना भी कल्पै एक दोय

रात्रिसे अधिक नहीं रहना अगर रोगचिकित्सा होनेपर एक दोय रात्रिसे अधिक ठहरे, तो जितना दिन ठहरे, उतना ही दिनोंका छेद तथा तप प्रायश्चित्त होता है

भाषाध—आचाराग और निशीथतंत्रके जानकार हो यह मुनि ही मुनिमार्गको ठीक तौरपर चला सकता है अपठितोंके लीये रहस्तेमें एक दोय रात्रिसे अधिक ठहरना भी शास्त्रकारोंने बिल्कुल मना कीया है कारण—लाभके बदले बड़ा भारी नुक-शान उठाना पड़ता है चात्रिण तो क्या परन्तु कभी कभी सम्य क्त्य रत्न ही खा बैठना पड़ता है वास्ते आचाराग और निशी थके अपठित साधुओंको आगंधान होके विहार करनेकी साफ मनाइ है

(१२) इसी मासिक चातुर्मास रहे हुं साधुवाके आगंधान मुनि काल करनेपर दुमरा आचाराग-निशीथके जानकार हो तो उसकी निश्राय रहना अगर पेसा न हो तो चातुर्मासमे भी विहार कर, अन्य साधु जो आचाराग-निशीथका जानकार हो, उन्हींके पास आ जाना चाहिये परन्तु एक दोय रात्रिसे अधिक अपठित साधुओंको रहनेकी आज्ञा नहीं है स्वेच्छासे रह भी जाये, ता जितने दिन रहे, उतने दिनका छेद तथा तपप्रायश्चित्त होता है भाषना पूयधत्

(१३) आचार्यापाध्याय अन्त समय पीछले साधुओंको कह कि—हे आय ! मेरा मृत्युके बाद आचार्यपदवी अमुक साधुको दे देना एसा कहके आचार्य कालधम प्राप्त हो गये पीछेसे साधु (सध) उस साधुको आचार्यापाध्याय पद्वीके योग्य जाने तो उसे आचार्यापाध्याय पद्वी दे देवे, अगर वह साधु पद्वीके योग्य नहीं है, (आचार्य रागभावसे ही कह गये हो) अगर गच्छमें

दुसरा माधु पत्नी योग्य हो तो उस योग्य साधुको पत्नी देवे अगर दुसरा साधु भी योग्य न हो, तो मूल जो आचार्य कह गये थे, उम्मी साधुको पत्नी दे देवे परन्तु उस माधुम इतना करार करना चाहिये कि—अभी गच्छमे कोई दुसरा पत्नी योग्य माधु नहीं है, यहातक तुमको यह पदवी दी जाती है फिर पत्नी योग्य साधु निकल आवेगा, उस समय आपको पदवी छोड़नी पड़ेगी इस सरतसे पत्नी दे देवे यादमें कोई पत्नीयोग्य साधु ही तो, संघ एकत्र हो मूल माधुको कहे कि—हे आर्य ! अब हमारे पास पत्नीयोग्य साधु है यास्ते आप अपनी पत्नीको छोड़ दे इतना कहने पर यह साधु पत्नी छोड़ दे तो उसको किन्ती प्रकारका छेद तथा तप प्रायश्चित्त नहीं है अगर आप उस पत्नीका न छोड़े, तो जितना दिन पत्नी रंगे, उतना दिनका छेद तथा तप प्रायश्चित्तका भागी हाता है तथा उस पत्नी छोड़ानेका प्रयत्न माधु संघ न करे तो सयने मत्र संघ प्रायश्चित्तका भागी होता है

भाषाये—गच्छपति योग्य अतिशययान् होता है यह अपने शासन तथा गच्छका नियान्न करता हुआ शासनोन्नति कर सकता है यास्ते पत्नी योग्य महान्मार्गाको ही देना चाहिये, अयोग्य को पत्नी देनेकी माफ मनाइ है

(१४) इसी माफिक आचार्यापाध्याय प्रबल मोहकर्मोदयसे विकार अर्थात् कामदेवको जीत न सके, शेष भोगायलिकर्म भोगवने के लीये गच्छका परिन्याग करते समय कहे कि—मेरी पत्नी अमुक माधुको देना यह योग्य हो तो उसको ही देना, अगर पत्नीके योग्य न हो, तो दुसरा माधु पत्नीके योग्य हा, उसे पत्नी देना अगर दुसरा माधु योग्य न हो, तो मूठ जिस माधुका नाम आचार्यने कहा था, उसे परांकि भरत कर पत्नी देना, फिर दुसरा

याग्य साधु होने पर उसकी पदवी ले लेना चाहिये माँगनेपर पत्नी छोड़ दे तो प्रायश्चित्त नहीं है अगर न छोड़े तथा छोड़ाने क लीये साधु सद्य प्रयत्न न करे, तो सप्तको तथा प्रकारका छेद और तप प्रायश्चित्त होता है भावना पूर्वकत

(१५) आचार्यापाध्याय किसी गृहस्थकी दीक्षा दी है, उस साधुकी बड़ी दीक्षा देनेका समय आनेपर आचार्य जानते हुये च्यार पाच रात्रिसे अधिक न रत्ते अगर फोड़ राजा और प्रधान श्रेष्ठ और गुमास्ता तथा पिता और पुत्र साथमें दीक्षा ली हो, राजा, श्रेष्ठ, और पिता जो बड़ी दीक्षा योग्य न हुवा हो और प्रधान, गुमास्ता, पुत्र बड़ीदीक्षा योग्य हो गये हो तो जबतक राजा श्रेष्ठ और पिता बड़ी दीक्षा योग्य नहीं बह्रातक प्रधान, गुमास्ता और पुत्रकी आचार्य बड़ी दीक्षासे रोक सकते हैं परन्तु ऐसा कारण न होनेपर उस लघु दीक्षावाला साधुकी बड़ी दीक्षासे रोके तो रोकनेवाला आचार्य उतने दिनके तप तथा छेदके प्रायश्चित्तका भागी होता है

(१६) पय अनजानते हुये रोने

(१७) पय जानते अनजानते हुये रोके, परन्तु यहा दश रात्रिसे ज्यादा रखनेसे प्रायश्चित्त होता है

टिप —अगर पिता, पुत्र और दुसराभी साथमें दीक्षा ली हा, पिता बड़ी दीक्षा योग्य न हुवा, परन्तु उसका पुत्र बड़ी दीक्षा योग्य हो गया है और साथमें दीक्षा लेनेवालाभी बड़ी दीक्षाके योग्य हो गया है अगर पिताके लीये पुत्रकी रोक दीया

१ सात रात्रि च्यार भाग छ मास—द्वारि द्वाभावा तीन काल है इतन म मयमें प्रतिक्रमणमें पंडिपण नामका जन्मयन तथा द्वावैकालिनका चतुथा ज्ययन मन्मनेवालोंने बड़ी दाचा दी जाती है

जाय, तो साथमें तुमरे दीक्षा लीथी, यह पुत्रमे दीक्षामें वृद्ध हो जाने इन घास्ते आचार्य महाराज उस दीक्षित पिताको मधुर वचनोंसे समझावे—हे आर्य ! अगर तुमारे पुत्रको बड़ी दीक्षा आयेंगा, ता उमका गौरव तुमारेही लीये होगा—इत्यादि समझावे पुत्रको बड़ी दीक्षा दे मत है

(१८) कोई मुनि ज्ञानाभ्यासवे लीये स्वगच्छको छोड़ अन्य गच्छमें जावे अन्य गच्छमें जो रत्नत्रयादिसे वृद्ध साधु है, यह सामान्य ज्ञानवाला है और लघु साधु है, यह अच्छे गोताय है उन्हांके पास यह साधु ज्ञानाभ्यास कर रहा है उस समय कोई अन्य साधर्मि साधु मिले यह पूछते है कि—हे आर्य ! तुम किसके पास ज्ञानाभ्यास करते हो ? उत्तरमें अभ्यासी साधु रत्नत्रयादिसे वृद्ध साधुकी नाम बतलावे तब पूछनेवाला कहे कि—इसे तो तुमारेही ज्ञान अच्छा है तो तुम उन्हांके पास कैसे अभ्यास करते हो तब अभ्यासक कहे कि—मैं ज्ञानाभ्यास तो अमृक मुनिवे पाम करता हू, परन्तु जो महात्मा मुझे ज्ञान देता है, यह उन्ही रत्नत्रयादिसे वृद्धकी आज्ञासे देता है

भाषार्थ—यह निदशकाका बहुमान करता हुआ अभ्यास करनेवाला महात्माकाभी चिन्तन महित बहुमान किया है

(१९) बहुतसे स्वधर्मि साधु एकत्र होके विचरनेकी इच्छा करे, परन्तु स्थविर महाराजको पूछे बिना एकत्र हो विचरना नहीं कल्पे अगर स्थविरांसी आज्ञा बिना एकत्र होरे विचरे तो जितने दिन आज्ञा बिना विचरे, उतने दिनोंका उद तथा तप प्रायश्चित्त होता है

भाषार्थ—स्थविर लाभका कारण जाने तो आज्ञा दे, नहीं तो आज्ञा न दे

(२०) बिना आज्ञा विहार करे, तो एक दोय तीन चार पाच रात्रिसे अपने स्वविरांकी देगके सत्यभावसे आगच्छा—प्रतिक्रमण कर, यथायोग्य प्रायश्चित्तको स्वीकार कर पुन स्वविरांकी आज्ञामें रहे, किन्तु हाथकी रेखा सुके यद्वातक भी आज्ञा बहार न रहै आत्मा है वही प्रधान धम है

(२१) आज्ञा बहार विहार करतेको चार पाच रात्रिसे अधिक समय हो गया हा, यादमें स्वविरांकी देव न यभावसे आलोचना-प्रतिक्रमण कर, जो शास्त्र परिमाणसे स्वविरां तप, छद्, पुन उत्थापन प्रायश्चित्त देव, उसे सविनय स्वीकार करे दुसरी दूषे आज्ञा लेन चिखरे जा जा कार्य करता हो, यह मय स्वविरांकी आज्ञासे ही करे, हाथकी रेखा सुके यद्वातक भी आज्ञासे बहार नहीं रहै तीसरा महाजनकी रभाके निमित्त स्वविरांकी आज्ञाको यावत् काया कर स्पश करे पर

(२२) (२३) दा अनापक विहारसे निवृत्ति होनेका है भावार्थ—इस योगी सूत्रामें स्वविरांकी आज्ञाका प्रधान पणा बतलाया है स्वविरांकी आज्ञाका पावन करनेसे ही मुक्ति याका तीसरा व्रत पालन हा सकता है

(२४) दा स्वधर्मों साथमें विहार करत है जिममें एक शिष्य है, दुसरा रत्नप्रयादिसे गुरु है शिष्यका श्रुतज्ञान तथा शिष्यादिना परिचार बहुत है, और गुरुका स्वल्प है तद्विपि शिष्यका गुरुमहागजका विनय धैर्यावस्थादि करना, आहार, पाणी, बस्त्र, पात्रादि अनुकूलतापथक लाक देना जल्पे गुरुगुरु प्राप्त रह के उन्हांकी सेवा-भक्ति करना कल्पे साधन—जो परिचार है, यह मय गुरुहृपाका ही फल है

(२५) और जो शिष्यको श्रुतज्ञान तथा शिष्यादिना

परिहार स्वल्प है, और गुरुको बहुत परिहार है परन्तु गुरुकी इच्छा हा तो शिष्यको देवे, इच्छा न हो तो न देवे, इच्छा हो तो पासमें रखे, इच्छा हो तो पासमें न रखे, इच्छा हो तो अशनादि देवे, इच्छा हो तो न भी देवे, यह सब गुरुमहाराजकी इच्छापर आधार है परन्तु शिष्यको तो गुरुमहाराजका प्रहमान विनय करना ही चाहिये

(२६) दो स्वधर्मा साधु साथमें विहार करते हो, तो उनका प्ररायण होके रहना नहीं कल्प परन्तु एक गुरु दुसरा शिष्य होके रहना कल्प अथात् एक दुसरेको वृद्ध समझ उन्हींको वन्दन-नमस्कार, सेवा भक्ति करते रहना चाहिये

(२७) पर दो गणविच्छेदक

(२८) दो आचार्यापाध्याय

(२९) बहुतसे साधु

(३०) बहुतसे गणविच्छेदक

(३१) बहुतसे आचार्यापाध्याय

(३२) बहुतसे साधु, बहुतसे गणविच्छेदक, बहुतसे आचार्यापाध्याय, परन्तु होके रहते है उन्हींको मत्रको प्रगावर होके रहना नहीं कल्प परन्तु उन सबोंको अन्दर गुरु-लघु होना चाहिये गुरुर्वाच प्रति लघुर्वाको साधु वन्दन नमस्कार, सेवा-भक्ति करते रहना चाहिये जिमसे शासनका प्रभाव और विनयमय धर्मका पालन हो सबे अर्थात् छोटा साधु बड़े साधुर्वाको, छोटा गण-विच्छेदक बड़े गणविच्छेदकको, छोटे आचार्यापाध्याय बड़े आचार्यापाध्यायको वन्दन करे तथा क्रमसर जैसे जैसे दीक्षा पर्याय हो, उनी मासिक वन्दन करते हुयेको शीतोष्णकालमें विहार करना कल्प इति

श्री व्यवहाम्मूत्र-चतुर्थ उद्देशाका सक्षिप्त सार

(५) पाचवा उद्देशा

(१) जैसे साधुयोगी आचार्य हात है, जैसे ही साधुयोगीका आचार, गौचरमे प्रवृत्ति करानेवागी प्रवर्तिनीजी हाती है उम प्रवर्तनीजीको शीतोष्णकालमें आप सहित द्वा टाणे विहार करना नहीं करै

(२) आप सहित तीन टाणे विहार करना करै

(३) गणविच्छेदणी—एक संघाडेमें आगेधान हाये विचने, उसे गणविच्छेदणी कहते है उसे आप सहित तीन टाणे शीतोष्णकालमें विहार करना नहीं करै

(४) परन्तु आप सहित च्यार टाणेस विहार करना करै.

(५) प्रवर्तनीको आप सहित तीन टाणे चानुमाम करना नहीं करै

(६) आप सहित च्यार टाणे चानुमाम करना करै

(७) गणविच्छेदणीको आप सहित च्यार टाणे चानुमांस करना नहीं करै

(८) आप सहित पाच टाणे चानुमांस करना करै भावना पधयत

(९) ग्राम नगर यावत् राजधानी बहुतसी प्रवर्तनीयां आप सहित तीन टाण, बहुतसी गणविच्छेदनीयां आप सहित च्यार टाणमे शीतोष्ण कालमें विचरना करै आर बहुतसी प्रवर्तनीयां आप सहित च्यार टाणे बहुतसी गणविच्छेदनीयां आप सहित पाच टाणे चानुमाम करना करै

(१०) एक दुसरेकी निधामें रहै

(११) जो साध्वी आचाराग और निशीथ सूत्रकी जानकार अन्य माध्वीयाँको ले अग्रसर विहार करती हा, कदाचित् यह आगवान माध्वी काल कर जाये, तो शेष माध्वीयोँकी अन्दर जा आचाराग और निशीथ सूत्रकी जानकार अन्य साध्वी हो तो उसको आगवान कर मर माध्वीयोँ उसकी निधामे विचरे कदाच णमी जानकार माध्वी न हा तो उम साध्वीयाँको अन्य दिशामें जानकार माध्वीया विचरती हो बहापर रहस्तेमे एकक गधी रहने जाना कल्प रहस्तेमें उपकार निमित्त रहना नहीं कपै अगर शरीरमें रोगादि कारण हो, तो जहातक रोग न मिटे, बहातक रहना कपै रोग मुक्त हानेपरभी अन्य माध्वीया रहे रि—हे आर्या ! एक दो रात्रि और ठेरो, ताके तुमारा शरीरका विवाम हो, उम हालतमें एक दो रात्रि रहना कपै परन्तु अधिक टहरना नहीं कपै अगर अधिक रहे, तो जितने दिन रहे, उतने दिनाँका उध तथा तपप्रायश्चित्त होता है

(१२) एव चतुर्मास रहे हुयेका भी अलापक समझना

भावार्थ—अपठित साध्वीयोँको रहेना नहीं कल्पै अगर चानुमास हो, ता भी यहासे विहार कर, आचाराग, और निशीथ सूत्रके जानकारने पास आजाना चाहिये

(१३) प्रवर्तणी अन्त समय कहे कि—हे आर्या ! मैं काल कर जाउ, तो मेरी पढी अमुक माध्वीको दे देना अगर वह साध्वी योग्य हो तो उसे पढी दे देना तथा वह साध्वी पदवीके योग्य न हो और दुमरी माध्वीया योग्य हो, तो उसे पढि देना चाहिये दुसरी साध्वी पढि योग्य न हो, तो जिसका नाम पतलाया था, उसे पढि दे देना, परन्तु यह सरत कर लेना कि—अपी हमारे पास पढीयोग्य साध्वी नहीं है यास्ते

आपको यह प्रयत्तणीके कहनेसे पढ़ी दी जाती है, परन्तु अन्य कोइ पढ़ी याग्य साधनी होगी, तो आपकी यह पढ़ी छोडनी होगी यादमे कोइ साधनी पढ़ी योग्य हो, तो पहलेसे पढ़ि छोडा लेनी इसपर पढ़ी छोड दे तो किसी प्रकारका प्रायश्चित्त नहीं है, अगर यह पढ़िको नहीं छोडे ता जितने दिन पढ़ी रखे, उतने दिन उद तथा तपप्रायश्चित्त हाता है अगर उसकी पढ़ी छोडनेमें साधनी और सद्य प्रयत्न न करे, ता उस साधनी तथा सद्य मन्त्रों प्रायश्चित्तक भागी बनना पडता है

(१४) इसी माफिक प्रयत्तणी साधनी प्रथम साहनीयकमरे उदयसे कामपीडित हो, फिर तमागम जात समयकाभी पत्र कहेना भावना चतुर्थ उद्देशा माफिक नमझना

(१५) आचार्य महागुरु अपन नवयुषक तरुण अवस्था चाल शिष्यका आचाराग और निशीथ सूत्रका अभ्यास कराया हो, परन्तु वह शिष्यको विस्मृत होगया जाण आचार्यश्रीने पूछा कि-हे आथ ! जो तुमको आचाराग और निशीथसूत्र विस्मृत हुआ है, तो क्या शरीरमे रोगादिकर कारणसे या प्रमादके कारणसे ? शिष्य अज करे कि-हे भगवन ! मुजे प्रमादसे सत्र विस्मृत हुआ है ता उस शिष्यको जाधजीवतर माता पढ़ीयोंसे किसी प्रकारकी पढ़ी देना नहीं करे कारण अभ्यास कीया हुआ ज्ञान विस्मृत हा गया, तो गच्छका रक्षण कैसे करगा ? अगर शिष्य कहे कि-हे भगवन ! प्रमादसे नहीं, किन्तु मेरे शरीरमें अमुक रोग हुआ या, उस रोगाधिसे पीडित होनेसे सूत्रा विस्मृत हुआ है तब आचार्यश्री कहे कि-हे शिष्य ! अत्र उस आचाराग और निशीथका फिरसे याद कर लेगा ? शिष्य कबूल करे कि-हाँ मैं फिरसे उस सत्राको कठस्थ कर लुगा तो उस शिष्यको

सात पट्टियोंसे पट्टी देना कल्पे अगर कठस्थ करनेका स्वीकार कर, फिरसे कठस्थ नहीं करे तो, उसे न तो पट्टी देना कल्पे और न उम शिष्यको पट्टी लेना कल्पे

(१६) इमी माफिक नवयुवति तरुण साध्वीका भी ममज्ञना चाहिये परन्तु यहा पट्टी प्रवर्तणी तथा गणत्रिचण्डणी-द्वय कहना शेष माधुयत्

(१७) स्यविर मुनि स्यविर भूमिको प्राप्त हुये, अगर आचाराग और निशीयसूत्र भूल भी जाये, और पीउसे कठस्थ करे, न भी करे तो उन्होंको सातों पट्टीसे किमी प्रकारकी भी पट्टी देना कल्पे कारण कि चिरकालसे उन महात्माओंने कठस्थ कर उमकी स्त्राध्याय कगी हुइ है अगर क्रमसर कठस्थ न भी हो, तो भी उसकी मतलब उन्होंकी स्मृतिमें जरूर है, तथा चिरकाल दीक्षापर्याय होनेसे उहुतसे आचार-गोचर प्रवृत्ति उन्होंने देखी हुइ है

(१८) स्यविर, स्यविरकी भूमि (६० वर्ष) को प्राप्त हुया, जा आचाराग और निशीयसूत्र विस्मृत हो गया हो, तो वह बैठे बैठे, सोते मोते, एक पमघाटे सोते हुये धीरे धीरेसे याद करे परन्तु आचाराग आर निशीय अथश्य कठस्थ रखना चाहिये कारण—साधुओंकी दीक्षासे लेके अत समय तकका व्यवहार आचारागसूत्रमें है, और उससे न्यलित हो, तो शुद्ध करनेके लीये निशीयसूत्र है

(१९) साधु साध्वीयोके आपममे पारह^१ प्रकारका समोग है अर्थात् घख पात्र लेना देना, वाचना देना इत्यादि उस साधु साध्वीयोको आलोचना लेना देना आपसमें नहीं कल्पे अर्थात् आलोचना करना ही तो साधु साधुओंके पाम और साध्वीयो

साध्वीयाँके पास ही आलोचना करना कल्पै अगर अपनी अपनी समाजमें आलोचना सुननेवाला हो, तो उन्हेंके पास ही आलोचना करना, प्रायश्चित्त लेना अगर दश गोलोंका जानकार साध्वीयामें उस समय हाजर न हो, तो साध्वीयाँ साधुओंके पास भी आलोचना कर सक, और साधु साध्वीयोंके पास आलोचना कर सकें

भाषाथ—जहातक आलोचना सुन प्रायश्चित्त देनेवाला हो, वहातक तो साधुओंको साध्वीयाँके पास और साधुओंका साधु याँके पास ही आलोचना करना चाहिये कि जिससे आपसमें परिचय न बढे अगर ऐसा न हो, तो आलोचना क्षणमात्र भी रखना नहीं चाहिये साध्वीयों साधुओंके पास भी आलोचना ले सकें

(२) साधु साध्वीयाँके आपसमें सभाग हैं, तथापि आपसमें पैयावच्च करना नहीं कल्पै, जहातक अय पैयावच्च करने वाला हो वहातक परन्तु दुमरा कोई पैयावच्च करनेवाला न हो, उस आप्तमें साधु, साध्वीयोंकी पैयावच्च तथा साध्वीयाँ, साधु याँकी पैयावच्च कर सकें भावना पुर्ववत्

(२१) साधुको रात्रि तथा बैकालमें अगर सप काट खाया हो तो उसका औषधोपचार पुरुष करता हो वहातक पुरुषके पास ही कराना अगर उसका उपचार करनेवाली कोई स्त्री हो, तो मरणान्त कष्टमें साधु स्त्रीके पास भी औषधोपचार करा सकते हैं इसी भाँतिके साध्वीको सप काट खाया हो तो जहातक स्त्री उपचार करनेवाली हो वहातक स्त्रीसे उपचार कराना, अगर स्त्री न हो किन्तु पुरुष उपचार करता हो, तो मरणान्त कष्टमें पुरुषसे भी उपचार कराना कल्पै यहापर त्रभालाभका कारण देखना यह कल्प स्थविरकल्पी मुनियाँका हैं जिनकल्पी मुनिको

तो किसी प्रकारका बंधन कराना कल्प ही नहीं अगर जिन कल्पों मुनिको मर्प काट जानेपर उपचार कराये तो प्रायश्चित्तका भागी होता है परन्तु स्वयिरक्तपी पुर्वाक्त उपचार कर्मानेमे प्रायश्चित्तका भागी नहीं है कारण-उन्हींका पेसा कल्प है इति श्री व्यवहारमुत्र-पाचमा उद्देश्या सप्त सार

(६) छद्मा उद्देश्या

(१) साधु इच्छा करे कि मैं मेरे ममारी मन्धी लोगके घरपर गौचरी आदिसे लीये गमन करू, तो उस मुनिको चाहिये कि पेस्तर स्वयिर (आचार्य) को पुँडे कि—हे भगवन् ! आपकी आज्ञा हो तो मे अमुक कार्यके लीये मेरे ससारी मन्धीयोके घहा जाउ ? इसपर आचार्यमहाराज योग्य जान आज्ञा दे ता गमन करे, अगर आज्ञा न दे तो उन मुनिको जाना नहीं कल्पै कारण—समारी लोगका क्षीयकालमे परिचय था, वह मोहकी वृद्धि करनेवाला होता है अगर आचार्यकी आज्ञाका उल्लघन पर स्वच्छन्दाचारी साधु अपने सन्धीयोके घहा चला भी जावे, तो जितने दिन आचार्यकी आज्ञा प्रहार रहे, उतने दिनाका तप तथा उद प्रायश्चित्तका भागी होता है

(२) साधु अल्पश्रुत, अप आगमविद्याका जानकार अके लैको अपने ममारी मन्धीयोके घहा जाना नहीं कल्पै

(३) अगर श्रुत गीतार्योके साथमे जाता हो, तो उसे अपने ममारी सन्धीयोके घहा जाना कल्पै

(४) साधु गीतार्योके साथमे अपने ममारी सन्धीयोके घहा भिक्षासे लीये जाते हैं वह पहले चावल चूलासे उतरा हो तो चावल लेना कल्पै, शेष नहीं

- (५) पहले दाल उतरी हा तो दाल लेना कल्पै, शेष नहीं
 (६) पहले चाय दाल दोनों उतरा हा तो दोनों कल्पै
 (७) चायल दाल दोनों पीठेसे उतरा हा तो दोनों न कल्पै-
 (८) मुनि जानेके पहले जो उतरा हा घह लेना कल्पै
 (९) मुनि जानेके बाद चूलासे जो उतरा हो घह लेना न कल्पै
 (१०) आचार्यापाध्यायना गच्छकी अन्दर पाच अतिशय होते हैं

(१) स्थंडिल, गोचरी आदि जाक पीठे उपाश्रयकी अन्दर आने समय उपाश्रयकी अन्दर आक पगको प्रमाजन करे

(२) उपाश्रयकी अन्दर लघु बडीनीतिसे निवृत्त हो सके

(३) आप समथ होनेपर भी अय माधुषाकी प्रियावश इच्छा हो ता करे इच्छा हो तो न भी करे

(४) उपाश्रयकी अन्दर एक दोय रात्रि पञ्चातमे ठेर सके

(५) उपाश्रयकी बहार अर्थात् ग्रामादिसे बहार जंगलमे एक दो रात्रि पञ्चातमे ठेर सके

यह पाच ऋाय मामाय मायु नहीं कर सक, परन्तु आचाय करे, तो आज्ञाका अतिक्रम न हाय

(११) गणविच्छेदक गच्छकी अन्दर दोय अतिशय हाते हैं

(१) उपाश्रयकी अन्दर एक त एक दो रात्रि रह सक

(२) उपाश्रयकी बहार एक दो रात्रि पञ्चातमे रह सके

भावार्थ—आचार्य तथा गणविच्छेदकाके आधारसे शासन रहा हुआ है उन्होँन पाम विधादिका प्रयोग अघश्य होना चाहिये कभी शासनका कार्य हो तो अपनी आत्मलधिसे शासनकी प्रभावना कर सक

(१२) ग्राम, नगर, यावत् मन्निवेश, जिसने एक दरवाजा हो, निकाम प्रवेशका एक ही रहस्ता हो, यहापर बहुतसे साधु जो आचाराग और निशीथसूत्रने अज्ञात हो, उन्होंको उक्त ग्रामादिमे डेरना नहीं कर्तै अगर उन्होंकी अन्दर एक साधु भी आचाराग और निशीथका जानकार हा, ता कोइ प्रकाशका प्रायश्चित्त नहीं है अगर ऐसा जानकार साधु न हो तो उस समय अज्ञात साधुओंको प्रायश्चित्त होता है जितने दिन रहे, उतने दिनोंका उँद तथा तप प्रायश्चित्त अज्ञातवि लीये होता है भावना पुथयत्

(१३) पय ग्रामादिके अलग अलग दरवाजे, निकाम प्रवेश अलग अलग हा ता भी बहुतसे अज्ञात साधुओंको यहापर रहना नहीं कर्तै अगर एक भी आचाराग निशीथ पठित साधु हा तो प्रायश्चित्त नहीं आवे नहि ता मयको तप तथा उँद प्रायश्चित्त दाता है

भाषाथ—अज्ञात साधु अगर उन्मार्ग जाता हो, तो ज्ञात साधु उसे तिवार मवे

(१४) ग्रामादिने बहुत दरवाजे, बहुत निकास प्रवेशके रास्ते है यहापर बहुश्रुत, बहुतसे आगम विधायोके जानकारना अवेना डेरना नहीं कर्तै, तो अज्ञात साधुओंका तो कहना ही क्या ?

(१५) ग्रामादिने एक दरवाजा, एक निकाम प्रवेशका रास्ता हो, यहापर बहुश्रुत बहुत आगमका जानकार मुनियों अवेला रहना कर्तै, परन्तु उस मुनियों अहोनिश साधुभाषका भी चिंतन करना, अप्रमादपणे तप मयमर्मे मग्न रहना चाहिये

(१६) बहुतसे मनुष्य (स्त्री, पुरुष) तथा पशु आदि पक्ष्य हुआ हा, उच्येष्टायोमे काम प्रदीप्त करते हो, मैथुन सेवन

करते हों, वहापर साधु साधुको नहीं डेरना चाहिये कारण आत्मा निमित्तघासी है जीर्णको चिरकालका काम विकारसे परिचय है अगर कोई ऐसे अयोग्य स्थानमें ठेरेगा, तो उस कामी पुरुष या पशु आदिको देख विकार उत्पन्न होनेसे कोई अचित श्रोत्रसे अपने घोयपात के लीये हस्तकर्म करते हुये का अनुघातिक मासिक प्रायश्चित्त होगा

(१७) इमी मासिक मैथुन मज्ञासे हस्त कम करते हुये का अनुघातिक चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा

(१८) साधु साधुकीयाँक पास्त किमी अन्य गच्छसे साधु आइ हो उसका साधु आचार गडित हुवा है मयममें सत्रल दोष लगा है, अनाचारसे आचारको भेद दीया है, क्रोधादि कर चारित्रको मलिन कर दीया हो उस स्थानकी आलाचना विगर सुने प्रतिभ्रमण न कराये, प्रायश्चित्त न देव ऐसही गडित आचार गालेकी मुखशाता पछना, धाचना देना, दीक्षाका देना साथमें भोज नका करना (साधुकीयाँको) मदैय साथमें रहना, स्वल्पकाल तथा चिरकालकी पढीका देना नहीं कल्पै

(१९) आचारादि गडित हुवा हा तो उसे आलोचना प्रति भ्रमण कराके, प्रायश्चित्त दे शुद्ध कर उनसे साथ पूर्णतक व्यवहार करना कल्पै

(२०) (२१) इमी मासिक साधु आश्रयभी दो अलापक ममज्ञना

भाषाथ—किसी कारणसे अन्य गच्छ के साधु साधु अथ गच्छमें जाये तो प्रथम उसको मधुर वचनोंसे ममज्ञाव, आलोचनादि करायने प्रायश्चित्त दे पीछे उसी गच्छमें भेज देव अगर उस गच्छमें दिनय धम और ज्ञान धमकी गामीसे आया हो, तो उसे

शुद्ध कर आप रख भी सने कारण समधीर्षा महायता देना बहुत लाभका कारण है और योग्य हो तो उन्हे स्वल्प काल तथा जायजीव तक आचार्यादि पढी भी देना कर्प इति

श्री व्यवहारम्—छग उद्देशाका मथिसु मार

(७) सातवा उद्देशा

(१) साधु साध्वीयोने आपसमें अज्ञानादि बारह प्रकारके सभाग है अथात् साधुयोकी आज्ञामें विहार करनेवाली साध्वीया है उन्हा के पास कोई अन्य गच्छसे निकलके साथी आइ है आनेवाली साध्वीका आचार गदित यावत उसको प्रायश्चित्त दीया बिना स्वल्पकालकी या चिरकालकी पढी देना साध्वी योको नहीं कर्पै

(२) साधुयोको पूछ कर उस आइ हुइ साध्वीको प्रायश्चित्त देने यावत स्वल्पकाल या चिरकालकी पढी देना साध्वी योको कर्पै

(३) साध्वीयोको बिना पूछे साधु उस साध्वीको पुवाल प्रायश्चित्त नहीं दे सके कारण—आखिर साध्वीयोका निर्वाह करना साध्वीयोके हाथमें है पीछेसे भी साध्वीयोकी प्रकृति नहीं मिलती हो, तो निर्वाह होना मुश्कील होता है

(४) साधु साध्वीयोको पूछ कर, उस साध्वीकी आलोचना सुन, प्रायश्चित्त देने शुद्ध कर गच्छमें ले सके, यावत योग्य हो तो प्रवर्षणी या गणत्रिच्छेदणीकी पढी भी दे सके

(५) साधु साध्वीयोके बारह प्रकारका सभोग है अगर साध्वीयो गच्छ मर्यादाका उल्लंघन कर अकृत्य कार्य करे (पासत्या-

करने हो, उदापर साधु साध्वीको नहीं ठगना चाहिये कारण आत्मा निमित्तघाती है जीवाँको चिरकालका काम विकारसे परिचय है अगर कोई ऐसे अयोग्य स्थानमे ठरेगा, तो उस कामी पुरुष या पशु आदिको देख विकार उत्पन्न होनेसे कोई अचित श्रोत्रसे अपने शौर्यपात के लीय हस्तकम करते हुए वा अनुघातिक मासिक प्रायश्चित्त होगा

(१७) इमी मासिक मैथुन सज्ञासे हस्त कम करते हुवेँको अनुघातिक चातुमासिक प्रायश्चित्त होगा

(१८) साधु साध्वीयाँक पास किमी अन्य गच्छसे साध्वी आइ हाँ उसका साधु आचार खडित हुआ है समयमें सफल दोष लगा है, अनाचारसे आचारको भेद दीया है, क्रोधादि कर चान्द्रिको मलिन कर दीया हो उस स्थानकी आलोचना विगल सुने प्रतिव्रमण न करावे, प्रायश्चित्त न देवे ऐसेही खडित आचार गालेकी मुखशाता पछना, वाचना देना, दीक्षाका देना साथमें भोजनका करना (साध्वीयाँकी) मद्रैय साथमें रहना, स्वल्पशाल तथा चिरघातकी पद्रीका देना नहीं करै

(१९) आचारादि खडित हुआ हाँ ताँ उसे आलोचना प्रतिव्रमण करावे, प्रायश्चित्त दे शुद्ध कर उसके साथ पूर्णत व्यवहार करना कल्प

(२०) (२१) इसी मासिक साधु आश्रयभी हो अलापक ममज्ञना

भाषा—विस्ती कारणसे अय गच्छ क साधु साध्वी अन्य गच्छमें जाये तो प्रथम उसको मधुर वचनासे समझाय, आलोचनादि करायक प्रायश्चित्त दे पीछे उसी गच्छमें भेज देवे अगर उस गच्छमें विनय धर्म और ज्ञान धर्मकी स्वामीसे आया हाँ, तो उसे

शुद्ध कर आप रख भी सने कारण ममयीका सहायता देना बहुत लाभका कारण है और योग्य हो ता उसे स्वरूप का तथा जायजीव तत्र आचार्यादि पढी भी देना कर्तव्य इति

श्री व्यवहारम्—छठा उद्देशाका सभिप्त साग

(७) सातवां उद्देशा

(१) साधु साध्वीयांके आपसमें अशनादि बारह प्रकारके सभोग है अर्थात् साधुयोकी आज्ञामें विहार करनेवाली साध्वीयां हैं उन्हों के पास कोई अन्य गच्छमे निकलके साध्वी आइ है आनेवाली साध्वीका आचार स्वहित याधत उसको प्रायश्चित्त दीया बिना स्वल्पकालकी या चिरकालकी पढी देना साध्वी यांको नहीं कर्तव्य

(२) साधुयांको पूछ कर उम आइ हुइ साध्वीको प्रायश्चित्त देके याधत स्वल्पकाल या चिरकालकी पढी देना साध्वी यांको कर्तव्य

(३) साध्वीयांको बिना पूंटे साधु उस साध्वीको पूर्वात्त प्रायश्चित्त नहीं दे सके कारण—आगिर साध्वीयांका निर्वाह करना साध्वीयांके हाथमें है पींटेसे भी साध्वीयांकी प्रकृति नहीं मित्रती हो, तो निर्वाह होना मुश्कील होता है

(४) साधु साध्वीयांको पूछ कर, उस साध्वीको आलोचना मुन, प्रायश्चित्त देके शुद्ध कर गच्छमें ले सके, यात्रत योग्य हो तो प्रयाणी या गणविच्छेदणीकी पढी भी दे सने

(५) साधु साध्वीयांके बारह प्रकारका सभोग है अगर साध्वीयां गच्छ मर्यादाका उल्लंघन कर अकृत्य कार्य करे (पामत्या-

योंका घ-दन करना, अशनादि देना लेना उस हालतमें साधु, माध्वीयोंने साथ प्रत्यक्षमें सभोगका विमभोग करे अर्थात् अपने सभोगसे प्रहार कर देवे प्रथम साध्वीयांको बुलवाके कहे कि— हे आर्या! तुमको दो तीन दफे मना करने पर भी तुम अपने अहृत्य कार्यको नहीं छोड़ती हो इस वास्ते आज हम तुमका साथ सभोगको विमभोग करते हैं उसपर माध्वी बोले कि—मैंने जा काय कीया है उसकी आलोचना करती हू, फिर ऐसा कार्य न करुगी तो उसके साथ पत्रकी माफिक सभाग रचना कल्पे अगर माध्वी अपनी भूलको स्वीकार न करें, तो प्रत्यक्षमें ही विमभोग कर देना चाहिये ताक दुसरी माध्वीयांका क्षोभ रहे

(६) पत्र साधु अहृत्य कार्य करे तो माध्वीयांको प्रत्यक्षमें सभोगका विमभोग करना उही कर्त्तव्य, परन्तु पराश्रय जैसे किसी साथ कहला देवे कि—अमुक अमुक कारणसे हम आपके साथ सभाग तोड़ देते हैं अगर साधु अपनी भूलका स्वीकार करे, तो साध्वीको साधुके साथ घ-दन व्यवहारादि सभाग रचना कल्पे अगर साधु अपनी भूलका स्वीकार न करे, तो उसको परोक्षपणे सभोगका विमभोग कर, अपने आचार्यापायाय मिलेनपर साध्वी कह देवे कि—हे भगवन्! अमुक साधुने साथ हमने अमुक कारणसे सभोगका विमभोग कीया है

(७) साधुयांका अपने लिये किसी माध्वीका दीक्षा देना, शिक्षा देना, साथमें भाजन करना, साथमें रखना, नहीं कल्पे

(८) अगर किसी देशमें मुनि उपदेशसे गृहस्थ दीक्षा लता हो, परन्तु उसकी लडकी प्राधा कर रही है कि—अगर दीक्षा लो, तो मैंभी दीक्षा लेउगी परन्तु साध्वी बहापर हाजर नहीं है उस हालतमें साधु उस पिताने साथमे लडकीको साध्वीयांके लिये

दीक्षा देवे यात्रत उसको साध्वीया मिलनेपर सुप्रत कर देने यह सूत्र हमेशाके लीये नहीं है, किन्तु एमा जोइ विशेष कारण होनेपर द्रव्य, क्षेप्र, काल, भाषवे जानकाराजी अपेक्षाका है

(९) इसी माफिकमात्री अपने लीये साधुको दीक्षा न देवे

(१०) परन्तु किसी माताये साथ पुत्र दीक्षाका आग्रह करता हो, तो मात्रीया माधुके लीये दीक्षा देकर आचार्यादि मिलनेपर साधुका सुप्रत कर देवे भावना पूर्वकत

(११) साध्वीयोका त्रिकट देशमें विहार करना नहीं कर्तै कारण—जहापर बहुतसे तस्कर लोग अनायाग हो, वहापर घस्रहरण, प्रतभगाविक अनेक दोषोंका सभय है

(१२) साधुजाको त्रिकट देशमेंभी लाभालाभका कारण जात विहार करना कर्तै

(१३) साधुघोंको आपसमें क्रोधादि हुआ हो, उसमें एक पक्ष वाले माधु त्रिकट देशमें विहार कर गये हो, ता दुमरा पक्षगले माधुघोंको स्वस्थान रहने समतगामणा करना नहीं कर्तै उन्हांको घटा त्रिकट देशमें जाये अपना अपनाध श्रमाना चाहिये

१४) सात्रीयाको कर्तै, अपना स्थान रहने समतगामणा कर लेना कारण—उह त्रिकट देशमें जा नहीं सक्ती है भावना पूर्वकत

(१५) माधु सात्रीयाका अस्वाध्यायकी अन्दर स्वा याय करना नहीं कर्तै अथात् आगमामें ३२ अस्वाध्याय तथा अन्यभी अस्वाध्याय कहा है उन्हांकी अन्दर स्वा याय करना नहीं कर्तै

(१६) साधु सात्रीयाको स्वाध्याय कालमें स्वाध्याय करना कर्तै

(१७) माधु साध्वीयोको अपने लीये अस्वाध्यायकी अन्दर स्वाध्याय करना नहीं कर्तै

(१८) परन्तु किसी साधु साध्वीयांकी वाचना चलती हो, तो उसकी वाचना देना कल्प अस्याध्यायपर पाठे (घट्ट) ग्रन्थ लेना चाहिये यह विशेष सूत्र गुरुगम्यताका है

(१९) तीन वर्षके दीक्षापर्यायवाला साधु, और तीन वर्षकी दीक्षापर्यायवाली साध्वीकी उपाध्यायकी पदवी देना कल्प

(२०) पाच वर्षके दीक्षापर्यायवाला साधु और साठ वर्षकी दीक्षापर्यायवाली साध्वीकी आचार्य (प्रथमणी) पदवी देना कल्प पदवी देते समय योग्यायाग्यका विचार अवश्य करना चाहिये इन विषय चतुर्थ उद्देशमें खुशामा फीया हुआ है

(२१) ग्रामानुग्राम विहार करता हुआ साधु, साध्वी कदाच कालधम प्राप्त हो, तो उसके साथवाले साधुओंको चाहिये कि-उस मुनि तथा साध्वीका शरीरको लेके बहुत निर्जीव भूमिपर परठे अर्थात् पकान्त भूमिकापर परठे, और उस साधुके भेड़ोप करण हा, घट्ट साधुवांकी काम आने योग्य हो ता गृहस्थोंकी आ-ज्ञासे ग्रहन कर अपने आचार्यादि घृद्धोंके पास रखे, पिसको जम्मत जाने आचार्यमहाराज उसको देवे घट्ट मुनि, आचार्य श्रीकी आज्ञा लेके अपने काममें लेवे

(२२) साधु साध्वीयां जिस मकानमें ठेरे हैं उस मका नका मालिक अपना मकान किसी अन्यकी भाडे देता हो, उस समय कहे कि इतना मकानमें साधु ठेरे हुये हैं, शेष मकान तुमका भाडे देता हु, तो घरधणीको शय्यातर रखना अगर घर-धणी न कहे, और भाडे लेनेवाला कहे कि-हे साधु ! यह मकान मैंने भाडे लीया है परन्तु आप सुखपूर्वक विराजो, तो भाडे लेने वालेकी शय्यातर रखना अगर दोनों आज्ञा दे तो दोनोंकी शय्यातर रखना

(२३) इमी माफिक मकान बेचनेके विषयमें ममज्ञाना

(२४) साजु जिस मकानमें ठेरे, उम मकानकी आज्ञा प्रथम लेना चाहिये अगर कोई गृहस्थकी नित्य निवास करनेवाली विधवा पुत्री हो, तो उमकी भी आज्ञा लेना कटपै, तो फिर पिता, पुत्रादिकी आज्ञाका तो कहना ही क्या ? सुहागण अनित्य निवासवाली पुत्रीकी आज्ञा नहीं लेना कारण-उनका मामरा कहा है कभी उनके हाथमें आहार ग्रहण करनेमें आवे, तो शय्यातर दोष लग जाये, परन्तु विधवा नित्य निवास करनेवाली पुत्रीकी आज्ञा ले सकते है

(२५) रहस्तेमें चलते चलते कभी वृक्ष नीचे रहनेका काम पड़े, तो भी गृहस्थोंकी आज्ञा लेना अगर कोई न मिले, तो पहले बफा पर ठेरे हुये मुसाफिरकी भी आज्ञा लेके ठेरना

(२६) जिस राजाके राज्यमे मुनि विहार करते हो, उम राजाका देहान्त हा गया हा, या जिमी कारणसे अन्य राजाका राज्याभिषेक हुआ हो परन्तु आगके राजाकी स्थितिमे कुछ भी फेरफार नहीं हुआ हा, तो पहलेकी लीइ हुइ आज्ञामें ही रहना चाहिये अर्थात् फिरमे आज्ञा लेनेकी जरूरत नहीं है

(२७) अगर नये राजाका अभिषेक होनेपर पहलेका कायदा तोड दीया हो, नये कायदे प्राधा हो, तो साधुर्षाको उस राजाकी दुसरीवार आज्ञा लेना चाहिये कि-हम लोग आपने देशमें विहार कर, धर्मोपदेश करते हैं इममे आपकी आज्ञा है ? कारण कि साधु विगर आज्ञा विहार करे, तो तीमरा व्रतका रक्षण नहीं होता है खीरी लगती है यास्ते अवश्य आज्ञा लेके विहार करना चाहिये इति

श्री व्यसहार सूत्र-सातवा उद्देशाका सक्षिप्त सार

(८) आठवा उद्देश

(१) आचार्यमहाराज अपने शिष्य सयुक्त किसी नगरमें चातुर्मास कीया हो यहापर गृहस्थांक मकानमें आज्ञासे ठेरे है उममें कोई साधु कहे कि—हे भगवन् ! हम मकानका इतना भन्द-रका मकान और इतना बहारका मकान में मेरी निश्रामें रखु ! आचार्यश्री उस साधुकी अशठता-सरलता जाणे कि—यह तपस्वी है, बीमार है, तो उतनी जगहकी आज्ञा देवे तो उम मुनिकों यह स्थान भागवता कल्पे अगर आचार्य श्री जाणे कि—यह धूर्त तासे आप सुखशीलीयापणासे साताकारी मकान अपनी निश्रामें रखना चाहता है तो उम जगहकी आज्ञा न दे और कहे कि हे आय ! पेस्तर रत्नप्रयादिने बृद्ध साधु है उन्हाके प्रमसर स्थान देनेपर तुमारे विभागमें आवे उम मकानका तुम भोगवना ता उस मुनिको जैमी आचार्य श्री आज्ञा दे, वैसाही करना कल्पे

(२) मुनि इच्छा करे कि—मैं हल्ला पाट, पाटला, तृणादि, शय्या, मस्तारक, गृहस्थोंके बहासे याचना कर लाऊ तो एक हाथसे उठा सके तथा रहस्तमें एक विश्रामा, दोय विश्रामा, तीन विश्रामा लेके लाने योग्य हो, पेसा पाट पाटग शीतोष्ण कालके लीये लावे

भाषाथ—यह है कि प्रथम तो पाट पाटला पेसा हल्लाही लाना चाहिये कि जहा विश्रामाकी आवश्यकता ही न रहै अगर पेसा न मिल तो एक दो तीन विश्रामा खाते हुवे भी एक हाथसे लाना चाहिये

(३) पाट पाटग एक हाथसे बहन कर उठा सके पेसा एक दो तीन विश्रामा लेके अपने उपाध्रय तक ला सके पसा जाने कि—यह मेरे चातुर्मासमें काम आवेगा भायना पूववत

(४) पाट पाटला पक्क हाथसे ग्रहण कर उठा मजे पक दो तीन च्यार पाच जिथामा ले के अपने उपाश्रय आ मजे, ऐमा पाट पाटला, वृद्ध उयधारक मुनि जो स्थिर वामकीया हो, उन्हीं के आधारभूत होगा एमा जाण लये

(-) स्यधिर महाराज स्यधिर भूमि (साठ वर्षकी आयु-ध्यनी) प्राप्त हुये को कल्पै

[१] दड—कान परिमाण दडा, उहार आत नाने समय चलनेमें महायकारी

[२] भंड—मयादासे अधिक पात्र, वृद्ध उयके कारणसे

[३] छत्र—शिरकी कमजोरी होनेसे शैत्य, गरमी निवारण निमित्त शिरपर कपडादिसे आच्छादन करनेके लिये कम्बली आदि

[४] मृत्तिका भाजन—मट्टीका भाजन लुनीत घडी नीत श्लेष्मादिके लीये

[५] लट्टी—मकानमें डधर, उघर फिरते समय टेका रखनेके लीये

[६] भिर्मिका-पूठ पीछाडी बैठत समय टेका रखनेके लीये

[७] चेर—यख, मयादासे कुछ अधिक यख, वृद्ध उयके कारणसे

[८] चलमगी—आहारादि करते समय जीव रक्षानिमित्त पडदा याधनेका यखको चलमली कहते हैं

[९] चर्मगड—पायोंकी चमटी कची पड जानेसे चला न जाता हो, उस कारणसे चर्मगड रतना पडे

[१०] चमकोश—गुह्य स्थानमें विशेष राग हाने पर काममें लीया जाता है

[११] चम अगुठी—बछादि मीने उम समय अगुली आदिमें रखनेके ठीके

चमका उपकरण विशेष कारणसे रखा जाता है अगर गौचरीपाणी निमित्त गृहस्थोंके बहा जाना पडता है उम समय आपके साथ ले जानेके निघाय उपकरण किसी गृहस्थोंके बहा रखे तथा उन्हाकी सुप्रत करके भिथाका जावे, पीछे आनेपर उम गृहस्थाकी रजा ले कर, उम उपकरणाकी अपने उपभोगमे लेवे जिनसे गृहस्थाकी खातरी रहै कि यह उपकरण मुति ही लीया है

(२) जिस मकानमें साधु ठेरे हैं उम मकानका नाम लेके गृहस्थोंके बहासे पाटपाटले लाया हो, फिर दुसरे मकानमे जानेका प्रयोजन हो, तो गृहस्थाकी आज्ञा बिगर यह पाटपाटले दुसरे मकानमें ले जाना नहीं कल्पै

(७) अगर कारण हो, तो गृहस्थाकी आज्ञासे ले जा सके है कारण—गृहस्थोंके आपसमें केइ प्रकारके टटे फिसाद होत है वास्ते बिगर पृष्ठे ले जानेपर घरका धणी कहे कि—हमारे पाट पाटले उस दुसरे मकानमें आप क्यों ले गये ? तथा उ-होंके पाटपाटले हमारे मकानमे क्यों गये ? इत्यादि

(८) जहापर साधु ठेरे हो, बहापर शय्यातरका पाटपाटले आज्ञासे लीया हो, फिर विहार करनेके कारणसे उ-होंको सुप्रत कर दीया, यादमे किसी लाभालाभने कारणसे बहा रहना पडे तो दुसरी दूजे आज्ञा लीया बिगर यह पाटपाटले वापरन नहीं कल्पै

(९) थापरना हो, तो दुसरी वषे और भी आज्ञा लेना चाहिये
 (१०) माधु माधुघीर्याको आज्ञा लेनेके पहला शय्या, म-
 स्तारक थापरना (भोगघा) नहीं कर्त्तव्य किन्तु पेस्तर मकान
 या पाटपाटलेयालेको आज्ञा लेना, फिर उम शय्या सस्तारकघा
 थापरना करके कदाचित् कोई ग्रामादिमे शेष दिन रह गया हो,
 आगे जानेका अयकाश न हो और माधुघीर्याको मकानादि सुलभ-
 तासे मिलता न हो, तो प्रथम मकानमें डेर जाना फिर यादमे
 आज्ञा लेना कर्त्तव्य धिगर आज्ञा मकानमें डेर गये फिर घरका
 धनी तकरार करे उम समय एक शिष्य कहे कि-हे गृहस्थ! हम
 रात्रिमें चरते नहीं हैं, और दुसरा मकान नहीं है, तो हम माधु
 कदा जावे ? उमपर गृहस्थ तकरार करे, जय वृद्ध मुनि अपने शि-
 ष्यको कहे-भो शिष्य ! एक तो तुम बिना आज्ञा गृहस्थाधि मकानमें
 डेरे हो और दुसरा इन्हींसे तकरार करते हो, यह टीका नहीं है
 इनसे गृहस्थकी श्रद्धा वृद्ध मुनिपर यह जानेसे यह कहते हैं कि-
 हैं मुनि ! तुम अच्छे न्यायवन्त हो यहा डेरो मेरी आज्ञा है

(११) मुनि, गृहस्थाधि घर गाँवरी गये, अगर कोई म्यल्प
 उपकरण भूमे उहा पड जावे, पीउसे कोई दुसरा माधु गया
 हो, तो उसे गृहस्थाकी आज्ञामे लेना चाहिये फिर यह मुनि
 मिले तो उसे दे देना चाहिये, अगर न मिले ता उमकी न तो
 आपले, न अन्य माधुघीर्याको दे एकान्त भूमिपर परठ देना चाहिये

(१२) इमी माफिक विहारभूमि जाते मुनिका उप-
 करण विषय

(१३) पर्व ग्रामानुग्राम विहार करते समय उपकरण विषय

भाषाथ—माधुका उपकरण जानके माधुके नामसे गृहस्थाकी
 आज्ञा लेके ग्रहण कीया था, अय माधु न मिलनेसे अगर आप

भाग्य, ता गृहस्थकी और तीर्थकरोंकी चोरी लग गृहस्थोंसे आजा लेनेको जानेमे गृहस्थाको अप्रतीत हो कि-क्या मुनिको इम वस्तुका लोभ होगा वास्ते यह मुनि मिले तो उसे दे देना, नहीं तो पकान्त भूमिपर परठ देना इसमें भी आजा लेनेयालमें अधिक याग्यता होना चाहिये

(१४) एक देशमे पात्र फामुक मिलने हो, दुसरे देशमे विचरनेवाले मुनिकाको पात्रकी जरूरत रहती है, ता उस मुनि याके लीये अधिक पात्र लेना कल्पे परन्तु जयतक उम मुनिका नहीं पूछा हा यहातक यह पात्र दुसरे साधुओंको देना नहीं कर्पे अगर उस मुनिका पूछनेसे कहे कि-मेरेको पात्रकी जरूरत नहीं है आपकी इच्छा हा, उसे दीजिये, तो योग्य साधुको यह पात्र देना कल्पे

(१५) अपने मदैय भाजन करते है, उम भोजन ३२ वि भाग करना (कर्पना करना) उममें अष्ट विभाग आहार करनेसे पौण उणोदरी, सोल विभाग करनेसे आधी उणादरी, चो बीश विभाग भोजन करनेसे पाथ उणादरी, एक विभाग कम भोजन करनेसे किंचित् उणोदरी तथा एक चाथल (सीत) गानेमे उन्कृष्ट उणोदरी कही जाती है साधु महात्माओंको मदैयके त्रिय उणोदरी तप करना चाहिये इति

श्री व्यवहारसूत्र-आठवा उद्देशाका सचिस सार

(६) नौवा उद्देशा

मकानका दातार दो, उमे शय्यातर कहते है उन्हांके घरका आहार पाणी साधुओंको लेना नहीं कल्पै यहापर शय्यातरकाही अधिकार कहते है

(१) शय्यातरके पाहुणा (महेमान) आया हो उसको अपने घरकी अन्दर तथा घाडाकी अन्दर भोजन बनानेके लीये सामान दीया और कह दीया कि--आप भोजन करनेपर बढ जावे यह हमको दे देना उस भोजनकी अन्दरसे साधुको देने तो साधुको लेना नहीं कल्पै कारण-यह भोजन शय्यातरका है

(२) सामान देनेके बाद कह दीया कि--हम तो आपको दे चुके है अब बढे हुये भोजनको आपकी इच्छा हो पैसा करना उस आहारसे मुनिको आहार देये, तां मुनिको लेना कल्पै कारण--यह आहार उम पाहुणाकी मालिकीका हो गया है

(३-४) एव दो अलापक मकानसे बाहार बैठके भोजन कराये, उस अपेक्षाभी समझना

(५-६-७-८) एव च्यार सूत्र, शय्या तरकी दासी, पेसी कामकारी आदिका मकानकी अन्दरका दो अलापक, और दो अलापक मकानके बाहारका

भायार्थ--जहा शय्यातरका हक हो, यह भोजन मुनिको लेना नहीं कल्पै और शय्यातरका हक निकट गया हो, यह आहार मुनिको लेना कल्पै

(९) शय्यातरके न्यातीले (स्वजन) एक मकानमें रहते हो, घरकी अन्दर एक चूलेपर एक ही बरतनमे भोजन बनाके अपनी उपजीविका करते हो उम आहारसे मुनिको आहार देये तो मुनिको लेना नहीं कल्पै

(१०) शय्यातरके न्यातीले एक मकानकी अन्दर पाणी विगरे मामल है एक चूलेपर भिन्न भिन्न भाजनमे आहार तैयार कीया है उस आहारसे मुनिको आहार देव ता यह आहार मुनिको लेना नहीं कल्पै कारण-पाणी दानाका मामल है

(११-१२) एक दो सूत्र, घरक बहाग चूलापर आहार तैयार करनेका यह च्यार सूत्र एक घरका बहाग इसी माफिक (१३-१४ १५-१६) च्यार सूत्र अलग अलग घर अर्थात् एक मोलमे अलग अलग घर है, परन्तु एक चूलापर एकदो घरतनमे आहार बनाने पाणी विगरे सब मामल होनेसे यह आहार साधु माध्वीयाको लेना नहीं कल्पै

(१७) शय्यातरकी दुकान विनीक सीर (हिस्सा-पाती) में है बहापर तैल आदि क्रयविक्रय होता हा बेचनेवाला भागीदार है माधुर्षाकी तैलका प्रयोजन होनेपर उम दुकान (जोकि शय्यातरके विभागमे है, तो भी) से तैलादि लेना नहीं कल्पै शय्यातर देता हो, तो भी लेना नहीं तल्पै मीरवाला दे तो भी लेना नहीं कल्पै

(१९-२०) एक शय्यातरकी गुल्की शाला (दुकान)

(२१-२२) एक क्रियाणाकी दुकानका दो सूत्र

(२३-२४) एक फपडाकी दुकानका दो सूत्र

(२५-२६) एक सूतकी दुकानका दो सूत्र

(२७-२८) एक कपास (रुई) की दुकानका दो सूत्र

(२९-३०) एक पसारीकी दुकानका दो सूत्र

(३१-३२) एक हलयाइकी दुकानका दो सूत्र

(३३-३४) एक भोजनशालाका दो सूत्र

(३५-३६) एक आम्रशालाका दो सूत्र

अठारामे छत्तीमया सूत्रतक कोइ विशय कारण होनेपर दुकानापर याचना करनी पडती है शय्यातरके विभागमें दुकान है, जिसपर भागीदार क्रय विग्रय करता है, यह देवे तामी मुनिको लेना नहीं करै कारण-शय्यातरका विभाग है, और शय्यातर देता हो, तौभी मुनिको लेना नहीं करै कारण शय्यातरकी यस्तु प्रदन करनेसे आधाकर्म आदि दौणोका मभय होता है तथा मकान मीठनेसे भी मुश्किली होती है

(३७) मत्त मत्तमिय भिक्षुप्रतिमा धारण करनेवाले मुनि योंको २९ अहाराग्र काल रगता है और आहार पाणीकी ७-१८ २१ २८-३२-४२-८९-१९६ दात होती है अथान प्रथम मात दिन एकैय दात, दुजे मात दिन दो दा दात, तीजे सात दिन तीन तीन दात, चौथे मात दिन च्यार च्यार दात, पाचवे मात दिन पाच पाच दात, छठे मात दिन छे उे दात, मातरे मात दिन मात सात दात, दात—एक दफे अर्गंडित धारामे देय, उमे दात कहने है औरभी इस प्रतिमाका जैसा सूत्रामे कल्पमाग बतगया है, उसका सम्यक् प्रकारसे पावन करनेसे यायत् आज्ञाका आराधक होता है

(३८) एष अष्ट अष्टमिय भिक्षु प्रतिमाको २४ दिन काल रगता है अग्र पाणीकी २८८ दात, यायत् आज्ञाका आराधक होता है

(३९) एष नवमिय भिक्षु प्रतिमाका ८१ दिन, ४०२ आहार पाणीकी दात, यायत् आज्ञाका आराधक होता है

(४०) एष दश दशमिय भिक्षु प्रतिमाको १०० दिन ८८० आहार पाणीकी दात यायत् आज्ञाका आराधक होता है

(४१) यज्ञसूपभनाराच सहान जघन्यसे दश पूर्व, उत्कृष्ट

चौद पूषधर महर्षियोंकी प्रतिज्ञा-अपेक्षा (प्रतिमा) दो प्रकारकी कहते हैं श्रुल्लकमोयक प्रतिमा, महामोयक प्रतिमा जिसमे श्रुल्लकमोयक प्रतिमा धारण करनेवाले महर्षियोंको शरदकाल-मृगमर माससे आषाढ मास तक जो ग्राम, नगर यावत् सन्निवे शये उहार घन, वनखड जिसमे भी विषम दुगम पर्वत, पहाड, गिगिखन्दरा मेगला, गुफा आदि महान भयकर, जो कायर पुन्ध देख तो हृदय कम्पायमान हो जावे, ऐसी विषम भूमि काकी अन्दर भाजन करके जाये, तो छे उपयाम (छे दिनतक) और भोजन न कीया हो तो सात उपयामसे पूण करे, और महामोयक प्रतिमा, जो भाजन करके जावे, तो सात दिन उपयाम, भाजन न करे तो आठ दिन उपयाम करे विशेष इम प्रतिमाकी विधि गुरुगम्यतामे रही हुई है वह गीतार्थ महात्मा वासे निणय करे क्या कि—अहामुत्तं, अहाकप्प, अहामग्ग. सूत्रकारनि भी इसी पाठपर आधार रखा है अतमे परमाया है त्रि—जैमी जिनाशा है, वैमी पालन करनेसे आशाका आराधक हो सकता है स्याद्वाद रहस्य गुरुगमसे ही मिल सकता है

(४३) दातकी मग्ग्या कग्गवाले मुनि पात्रधारी गृहस्थाके वहा जाते हैं एक ही दपे जितना आहार तथा पाणी पात्रमे पड जाता है, उसका शास्त्रकारनि एक दातीका मान बतलाया है जैसे घहुतसे जन एक स्थानमे भोजन करते हैं वह स्वल्प स्वल्प आहार एकत्र कर, एक लाडु बनाके एक साथमे देवे उमे भी एक ही दाती कही जाती है

(४४) इसी माफिक पाणीकी दाती भी समग्रता

(४५) मुनि मोक्षमार्गका साधन करनेके लीये अनेक प्रकारके अभिग्रह धारण करते हैं यहा तीन प्रकारके अभिग्रह बतलाये हैं

- [१] काष्ठके भाजनमें लाके देवे पेसा आहार ग्रहन करना
 [२] शुद्ध हाथ, शुद्ध भोजन चायठ आदि मिले तो
 ग्रहन करना
 [३] भोजनादिसे खरडे हुवे (लिप्त) हाथोंसे आहार
 देवे तो ग्रहन करना

(८६) तीन प्रकारके अभिग्रह—

- [१] भाजनमें डालता हुआ आहार देवे, तो ग्रहन कर
 [२] भाजनसे निकालता हुआ देवे तो ग्रहन कर
 [३] भाजनका स्वाद लेनेके लिये प्रथम ग्राम मुहमें
 डालता हो पैसा आहार ग्रहन कर

तथा पेसा भी कहते हैं—ग्रहन करता हुआ तथा प्रथमग्राम
 आस्वादन करता हुआ देवे तो मेरे आहारादि ग्रहन करना
 अभिग्रह करनेपर पैसाही आहार मिल तो लेना, नहीं तो अना
 दरपणे ही परीसदरूप शत्रुआका पगाजय कर मोक्षमार्गका साधन
 करने रहना इति

श्री न्यवहार मूर नोवा उद्देशाया सन्निप्त साग

(१०) दशवा उद्देशा

- (१) भगवान् धीर प्रभुने दीय प्रकारकी प्रतिमा (अभि
 ग्रह) फरमाइ है
 [१] घञ् मध्यम चंद्रप्रतिमा-यज्ञका आदि ओर अन्त वि-
 स्तारघाला तथा मध्य भाग पतला होता है

[७] यथमध्यम चद्रप्रतिमा-यथका आदि अन्त पतला
और मध्य भाग विस्तारवाला हाता है

इसो माफिक मुनि तपश्चर्या करते हैं जिसम यथमध्यचंद्र
प्रतिमा धारण करनेवाले मुनि एक माम तक अपने शरीर मर
भ्रमणका त्याग कर देते हैं जा देव मनुष्य तिथिच संयधी काई भी
परीसह उत्पन्न हाते हैं उसे सम्बद्ध प्रकारसे सहन करते हैं यह
परीसह भी दो प्रकारसे हाते हैं

[८] अनुदुल—जो घन्दन, नमस्कार पूजा मन्त्र करनेमे
राग कमरी खडा हाता है अर्थात् स्तुतिमे हृष नहीं

[९] प्रतिदुल—बडासे मारे, जातसे, बँतसे मारे पीट, आ
प्राश घचन वाले, उम समय द्वेष गज द्र खडा हाता है

इस दानों प्रकारसे परीपटका जात यथमध्यम प्रतिमा धारी
मुनिका शुक्लपत्रकी प्रतिपदाको एक दात आहार और एक
दात पाणी सेना कल्पे दूजका दो दात, तीजको तीन दात,
यावत् पर्णिमाको पद्रह दात आहार और पद्रह दात पाणी लना
कल्पे आहारकी विधि जो ग्राम, नगरमे भिक्षाचर भिक्षा ले
कर निवृत्त हो गये हा, अर्थात् दो प्रहर (दुपहर) को भिक्षावे
लीये जाये चचलता, चपलता आतुरता रहित जो पकेला भा
जन करता हो, दुपद, चतुष्पद ३ घण्ट येना नीरम आहार हा,
सोभी एक पग दरवाजाकी अन्दर, और एक पग दरवाजाके बा
हार, घट भा खरड हाथासे देवे, तो लना कल्पे परन्तु दो, तीन,
यावत् गहुतसे जन एकत्र हो, भाजन करते हो घडासे न कल्पे
वालकके लीये, गर्भपत्नीके लीये, ग्लानके लीये वीया हुआ भी
नहीं कल्पे बच्चाका दुध पान करातीको छोडाके देवे तो भी
नहीं कल्पे इत्यादि पपणीय आहार पुर्यवत् लेना कल्पे

कृष्णपक्षकी प्रतिपदाका चौदह दात, तूजका तेरह दात, यावत् चतुदशीको एक दात आहार, और एक दात पाणी लेना कल्पै, तथा अमावस्याका चौविहार उपवास करना कल्पै और सूत्रमें इसका कल्पमार्ग बतलाया है इमी माफिक पालन करनेसे यावत् आज्ञाका आराधक हो मत्ता है

यज्ञ मध्यम चन्द्र प्रतिमा स्वीकार करनेवाले मुनियोंको यावत् अनुकूट प्रतिकूल परीमह महन करे इस प्रतिमाधारी मुनि, कृष्णपक्षकी प्रतिपदाका पंद्रह दात आहार और पंद्रह दात पाणी, यावत् अमावस्याको एक दात आहार, एक दात पाणी लेना कल्पै शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको दोय दात आहार दाय दात पाणी लेना कल्पै यावत् शुक्लपक्षकी चतुदशीको पंद्रह दात आहार, पंद्रह दात पाणी, और पुर्णिमाको चौविहार उपवास करना कल्पै यावत् सम्यक् प्रकारसे पालन करनेसे आज्ञाका आराधक होता है यह दोनों प्रतिमामें आहारका जमे जैसे अभिग्रह कर भिक्षा निमित्त जाते हैं, घंसा पैनाही आहार मिटनेसे आहार करते हैं अगर पेना आहार न मिले तो, उस गोज उपवासही करते हैं

(२) पाच प्रकारके व्यवहार है—

[१] आगमव्यवहार [२] सूत्रव्यवहार [३] आज्ञा व्यवहार [४] धारणाव्यवहार [५] जीतव्यवहार

(१) आगमव्यवहार—जैसे अग्निहोत, वेधली, मन पर्यव शानी, अषधिज्ञानी, जातिम्मरण ज्ञानी, चौदह पूर्यधर, दश पूर्यधर, ध्रुतवेधली—यह सब आगम व्यवहारी हैं इन्होंके लीये करप-फायदा नहीं है कारण—अतिशय ज्ञानवाले भूत, भविष्य, वतमानमें गभालाभका कारण जाने, घंसी प्रवृत्ति करे

(२) सूत्रव्यवहार—अग, उपाग, मूल उदादि जिस कालमें जितने पत्र हा, उमके अनुमार प्रवृत्ति करना उमे सूत्र व्यवहार कहते हैं

(३) आशायवहार—कितनी एक वाताका सूत्रमें प्रतिपादन भी नहीं है, परन्तु उसका व्यवहार पृथ महर्षियोंकी आशासे ही चलता है

(४) धारणाव्यवहार—गुरुमहागज जा प्रवृत्ति करते थे, आलोचना देते थे, तत्र शिष्य उस वातकी धारणा कर लेते थे उसी माफिक प्रवृत्ति करना यह धारणा व्यवहार है

(५) जीतव्यवहार—जमाना जमानाक उल सहनन, शक्ति, लीकव्यवहार आदि देख भ्रष्ट आचार, शासनका पण्यकागी हो, मत्रियम निर्वाहा हो, ऐसी प्रवृत्तिकी जीतव्यवहार कहते हैं

आगम व्यवहारी हो, उम समय आगम व्यवहारका स्थापन करे, शेष च्यारी व्यवहारकी आवश्यकता नहीं है आगम व्यवहारके अभावमें सूत्र व्यवहार स्थापन करे, सूत्र व्यवहारके अभावमें आशा व्यवहार स्थापन करे, आशा व्यवहारके अभावमें धारणा व्यवहार स्थापन करे, धारणा व्यवहारके अभावमें जीत व्यवहार स्थापन करे

प्रश्न—हे भगवन् ! एसे किस कारणसे कहते हो ?

उत्तर—हे गौतम ! जिस जिन समयमें जिस जिस व्यवहारकी आवश्यकता होती है, उस उस समय उम उस व्यवहार माफिक प्रवृत्ति करनेसे जीव आशाका आराधक होता है

भाषार्थ—व्यवहारके प्रवृत्तानेवाले नि स्पृही महात्मा होते

हैं वह द्रव्य क्षेत्र माल भाव क्षेत्रके प्रवृत्ति करते हैं किमी अपेक्षामें आगमन्यवहारी सूत्रव्यवहारकी प्रवृत्ति, सूत्रन्यवहारी आक्षाव्यवहारकी प्रवृत्ति, आक्षान्यवहारी धारणाव्यवहारकी प्रवृत्ति, धारणाव्यवहारी जीतन्यवहारकी प्रवृत्ति-अर्थात् एक व्यवहारी दुमरे व्यवहारकी अपेक्षा रमते हैं, उम अपेक्षा संयुक्त व्यवहार प्रवृत्तानेमें जिनाक्षाका आगधक हो सक्ता है

(३) च्यार प्रकारके पुरुष (साधु) कहे जात हैं

[१] उपकार करते हैं, परन्तु अभिमान नहीं करे

[२] उपकार तो नहीं करे, किन्तु अभिमान बहुत करे

[३] उपकार भी करे और अभिमान भी करे

[४] उपकार भी नहीं करे और अभिमान भी नहीं करे

(४) च्यार प्रकारके पुरुष (साधु) हाते हैं

[१] गच्छका कार्य करे परन्तु अभिमान नहीं करे

[२] गच्छका कार्य नहीं करे, खात्री अभिमान ही करे

[३] गच्छका कार्य भी करे, और अभिमान भी करे

[४] गच्छका कार्य भी नहीं करे, और अभिमान भी नहीं करे

(५) च्यार प्रकारके पुरुष हाते हैं

[१] गच्छकी अन्दर साधुओंका संग्रह करे, किन्तु अभिमान नहीं करे

[२] गच्छकी अन्दर साधुओंका संग्रह नहीं करे, परन्तु अभिमान करे

[३] गच्छकी अन्दर साधुओंका संग्रह करे और अभिमान भी करे

[४] गच्छका अदर साधुयाका मग्रह भी नहीं करे,
और अभिमान भी नहीं करे, एय घस्र, पात्रादि

(६) च्यार प्रकारके पुरुष हाते है—

[१] गच्छक छते गुण दीपाये, शाभा करे, परन्तु अभि
मान नहीं करे एय चौभगी

(७) च्यार प्रकारके पुरुष हाते है

[१] गच्छकी शुधूपा (यिनय भक्ति) करते है, किन्तु
अभिमान नहीं करते एय चौभगी

एय गच्छकी अदर जा माधुयोंको अतिचारादि हो, तो
उहोंको आलोचना करवाके विशुद्ध कराये

(८) च्यार प्रकारके पुरुष हाते है—

[१] रूप-साधुया लिंग, रजाहरण, मुखयस्त्रिकादिको छोडे
(दुष्कालादि तथा राजादिका कोप होनेसे ममयको
जानके रूप छोडे) परन्तु जिनेद्रका अदरप धमका
नहीं छोडे

[२] रूपका नही छोडे (जमालीयन्) किन्तु धर्मका छोडे

[३] रूप और धम-दोनोंको नहीं छोडे

[४] रूप और धम-दोनोंका छोडे, जैसे कुलिगी अदरसे
अदर और सयमरहित

(९) च्यार प्रकारके पुरुष हाते है—

[१] जिनाशारूप धमको छोडे परन्तु गच्छमर्यादाको नहीं
छोडे जैसे गच्छमर्यादा है कि-अय सभोगीको वाचना नहीं
देना, और जिनाशा है कि-योग्य हो उस सयको वाचना देना
गच्छमर्यादा रखनेवाला सयको वाचना न देवे

[२] जिनाशा रग्वे, परन्तु गच्छमर्यादा नहीं रग्वे

[३] दोनों रग्वे

[४] दोनों नहीं रग्वे

भाषार्थ—द्रव्यक्षेत्र देगके आचार्यमहाराज मर्यादागदी हो
वि—साधु साधुओंकी वाचना देवे, माधवी साधवीर्याकी वाचना
दे और जिनाशा है कि योग्य हो तो सगकी भी आगमगवाचना दे
परन्तु देशकालमे आचार्यमहाराजकी मर्यादाका पालन, भवि
ष्यमें लाभका कारण जान करना पडता है

(१०) च्यार प्रकारके पुरुष होते हैं—

[१] प्रिय धर्मी—शासनपर पुर्ण प्रेम है, धर्म करनेमे
उत्साही है, कि तु दृढ धर्मी नहीं है, परिपह सहन
करने की मन मजज्युत रखने म असमर्थ है

[२] दृढ धर्मी है, परन्तु प्रियधर्मी नहीं है

[३] दोनों प्रकार है

[४] दोनों प्रकार असमर्थ है

(११) च्यार प्रकारके आचार्य होते हैं—

[१] दीक्षा देनेवाले आचार्य हो, किन्तु उत्थापन नहीं
करते है

[२] उत्थापन करते है, परन्तु दीक्षा देनेवाले नहीं है

[३] दोनों है

[४] दोनों नहीं है

भाषार्थ—एउ आचार्य विद्वाग करने आये, उह वैरागी
शिष्योंकी दीक्षा देव उहा निगम करनेवाले साधुओंकी सुप्रत

कर विहार कर गये उम नय द्विभित साधुको उत्थापन उद
दीक्षा अन्य आचार्यादि दवे इमी अपेक्षा समझना

(१२) चार प्रकारके आचार्य होते हैं—

- [१] उपदेश करते हैं, परन्तु वाचना नहीं देते हैं
- [२] वाचना देते हैं, किन्तु उपदेश नहीं करते हैं
- [३] दोनों करते हैं
- [४] दोनों नहीं करते हैं

भावार्थ—एक आचार्य उपदेश कर दे कि—अमुक साधुको
अमुक आगमकी वाचना देना यह वाचना उपाध्यायजी देवे
कोई आचार्य ऐसे भी होते हैं कि—आप खुद अपने शिष्य समु
दायको वाचना देवे

(१३) धमाचार्य महाराजके चार अतेषामी शिष्य होते हैं—

- [१] दीक्षा दीया हुआ शिष्य पासमें रहें, परन्तु उत्थापन
पन कीया हुआ शिष्य पासमें नहीं मिले
- [२] उत्थापनवाला मिले परन्तु दीक्षावाला नहीं मिले
- [३] दोनों पासमें रहें
- [४] दोनों पासमें नहीं मिले

भावार्थ—आचार्य महाराज अपने हाथसे लघु दीक्षा दी
उसको बड़ी दीक्षा किसी अन्य आचार्यने दी यह शिष्य अपने
पासमें है और अपने हाथसे उत्थापन (बड़ी दीक्षा) दी, व
साधु दुसरे गणपिच्छेदक के पास है तथा लघु दीक्षावाला अ
साधुवाके पास है, आपके पास सब बड़ी दीक्षावाले हैं

(१४) आचार्य महाराजके पास चार प्रकारके शिष्य
रहते हैं—

[१] उपदेश दीये हुए पासमें है, किन्तु याचना दीया वह पासमें नहीं है

[२] याचनावाला पासमें है, किन्तु उपदेशवाला पासमें नहीं है

[३] दोनों पासमें है

[४] दोनों पासमें नहीं है

भाषार्थ—पुष्यत्

एव च्यार सूत्र धर्माचार्य और धर्म अन्तेघासी के हैं लघु दीक्षा बड़ीदीक्षा उपदेश और याचनाकी भाषना पुष्यत् एव १८ सूत्र

(१९) स्थविर महाराजकी तीन भूमिका होती है—

[१] ज्ञाति स्थविर

[२] दीक्षा स्थविर

[३] सूत्र स्थविर

जिसमें माठ घण्टी आयुष्यवाला ज्ञातिस्थविर है, बीस घण्टी दीक्षावाला दीक्षा स्थविर है और स्थानाग तथा समवायाग सूत्र—अर्थने जानकार सूत्र स्थविर है

(२०) शिष्यकी तीन भूमिका है—

[१] जघन्य—दीक्षा देनेके बाद सात दिनके बाद बड़ी दीक्षा दी जाये

[२] मध्यम दीक्षा देनेके बाद च्यार मास होनेपर बड़ी दीक्षा दी जाये

[३] उत्कृष्ट छे मास होने पर बड़ी दीक्षा दी जाये

भाषार्थ—लघु दीक्षा देनेके बाद विदेपणा नामका अध्य-

यन सूत्राय कठस्थ करलेनेक बादम वडी दीक्षा दो जाय, उमका काल बतलाया है

(२१) साधु साध्वीयाका क्षुद्रक—छोटा षडका, लडकी या आठ वर्षसे कम उम्मरवालाका दीक्षा देना, वडीदीक्षा देना, शिष्या देना, साथमें भोजन करना, सामेल रहना नहीं कल्पै

भायाथ—जबतक यह बालक दीक्षाका स्वरूपको भी नहीं जाने तो फिर उसे दीक्षा दे अपने ज्ञानादिमें व्याघात करनेमें क्या फायदा है ? अगर कोई आगम व्यवहारी हो, यह भविष्यका लाभ जाने तो यह पसेको दीक्षा दे भी मत्ता है ।

(२२) साधु साध्वीयाको आठ वर्षसे अधिक उम्मरवाला वैरागीको दीक्षा देना कल्पै, यावत् उमके सामेल रहना

(२३) साधु साध्वीयोको, जो बालक साधु साध्वी जिसकी कक्षामें गाल (रोम) नहीं आया हो, पेनोंको आचाराग और नि शीथसूत्र पढाना नहीं कल्पै

(२४) साधु साध्वीयोको जिम साधु साध्वीकी काखमें रोम (बाल) आया हो, विचारगान् हा, उसे आचाराग सूत्र और निशीथसूत्र पढाना कल्पै

(२५) तीन वर्षोंके दीक्षित साधुयाको आचाराग और नि शीथ सूत्र पढाना कल्पै निशीथसूत्रका फरमान हे कि जो आ गम पढनेके योग्य हो, धीर गभीर, आगम रहस्य समझनेमें शक्तिमान हा उसे आगमाका ज्ञान देना चाहिये

(२६) च्यार वर्षोंके दीक्षित साधुयाको सूयगडाग सूत्रकी वाचना देना कल्पै

(२७) पाच वर्षोंके दीक्षित साधुयोको दश कल्प और व्यग्र धारसूत्रकी वाचना देना कल्पै

(२८) आठ वर्षोंके दीक्षित माधुर्घाको मथानाग और सम-
चायाग सूत्रकी वाचना देना कल्पै

(२९) दश वर्षोंके दीक्षित साधुर्घाको पाचत्रा आगम भगवती
सूत्रकी वाचना देना कल्पै

(३०) इग्यारा वर्षोंके दीक्षित माधुर्घाको श्रुद्धक प्रवृत्ति,
विमाण महविमाण प्रवृत्ति, अगचुलीया, यगचुलीया, त्र्यग्रहार-
चुलीया अध्ययनकी वाचना देना कल्पै

(३१) बारहवा वर्षोंके दीक्षित मुनिको अरुणोपात, गरुलो-
पात, धरुणोपात, वैशमणोपात, वैल्धरोपात नामका अध्ययनकी
वाचना देना कल्पै,

(३२) तेरहवा वर्षोंके दीक्षित मुनिको उत्थानसूत्र, समुत्थान-
सूत्र, देवेन्द्रोपात, नागपर्यायसूत्रकी वाचना देना कल्पै

(३३) चौदा वर्षोंके दीक्षित मुनिको स्वप्नभाषना सूत्रकी
वाचना देना कल्पै

(३४) पन्द्रह वर्षोंके दीक्षित मुनिको चरणभाषना सूत्रकी
वाचना देना कल्पै

(३५) सोलह वर्षोंके दीक्षित मुनिको वेदनीशतक नामका
अध्ययनकी वाचना देना कल्पै

(३६) सत्तर वर्षोंके दीक्षित मुनिको आमीविषभाषना ना-
मका अध्ययनकी वाचना देना कल्पै

(३७) अठारह वर्षोंके दीक्षित मुनिको दृष्टिविषभाषना ना-
मका अध्ययनकी वाचना देना कल्पै

(३८) एकीनविंश वर्षोंके दीक्षित मुनिको दृष्टियाद अगकी
वाचना देना कल्पै

(३९) षीश यर्षीके दीक्षित साधुको सय सूत्राकी याचना देना कल्पै अर्थात् स्वसमय, परममयक सय ज्ञान पठन पाठन करना कल्पै

(४०) दश प्रकारकी वैयावञ्च करनेसे कर्मोंकी निर्जरा और ससारका अन्त होता है आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी, नवशिष्य ग्लान मुनि कुल, गण सघ, स्वधर्मी इस दशोंकी वैयावञ्च करता हुआ जीय ससारका अन्त और कर्मोंकी निर्जरा कर अक्षय सुखको प्राप्त कर लेता है

इति दशवा उदेशा समाप्त

इति श्री व्यवहारसूत्रका सद्धिस सार समाप्त



॥ श्री रत्नप्रभसूरि सदगुरुभ्यो नम ॥

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग २२ वां



(श्रीनिशीथ सूत्र)

निशीथ—आचारागादि आगमामें मुनियोंका आचार उत लाया है, उम आचारसे स्वलना पाते हुये मुनियोंको नशियत देनेरुप यह निशीथसूत्र है तथा मोक्षमार्गपर चलते हुये मुनियोंको प्रमादादि चौर उन्मार्गपर ले जाता हो, उम मुनियोंको हितशिक्षा दे सन्मार्गपर लानेरुप यह निशीथसूत्र है

शास्त्रकारोंका निर्देश वस्तुतय उतलानेका है, और वस्तु तयका म्वरुप सम्यक् प्रकारसे समझना उमीका नाम ही सम्यग्ज्ञान है,

धर्मनीतिके साथ लोकनीतिका घनिष्ठ संबंध है जैसे लोक नीतिका नियम है कि—अमुक अकृत्य कार्य करनेवाला मनुष्य, अमुक दंडका भागी होता है इससे यह नहीं समझा जाता है कि सब लोग ऐसे अकृत्य कार्य करते होंग इसी भाफिय धर्मशास्त्रों मे भी लिखा है कि—अमुक अकृत्य कार्य करनेवालेको अमुक प्रायश्चित्त दिया जाता है इसीसे यह नहीं समझा जावे कि—सब धर्मज्ञ अमुक अकृत्य कार्य करनेवाले होंग हा, धर्मशास्त्र और नीतिका परमान है कि—अगर कोईभी अकृत्य कार्य करेगा,

यह अश्य दंडका भागी होगा यह उद्देश्य दुराचारसे प्रचाना और सदाचारमें प्रवृत्ति कराने लीये ही है दुराचार सेवन करना मोहनीय कर्मका उदय है, और दुर्गचारके स्वरूपको नम ज्ञाना यह ज्ञानावरणीय कर्मका शयोपशम है, दुराचारको त्याग करना यह चारित्र्य माहनीयकर्मका शयोपशम है

जब दुराचारका स्वरूपको ठीक तौरपर जान लगा तब ही उस दुराचार प्रति घृणा आवेगी जब दुराचार प्रति घृणा आवेगी तब ही जत करणसे त्यागवृत्ति होगी इमप्राम्ते पेश्तर नीतिज्ञ होनेकी खान आययत्ता है कारण—नीति धर्मकी माता है माताही पुत्रको पालन और वृद्धि कर सक्ती है

यहा निशियसूत्रमे मुख्य नीतिक साथ सदाचारका ही प्रति पादन कीया है अगर उस सदाचारमें घत्तन हुए कभी मोहनीय कर्मादयसे स्वल्ना हो, उसे शुद्ध बनानेका प्रापञ्चित्त यतलाया है प्रायश्चित्तका मतलब यह है कि—अज्ञातपनेसे एकदृषे जिस अपृथय कायका सेवन किया है उसकी आलोचना कर दूमरी बार उस कायका सेवन न करना चाहिये

यह निशियसूत्र राजनीतिक भाषिक धर्मकानुनका खजाना है जबतक साधु साध्वी इस निशियसूत्ररूप कानुनकोपको ठीक तौरपर नहा समझे हा, वहातक उसे अग्रेसरपदका अधिकार नहीं मिल सक्ता है अग्रेसरकी फज है कि—अपने आश्रित रहे हुये साधु साध्वीयाका सन्माममें प्रवृत्ति कराये कदाच उसमें स्वल्ना हो तो इस निशियसूत्रके कानुन अनुसार प्रायश्चित्त दे उसे शुद्ध बनाये तापर्य यह है कि साधु साध्वी जबतक आचाराग और निशियसूत्र शुरुगमतासे नहीं पढे हो, वहातक उन मुनियोंको अग्रेसर होके विहार करना, व्याख्यान देना, गोचरी जाना नहीं

कल्प वास्ते आचार्यश्रीको भी चाहिये कि अपने शिष्य शिष्य-
णीयोंको योग्यता पूर्वक पेस्तर आचारागसूत्र और निशियसूत्रकी
याचना दे और मुनियोंको भी प्रथम इसका ही अभ्यास करना
चाहिये यह मेरी नम्रता पूर्वक विनती है

सकेत—

(१) जहापर ३ तीनका अंक रखा जावेगा, उसे—यह कार्य
स्वयं करे नहीं, अन्य माधुषोंसे करावे नहीं, अन्य कोई माधु
करते हो उसे अच्छा समझ नहीं—उसको सहायता देये नहीं

(२) जहापर केवल मुनिशब्द या माधुशब्द रखा हो उहा
साधु और साध्वीयों दोनों समझना चाहिये जो साधुके माथ
घटना होती है, यह साधु शब्दके साथ जोड़ देना और साध्वी-
यके माथ घटना होती हो, यह साध्वीशब्दके माथ जोड़ देना

(३) लघु मासिक, गुरु मासिक लघुचातुर्मासिक, गुरु चा-
तुर्मासिक तथा मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, चतुर्मासिक,
पच मासिक और छे मासिक—इस प्रायश्चित्तवालोंकी क्या क्या
प्रायश्चित्त देना, उसके बदलेमें आलोचना मुनके प्रायश्चित्त देने
वाले गीतार्थ—बहुश्रुतजी महाराज पर ही आधार रखा जाता है
कारण—आलोचना करनेवाले किस भाषोंसे दोष सेवन किया है,
और किस भाषासे आलोचना करी है, कितना शारीरिक सा-
मर्थ्य है, यह प्रव्य, क्षेत्र, काल, भाग देखके ही शरीर तथा सय-
मका निर्वाह करके ही प्रायश्चित्त देते हैं इस विषयम धीसया उद्दे-
शमें कुछ खुलासा किया गया है अन्तु



(१) अथ श्री निशियसूत्रका प्रथम उद्देशा

जो भिक्षु—अष्ट कर्मोत्तर शशुदलको भेदनेवालोंको भिक्षु कहा जाता है तथा निरवघ भिक्षा ग्रहण कर उपजीविका कर गेवाओंको भिक्षु कहा जाता है यहा भिक्षुशब्दसे शास्त्रकारोंने साधु साध्वीयो दोनोंको ग्रहण किया है 'अगादान' अंग—शरीर (पुरुष स्त्री चिन्हरूप शरीर) कुचेष्टा (हस्तकर्मादि) करनेसे चित्तवृत्ति मलीनके कारण कर्मदल एकत्र हो आत्मप्रदेशोंके साथ कर्मबन्ध होता है उसे 'अगादान' कहते हैं

(१) हस्तकर्म (२) काष्ठादिसे अंग मंचलन (३) मदन (४) तैलादिसे मालीस करना, (५) काष्ठादि सुगंधी पदार्थका लेप करना (६) शीतल पाणी तथा गरम पाणीसे प्रक्षालन करना (७) त्वचादिका दूर करना (८) घ्राणेंद्रियद्वारा गंध लेना (९) अचित्त छिद्रादिसे धीर्यपातका करना यह सूत्र मोहनीय कर्मकी उद्दीरणा करनेवाले हैं ऐसा अकृत्य कार्य साधुओंको न करना चाहिये अगर कोई करेगा, तो निम्न लिखित प्रायश्चित्तका भागी होगा मोहनीय कर्मकी उद्दीरणा करनेवाले मुनियोंको क्या नुकसान होता है, वह दृष्टांतद्वारा बतलाया जाता है

(१) जैसे सुते हुए सिंहको अपने हाथसे उठाना (२) सुते हुए सर्पको हाथोंसे मसलना (३) जाज्वल्यमान अग्निको अपने हाथोंसे मसलना (४) तीक्ष्ण भालादि शस्त्रपर हाथ मारना (५) दुखती हुई आँखोंको हाथसे मसलना (६) आशीर्षि सर्प तथा अजगर सपका मुँहको फाटना (७) तीक्ष्ण धारवाली तलवारसे हाथ घसना, इत्यादि पूर्वाक्त कार्य करने वाला मनुष्यको अपना जीवन देना पडता है अर्थात् सिंह, सर्प,

अग्नि शिखादिसे कुचेष्टा करनेसे कुचेष्टा करनेवालोंको उड्डा भारी नुकशान होता है वास्ते मुनि उक्त कार्य स्वयं करे, अन्यसे पास करावे, अन्य करते हुयेको आप अच्छा ममज्ञ अनुमोदन करे अर्थात् अन्य उक्त कार्य करते हुयेको सहायता करे

(१०) कोई भी माथु माथ्थी सचित्त गन्ध गुलाब, केवडादि पुष्पोंकी सुगन्ध म्यय लेवे, लीरावे, लेतेको अनुमोदन करे

(११) , सचित्त प्रतिउद्ध सुगन्ध ले लीरावे लेतेको अनुमोदे

(१२) , पाणीचाला रहस्ता तथा कीचडजाला रहस्तापर अन्यतीर्थीयोंके पास अन्यतीर्थीयाके गृहस्थोंके पास काष्ठ पत्थरादि रखावे, तथा उच्चा चढनेके लीये रस्ता सीढी आदि रखावे (३)

(१३) ,, अन्य तीर्थीयाने तथा अन्य० के गृहस्थोंसे पाणी निकालनेकी नाली तथा खाइ गटर करावे (३)

(१४) ,, अन्य तीर्थीयासे, अन्य० से गृहस्थोंसे छोका छोकाके टक आदिक करावे (३)

(१५) ,, अन्य० अन्य० के गृहस्थाने सूतकी दोरी, उ नवा कधोरा नाडी—रमा, तथा चिलमिली (शयन तथा भोजन करते समय जीवरक्षा निमित्त गयी जाती है) करे (३)

(१६) , अन्य० अन्य० के गृहस्थोंसे मुइ (सूचि) घसावे—तीक्षण करावे (३)

(१७) ,, परं कतरणी (१८) नखउदणी (१९) का नसोधणी

भाषार्थ—बारहसे उन्नीसवे सूत्रमे अन्य तीर्थीया तथा अन्य तीर्थीयोंके गृहस्थासे कार्य करानेकी मना है कारण—उन्हांसे काय करानेसे परिचय उड्डता है यह अमयति है, अयतनासे कार्य करे अमयतियोंके सब योग माघष है

(२०) विग्न कारण सुइ, (२१) कतरणी, (२२) नख छेदणी, (२३) वानसाधणीयी याचना करे (३)

भावार्थ—गृहस्थांत्रि ब्रह्मा जानेवा कोइभी कारण न होने पर भी सुइ, कतरणीका नामसे गृहस्थांत्रि ब्रह्मा जाये सुइ, कतरणी आदिकी याचना करे

(२४) , अविधिसे सुइ, (२५) कतरणी (२६) नख छेदणी (२७) वानसाधणी याचे (३)

भावार्थ—सुइ आदि याचना करते समय ऐसा कहना चाहिये कि—दम सुइ ले जाते हैं यह कार्य हो जानेपर धापिस ला देंगे, अगर ऐसा न कहे तो अविधि याचना कहते हैं तथा सुइ आदि लेना हो ता गृहस्थ जमीनपर रख दे उसे आशासे उठा लेना परन्तु हाथोहाथ लेना इसे भी अविधि कहते हैं, कारण—लेते रखते कहा भी लग जाये, ता साधुर्वाका नाम सामेल होता है

(२८) , अपने अकेलेके नामसे सुइ याचवे तब अपना धाय होनेके बाद दुसरा साधु मागनेपर उमको देये (२९) यह कतरणी (३०) नखछेदणी (३१) वानसाधणी

भावार्थ—गृहस्थांत्रि ऐसा कहे कि मैं मेरे कपडे सीनेके लीये सुइ आदि ले जाता हू और फिर दुसराको देनेसे सत्यवचनका लोप होता है दुसरे साधु मागनेपर न देनेसे उम साधुके दिलमे रज्र होता है धाम्ते उपयोगवाला साधु किसीका भी नाम खोलके नहीं लाये अगर लाये तो सय साधु मनुदायके लीये लाये

(३२) ,, कार्य दानसे कोइ भी वस्तु लाना और कोय हो जानेसे यह वस्तु धापिस भी दी जाये उसे शास्त्रकारोंने पडि-

हारिय' कहते हैं अथात् उसे सरचीणी भी कहते हैं चन्द्र सीनेक नामसे सुइकी याचना करी उस सुइसे पात्र नीचे इसी माफिज

(३३) घख उटनेके नामसे कतरणी लाके पात्र ठेके

(३४) नख उटनेके नामसे नगडेदणी लाके काटा नीकाले

(३५) कानका मेल निकालनेके नामसे कानसोधणी लाके दातोका मेल निकाले

भाषाय—एक कार्यका नाम गोलने कोई भी वस्तु नहीं लाना चाहिये कारण-अपने तो एक ही कार्य हो परन्तु उसी वस्तुसे दुसरे साधुओंको अन्य कार्य हो, अगर वह साधु दुसरे साधुओंको न देवे तो भी ठीक नहीं और देवे तो अपनी प्रतिज्ञा का भंग होता है रास्ते पेस्तर याचना ही ठीकरा करना चाहिये अर्थात् साधु ऐसा कहे कि हमको इन वस्तुका खप है अगर गृहस्थ पूछे कि—हे मुनि ! आप इस वस्तुको क्या करोगे ? तब मुनि कहे कि—हमारे जिस कायमे जरूरत होगी, उसमें काम लेंगे

(३६) ,, सुइ धापिन देते प्रवत अधिधिसे देवे

(३७) कतरणी अधिधिसे देवे

(३८) घख नगडेदणी अधिधिसे देवे

(३९) कानसोधणी अधिधिसे देवे

भाषाय—सुइ आदि देते समय गृहस्थोंको हाथोहाथ देवे तथा इधर उधर फेंकवे चला जावे उसे अधिधि कहते हैं कारण—गृहस्थोंके हाथोहाथ देनेमें कभी हाथमें लग जावे तो साधुका नाम होता है इधर उधर फेंक देनेसे कोई पक्षी आदि भक्षण करनेसे जीयघात होता है

(४०) ,, तुंजाका पात्र, काष्ठका पात्र मट्टीका पात्र जो अन्य-तीर्थीयों तथा गृहस्थोंसे घसावे, पुछावे, निपमका सम करावे

समझा विषम करावे, नये पात्रा नैयार कराउ तथा पात्रों मधी स्थलप भी कार्ये गृहस्थांसि कराव ३

भाषार्थ—गृहस्थांका योग सायध है अयतनासे करे माते तगी रखना पडे, उसकी निष्पत्त पैसा दीलाना पडे इत्यादि दोषोंका संभव है

(४१) ,, दाढा (कान परिमाण) लट्टी (शरीर परिमाण), चीपटी लकड़ी तथा धामकी खापटी वद्मादि उतारनेके लीये और धामकी सुद् रजोहरणकी दशी पानेके लीये—उसको अय-तीर्थियों तथा गृहस्थांका पास समराये, अच्छी कराये विषमकी सम कराये इत्यादि भाषना पूर्वगत

(४२) पात्राको एक थैगला (कारी) लगाये ३

भाषार्थ—धिगर फूटे शोभाके निमित्त तथा बहुत दिन चलनेके लोभसे थैगलो (कारी) लगाये ३

(४३) , पात्राके फूट जानेपर भी तीन थैगलेसे अधिक लगाये

(४४) वह भी बिना विधि, अर्थात् अशोभनीय, जो अन्य लाग देख हीलता करे, पेसा लगाये ३

(४५) पात्राको अविधिसे बाधे, अर्थात् इधर उधर शिथिल बन्धन लगाये

(४६) बिना कारण एक भी बन्धनसे बाधे ३

(४७) कारण होनेपर भी तीन बन्धनसे अधिक बन्धन लगाये

(४८) अगर कोई आयक्षता होनेपर अधिक बन्धनवाला पात्रा भी ब्रह्मन करनेका अवसर हुआ तो भी उसे वेद माससे अधिक रखे ३

- (४९) ,, घस्रवा एक थेगला (फारी) लगावे, शोभावे लीये.
 (५०) कारन हानेपर तीन थेगलेसे अधिक लगावे ३
 (५१) अयिधिसे घस्र सीये ३
 (५२) घस्रवे कारन घिना एक गाठ देवे
 (५३) जीर्ण घस्रको चलानेके लीये तीन गाठसे अधिक देवे.
 (५४) ममत्यभायसे एक गाठ देवे घस्रको बाध रखे
 (५५) कारन हानेपर तीन गांठसे अधिक देवे
 (५६) घस्रको अयिधिसे गाठ देवे
 (५७) मुनि मर्यादासे अधिक घस्रकी याचना करे ३
 (५८) अग्न किंसी कारणसे अधिक घस्र ग्रहन कीया है,
 उसे देठ माससे अधिक रगे ३

भायार्थ—घस्र और पात्र रखते हैं, वह मुनि अपनी समय-यात्राका निर्याहके लीये ही रखते हैं यहापर पात्र और घस्रके सूत्रों बतलाये हैं उनमे खास तात्पर्य प्रमादकी तथा ममत्यभायकी घृद्धि न हो और मुनि हमेशा लघुमूत रहके स्वहित साधन करे

(५९) ,, जिम मकानमें साधु ठेरे हो, उस मकानमें जुया जमा हुआ हो, फचरा जमा हुआ हो उसे अन्यतीर्थीयों तथा उन्होंके गृहस्थोंसे लीराये, साफ करवावे ३

(६०) ,, पूतिकर्म आहार—पपणीय, निर्दोष आहारकी अन्दर एक सीत मात्र भी आधाकर्मी आहारकी मिल गई हो, अथवा सहस्र घरके अन्तरे भी आधाकर्मी आहारका लेप भी शुद्ध आहारमे मिश्रित हो, पन्ना आहार ग्रहन करे ३

उपर लिखे हुये ६० वोलोंसे कोईभी गोल, मुनि स्वयं से-

यम करे, अथ काइने पास नेयन कराय अथ कोइ नेयन करता हो उमे अच्छा समझे, उम मुनिका गुरु मामिक प्राय धित्त होता है गुरुमासिर प्रायधित्त किसका कहते है, यह इसी निशिय सूत्रके बीसया उद्देशामें लिखा जायगा

इति श्री निशियसूत्र-प्रथम उद्देशाका सचित्त सार

(२) श्री निशियसूत्रका दूसरा उद्देशा

(१) ' जो कोइ साधु साधुी ' काष्ठकी दडीका रजोहरण अर्थात् काष्ठकी दडीके उपर एक सूतका तथा उाका धस्त्र लगाया जाता है, उसे ओघारीया (निशियीया) कहते हैं उस ओघारीया रहित मात्र काष्ठकी दडीका ही रजोहरण आप स्वयं करे, क राये, अनुमोदे (२) पयं काष्ठकी दडीका रजोहरण ग्रहन करे ३ (३) पय धारण करे ३ (४) पय धारण कर ग्रामानुग्राम विहार करे ३ (५) दुमरे साधुयाको ऐमा रजोहरण रग्वनेनी अनुज्ञा दे ३

(६) आप रग्वके उपभोगन करे

(७) अगर ऐसाही कारण होनेपर काष्ठकी दडीका रजोहरण रखा भी हो तो देठ (१॥) मासने अधिक रखा हा

(८) काष्ठकी दडीका रजोहरणको शोभाके निमित्त धोय, धूपादि देये

भाषाथ—रजोहरण साधुयाका मुख्य चिह्न है और शास्त्रकारोंने रजोहरणको धमध्यज कहा है केवल काष्ठकी दडी होनेसे अथ जीयाको भयका कारण होता है इधर उधर पडजानेसे

जीवाधिको तकलीफ होती है तथा प्रतिमा प्रतिपन्न श्रावक होता है, यह काष्ठकी दडीका रजोहरण रखता है उसीका अलग पण भी यह बिहीन रजोहरण मुनि रग्वनेसे होता है इसी वास्ते यद्युक्त रजोहरण मुनियोंको रखनेका कल्प है कदाच ऐमा कारण हो तो दोढ मास तक यह रहित भी रग्व सकते है

(९) ,, अचिस प्रतिबद्ध सुगधको सुधे ३

(१०) ,, पाणीके मार्गमें तथा कीचड—कदम के मार्गमें काष्ठ, पत्थर तथा पाटों और उचे चढनेके लीये अघलपन मुनि स्थय करे ३

(११) पध पाणीकी खाइ, नालों स्थय करे

(१२) पध छोका ढकण करे

(१३) सूत, उन, सणादिकी रसी दोगी करे, तथा चिल-मिली आदिकी क्षीरी घटे ३

(१४) ,, सुइको घसे

(१५) कतरणी घसे

(१६) नरपछेदणी घसे

(१७) वानसोधणी—मुनि आप स्थय घसे तोक्षण करे ३

भाधार्य—भाग, तृटे तथा हाथमें लगनेसे रक्त निकले तो अस्वाध्याय हो प्रमाद घडे गृहस्थोंको शका इत्यादि दोष है

(१८) ,, स्वरूप ही फठोर घचन, अमनोश घचनघोले ३

(१९) ,, स्वरूप ही मृपायाद घचन घोले ३

(२०) ,, स्वरूप ही अदत्तादान ग्रहन करे ३

(२१) ,, स्वरूप ही हाथ, पग, कान, आस, नख, दात, मुद्द—शीतल पाणीसे तथा गरम पाणीसे पक्ष्यार धीये या पार-पार धीये ३

(२२) ,, अखण्डित चर्म अथात् सपूर्ण चर्म मृगच्छात्
रखे ३

भाषार्थ—विशेष कारण होनेपर साधु चर्मकी याचना
है, यह भी एक खंडे सारखे

(२३) ,, सपूर्ण यख रखे ३

भाषार्थ—संपूर्ण यखकी प्रतिलेखन टीक तौरपर नहीं
है, धीरादिका भय भी रहता है

(२४) ,, अगर सपूर्ण यख लेनेका काम भी पड़
तो भी उसकी काममें आने योग दुकडे कीया विगर रखे ३

(२५) ,, तुषा, काष्ठ, मट्टीका पात्रकी आप स्वयं
समारे, सुन्दर आकारधाला करे ३

भाषार्थ—प्रमादादिकी वृद्धि और स्वाध्याय ध्यानमें
होता है

(२६) पथ दड, लट्टी, खापटी, घस, सुइ स्वयं घसे,
मारे, सुन्दर बनावे ३

(२७) ,, साधुकीके पूर्व समारी न्यातीले थे, उन्हांकी
हायतासे पात्रकी याचना करे ३

(२८) ,, न्यातीक नियम दुसरे लोगोंकी सहायता
पात्रकी याचना करे

(२९) कीइ महान् पुरुष (धर्मान्ध) तथा राजसत्तावाल
सहायतासे

(३०) कीइ बलवानकी सहायतासे

(३१) पात्र दातारकी पात्रदानका अधिकाधिक लाभ
लाके पात्र याचे ३

भाषार्थ—साधु दीनतासे उक्त न्यातीलादिकों कहे कि—हमारे पात्रकी जरूरत है आप साथ चलके मुझे पात्र दीला दो आप साथमें न चलोगे, तो हमे पात्र कोह न देगा तथा न्यातीलादि साधुघोंके लीये पात्रयाचनाकी कोशीप कर, साधुको पात्र दीलावे अर्थात् मुनियोंको पराधीन न होना चाहिये

(३२) ,, नित्यपिंड (आहार) भोगये ३

(३३) ,, अग्रपिंड अर्थात् पहले उतरी हुई रोटी आदिको गृहस्थ, गाय कुत्तेको देते हैं—ऐसा आहार भोगवे ३

(३४) ,, हमेशा भोजन बनाने उसे आधा भाग दानार्थ नीकलते हो, ऐसा आहार तथा अपनी आमदानीसे आधा हिस्सा पुन्यार्थ निकाले, उससे दानशालादि खोले ऐसा आहार लेवे ३

(३५) ,, नित्य भाग अर्थात् अमुक भागका आहार दीनादिको देना—ऐसा नियम कीया हो, ऐसा आहार लेवे—भोगये ३

(३६) ,, पुन्यार्थ नीकाला हुआ आहारसे किंचित् भाग भी भोगवे ३

भाषार्थ—जो गृहस्थ दानार्थ, पुन्यार्थ निकाला भोजन दीन गरीबोंको दीया जाता है उसे साधु ग्रहन करनेसे उस भिक्षाचर लोगोंको अतराय होगा अथवा अन्य भी आधाकर्मी, उद्देशिक आदि दोषका भी संभव होगा

(३७) ,, नित्य एकही स्थानमे निवास करे ३

भाषार्थ—विगर कारण एक स्थानपर रहनेसे गृहस्थ लोगोंका परिचय घट जानेपर रागद्वेषकी वृद्धि होती है

(३८) ,, पहले अथवा पीछे दानेश्वर दातारकी तारीफ (प्रशंसा) करे ३

भाषार्थ—जैसे चारण भाट, भोजकादि, दातारोंकी तारीफ करते हैं, उसी माफीक साधुओंको न करना चाहिये वस्तुतत्त्व स्वरूप अघसरपर कह भी सके हैं

(३९) , शरीरादि फारणसे स्थिरवास रहे हुए तथा प्रामानुग्राम विहार करते हुये जिस नगरमें गये हैं वहापर अपने ससारी पूर्व परिचित जैसे मातापितादि पीछे सासु सुसरा उन्हाके घरमे पहिले प्रवेश कर पीछे गौचरी जाये ३

भाषार्थ—पहिले उन लोगोंको खबर होनेसे पूव स्नेहक मारे सदोष आहारादि ननाये आधाकर्म आहारका भी प्रसंग होता है

(४०) ,, अन्य तीर्थीयाक साथ, गृहस्थाक साथ, प्रायश्चि तीर्थ साधुओंके साथ तथा मू७ गुणोंसे पतित पेसे पासत्यादिके साथ, गृहस्थोंके वहा गौचरी जाये ३

भाषार्थ—अप्य तीर्थीयादिरे साथ जानेसे लोगोंको शंका होगी कि—यह सब लोग आहार एकत्र ही लात हागे, एकत्र ही करते होंगे अथवा दुसरेकी लज्जासे दयावसे भी आहारादि देना पडे इत्यादि

(४१) एव स्थडिल भूमिका तथा विहारभूमि (जिामन्दिर)

(४२) एव प्रामानुग्राम विहार करना भावना पूर्वकत्

(४३) मुनि समुदाणी भिक्षाकर स्थानपर आने अच्छा सुगन्धि पदाथका भोजन करे और खराब दुगन्धि भोजनको परठे ३

(४४) एव अच्छा नीतरा हुआ पाणी पीये और खराब गुदला हुआ पाणी परठे ३

(४५) ,, अच्छा सरस भोजन प्राप्त हो या आप भोजन

करनेपर आहार बंद जाये और दो फौशकी अन्दर एक मडलेके उस भोजन करनेवाले स्वधर्मी माधु हो, उमको घिगर पूंठे बंद आहार परठे ३

भाषार्थ—जबतक माधुयोको काम आते हो, यद्वातक परठना नहीं चाहिये कारण—मरस आहार परठनेसे अनेक जीवोंकी विराधना होती है

(४६) ,, मकानके दातारको शय्यातर कहते हैं उस शय्यातरका आहार ग्रहण करे

(४७) शय्यातरका आहार पिना उपयोगमे लीया हो, खबर पडनेपर शय्यातरका आहार भोगये ३

(४८) ,, शय्यातरका घर पूंठे घिगर गयेपणा कीये घिगर गौचरी जाये ३ कारण—न जाने शय्यातरका घर कौनसा है पहलेके आहारके सामेल शय्यातरका आहार आ जाये, तो मय आहार परठना पडता है

(४९) ,, शय्यातरकी निश्चासे अशनादि च्यार प्रकारका आहार ग्रहण करे ३

भाषार्थ—मकानका दातार चलने घर बतावे दलाली करे, तो भी साधुको आहार लेना नहीं कल्पै अगर लेवे तो प्रायश्चिन्तका भागी होता है

(५०) ,, ऋतुबद्ध चौमास पर्युपणा तक भोगवनेके लीये पाट, पाटला, तृणादि सस्तारक लाया हो, उसे पर्युपणाके बाद भोगये ३

(५१) अगर जन्तु आदि उत्पन्न हुया हो तो, दश रात्रिके बाद भोगये अर्थात् जन्तुयके लीये दशरात्रि अधिक भी रख सके

(५२) ,, पाट पाटला घर्पादमें पाणीसे भीजता हो, उसे उठाके अन्दर न रखे ३

(५३) ,, एक मकानके लीये पाट पाटला लाया हो, फिर किसी कारणसे दुसरे मकानमें जाना हो, उस बखत बिगर आज्ञा दुसरे मकानमें लें जाये ३

(५४) ,, जितने कालके लीये पाट पाटला तृण सन्तारक लाया हो, उसे कालमर्यादासे अधिक बिना आज्ञा भोगये ३

(५५) ,, पाट पाटला के मालिककी आज्ञा बिगर दुसरेको देये ३

(५६) ,, पाट पाटला शय्या सन्तार बिना दीये दुसरे ग्राम बिहार करे ३

(५७) ,, जीघोत्पत्ति न होनेके कारण पाट पाटले पर कोई भी पदार्थ लगाया हो उसे बिगर उतारे धनीको पीछा देये ३

(५८) ,, जीघ सहित पाट पाटला गृहन्थोंका धापिस देये ३

(५९) ,, गृहन्थोंका पाट पाटला आज्ञासे नया, उन्ने कोई चौर ले गया उसकी गवेपणा नहीं करे ३

भाधार्थ—वेदरकारी रखनेसे दुसरी दफे पाट पाटला मील नेमें मुदकेली होगी ?

(६०) जो कोई साधु साध्वी किंचित माघ भी उपपि न प्रतिलेखन करी रखे, रखाने रखते हुयेको अच्छा ममझे

उपर लिखे ६० बोलोंसे कोई भी बोल, साधु साध्वी सेवन करे, दुसरोसे सेवन कराये अन्य सेवन करते हुयेको अच्छा ममझे, सहायता देये उस साधु साध्वीयोको लघु मानिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि पुर्ववत्

इति श्री निशिथसूत्रके दुसरे उदेशाका सक्षिप्त सार.

(३) श्री निशियसूत्रका तीसरा उद्देशा

(१) ' जो कोइ साधु साध्वी ' मुसाफिर खानेमें, यागव-
गीचेमें, गृहस्थोंके घरमें, परिव्राजकोंके आश्रममें, चाहे वह अन्य
तीर्थी हो चाहे गृहस्थ हो, परन्तु वहापर जोर जोरसे पुकारकर
अशनादि च्यार प्रकारके आहारकी याचना करे, कराये, करतेको
अच्छा जाने यह सूत्र एक वचनापेक्षा है

(२) इसी माफिक बहु वचनापेक्षा

(३-४) जैसे दो अलापक पुरुपाश्रित है, इसी माफिक दो
अलापक स्त्री आश्रित भी समझना यह च्यार अलापक सामान्य
पणे कहा, इसी माफिक च्यार अलापक उक्त लोक कुतूहल
(कौतुक) के लीये आये हुयेसे अशनादि च्यार प्रकारके
आहारकी याचना करे ३ ५-६-७-८

एथ च्यार अलापक उक्त च्यारों स्यानपर सामने लाने अपे-
क्षाका है गृहस्थादि नामने आहारादि लाये, उस समय मुनि
कहे कि—सामने लाया हुआ हमको नहीं कल्पै, इसपर गृहस्थ
सात आठ कदम घापिस जाये तत्र साधु कहे कि—तुम हमारे
घास्ते नहीं लाये हो, तो यह अशनादि हम ले सके है ऐसी माया
वृत्ति करनेसे भी प्रायश्चित्तने भागी होते है एथ १२ सूत्र हुये

(१३) , गृहस्थोंके घरपर भिक्षा निमित्त जाते है, उस
समय गृहस्थ कहे कि—हे मुनि ! हमारे घरमें मत आइये ऐमा
कहनेपर भी दुमरी दफे उक्त गृहस्थके यहा भिक्षा निमित्त प्रवेश
करे ३

(१४) ,, बीमनधार देख वहापर जाके अशनादि च्यार
आहार ग्रहन करे ३

भाषार्थ—इस वृत्तिसे लघुता होती है लोचुपता घटती है

(१५) , गृहस्थोंके यहा भिक्षा निमित्त जाते हैं यहा तीन घरसे ज्यादा सामने लाके देते हुये अशनादिको ग्रहण करे ३

भाषार्थ—दृष्टिसे विगर देखी हुई वस्तु तो मुनि ग्रहण कर ही नहीं सकते हैं परन्तु कितनेक लोग चौका रखते हैं, और कोई देशोमे पत्नी भी भाषा है कि—यह भातपाणीका घर, यह बैठनेका घर यह जीमनेका घर—पैसे सहा घाची घरोंसे तीन घरसे उप रात सामने लाके देवे, उसे साधु ग्रहण करे ३

(१६) , अपने पाषाणों (शोभानिमित्त) प्रमार्ज, अच्छा साफ करे ३

(१७) अपने पाषाणोंको दवाये चपाव

(१८) , तैल, घृत, मक्खन, चरणीसे मालिस करावे ३

(१९) लोड्र कोकणादि सुगन्धि द्रव्यसे लिप्त करे

(२०) पथ शीतल पाणी, गरम पाणीसे पञ्चवार धारवार धोवे ३

(२१) , अलतादिक रगसे पाषाणोंको रगे ३

भाषार्थ—विगर कारण शोभा निमित्त उक्त कार्य स्वयं करे, अनेरोंसे करावे, करते हुयेको अच्छा समझे, अथवा सहायता देवे यह साधु ढडका भागी होता है

इसी माफिक छे सूत्र (अलापक) काया (शरीर) आधि त भी समझना, और इसी माफिक छे सूत्र, शरीरमें गडगुम्बड आदि होनेपर भी समझना ३३

(३४) , अपने शरीरमें मेद, फुनसी, गडगुम्बड, जलंधर, हरस मसा आदि होनेपर तीक्ष्ण अस्त्रसे छेदे, तोडे, फाट ३

(३५) एष उद भेद काटकर अन्दरसे रक्त, राद, चरबी, निकाले ३

(३६) ,, एष शीतल पाणी, गरम पाणी कर, विशुद्ध होनेपर भी धोवे ३

(३७) एष विशुद्ध होनेपर भी अनेक प्रकार लेपनकी नातिका लेप करे ३ (३८) एष अनेक प्रकारका माण्डिस मर्दन करे ३ (३९) एष अनेक प्रकारके सुगन्धि पदार्थ तथा सुगन्धि धूपादिकी जाती लगाये अपने शरीरको सुवासित उनाये ३

(४०) एष अपने शरीरमे किरमीयादिकी अगुलि कर निकाले ३

एह सोलासे चालीश तक पचीश सूत्राका भाषार्थ—उक्त वार्थ करनेसे प्रमादवृद्धि, अस्वाध्यायवृद्धि शस्त्रादिसे आत्मघात, रोगवृद्धि तथा शुध्रूपावृद्धि अनेक उपाधिये खड़ी हो जाती है वास्ते प्रायश्चितका स्थान कहा है उत्मर्ग मार्गचाले मुनियोंको रोगादिकी सम्यक् प्रकारसे महन करना और अपवाद मार्गचाले मुनियोंको लभालाभका कारण देस गुरु आक्षाके माफिक वर्ताय करना चाहिये यहापर सामान्य सूत्र कहा है

(४१) ,, अपने दीर्घ-ग्म्या नसोंको (शोभा निमित्त) कटाये, समराये ३

(४२) ,, अपने गुह्य स्थानके दीर्घ-चालोंको कटाये, कपा ये, समराये ३

(४३) ,, अपनी चक्षुके दीर्घ चालोंको कटाये, समराये ३

(४४) एष जेघोंका बाल (केश)

(४५) एष कालका बाल

(४६) दादी मुखोका बाल

- (४७) मस्तकके बाल,
 (४८) पथ कानोंके बाल
 (४९) कानकी अन्दरके बाल

उक्त लखे बालोंको (शोभा निमित्त) कटाये, समराये, सुन्दरता बनाये, यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है मस्तक दाढी मुच्छोके लोच समय लोच करना कल्पे

- (५०) , अपने दातोंको पक्ष्धार अथवा धारधार घसे ३
 (५१) शीतल पाणी गरम पाणीसे धोये ३
 (५२) अलतादिवे रंगसे रगे ३

भाधाथ—अपनी सुन्दरता-शोभा उढानेके लीये उक्त कार्य करे, कराये करनेको सहायता देवे

- (५३) ,, अपने ढोठोंको मसले, घसे ३
 (५४) चापे, दबाये
 (५५) तैलादिका मालीस करे
 (५६) लोद्रघ आदि सुगंधि द्रव्य लगावे
 (५७) शीतल पाणी गरम पाणीसे धोवे ३

(५८) अलतादि रगसे रगे, रगाये, रगतेको सहायता देवे भावना पूर्यथत्

(५९) , अपने उपरके ढोठोंका लचापणा तथा ढोठोंपर के दीर्घबालोंको काटे, समारे सुन्दर बनाये ३

- (६०) पथ नेत्राके भोपण काटे, समारे ३
 (६१) पथ अपने नेत्रों (आखीं)को मसले
 (६२) मदन करे
 (६३) तैलादिका मालीस करे

(६४) लोदवादि सुगन्धी द्रव्यका लेपन करे

(६५) शीतल पाणी, गरम पाणीसे धोवे

(६६) काजलादि रगसे रगे, अर्थात् शोभाके लीये सुरमा-
दिका अजन करे ३

(६७) ,, अपने भँधरोके घालोंको काटे, समारे ३

(६८) पध पछवाटे तथा छातीके ालोंको काटे, समारे
सुन्दरता बनाये ३

(६९) ,, अपने आखोंका मैल, कानोंका मैल, दान्तोंका
मैल, नखोंका मैल निकाले, विशुद्ध करे ३

भाषार्थ—अपनी शुश्रूषा निमित्त उक्त कार्य करनेकी भना है
कारण—इसीसे प्रमादकी वृद्धि होती है और म्याध्यायादि धर्म
कृयमें विघ्न होता है

(७०) ,, अपने शरीरसे परसेवा, मैल, जमा हुआ पसीना
मैलको निकाले, विशुद्ध करे, रूगये, करतेको अच्छा समझे ३
भाषना पूर्ववत्

(७१) ,, ग्रामानुग्राम विहार करतं समय शीतोष्ण नि
धारणार्थे शिरपर छत्र धारण करे ३

यहातक शुश्रूषा सवन्धी ५६ जोल हुवे है

(७२) , सणका दौरा, कपासका दौरा, उनका दौरा,
अर्कतूलका दौरा घोंड थनस्पतिके दौरासे यशीकरण करे ३

(७३) ,, गृहस्थाके घरमें घरके द्वारमें, घरके प्रतिद्वा
रमें, घरकी अन्दरके द्वारमें, घरको पोलमें, घरके चौकमें, घरके
अन्य स्थानोंमें आप लघुनीत (पैसाय) बडीनीत (टटी) परठे,
परटाये, परिठतेको अच्छा समझे

(७४) पर्य श्मशानम मुरदेकी जलाया हो, उसकी राखमें मुरदेकी विध्रामकी जगहा, मुरदेकी स्थूभ बनाइ हो, उम जगहा, मुरदेकी पत्ति (फर्रा), मुरदेकी छत्री बनाइ-बहापर जाके टटी, पैसाय करे, करारे, करतेको अच्छा समझे

(७५) कीलसे बनानेकी जगहा साजीखारादिके स्थान गौ प्रलहादिके रोग कारणसे डाम देते हो उम स्थानमें, तुसोंका ढेर करते हो उस स्थानमें, धानने सळे बनाते हो उस स्थानमें, टटी पैसाय करे ३

(७६) सचित्त पाणीका कीचड हो, कदम हो, नीलण, फूलण हो ऐसे स्थानमें टटी पैसाय करे ३

(७७) नयी थनी गोशाला, नयी खादी हुइ मट्टी मट्टीकी खान, गृहस्थलोगा अपने काममें ली हो, या न भी ली हो ऐसे स्थानमें टटी पैसाय करे ३

(७८) उमरने वृथाका फल पडा हो पर्य षडवृथ, पीपल वृक्षोंने नीचे टटी पैसाय करे ३ इस वृक्षोंका बीज सुथम और बहुत होते है

(७९) इक्षु (माटा) के क्षेत्रमें, शाटयादि धान्यके क्षेत्रमें कसुबादि फूलाके धनमें, कपासादिके स्थानमें टटी पैसाय करे ३

(८०) मडक वनस्पति, साक व० मूला व० मालक व० खार व० घहु बीजा व० जीरा व० दमणय व० मरुग वनस्पतिके स्या नोम टटी पैसाय करे ३

(८१) अशोकवन, मीतवन, चम्पक वन, आम्रवन, अन्य भी तथा प्रकारका जहापर बहुतसे पत्र, पुष्प फल बीजादि जी र्थोंकी विगाधना होती हो, ऐसे स्थानमें टटी पैसाय करे ३ तथा उक्त स्थानोंमें टटी पैसाय परठे, परिठावे, परिठबेको अच्छा समझे

भावार्थ—प्रगट आहार निहार करनेसे मुनि दुर्लभप्रोधी पना उपार्जन करता है चास्ते टटी पेशात्रके लीये दुर्ग जाना चाहिये

(८२) ,, अपने निश्चाये तथा परनिश्चारे मात्रादिका भाजनमें दिनको, रात्रिको, या त्रिकालमें अतित्राधासे पीडित, उस मात्रादिके लघुनीत, घडीनीत कर सूर्य अनुदय अर्थात् जहा पर दिनको सूर्यका प्रकाश नहीं पडते हो, पेसा आच्छादित स्थानपर परठे, परिठावे, परिठतेको अच्छा समझे

भावार्थ—द्रव्यसे जहा सूर्यका प्रकाश पडते हो, और भावसे परिठनेवाले मुनिके हृदय कमलमें ज्ञान (परिठनेकी विधि) सूर्य प्रकाश कीया हो-पेसे दोनों प्रकारके सूर्यादय न हुवा मुनि परठे तो प्रायश्चितका भागी होता है कारण—रात्रिमें मात्रादि कर साधु सूर्यादय हो इतना प्रयत्न रग्य नहीं मरते है क्योंकि उम पेसाध आदिमें असंख्य समुच्छिम जीवोंकी उत्पत्ति होती है. इस चास्ते उक्त अर्थ संगतिको प्राप्त करता है

उक्त ८२ वोलसे एक भी बोल सेवन करनेवाले साधु माध्वी-योंका लघुमान्त्रिक प्रायश्चित्त होता है विधि देखो वीसवा उद्देशासे इति श्री निगिथसूत्र-तीसरा उद्देशाका सचिस सार.

(४) श्री निगिथसूत्र-चौथा उद्देशा

(१) ' जो कोई माधु माध्वीया ' राजाको अपने घश करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

(२) एष राजाका अर्चन-पूजन करे ३

(३) एष अच्छा द्रव्यसे यज्ञ, भूपण, भावसे गुणानुयादादि बोलना ३

(४) पर्य राजाका अर्थी होना ३

इसी माफिक च्यार सूत्र राजाके रक्षण करनेवाले दियान-
प्रधान आश्रित कहना ५-८

इसी माफिक च्यार सूत्र नगर रक्षण करनेवाले कोटवालका
भी कहना ९-१२

इसी माफिक च्यार सूत्र निग्रामरक्षक (ठाकुरादि) आश्रित
कहना १३-१६

पर्य च्यार सूत्र सब रक्षक फौजदारादिक आश्रित कहना
पर्य सर्व २० सूत्र हुये

भाषार्थ—मुनि सदैव नि स्पृह होते हैं मुनियके लीये राजा
और रक सदृश ही होते हैं ' जहा पुत्रस्त कृत्यइ, तहा तुच्छस्त
कृत्यइ " अगर राजाको अपना करेगा तो कभी राजाका कहना
ही मानना होगा ऐसा होनेसे अपने नियममें भी खलना पहुचेगा
चास्ते मुनियोंको सदैव नि स्पृहतासे ही विचरना चाहिये (यहा
प्रमत्त्यभावका निषेध है)

(२१) ,, अखड औपधि (धान्यादि) भक्षण करे ३

भाषार्थ—अखड धान्य सचित्त होता है तथा सुठादि अखं-
डितमें जीवादि भी कबी कबी मिलते हैं चास्ते अखडित औपधि
खानेकी मना है

(२२) , आचार्योंपाध्यायके विना दीये आहार करे ३

(२३) , आचार्यापाध्यायके विना दीये विगइ भोगरे ३

(२४) ,, कोइ गृहस्य ऐसे भी होते हैं कि साधुओंके लीये
आहार पाणी स्थापन कर रखते हैं ऐसे घरोंकी याच पुछ, गवे-
पणा कीये विगर साधु नगरमें गौचरी निमित्त प्रवेश करे ३

(२५) ,, अगर कोई साध्वीयोंके विशेष कारण होनेपर साधुको साध्वीयोंके उपाश्रय जाना पड़े तो अविधि (पहले साध्वीयोंको सावचेत होने योग नकेत करे नहीं) से प्रवेश करे ३

भाषार्थ—एकदम चले जानेसे न जाने साध्वीयों किम अवस्थामें बैठी हैं

(२६) ,, साध्वी आनेके रहस्तेपर साधु दडा, लट्टी, रजोहरण, मुखयन्त्रिकादि कोई भी छोटी बड़ी वस्तु रखे ३

भाषार्थ—अगर साधु ऐसा जाने कि—यह रग्वे हुवे पदार्थको ओळगके साध्वी आवेगी, तो उसको कहेंगे—हे साध्वी ! क्या इसी माफिक ही पूजन प्रतिलेखन करते हगि ? इत्यादि हासी या अपमान करे ६

(२७) क्लेशकारी बातें कर नये क्रोधको उत्पन्न करे ३

(२८) ,, पुराणा क्रोधको खमतखामणा कर उपशान्त कर दीया हो, उसे उदीरणा कर क्रोधको प्रज्वलित बनावे ३

(२९) ,, मुंह फाड़ फाड़के हसे ३

(३०) ,, पास्तये (भ्रष्टाचारी) को अपना साधु दे के उन्होंका मघाडा बनावे अर्थात् उनको साधुदेके सहायता करे ३

(३१) एव उसके साधुको लेवे ३

(३२-३३) एव दो अलापक ' उत्सन्न ' त्रियासे शिथिलका भी समझना

(३४ ३५) एव दो अलापक ' कुशीन्गे ' गराव आचार्यालीका समझना

(३६ ३७) एव दो अलापक ' नितिया ' नित्य एक घरके

भोजन करनेवाले तथा गित्य दिना कारण एक स्थानपर निवास करनेवालोंका समझना

(३८—३९) पथ दो अलापक 'ससन्ध्या' मवेगीके पास सवेगी और पास्त्यार्थोंके पास पास्त्या धननेवालोंका समझना

(४०) ,, कचे पाणीसे 'मसक्त' पाणीसे भीजे हुये पेसे हाथोंसे भाजनमेंसे चाटुडी (कुरची) आदिसे आहार पाणी ग्रहण करे ३ स्निग्ध (पूरा सूका न हो) मचित्त रजसे, मचित्त मट्टीसे, ओसके पाणीसे नीमकसे, दरतालसे, मणमील (थोडल) पीली मट्टी, गेरुसे, खडीसे, हींगलुसे, अजनसे, (सचित्त मट्टीका) लोद्रेसे, कुक्स, तत्कालीन आटासे, कन्दसे, मूलसे, अद्रकसे पुष्पसे, कोष्ठकादि—पथ २१ पदार्थ मचित्त, जीव सहित हो उसे हाथ खरडा हो, तथा सघट्टा होते हुये आहार पाणी ग्रहण करे ३ यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है इमी माफिक २१ पदार्थोंसे भाजन खरडा हुआ हो उस भाजनसे आहार पाणी ग्रहण करे ३ पथ ८१

(८२) ,, ग्रामरक्षक पट्टेलादिको अपने वश करे अचन करे, अच्छा करे, अर्थां उने पथ इमी उद्देशाके प्रारभमें राजाके च्यार सूत्र कहा था इसी माफिक समझना पथ देशके रक्षकोंका च्यार सूत्र पथ सीमाके रक्षकोंका च्यार सूत्र पथ राज्य रक्षकोंका च्यार सूत्र पथ सर्व रक्षकोंका च्यार सूत्र कुल २० सूत्र भाषना पूर्ववत् १०१

(१०२) ,, अयोय आपसमें एक साधु दुसरे साधुका पग दबाये—चापे पथ याधत् एक दुसरे साधुके ग्रामानुग्राम विहार करते हुये के शिरपर छत्र धारण करे, कराये जो तीसरा उद्देशामें कहा है इसी माफिक यहा भी कहना परन्तु यहा पर

समान सूत्र साधुओंके लीये हैं और यहापर विशेष सूत्र साधु आपसमे एक दुसरेके पायादि द्वाये-चापे

भाषार्थ—विशेष कारण विना स्वाभ्याय ध्यान न करते हुये दधाने-चंपानेवाला साधु प्रायश्चित्तका भागी होता है अगर किसी प्रकारका कारण हो ता एक साधु दूसरे साधुकी पैयायचक्र करनेसे भदा निर्जरा होती है ५६ सूत्र मिलानेसे १५७ सूत्र हुवे

(१५८) ,, उपधि प्रतिलेखनके अन्तमें लघुनीत, षडी नीत परिठणेकी भूमिकाकी प्रतिलेखन न करे ३

भाषार्थ—रात्रि समय परिठनेका प्रयोजन होनेपर अगर दिनको न देखी भूमिकापर पैसात्र आदि परिठनेसे अनेक प्रस स्यापर प्राणीयोंकी घात होती है

(१५९) भूमिकाके भिन्न भिन्न तीन स्थान प्रतिलेखन न करे ३ पहले रात्रिमें, मध्य रात्रिमें, अन्त रात्रिमें परिठनेके लीये

(१६०) ,, स्वल्प भूमिकापर टटी पैसाव परठे ३ स्वल्प भूमिका होनेसे जल्दीसे सुख नहीं सके उसमें जीवोत्पत्ति होती है वास्ते विशाल भूमिपर परठे

(१६१) , अविधिसे परठे ३

(१६२) ,, टटी पैसाव जाकर साफ न करे, न करावे, न करते हुयेको अच्छा समझे उसे प्रायश्चित्त होता है

(१६३) टटी पैसाव कर पाणीसे साफ न करवे काष्ठ ककरा, अगुली तथा शीला आदिसे साफ करे, करावे, करनेको अच्छा समझे यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है अर्थात् मल की शुद्धि जल हीसे होती है इसी वास्ते ही जैन मुनि पाणीमें चुना

धिर्गैरह डालके रात्रि समय जल रखते हैं शायद रात्रिमें टटी पैसायका काम पढ जाये तो उस जलसे शुचि कर सये *

(१६४) ,, टटी पैसाय जाके पाणीसे शुचि न करे, न कराये, न करते हुयेको अच्छा समझे यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है

(१६५) जिम जगहपर टटी पैसाय कीया है, उस टटी पैसायके उपर शुचि करे ३

(१६६) जिस जगह टटी पैसाय कीया है, उससे अति दूर जाके शुचि करे ३

(१६७) टटी पैसाय कर शुचिके लीये तीन पसली अर्थात् जरूरतसे अधिक पाणी खरच करे ३

भाषार्थ—टटी पैसायके लीये पेस्तर सुकी जगह हो, यह भी विशाल निर्जिव देखना चाहिये जहांपर टटी बैठा हो वहांसे कुछ पाणोंसे सरख शुचि करना चाहिये ताके समूर्च्छिम जीवोंकी उत्पत्ति न हो अशुचिका छाटा भी न लगे और जल्दी सुक भी जावे यह विधि रादका कथन है

(१६८) प्रायश्चित्त सयुक्त साधु कभी शुद्धाचारी मुनि को कहे कि—हे आर्य ! अपने दोनों साथहीमें गौचरी चले साथ हीमें अशनादि च्यार प्रकारका आहार लाये फिर थादमें घा आहार भेट (विभाग कर) अलग अलग भोजन करेंगे ऐसे घचनोंको शुद्धाचारी मुनि म्थीकार करे करावे, करतेको अच्छा समझे, यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है

* दुर्गिचे और तरापन्थी लाग रात्रि समय पाणी नहीं रखत है तो इस पाठ पालन कैम कर सकते होंगे ? और रात्रिमें टटी पैसाय होनेपर क्या करते होंगे ?

भाषार्थ—सदाचारी जो दुराचारीकी संगत करेगा तो लोगोंमें अप्रतीतिका कारण होगा इति

उपर लिखे १६८ बोलोंसे कोई भी बोल साधु साध्वी सेवन करेंगे तो लघु भागिक प्रायश्चित्तके भागी होंगे प्रायश्चित्तकी विधि यीसया उद्देशसे देखे

इति श्री निगिथसूत्र—चौथा उद्देशाका सचित्त सार.



(५) श्री निगिथसूत्र—पांचवां उद्देशा

(१) ' जो कोई साधु साध्वी ' सचित्त वृक्षका मूल-वृक्षका मूल जमीनमें रहता है कन्द (झड़ों) जमीनमें पसरती है स्कन्ध-जमीनके उपर जिसको मूल पेड कहते हैं उम मूल पेडसे चोतरफ च्यार हाथ जमीन सचित्त रहती है कारण—उस जमीनके नीचे कन्द (झड़ो) पसरती हुई है यद्वापर सचित्त वृक्षका मूल कहा है, यह उसी अपेक्षा है कि पसरती हुई झड़ा तथा यह मूल उपरकी सचित्त भूमि उपर कायेत्सर्ग करना, सस्तारक बिछाना और बैठना यह कार्य करे ३

(२) पथ बहा खडा होये एक बार वृक्षको अवलोकन करे तथा बार बार देखे ३

(३) पथ बहापर बैठके अशनादि च्यार आहार कने.

(४) पथ टटी पैसाय करे ३

(५) पथ स्वाध्याय पाठ करे ३

(६) पथ शिष्यादिको ज्ञान पढाये ३

(७) पथ अनुज्ञा देवे ३

- (८) पत्र आगमोंकी वाचना देवे ३
 (९) पत्र आगमोंकी वाचना लेवे ३
 (१०) पत्र पढे हुये ज्ञानकी आवृत्ति करे ३

भाषार्थ—बहस्यान जीव महित है बहा बैठके कोई भी वाच नहीं करना चाहिये अगर ऐसे सचित्त स्थानपर बैठके उक्त वाच कोई भी माधु करेगा तो प्रायश्चित्तका भागी होगा

(११) ,, अपनी चद्दर अन्य तीर्थी तथा उन्हांके गृहस्थोंके पास सोलावे ३

(१२) एव अपनी चद्दर दीघ लंबी अर्थात् परिमाणसे अधिक करे ३

(१३) ,, निचके पत्ते पोटल वृक्षके पत्त बिल वृक्षके पत्ते शीतल पाणीसे गरम पाणीसे धोके प्रक्षालने साफ करके भोजन करे ३ यह सूत्र कोई विशेष अरणीयादिके प्रसंगका है

(१४) , कारणवशात् सरचीना रजोहरण लेनेका काम पढे * मुनि गृहस्थोंको यह कि—तुमारा रजोहरण हम रात्रिमें वापिस दे देंगे पसा करार करनेपर रात्रिमें नहीं देवे ३

(१५) पत्र दिनका करार कर दिनको नहीं देवे ३

भाषार्थ—इसमे भाषाकी स्वल्पा होती है मृपात्राड लगता है वास्ते मुनिको पेंस्तरसे ऐसा समय करार ही नहीं करना चाहिये

* कोई तस्कर मुनिना रजोहरण चुराके उ गया खबर धरनम चार कहता है कि—मैं दिनको लज्जासा मारा द नहीं रहा परंतु रात्रिक समय आपका रजाहरण ट जांगा ऐसी हालतमें गृहस्थोंके करार पर मुनि रजाहरण लाव कि—तुमारा रजोहरण रात्रिमें ददुगा

(१६-१७) पथ दो सूत्र शय्यातर मंत्रधी रजोहरणका भी समझना जैसा रजाहरणका च्यार सूत्र कहा है, इसी माफिक दाढो, लाठी ग्वापटी, घासकी सूइका भी च्यार सूत्र समझना पथ २१

(२२) ,, सरचीना शय्या, सस्तारक, गृहस्थोंको घापिस सुप्रत कर दीया, फिर उनपर बैठे आमन लगावे ३ अगर त्रै-ठना ही तो दुसरी दपे आज्ञा लेना चाहिये नहीं तो चोरी लगती है

(२३) पथ शय्यातर मंत्रधी

(२४) ,, सण उन कपासकी लघी दोरी भठे करे ३

(२५) ,, सचित्त (जीव सहित) काष्ठ, घास, बेंतादिका दाढा करे ३

(२६) पत्र धारण करे (रखे)

(२७) पथ उमे काममे लेवे

भावार्थ—हरा झाडका जीव सहित दडादि करने रखने और काममे लेनेकी मना है इसे जीवधिराधना होती है इसी माफिक चित्रवाला दडा करे, रखे, घापरे २८-३०

इसी माफिक विचित्र अर्थात् रग बेरगा दडा करे, रखे, घापरे यह साधु प्रायश्चित्तका भागी होता है ३१ ३३

(३४) ,, ग्राम नगर यायत् सन्निवेशकी नधीन स्थापना हुइ हो, घहापर जावे साधु अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे ३

भाषाथ—अगर कोइ सग्रामादिके कटकके लीये नवा ग्रामा-दिककी स्थापना करते समय अभिपेक भोजन घनाते है, घहा मुनि जानेसे शुभाशुभका रयाल तथा लोगोंको शका होती है

कि—यह कोई प्रतिपक्षीयोंकि तर्कसे तो न आया होगा ? इत्यादि शब्दोंके स्थानोंको यज्ञता चाहिये

(३५) पद लोहाके आगर, मंघाका, लक्ष्यक, सीसाके च दीके, सुषणये, रस्नोंके, वस्त्रके आगरकी नयोन स्थापना होती हो कहा जाके साधु अज्ञानादि आहार ग्रहण करे ३

(३६) , मुहसे यज्ञानेकी धीणा करे ३

(३७) दातोंसे यज्ञानेकी धीणा करे ३

(३८) होठोंसे यज्ञानेकी धीणा करे ३

(३९) नाकसे यज्ञानेकी धीणा करे ३

(४०) वाग्रसे यज्ञानेकी ”

(४१) हाथोंसे यज्ञानेकी ”

(४२) नखसे यज्ञानेकी ”

(४३) पत्र धीणा ”

(४४) पुष्प धीणा ”

(४५) फल धीणा ,

(४६) बीज धीणा ,

(४७) हरी तृष्णादिकी धीणा करे ३

इसी माफिक मुह धीणा यज्ञाये यायन् हग्नि तृष्णादिकी धीणा यज्ञाये के चारह सूत्र कहना पय ५९

(६०) ,, इस्से सिधाय किसी प्रकारकी धीणा जो अनु दय शब्द विषयकी उद्दीरणा करनेवाले धार्जित्र यज्ञावेगा, वह साधु प्रायश्चित्तका भागी होगा

भाषार्थ—स्थाभ्याय ध्यानमें चिन्तकारक, प्रमादकी वृद्धि करनेवाला शब्दादि विषय है इसीसे मुनियोंको हमेशा दूर ही रहना चाहिये

(६१) ,, साधु साधुओंके उद्देश (निमित्त) बनाये हुये मकानमें साधु साधु प्रवेश करे ३

(६२) पय साधुके निमित्त मकान लीपाया हो, छप्परथधी कराइ हो, नया दरवाजा कराया हो—उस मकानमें प्रवेश करे ३

(६३) पय अन्दरसे कोई भी वस्तु साधुओंके लीये बाहार निकाले, काजा, कचरा निकाल साफ करे, उस मकानमें मुनि प्रवेश करे, यहा ठहरे ३

भाषार्थ—जहा साधुओंके लीये जीवादिका वाद हो पेसा मकानमें साधु ठहरे, यह प्रायश्चित्तका भागी होता है

(६४) ,, जिस साधुओंके साथ अपना ' सभोग ' आहा रादि लेना देना नहीं है, और क्षात्यादि गुण तथा समाचारी मिलती नहीं है, उसको सभोग करनेका कहे ३

(६५) ,, वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण अच्छा मजबुत बहुतकाल चलने योग्य है उसको फाडतोड टुकडे कर परठे, परठावे ३

(६६) पय तुंबाका पात्र काष्ठका पात्र, मट्टीका पात्र मजबुत रखने योग्य, बहुत काल चलने योग्यको तोडफोड परठे ३

(६७) पय दडा, लट्टी, खापटी वाससूचि, चलने योग्यको परठे ३

भाषार्थ—किसी ग्रामादिमें सामान्य वस्तु मिली हो, और बडे नगरमें यह ही वस्तु अच्छी मिलती हो, तब पुद्गलानदी विचार करे—इसको तोडफोडके परठ दे, और अच्छी दुसरी वस्तु याच ले—इत्यादि परन्तु पेसा करनेवाले साधुओंको निर्देय कहा है यह प्रायश्चित्तका भागी होता है

(६८) , परिमाणसे अधिक 'रजोहरण' अर्थात् चौबीस अगुलकी दडी और आठ अगुलकी दशीयां एवं वशीश अगुलका रजोहरणसे अधिक रखे, दुसरसे रखावे, अन्य रखते हुयेको अच्छा समझे अथवा सहायता देवे *

(६९) , रजोहरणकी दशीयांको अति सुभ्रम (घारीफ) करे ३ प्रथम ता करणेमें प्रमाद बढ़ता है और उमकी अन्दर जीयादि फँस जानेसे विराधना भी होती है

(७०) रजोहरणकी दशीयोपर एकभी बन्धन लगावे ३

(७१) एवं ओघारीयामे दडी और दशीयां बन्धनके लीये तीन बन्धसे ज्यादा बन्धन लगावे ३

(७२) एवं रजोहरणका अविधिसे बन्धे नीचा उचा, शिथिल, सरत इत्यादि ३

(७३) एवं रजोहरणका फागकी भारीके माफिक बिचमें बन्ध करे जिससे पूण तोरपर काजा नीकाल नहीं जावे जीयांकी यतना भी पूण न हो सके इत्यादि

(७४) , रजोहरणको शिरके नीचे (ओशीकाकी जगह) धरे ३

(७५) ,, बहुत मूल्यवाला तथा बर्णादिकर समुक्त रजोहरण रखे ३ चौरादिका भय तथा ममत्व भावकी घृद्धि होती है.

(७६) , रजोहरणको अति दूर रखे तथा रजोहरण बिगर इधर उधर गमनागमन करे ३

(७७) ,, रजोहरण उपर बैठे ३ कारण रजोहरणको शास्त्रकारोंने धमध्वज कहा है गृहस्थोंको पूजने योग्य है

* दुनीय ताग इन नियमका पालन कैम करा होंग ? काणकि—श दो हायके लव रजोहरण रखते है इन बीरवाणीपर कुछ दिचार करना चाहिये

(७८) ,, रजोहरण उपर सुवे, अर्थात् रजोहरणको वैअ-
दबीसे रसे, रखावे, रखतेको अच्छा समझे

भावार्थ—मोक्षमार्ग साधनेमें मुनिपद प्रधान माना गया है
मुनिपदकी पहचान, मुनि के घेपसे होती है मुनिघेपमें रजोह-
रण, मुखवस्त्रिका मुख्य है इनका बहुमान करनेसे मुनिपदका
बहुमान होता है इसकी वैअदबी करनेसे मुनिपदकी वैअदबी
होती है, यह जीव दुलभबोधी होता है भवान्तरमें उसको रजो-
हरण मुखवस्त्रिका मिलना दुर्लभ होगा चास्ते इसका वादर,
सत्कार, धिनय, भक्ति करना भव्यात्मार्योका मुख्य कर्तव्य है.

उपर लिखे ७८ बोलोंसे कोइ भी बोल सेवन करनेवाले
नियोको लघु मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देहो
यीमथा उद्देशामें

इति श्री निशिथसूत्र-पाचवा उद्देशाका अन्तिमः ॥



(६-७) श्री निशिथसूत्र-छटा-मार्गः ॥

शास्त्रकाराने कर्मोंकी विचित्र गति दखने दे ~~उच्च अर्थात् उच्च~~
माहनीय कर्मका तो रग दग कुछ अचर ~~उच्च अर्थात् उच्च~~
बड़े बड़े साधधारी जो आत्मकल्याणको ~~उच्च अर्थात् उच्च~~
मोहनीय कर्म नीचे गिरा देता है ~~उच्च अर्थात् उच्च~~
नदिपेण, षडगीकादि

उंचा चढना और नीचा गिरना ~~उच्च अर्थात् उच्च~~
है सत्सग करनेसे जीव उच्च ~~उच्च अर्थात् उच्च~~
जीव नीचा गिरता है सुमगत ~~उच्च अर्थात् उच्च~~

सम्यक्प्रकारसे जानना यह ज्ञानावरणीय कमका क्षयोपशम है-
जाननेके बादमें कुसगतका त्याग करना और सत्सगका परिचय
करना यह मोहनीय कमका क्षयोपशम है इस जगह शास्त्रकारोंने
कुसगतके कारणको जानके परित्याग करनेका ही निर्देश किया है-

अगर दीर्घकालकी वासनासे धासित मुनि अपनी आत्म
रमणता करते हुये के परिणाम कभी गिर पड़े तथा अकृत्य कार्य
करे उसको भी प्रायश्चित्त ले अपनी आत्माको निर्मल बनानेका
प्रयत्न इस छठे और सातके उद्देशामे बतलाया गया है जिसको
देखना ही वह गुरुगमता पूर्वक धारण कीये हुये ज्ञानवाले महा
त्माकोसे सुने इस दोनों उद्देशोंकी भाषा करणी इस धास्ते ही
मुलतवी रग गई है इति ६-७

इस दोनों उद्देशोंके धोत्राको सेवन करनेवाले साधु साध्वी
योंको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा

इति श्री लघुनिशिय सूत्रका छठा सातवा उद्देशा

(८) श्री निशियसूत्रका आठवा उद्देशा

(१) 'जो कोई साधु साध्वी' मुसाफिरगाना, उद्यान,
शूद्रस्थोंका घर याषत् तापसाके आश्रम इतने स्थानामें मुनि अ
केली स्त्री के साथ विहार करे, स्वाध्याय करे अज्ञनादि च्यार
प्रकारका आहार करे, टटी पैसाब जाये, और भी कोई निन्दुर
विषय विकार सचधी कथा बाता करे ३

(२) एष उद्यान, उद्यानके घर (बगला), उद्यानकी शाला
निज्जाण, घर—शालामें अकेला साधु अकेली स्त्रीके साथ पुर्योक
काय करे ३

(३) ग्रामादिके फोट, अट्टाली, आठ हाथ परिमाण र-
हस्ता, बुरजों, गढ, दरवाजादि स्थानोंमें अकेला माथु अकेली
स्त्री के साथ उक्त कार्यों करे ३

(४) पाणीके स्थान तलाव, कुँये, नदीपर, पाणी लानेके
गहस्तेपर, पाणी आनेकी नेहरमें, पाणीका तीरपर पाणीके उच्च
स्थानके मकानमें अकेली स्त्रीसे उक्त कार्यों करे ३

(५) शून्य घर, शून्य शाला, भग्न घर, भग्नशाला, कुडाघर,
कोष्ठगार आदि स्थानमें अकेली स्त्री माथ उक्त कार्यों करे ३

(६) तृणघर, तृणशाला, तुसोंके घर, तुसाकीशाला, भु
साका घर, भुसाकीशालामें -अकेली स्त्रीके साथ उक्त कार्यों करे ३

(७) रथशाला, रथघर युगपात (मैना) की शाला, घरा
दिमें अकेली स्त्रीके साथ उक्त कार्यों करे ३

(८) किर्याणाकी शाला, घर बरतनाकी शाला-घरमें
अकेली स्त्री के साथ उक्त कार्यों करे ३

(९) बेंलोंकी शाला-घर, तथा महा कुदुयबालाके बिलास
मकानादिमें अकेला स्त्री के साथ उक्त कार्यों करे ३

भाषार्थ—किसी स्थानपर भी अकेली स्त्री के साथ मुनि
कया यात्ता करेगा, तो लोगोंको अविश्वास होगा, मनोवृत्ति म
लिन होगी, इत्यादि अनेक दोषोंकी उत्पत्तिका मभय है यास्ते
शास्त्रकारोंने मना किया है

(१०) रात्रिके समय तथा बिकाल संध्या (श्याम) समय
अनेक स्त्रियोंकी अन्दर, स्त्रियोंसे मसक्त, स्त्रियोंके परिवारसे प्रवृत्त
होके अपरिमित कथा कहे ३

भाषार्थ—दिनको भी स्त्रीयाका परिचय करना मना है, तो

रात्रिका कहेना ही क्या ? नातिकारिणी भी सुशील बहनोंको रात्रि समय अपने घरसे बाहार जाना मना किया है दुदीये और तेरा-पन्थी साधु रात्रिमें व्याख्यानके लिये सँकड़ो स्त्रीयोंको आमन्त्रण कर दुराचारको क्यों उदाते है ?

(११) ,, स्वगच्छ तथा परगच्छकी साध्वीके साथ प्रा मानुग्राम विहार करते क्री आप आग क्री माध्वी आग चले जाने पर भाप चितारुप समुद्रमें गिरा हुआ आत्तध्यान करता विहार करे तथा उक्त कार्या करते रह ३ यह ११ सूत्रोंमें जैसे मुनियोंके लीये स्त्रीयोंके परिचयका निषेध बतलाया है इसी माफिक साध्वीयोंको पुनर्पाका परिचय नहीं करना चाहिये

(१२) , साधु साध्वीयोंके मसार सत्रधी स्वजन हो चाहे अस्वजन हो, धायक हो चाहे अधायक हो, परन्तु साधुके उपाश्रय आधीरात तथा सपूर्ण रात्रि उक्त गृहस्थोंको उपाश्रयमें रखे रहने देवे ३

(१३) पक्ष अगर गृहस्थ अपनेही दिनसे बहा रहा हो उसे साधु निषेध न करे, अनेरोंसे निषेध न कराने, निषेध न करते हुवे को अच्छा समझे वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है

भावार्थ—रात्रिमें गृहस्थोंक रहनेसे परिचय बढ़ता है, सघटा होता है, साधुयोंक मत्र मूत्र समय कदाच उन लोगोंको दुर्गंध होवे, स्वाध्याय ध्यानमें विघ्न होवे-इत्यादि दोषोंका सभय है वास्ते गृहस्थोंको अपने पासमें रात्रिभर नहीं रखना अगर वि शाल मकानमें अपनी निधायमें पक्का कमरा किया हो, अपने उपभोगमें आता हो, उक्त मकानकी यह बात है शेष मकानमें धायक लोग सामायिक, पीपध तथा धर्मजागरणा कर भी सकते है

(१४) अगर कोई ऐसा भी अथमर आ जावे, अथवा निषेध

करने पर भी गृहस्थ नहीं जाता हो तो उमकी निश्चायसे मकानसे बाहार निकलना तथा प्रवेश करना नहीं कर्त्तव्य अगर ऐसा करे तो मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है

(१२) ,, राजा—(प्रधान पुरोहित, हाकिम, कोटवाल, और नगरशेठ सयुक्त) जाति, कुल, उत्तम ऐसा क्षत्रिय जातिका राजा, जिससे राज्याभिषेकके समय अपने गोश्रजोंको भोजन कराने निमित्त तथा किसी प्रकारके महोत्सव निमित्त अशनादि च्यार प्रकारका आहार निपजाया (तैयार कराया), उम अशनादि च्यार प्रकारका आहारसे साधु माध्मी आहारादि ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

भावार्थ—द्रव्यसे घटा जानेसे लघुता होये, लोलुपता उढे, बहुतसे भिक्षुक पक्व होनेसे घस्य, पात्र, शरीरकी विराधता होये, भावसे अपना आचारमें खलल पहुँचे शुभाशुभ होनेसे माधुर्घा पर अभावका कारण होये इत्यादि अनेक दोषोंका सभव है वास्ते मुनि ऐसा आहारादि ग्रह न करे अगर कोई आज्ञा उल्लंघन करेगा, यह हम प्रायश्चित्तका भागी होगा

(१६) पर राजाकी उत्तरशाला अर्थात् बैठनेकी कचेरी तथा अन्दरका घरकी अदरसे अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे ३

(१७) अश्वशाला, हाथीशाला, विचार करनेकी शाला, गुप्त सलाह करनेकी शाला रहस्यकी चर्चा करनेकी शाला, मथुन कम करनेकी शाला, उक्त स्थानोंमें जाते हुवेका अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे ३

(१८) ,, संग्रह कीया हुआ, मग्रह करते हुए पक्वानादि, तथा मेवा मिष्ठानादि और दुध, दही, मखन, घृत, गुड, ग्राह सक्कर, मिश्री, और भी भोजनकी जाति ग्रहन करे ३

(१९) ,, खाती पीती यचा हुया आहार देता भेटती, यचा हुया आहार, नाखती यचा हुया आहार, अन्य तीर्थीयोके निमित्त, कृपणोके निमित्त गरीब लोकोक निमित्त—येसा आहारादि ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे भावना पुषवत् पद्रहवा सूत्रकी माफिय समझना

उपर लिखे १९ बोलोसे कोइ भी बोल, साधु साधवी सेवन करेगा, उसको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा, प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवा उद्देशार्थ

इति श्री निशियसूत्र—आठवा उद्देशाका साक्षित्त सार

(६) श्री निशियसूत्रका नौवा उद्देशा

(१) जो कोइ साधु साधवी ' राजपिंड (अशनादि आहार) ग्रहन करे, ग्रहन करावे ग्रहन करते हुयको अच्छा समझे भावार्थ—सेनापति, प्रधान, पुरोहित नगरशेठ और सार्थ याह—इस पांच अंग सयुक्तको राजा कहा जाता है

(१) उन्होके राज्याभिषेक समयका आहार लेनेसे शुभा शुभ होनेमें साधुषोका निमित्त कारण रहता है

(२) राजाका वलिष्ठ आहार विकारक होता है और राजाका आहार घने, उनमें पडा लोकाका विभाग होता है यह आहार लेनेसे उन लोकाको अतरायका कारण होता है एव राजपिंड भोगये ३

(३) ,, राजाके अन्नेउर (जनानागृह ' में प्रवेश करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—साधु हमेशा मोहसे विरक्त होता है यहा जानेपर रुप, लावण्य, शृंगार तथा मोहक पदार्थ देखनेसे मोहकी वृद्धि होती है प्रभ्र, ज्योतिष, मन्त्रादि पूछनेपर साधु न बतानेसे कौ-पायमान होवे, राजादिको शफा होवे-इत्यादि दोषोंका सभय है.

(४) ,, साधु, राजा के अन्तेउर-गृहद्वार जाके दरवा-नसे कहे कि—हे आयुष्मन् ! मुझे राजाका अन्तेउरमें जाना नहीं कल्पे तुम हमारा पात्र लेके जाओ, अन्दरसे हमे भिक्षा ला दो. येमा धचन बोले ३

५) इसी माफिक दरवान बोले कि—हे साधु ! तुमको राजाका अन्तेउरमें जाना नहीं कल्पे आपका पात्र मुझे दो, मैं आपको अन्दरसे भिक्षा लादु येसा धचन साधु सुने, सुनावे, सुनतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—बिगर देखे आहार लेना नहीं कल्पे सामने लाया आहार भी मुनिको लेना नहीं कल्पे

(६) ,, राजा जो उत्तम जातिवाला है उनके राज्याभिषेक समय भोजन निष्पन्न हुआ है, जिममे द्वारपालोंका भाग है, पशु, पक्षीका भाग, गोकरोका भाग, देवताका भाग, दास दासीयोंका भाग, अश्वोंका भाग, दायीयोंका भाग, अटवी निधासीयोंका भाग, दुर्भिक्ष-जिसको भिक्षा न मिलती हो, दुश्कालादिके गरीबोंका भाग, ग्लान-चमारोंका भाग, बादलादि घरसातसे भिक्षाको न जा सके, पाहुणा आया हुआ उन्होंका भाग, इन्होंके सिषाय भी केइ जीवोंका भागवाला आहार है उसे ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—उक्त जीवोंको अन्तराय पडे जिससे साधुवासे द्वेष करे, अप्रीतिका कारण होवे इत्यादि

(७) " राजाका राज्याभिषेक हुये, उसके धान्य-कोटारकी शाला, धन-खजानाकी शाला दुध, दही, घृतादि स्थापन करनेकी शाला, राजाके पीने योग्य पाणीकी शाला, राजाके धारण करने योग्य धनु, आभूषणकी शाला, इस छे शालाओंकी याचना न करी हो, पूछा न हो, गवंपणा न करी हो, परन्तु च्यार पाद्य रोज गृहस्थोंके घर गौचरीके लीये प्रवेश करे ३

भाषार्थ-उक्त छे शालाओंकी याचना कीये बिना गौचरी जावे ता कदाच अनजानपणे उसी शालाअमें घला जावे तब राजादिको अप्रतीतिका कारण होता है उस समय विपादिका प्रयोग हुया हो तो साधुका अविश्वास होता है इस वास्ते शास्त्रकारोंने प्रथमसे ही मुनिथोंको साधचेत काया है ताके किसी प्रकारसे दोषका सभय ही न रहे

(८) ,, राजा यायत् नगरसे बाहार जाता हुवा तथा नगरमें प्रवेश करते हुवेको देखनेको जानेके लीये एक कदम भरनेका मनसे अभिलाषा धरे करावे करते हुवेका अच्छा समझे

(९) पर्य स्त्रीयों मर्दांग विमूषित, शृंगार कर आती जातीको नेत्रोंसे देखने निमित्त एक कदम भरनेकी अभिलाषा करे ३

(१०) , राजादिक मृगादिका शिकार गया, वहापर अशनादि च्यार प्रकारका आहार बनाया उस आहारसे आप ग्रहन करे

(११) ,, राजाके कोई भेटणा-निजराणा आया है, उस समय राजसभा पकत्र हुई है मसलत कर रहे है वद सभा विज्ञान नहीं हुई, विभाग नहीं पडा अगर कोई नयी जुनी होनेवाली है उस हालतमें साधु आहार पाणीके लीये गौचरी जावे, अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे ३

(१२) जहापर गजा टहरे हैं, उमकी नजदीकर्म, आसपासमे माधु ठहर क्याध्याय करे, अशुभादि च्यार आहार करे, उधु नात यहीनीत पग्ठे, औरभी कोइ अनार्य प्रयोग क्या कहे ३

(१३) , गजा गहार यात्रा निमित्त गया हुवाका अशु नादि च्यार आहार ग्रहन करे ३

(१४) एउ यात्रासे आते हुयेका आहार लेये ३

(१५-१६) एउ दो सूत्र नदीयात्रा आतों जातोंका

(१७-१८) एउ दो सूत्र गिनियात्राका

(१९) एउ क्षत्रिय राजाका महा अभिषेक होते समय ग मनागमन करे कराने ३

(२०) एउ चपानगरी, मथुरा बनारसी धावस्ति सारे-तपुर कपित्पुर, कौशाबी मिथिला, हस्तिनापुर, और राजगृह-इस नगरमें अगर राज्याभिषेक चलता हो, उस समय माधु द्योय वार तीनवार गमनागमन करे, करार्ये, करतेको अच्छा समझे

भाग्यर्थ—सामान्य माधुयोको येने समय गमनागमन नहीं करना चाहिये कारण—शुभाशुभका कारण हो तथा राजादिको यादी प्रतिधादीके विषय शक उत्पन्न हुवे इसलीये मना है

(२१) ,, राज्याभिषेकका समय क्षत्रियोंके लीये यनाया भोजन, राजाघोंके लीये अय देशोंके राजाघाके लीये, नोकरोंके लीये, राजघश्रीयाके लीये, यनाया हुवा आहार मुनि ग्रहन करे करार्ये, करतेको अच्छा समझे कारण—यह भी राजपिंड ही है

(२२) ,, राज्याभिषेक समय, जो नट स्वयं नाचनेवाले, नटघे परकी नचानेवाले, रसीपर नाचनेवाले, झालीपर कूदनेवाले,

वासपर खेलनेवाले, मह मुष्टियुद्ध करनेवाले भाङ-सुचेष्टा करनेवाले, कथा कहनेवाले, पावडे जाड जोड गानेवाले वादरेकी माफिक बढनेवाले, खेल तमासा करनेवाले छत्र धरनेवाले— इन्होंके लीये अशनादि आहार बनाया हो उम आहारसे माधु ग्रहन करे ३ कारण—अतरायका कारण होता है

(२३) ,, राज्याभिषेक समय, जो अश्व पालनेवाले हस्ती पालनेवाले, महिष पालनेवाले धृषभ पालनेवाले एव सिंह व्याघ्र, छाली मृग श्वान, सूघर, भेड, कुकडा तीतर, घटेयर लावण, चर्छ, हस मयूर, शुकादि पोषण करनेवाले, इन्हींके मदन करनेवाले, तथा इमिको फिराने खीञ्जनेवाले इन्हींके लीये चार प्रकारका आहार निष्पन्न कीया हुआ आहार माधु ग्रहन करे क रावे करतेकी अच्छासमझे यह मुनिप्रायश्चितका भागी होता है

(२४) ,, राज्याभिषेक समय जो सार्यवाहकने गीय, पग चपी कग्नेवालोंके लीये, मदन कग्नेवालोंके लीये तैलादिका मालीस करनेवालोंके लीये स्नान मज्जन करानेवालोंके लीये, शृगारसजानेवालोंके लीये चम्पर, छत्र, वस्त्र भूषण धारण करानेवालोंके लीये, दीपक, तरवार, धनुष्य भालादि धारण करनेवालोंके लीये, अशनादि चार प्रकारका आहार बनाया उस आहारमे मुनि आहार ग्रहन करे भाषना पूर्ववत्

(२५) , राज्याभिषेक समय जो वृद्ध पुरुषोंके लीये कृत्न नपुंसकोंके लीये फचुकी पुरुषोंके लीये, द्वारपालोंके लीये, दंड धारकोंके लीये बनाया आहार माधु ग्रहन करे ३

(२६) ,, राज्याभिषेक समय जो कुब्ज दासीयोंके लीये यावत् पारसदेशकी दासीयोंके लीये बनाया हुआ आहार, मुनि ग्रहन करे ३ भाषना पूर्ववत् अतराय होता है

इस २६ घोलोंसे कोई भी गोल साधु माध्वीयों सेवन करे करावे, करतेको अनुमोदन करे, अर्थात् अच्छा समझे उस माधु साध्वीयोंका गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा प्रायश्चित्त विधि देखो धीसया उद्देशामें

इति श्री निशित्सूत्र—नौया उद्देशाक्षा सचिस मार.

(१०) श्री निशित्सूत्र—दशवा उद्देशा

(१) 'जो कोई साधु माध्वी' अपने आचार्य भगवानको तथा रत्नत्रयादिसे वृद्ध मुनियोंको कठोर (स्नेह रहित) घचन बोले ३

(२) ,, अपने आचार्य भगवान् तथा रत्नत्रयादिसे वृद्ध मुनियोंको कर्कश (मर्मभेदी) घचन बोले ३

(३) पर कठोर (कर्कश) कारी घचन बोले ३

(४) पर आचार्य भगवान्की आशातना करे ३

भाषार्थ—आशातना मिथ्यात्वका कारण है

(५) ,, अनन्तकाल 'युक्त' आहार करे ३

भाषार्थ—यस्तु अचित्त है, परन्तु नीठ, फूल, कन्द, मुलादिसे प्रतिवृद्ध है ऐसा आहार करनेवाला प्रायश्चित्तका भाग होता है

(६) ,, आदाकर्मों आहार (माधुके ठीके ही बनाया गया हो) को ग्रहण करे ३

(७) ,, गतकाठमें लाभालाभ मुख दुःख हुआ उमका निमित्त प्रकाशे ३

(८) पय वर्तमान कालका

(९) पय अनागत कालका निमित्त वहे प्रकाश करे

भावाथ—निमित्त प्रकाश करनेसे स्याध्याय ध्यामें घिघ्न होवे राग द्वेषको वृद्धि होवे, अप्रतीतिका कारण-इत्यादि दोषा का संभव है

(१०) ,, अय किसी आचार्यका शिष्यको भरममें (भ्रममें) डाल देवे, चित्तको व्यग्र कर अपनी तर्फ रखनेकी रीतिश करे ३

(११) ,, पय प्रशिष्यको भरम (भ्रम) में डाल, दिशामुग्ध बनाके अपने साथ ले जावे तथा घस्र पात्र, ज्ञानसूत्रादिका लोभ दे, भरमाके ले जावे ३

(१२) ,, किसी आचार्यके पास कोई गृहस्थ दीक्षा लेता हो, उसको आचार्यजीका अवगुणवाद रोल (यह तो लघु है हीनाचारी है, अज्ञान है-इत्यादि) उम दीक्षा लेनेवालाका चित्त अपनी तर्फ आवर्षित करे ३

(१३) पय एक आचार्यसे अरुचि कराके दुसरके साथ भे जवा दे

भावार्थ—ऐसा अशुभ कार्य करनेसे तीसरा महाव्रतका भग होता है साधुओंकी प्रतीति नहीं रहती है एक ऐसा कार्य करनेसे दुसरा भी देखादेखी तथा द्वेषके मारे धरेगा, ता साधुमर्यादा तथा तीर्थकरके मागका भग होगा

(१४) ,, साधु साधुओंके आपसमें क्लेश हो गया हो तो उस क्लेशका कारण प्रगट कीये बिना, आलोचना कीया विग-गर, प्रायश्चित्त लीये विग-र खमतखामना कीया विग-र तीन रा-त्रिके उपरात रहे तथा साथमें भोजन करे ३

भाषार्थ—विगर खमतग्वामणा रहेगा तो कारण पाके फिर भी उस क्लेशकी उदीरणा होगा

(१५) , क्लेश करके अन्य आचार्य पाससे आये हुयेको तीन रात्रिसे अधिक अपने पास रखे ३

भाषार्थ—आये हुये साधुको मधुर वचनासे समझाये कि-हे भद्र! तुमको तो जहा जावेगा, वहा ही मयम पालना है, तो फिर अपने आचार्यको ही क्यों छोडते हो, थापिस जाये, आचार्य महा राजकी प्रियावच्च, विनय, भक्ति कर प्रसन्न करो इत्यादि दित शिक्षा दे क्लेशसे उपशान्त उनाके थापिस उसी आचार्यने पाम भेजना ऐसा कारणसे तीन रात्रि रख सकते है जयादा रखे तो प्रायश्चित्तका भागी होता है

(१६) , लघु प्रायश्चित्तवालेको गुरु प्रायश्चित्त कहे ३ (द्वेषके कारणसे)

(१७) पथ गुरु प्रायश्चित्तवालेको लघु प्रायश्चित्त कहे ३ (रागके कारणसे)

(१८) पथ लघु प्रायश्चित्तवालेको गुरु प्रायश्चित्त देवे ३

(१९) गुरु प्रायश्चित्तवालेको लघु प्रायश्चित्त देवे ३ भा

वना पूर्ववत्

(२०) ,, लघु प्रायश्चित्त सेवन कीया हुआ साधुके साथ आहार पाणी करे ३

(२१) ,, लघु प्रायश्चित्तका स्थान सेवन कीया है, उसे आचार्य सुना है कि—अमुक साधुने लघु प्रायश्चित्त सेवन कीया है फिर उसके साथ आहार पाणी करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

(२२) ,, पय सुनलेने पर तथा श्यय जानलेनेपर आलोचना करने याग्य प्रायश्चित्तकी आलोचना नहीं करे यह हेतु उमके साथ आहारपाणी करे ३

(२३) मकल्प—अमुक दिन आलोचना कर प्रायश्चित्त ले खेंगा परन्तु क्षयतक आलोचना कर प्रायश्चित्त नहीं लीया है, वहातक उसे द्योपित साधुके साथ आहार पाणी करे, कराये, करतको अच्छा समझे जैसे च्यार सूत्र लघु प्रायश्चित्त आश्रित कहा है, इमी माफिक च्यार सूत्र (२४-२५-२६-२७) गुरुप्रायश्चित्त आश्रित कहना इमी माफिक च्यार सूत्र (२८-२९-३०-३१) लघु और गुरु दोना सामेलया कहा * x

(३२) ,, लघु प्रायश्चित्त तथा गुरु प्रायश्चित्त, लघु प्रायश्चित्तका हेतु, गुरु प्रायश्चित्तका हेतु, लघु प्रायश्चित्तका संकल्प, गुरु प्रायश्चित्तका संकल्प सुनके, हृदयमें धारये फिर भी उम प्रायश्चित्त संयुक्त साधुके साथ एक संकल्पपर भाजन करे, कराव कर तेकी अच्छा समझे

भाषार्थ—योइ साधु प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना नहीं करते हैं उमके साथ दुमरे साधु आहार पाणी करते हा ता उसे एक कीस्मकी महायता मिलती है दुमरी दये दोष सेवनमें शंका नहीं रहेती है दुमरे साधु भी स्वच्छंदी ही प्रायश्चित्त सेवन करनेमे शंका नहीं करेगा तथा द्योपित साधुयाके साथ भोजन करनेवालामे एकाश व्याप्त होगा, इत्यादि इसी वास्ते

x एक प्राचीन प्रन्निमें गुरु प्रायश्चित्त और लघु प्रायश्चित्त भा च्यार सूत्र लिखा हुआ है किन्तुने सन्धय यह भी च्यार विन्प हा गस्ते है तथा लघु प्रा०का हेतु गुरु प्रा० सन्धय लघु प्रा० संकल्प गुरु प्रा० हेतु लघु प्रा० दोना हेतु तथा दोनोंका संकल्प यह भी च्यार सूत्र है

दोषित साधुओंको हितशुद्धिसे आलोचना करवाके ही उन्होंके साथ आलाप संलाप करनेकी ही शास्त्रकारोंकी आज्ञा है

(३३) ,, सूर्योदय होनेके बाद तथा सूर्य अस्त होने के पहला मुनियोंकी भिक्षावृत्ति है साधु निरोगी है, और सूर्योदय होनेमें तथा अस्त न होनेमें कुच्छ भी शका नहीं है उस समय भिक्षा ग्रहण कर, लायके भोजन करनेको बैठा, तथा भोजन करते बखत स्वयं अपनी मतिसे तथा दुसरे गृहस्थोंके वचन श्रवण करनेसे ग्याल हुआ कि—यह भिक्षा सूर्योदय पहला तथा सूर्य अस्त होनेके बाद में ग्रहण की गई है (अति वादल तथा पर्यता दिक्की व्याघातसे) ऐसी शका होनेपर मुंहका भोजन थुकके साफ करे, पात्राका पात्रामें रखे, हाथका हाथमें रखे अर्थात् उस सब आहारका एकान्त निर्जीव भूमिपर विधिपूर्वक परठे, तो भगवानकी आज्ञाका अतिक्रम न हुये, (परिणाम विशुद्ध है अगर शका होनेपर भी आप भोगये तथा अन्य किसी साधुओंको देये, तां यह मुनि, रात्रिभोजनके दोषका भागी होता है उसे चातुर्मासिक प्रायश्चित्त देना चाहिये

(३४) ,, इसी माफिक साधु निरोगी है, परन्तु सूर्योदय होने में तथा अस्त होनेमें शका है, यह दो सूत्र निरोगीका पहला इसी माफिक दो सूत्र रोगी साधुओंका भी समझना (३५-३६)

भावार्थ—किसी आचायादिकी बैयावच्छमे शीघ्रतासे जाना पड़े, छोटे गामोंमें दिनभर भिक्षाका योग न पना, दिवसके अन्त में किसी नगरमें पहुँचे, उस समय वादल बहुत है, तथा पर्यतकी व्याघात होनेसे ऐसा मालुम होता है कि—अबो दिन होगा तथा पहले दिन भिक्षाया योग नहीं पना दुसरे दिन सूर्योदय होते ही क्षुधा उपशमानेके लीये तथा विशेष पिपासा होनेसे, छास

आदि लेनेका काम पड़े, उस अपेक्षा यह विधि बतलाई है सा मान्यतासे तो साधु दुसरी तीसरी पौढ़पौमें ही भिक्षा करते हैं

(३७) ,, कोई साधु साध्वीर्याका रात्रि समय तथा पैकाल (प्रतिमरणका थकत) समय अगर आहार पाणी मयुक्त उगाला (गुचलकी) आवे, उसका निर्भीध भूमिपर परठ देनेस आज्ञाका भंग नहीं होता है अगर पीठे भक्षण करे, करावे, करलेको अरुठा समझे

(३८) , कितनी बीमार साधुका सुनके उसकी गयेपणा न करे ३

(३९) अमुक गाममें साधु बीमार है, पेसा सुन आप दुसरे रहस्तेसे चला जाये जाने कि—भ उन गाममे जाउंगा तो बीमार साधुकी मुझे धैयावत्त करना पड़ेगा

भाषार्थ—पेसा करनेसे निदयता होती है साधुकी धैयावत्त करनेमें महान् लाभ है साधुकी धैयावत्त साधु न करेगा, तो दुसरा कौन करेगा ?

(४०) ,, कोई साधु बीमार साधुके लीये दवाइ याचनेको श्रद्धस्थोके पहा गया, परन्तु वह दवाइ न मिली तो उस साधुने आचार्यादि वृद्धोंको कह देना चाहिये कि—मेरे अतरायका उदय है कि इस बीमार मुनिके योग्य दवाइ मुझे न मिली अगर वापिस आयके पेसा न कहे वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है कारण—आचार्यादि तो उस मुनिके विश्वासपर बैठे हैं

(४१) ,, दवाइ न मिलनेपर साधु पश्चात्ताप न करे जैसे—अहो ! मेरे कैसा अतराय कमका उदय हुआ है कि—इतनी याचना करनेपर भी इन बीमार साधुके योग्य दवाइ न मिली इत्यादि

भाषार्थ—जितनी दवाइ मिले, उतनी लाने बीमारको देना-
न मिलनेपर गयेपणा करना गयेपणा करनेपर भी न मिले तो
पञ्चाक्षर करना कारण बीमार साधुको यह शका न हो कि—
सब साधु प्रमाद करते हैं मेरे लीये दवाइ लानेका उद्यम भी
नहीं करते हैं

(४२) , प्रथम वर्षाश्रुत-श्रावण कृष्णप्रतिपदार्धे ग्रामानु-
ग्राम विहार करे ३

(४३) , अपर्युषणको पर्युषण करे ३

(४४) पर्युषणको पर्युषण ७ करे

भाषार्थ—आषाढ चौमामी प्रतिश्रमणसे ५० दिन भाद्रपद
शुक्लपक्षकी पर्युषण होता है पर्युषण प्रतिश्रमण करनेसे ७०
दिनोंसे कार्तिक चातुर्मासिक प्रतिश्रमण होता है अगर यत्तमान
चातुर्मासमें अधिक मान भी हो, तो उसे काल चूटिका मानना
चाहिये ।

(४५) , पर्युषण (सावत्सरिक) प्रतिश्रमण समय गौंके
घाला जितने पेश (घाल) शिरपर रखे ३

भाषार्थ—मुनियोंका सावत्सरिक प्रतिश्रमण पहलग शिखा
लाश करना चाहिये ।

(४६) , पर्युषण—संघत्सरीके दिन इतर स्वल्प विन्दु
मात्र आहार करे ३

भाषार्थ—संघत्सरीके दिन शक्ति सहित साधुयाँकी शौचि-
हार उपवास करना चाहिये

(४७) , अन्य तीथीयो तथा अन्य तीथीयाँके गृहस्थोंके
साथ पर्युषण करे, कराये, करेको अच्छा समझे

भाषाथ—जैसे जैन मुनियोंके पर्युषण होते हैं, इसी माफिक अन्य तीर्थी लोग भी अपनी ऋषि पंचमी आदि दिनोंको मुकर कीया है यह अन्यतीर्थी कहे कि—हे मुनि ! तुमारा पर्युषण हमको करावे और हमारा पर्युषण तुम करो ऐसा करना साधु साध्वीयोको नहीं कल्पै

(४८) , आपाढी चातुर्मासीके याद माधु साध्वी वस्त्र, पात्र ग्रहन करे ३

भाषार्थ—जो वस्त्रादि लेना हो, यह आपाढ चातुर्मासी प्रति व्रमण करनेके प्केस्तर ही ग्रहन कर लेना याद में कार्तिक चातुर्मासी तक वस्त्र नहीं ले सकते हैं +

उपर लिखे ४८ बोलसे कोइ भी धोल सेधन करनेवाले साधु माध्वीको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो बीसवा उद्देशमें

इति श्री निशिक्षन्त्र-दशवा उद्देशाका सक्षित सार

(११) श्री निशिक्षन्त्र-डग्यारवा उद्देशा

(१) ' जो कोइ माधु साध्वी ' लोहाका पात्र करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

(२) पथ लोहाका पात्राको रखे

+ सान्नापागसूत्र—“सगणे भगव महागिरि सरीमइ राइ माग वइकन्ते सत्तरि एहि राइदिगहिं मस हैं वासागण प जोसमइ अघात् आपात् चातुर्मासीम पचाश दिन और कार्तिक चातुर्मासिके सीतर दिन पहला सावन्सरिक प्रतिव्रमण करना साधुवोंको कल्पै

(३) पथ लोहाका पात्रमें भोजन करे तथा अन्य काममें लेवे ३

(४) पथ ताघाका पात्र करे

(५) धारे रखे

(६) भोगमें ३

(७) पथ तरुकेका पात्रा करे

(८) धारे

(९) भोगमें ३ पथ तीन सूत्र सीसाके पात्रोंका १०-११-१२ पथ तीन सूत्र फासीके पात्रोंका १३-१४ १५ पथ तीन सूत्र रुपाके पात्रोंका १६-१७-१८ पथ तीन सूत्र सुवर्णके पात्रोंका १९-२०-२१ पथ जातिरूप पात्र २४ पथ मणिपात्रोंके तीन सूत्र २५-२६-२७ पथ तीन सूत्र कनकपात्रोंका २८-२९-३० दात पात्रोंके ३३ सींग पात्रोंके ३६ पथ दन्त्र पात्रोंके ३९ पथ चर्म पात्रोंके तीन सूत्र ४० पथ पत्थर पात्रके तीन सूत्र ४५ पथ अकरतनोंके पात्रोंका तीन सूत्र ४८ पथ शख पात्रोंके तीन सूत्र ५१ पथ घञ्जरतनोंके पात्र करे रखे, उपभोगमें लेवे ३ इति ५४ सूत्र

भाषार्थ—मुनि पात्र रखते हैं यह निर्ममन्य भावसे केवल मध्यमवात्रा निर्वाह करनेके लिये ही रखते हैं उक्त पात्रो धातुके, ममत्यभाव बढ़ानेवाले हैं चोरादिका भय, मध्यम तथा आत्मघातके मुख्य कारण हैं यास्ते उक्त पात्रोंकी मना करी हैं जैसे ५४ सूत्रों उक्त पात्र निषेधके लिये बहा है, इसी माफिक ५४ सूत्र पात्रोंके बधन करनेके निषेधका समझना जैसे पात्रोंका लोहका बन्ध करे, लोहके बधनवाला पात्र रखे, लोहाका बन्धनवाला पात्र उपभोगमें लेवे यायत् घञ्जरतनों तक्षके सूत्र कहना भाषार्थ पूर्ववत् १०८

(१०९) ,, पात्रा याचने निमित्त दाय कोश उपरात गमन करे गमन करावे गमन करनेको अच्छा समझे ३

(११०) एष दाय काश उपरातसे मामने दाय कोशकी अदर लायके देवे उम पात्रको मुनि ग्रहन करे ३

(१११) ,, श्रीजिनेश्वर देधाने सूत्रधम (द्वादशागरुप) चारित्रधर्म (पचमहाव्रतरुप), इम धर्मका अवगुणवाद बोले, निंदा करे, अयश करे, अकीर्ति करे ३

(११२) ,, अधम, मिथ्यात्म, यज्ञ, होम, ऋतुदान, पिंडदान इत्यादिकी प्रशसा-तारीफ करे ३

भावार्थ—धर्मकी निंदा ओर अधर्मकी तारीफ करनेसे जी पाकी घडा विपरीत हो जाती है वह अपनी आत्मा और अनेक पर आत्मार्थाको डुवाते हुये और दुष्कर्म उपजाय करते है

(११३) ,, जो कोई साधु साध्वी जो अन्यतीर्थी तापसादि और गृहस्थ लोगोंके पाषोंको मसले, चपे, पुजे यावत् तीसरा उद्देशमें पाषासे लगाके ग्रामानुग्राम विहार करते हुवेके शिरपर छत्र करनेतक ५६ सूत्र यहापर साधु आश्रित है यहापर अयती र्थी तथा गृहस्थ आश्रित है इति १६८ सूत्र हुये

(१६९) ,, साधु आप अन्धकागदि भयोत्पत्तिके स्थान जाके भय पाये

(१७०) अन्य साधुघोंको भयात्पत्तिके स्थान ले जाय वे भयोत्पन्न करावे

(१७१) स्वयं गृहलादि कर विस्मय पाये

(१७२) अन्य साधुघोंको विस्मय उपजावे

(१७३) न्धय नयमधर्मसे विपरीत बने

(१७४) अन्य साधुओंको विपरीत पनावे, अर्थात् अपना स्वभाष समयमें रमणता करनेका है, इन्हसे विपरीत बने, हासी टटा, फिसादादि करे, कगावे, करतेको सहायता देवे

(१७५) ,, मुहसे प्रजानेकी धीणा करे, करावे, करने हु वेका सहायता देवे

भाषार्थ—भय, कुतूहल विपरीत होना, सब गालचेष्टा है, समयको बाधाकारी है वास्ते साधुओंको पहलेसे ऐसा निमित्त कारणही नहीं रखना चाहिये यह मोहनीय कमका उदय है इसको बढ़ानेसे उठता जावे, और कम करनेसे कमती हो जावे, वास्ते ऐसे अकृत्य कार्य करनेवालोंको प्रायश्चित्त बतलाया है

(१७६) ,, द्योय राजाओंका विरुद्ध पक्ष चल रहा है उस समय साधु साधुवीर्यों घरघार गमनाममन करे ३

भाषार्थ—राजाओंको शका होती है कि—यह कोई परपक्ष वाला साधुवेप धारण कर रहाका समाचार लेनेको आता होगा तथा शुभाशुभका कारण होनेसे धर्मको—शासनको नुकसान होता है

(१७७) ,, दिनका भोजन करनेवालोंका अयगुनघाद घोले जैसे एक सूर्यमें द्योय धार भोजन न करना इत्यादि

(१७८) ,, रात्रिभोजनका गुणानुघाद घोले, जैसे रात्रि भोजन करना बहुत अच्छा है इत्यादि

(१७९) ,, पहले दिन भोजन ग्रहण कर दुसरे दिन दिनको भोजन करे तथा पहली पोरमीमें भिक्षा ग्रहण कर चौथी पोरसीमें भोजन करे ३

(१८०) पथ दिनको अशनादि च्यार आहार ग्रहण कर रात्रिम भोजन करे ३

(१८१) रात्रिमें अशनादि च्यार आहार ग्रहण कर दिनका भोजन करे ३

(१८२) परं रात्रिमें अशनादि च्यार आहार ग्रहण कर रात्रिमें भोजन करे कराये, करतेको अच्छा समझे

भावार्थ—रात्रिमें आहार ग्रहण करनेमें तथा रात्रिमें भोजन करनेमें सुख जीर्वाको विराधना होती है तथा प्रथम पौरसीमें लाया आहार, चरम पौरसीमें भोगयनेसे कल्पातिक्रम दोष गता है

(१८३) , कोइ गाढागाढी कारण धिगर अशनादि च्यार प्रकारका आहार, रात्रिमें घामी रखे, रखाये, रखतेको अच्छा समझे

(१८४) अति कारणसे अशनादि च्यार आहार, रात्रिम घामी रखा हुआका दुमरे दिन विन्दुमात्र स्वयं भागवे अन्य साधुको देवे ३

भावार्थ—करी गोधरीमें आहार अधिक् आगया तथा गोचरी लानेवे बाद माधुर्याको मुखारादि घेमारोके कारणसे आहार बढ गया, घबत कमती हो परठनेका स्थान दूर है, तथा घनघोर यर्पाद घप रही है ऐसे कारणसे यह बचा हुआ आहार रह भी जाव तो उसको दुमरे दिन नहीं भोगयना चाहिये, रात्रि समय रक्नेका अयसर हो तो राखते मतल देना चाहिये ताके उसमें जीवात्पत्ति न हो अगर रात्रिघासी रहा हुआ अशनादि आहारको मुनि खानेकी इच्छा भी करे, उसे यह प्रायश्चित्त यत लाया है

(१८५) , कोइ अनार्यलोक मान, मदिरादिका भोजन स्वयं अपने लीये तथा आवे हुवे पाहुणे (महिमान) के लीये

चनाया हो, इधर उधर लाते, ली जाते हो, जिनका रूप ही अदर्शनीय है जहापर ऐसा कार्य हो रहा है, उसीकी तर्फ जानेकी अभिलाषा, पिपासा, इच्छा ही साधुओंको न करनी चाहिये अगर करे, कराये, करतेको अच्छा समझे यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होगा कारण-यह जातेमें लोगोंको शकाका स्थान मिलेगा -

(१८६) ,, देवोंको नैवेद्य चढानेके लीये, जो अशनादि आहार तैयार कीया है, उसकी अन्दरसे आहार ग्रहण करे ३ यह लोकधिरुद्ध है कदाच देवता कोपे तो नुकसान करे

(१८७) ,, जो कोई माधु सा धी जिनाज्ञा विराधके अपने छंदे चलनेवाले है, उसकी प्रशंसा करे ३

(१८८) ऐसे स्वच्छदे चलनेवालोंको वन्दे ३ इसीसे स्वच्छदचारीयोंकी पुष्टि होती है

(१८९) ,, साधुओंके ममारपक्षके न्यातीले हो, अ न्यातीले हो, श्रावक हो, अन्य गृहस्थ हो, परन्तु दीक्षाके योग्य न हो, जिसमें दीक्षा ग्रहण करनेका भान भो न हो ऐसा अपात्रको दीक्षा देवे ३

भाषाय—भविष्यमे बड़ा भारी नुकसानका कारण होता है

(१९०) ,, अगर अज्ञातपनेसे ऐसे अपात्रको दीक्षा दे दी हो, तत्पश्चात् ज्ञात हुया कि-यह दीक्षाके लीये अयोग्य है उनको पंचमहाव्रतरूप बड़ीदीक्षा देवे ३

(१९१) अगर बड़ीदीक्षा देनेके बाद ज्ञात हो कि-यह संयमके लीये योग्य नहीं है ऐसेको ज्ञान, ध्यान देवे सूत्र-निष्ठातकी वाचना देवे, उसकी धैर्यावच्छ करे, साथमें एक मडले-पर भोजन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे भावना पूर्वक

(१९२) , यद्य सहित साधु, यद्य सहित साध्वीयाकी अन्दर नियास करे ३

(१९३) पद्य यद्य सहित, यद्य रहित

(१९४) यद्य रहित, यद्य सहित

(१९५) यद्य रहित, यद्य रहितकी अन्दर नियाम करे, कराये, करतेकी अच्छा ममझे

भाषाध—साधु साध्वीयोंको किसी प्रकारसे मामेल रहना नहीं कल्पै कारण-अधिक परिचय होनेसे अनेक तरहका नुक शान है और स्थानागतदूत्रकी चतुर्भंगीरे अभिप्राय-अगर कोई विशेष कारण हो जैसे किमी अनार्य ग्रामकी अन्दर अनाय आदमीयोंकी प्रदमासी हो, ऐसे समय साध्वीयों एकतफसे आइ हो, दुमरी तफसे साधु आये हो तो उस साध्वीके ब्रह्मचर्य रक्षण निमित्त, धमपुत्रके माफिक रह भी सकते हैं तथा यद्यादि चौर हरण किया हो पसा विशेष कारणसे रह भी सकते हैं

(१९६) , रात्रिमें घासी रखके पीपीलिका उसका चूण, सुठी चूण, वल्गालुणादि पदाध भोगवे ३ तथा प्रथम पोरसीमें लाया चरम पोरसीमें भोगवे ३

(१९७) ,, जो कोई साधु साध्वी-बालमरण-जैसे पद्यतसे पडके मरजाना, मरुस्थली रेतीमें खुचके मरना खाइ-खाइमें पडके मरना इस च्यारोंमें फम कर मरना, कीचडमें फस कर मरना, पाणीमें डूबके मरना, पाणीमें प्रवेश करना शूपादिमे कूदके मरना, अग्निमें प्रवेश कर तथा कूद कर अग्निमे पडके मरना विषभक्षण कर मरना, शस्त्रसे घात कर मरना पाच इन्द्रियाके घश हो मरना, मनुष्य मरके मनुष्य होना

पशु मरने पशु होना अतः करणमें मायशल्य रखके मरना, फासी लेके मरना, महाकायाघाले मृतक पशुके कलेवरमें प्रवेश हो मरना सयमादि शुभ योगोंसे ब्रष्ट हों, अर्थात् विराधक भावमें मरना इन्हके सिधाय भी जो घालमरण मरनेवालियोंकी प्रशंसा तारीफ करे, कराये, करतेको अच्छा समझे

उपर लिखे १९७ बोलोंसे एक भी गोल सेवन करनेवाले साधु-साध्वियोंको गुरुचातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो धीसवा उद्देशामे

इति श्री निशित्सूत्र-इग्यारवा उद्देशाका सक्षिप्त सार.

(१२) श्री निशित्सूत्र-चारहवा उद्देशा

(१) ' जो कोई साधु साध्वी ' 'कलूण' दीनपणाको धारण करता हुआ प्रम-जीव गौ, भैंसादिको तृणकी रसी (दोरी)से बांधे परं मुज रसीसे बांधे काष्ठकी चाखड़ी तथा खोडासे बन्धन करे, चर्मकी रसीसे, रज्जुकी रसीसे, सूतकी रसीसे, अन्य भी किसी प्रकारकी रसीसे, प्रम जीवोंको बांधे, बंधावे, अन्य कोई साधु बाधते हो, उसको अच्छा समझे

(२) पर उक्त बन्धनोंमे रन्धा हुआ प्रस जीवोंको खोले, खोलाये, खोलतोंको अच्छा समझे

भाषार्थ—कोई साधु, गृहस्थोंके भकानमें ठेरे हुये हैं वह गृहस्थ जैन मुनियोंके आचारसे अज्ञात है गृहस्थ कहें कि—हे मुनि ! मे अमुक कायके लीये जाता हु मेरे गौ, भैंसादि पशु,

(१६) ,, गृहस्थोंके पलग पथरणे आदिपर सुवे—शयन करे ३

(१७) , गृहस्थाको औपधि उतावे, गृहस्थाके लीये औपधि करे

(१८) साधु भिक्षाको आनेके पेंस्तर साधु निमित्त हाथ, चादुडी कडछी, भाजन कचे पाणीसे धोकर साधुको अशनादि स्थार आहार देवे ऐसे साधु ग्रहन करे

(१९) ,, अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ, भिक्षा देते समय हाथ, चादुडी, भाजनादि कचे पाणीसे धा देवे और साधु उसे ग्रहन करे ३

भावार्थ—जीर्णोंकी विराधना होती है

(२०) , वायक बनाये हुय पुतलोंके अम्ब, गजादि पशु वस्त्रके बनाये चीटेके बनाये लेप, लीटादिसे दातके बनाये खीलुने, मणि चंद्रकातादिसे बनाये हुये भूषणादि, पत्थरक बनाये मकानादि, ग्रथित पुष्पमालादि वेष्टित—धीठसे धीठ मिलाके पुष्पदंडादि सुषणादि धातु भरतसे बनाये पदार्थ, बहुत पदार्थ एकत्र कर चित्र विचित्र पदार्थ, पत्र छेदन कर अनेक मोदक (भादक) पदार्थ, जिसको देखनेसे मोहनीय कर्मकी उदीरणा हो ऐसा पदार्थ देखनेकी अभिलाषा करे, करावे, करतेकी अच्छा समझे

भावार्थ—ऐसे पदार्थको देखनेकी अभिलाषा करनेसे म्या ध्याय ध्यानमे व्याघात, प्रमादकी वृद्धि मोहनीय कर्मकी उदीरणा, यावत् समयसे पतित होता है

(२१) ,, काकडीयाँ उत्पन्न होनेके स्थान, ' काच्छा ' केले आदि फलोत्पत्तिके स्थान, उत्पलादि कमलस्थान, पर्यंतका

निर्जरणा, उज्जरणा, घापी, पुष्करिणी दीर्घ घापी, गुजागर घापी, सर (तलाय), सरपत्ति-आदि स्थानाको नेत्रोंसे देखनेकी अभिलाषा करे ३ भावना पूर्णयत्

(२२) ,, पर्वतके नदीके पासके काच्छा केलीघर, गुप्तघर, वन एक जातिका वृक्ष महान् अटवीका वन, पर्वत-विषम पर्वत

(२३) ग्राम, नगर खेड, कपिठ मडप, प्रोणीमुख, पट्टण, मोना—चादोका आगर, तापसोंका आश्रम, घोपी निवास कर-नेका स्थान, यावत् सन्निवेश

(२४) ग्रामादिमें किसी प्रकारका महोत्सव हो रहा हो

(२५) ग्रामादिका यध (घात) हो रहा हो

(२६) ग्रामादिमें सुन्दर मार्ग वन रहा है, उसे देखनेको जानेका मन भी करे ३

(२७) ग्रामादिमें द्वाह (अग्नि) लगी हो उसे देखनेकी अभिलाषा मनसे भी करे ३

(२८) जहा अश्वक्रीडा, गजक्रीडा यावत् सुयगक्रीडा होती हो

(२९) जहापर चौरादिकी घात होती हो

(३०) अश्वका युद्ध, गजयुद्ध, यावत् शूकर युद्ध होता हो

(३१) जहापर बहुत गौ, अश्व, गजादि रहेंत हो, ऐसी गौशालादि

(३२) जहापर राज्याभिषेकका स्थान है, महोत्सव होता हो, कथा समाप्तका महोत्सव होता हो, मानानुमान-तोला, माप, लय, चौड जाननेका स्थान, वार्जात्र, नाटक, नृत्य, बीना बजानेका स्थान, ताल, ढोल, मृदंग आदि गाना बजाना होता हो

(३३) चौर, धील, पारधीयोका उपद्रवस्थान, वैर, खार
क्रोधादिसे हुषा उपद्रव युद्ध, महासंग्राम, क्लेशादिवे स्थानोंको

(३४) नाना प्रकारके महोत्सवकी अन्दर बहुतसी स्त्रियों,
पुरुषों युवक वृद्ध, मध्यम वयवाले, अनेक प्रकारके वस्त्र, भूषण,
चदनादिसे शरीर अलङ्कृत बनाके वैद् नृत्य, वैद् गान वैद्
हास्य त्रिनोद, रमत, खेल, तमासा करते हुवे विविध प्रकारका
अशनादि भोगघते हुवेकी देखने जानेका मनसे अभिलाष करे,
कराये करतेकी अच्छा समझे

(३५) ,, इम लोक सत्रधी रूप (मनुष्य-स्त्रीका), परलोक
सबधी रूप, (देव-देवी, पशु आदि) देखे हुवे न देखे हुवे, सुने
हुवे, न सुने हुवे, ऐसे रूपांकी अन्दर रजित मूर्च्छित, गृद्ध हो
देखनेकी मनसे भी अभिलाषा करे ३

भाषार्थ—उपर गिते सब किसमके रूप, मोहनीय कर्मकी
उदीरणा करानेवाले है जैसे एक दूधे देखनेसे हृन्ममय यह ही
हृदयमें निवास कर ज्ञान ध्यानमें विघ्न करनेवाले उन जाते है
घास्ते मुनियोंका किन्ती प्रकारका पदाथ देखनेकी अभिलाषा
तक भी नहीं करना चाहिये

(३६) ,, प्रथम पोरसीमें अशनादि च्यार प्रकारका आ
हार लाके उसे चरम पोरसी तक रखे ३

(३७) ,, जिम ग्राम नगरमें आहार प्रदान कीया है, उ
सको दौं घोंशसे अधिक ले जावे ३

(३८) ,, किसी शरीरके कारणसे गोबर लाना पडता हो
पहले दिन लावे दुसरे दिन शरीरपर बाधे

(३९) दिनको लाने रात्रिमें याने

(४०) रात्रिमें लाके दिनको बाधे

(४१) रात्रिमें लाके रात्रिमें बाधे

भाषार्थ—ज्यादा घसत रखनेसे जीवाधिकी उत्पत्ति होती है, तथा कल्पदोष भी लगता है इसी माफिक च्यार भागा लेप-णकी जातिकाभी समझना भाषार्थ—गड गुबड होनेपर पोटीस धिगेरे तथा शरीरके लेपन करनेमें आवे, तो उपर मुजब च्यार भागाका दोषको छोडके निरवघ औपध करना साधुका कल्प है ८२

(४६) ,, अपनी उपधि (वस्त्र, पात्र, पुस्तकादि) अन्य तीर्थीयोंको तथा गृहस्थोंको देवे, वह अपने शिर उठाके स्थाना तर पहुचा देवे

(४७) उमे उपधि उठानेके बदलेमें उसको अशनादि च्यार प्रकारका आहार देवे, दीलावे, देतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—अपनी उपधि गृहस्थ तथा अन्यतीर्थीयोंको देनेमें समयका बाधात गृहस्थोंकी रुशामत करना पडे, उपकरण फूटे तूटे, मचित्त पाणी आदिका मघटा होनेसे जीवोंकी हिंसा होवे, उमरे पगार तथा आहारपाणीका प्रदोषस्त करना पडे इत्यादि दोष है

(४८) ,, गंगा नदी, यमुना नदी, सीता नदी, पेरारवती नदी और मही नदी—यह पाचों महानदीयों, जिनका पाणी कितना है (समुद्र समान) ऐसी महा नदीयां एक मासमें दोय बार, तीन बार उतरे, उतरावे, अन्य उतरते हुयेको अच्छा समझे

भाषार्थ—बारबार उतरनेसे जीवोंकी विराधना होवे तथा किसी समय अनजानत ही विशेष पाणीका पूर आजानेसे आपघात, समयघात हो, इत्यादि दोष लगते हैं

उपर लेखे ४८ वालोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले साधु, साध्वीयाँको लघु चानुर्मानिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो धीसया उद्देशामें

इति श्री निशियसूत्रके बारहवा उद्देशाका सचित्त सार

(१३) श्री निशियसूत्र—तेरहवा उद्देशा

(१) ' जो कोई साधु साध्वी ' अन्तरा रक्षित सचित्त पृथ्वी-कायपर बैठ-सुने खडा रहै, स्वाध्याय ध्यान करे ३

(२) सचित्त पृथ्वीकी रज उडी हुई पर बैठ, यावत् स्वाध्याय करे ३

(३) पथ सचित्त पाणीसे स्निग्ध पृथ्वीपर बैठ, यावत् स्वाध्याय करे ३

(४) पथ सचित्त—तत्काल खानसे निकली हुई शिला तथा शिलाका तोड़े हुये छोटे छोटे पत्थरपर बैठे, तथा कीचडसे, कचरासे जीवादिकी उत्पत्ति हुई हो, काष्ठके पाट-पाटलादिमें जीवोत्पत्ति हुई हो, इडा प्राणी (वेद्द्रियादि) बीज, हरिकाय ओसका पाणी, मक्खडीजाला, निलण-फूलण, पाणी, कच्ची मट्टी, माकड, जीवोंका झाला सयुक्त हो, उसपर बैठे, उठे, सुवे, यावत् स्वाध्याय करे करावे, करतेको अच्छा समझे

(५) ,, घरकी देहलीपर, घरके उबरे (दरवाजाका मध्य भाग) उखलपर, स्नान करनेके पाटेपर, बैठे, सुवे, शय्या करे, यावत् घडा बैठके स्वाध्याय-ध्यान करे ३

(६) पथ ताटी, भोंत, शिला, छाटे छोटे पत्थरे विगरेसे आच्छादित भूमिपर शयन करे, यावत् स्वाध्याय ध्यान करे ३

(७) ,, एक तर्क आदि भीतपर दोनों तक आदि आदि भीतपर पाट-पाटला रगये बैठे, मोटी इटोंकी राशिपर तथा और भी जिम जगा चलाचल (अस्थिर) हो, उस स्थानपर बैठ याघत् स्वाध्याय करे ३

भाषार्थ—जीधोंकी घिराधना होये, आप स्वय गिर पड़े, आत्मघात, सयमघात होये, उपकरणादि पडौसे तूटे फूटे—इत्यादि दोष लगता है

(८) ,, अन्यतीर्था तथा गृहस्थ लागाको सत्सारिक शिल्प-कला, चित्रकला, यच्चकला, गणितकलादि (१२) श्लाघाकरणरूप जोडकला, श्लोकबंधकी कला, चोपड, शेत्रज, कावरी रमनेकी कला, ज्योतिषकला, वैद्यककला, सलाह देना, गृहस्थके कार्यमें पट्ट बनाना, क्लेश, युद्ध मग्रामादिकी कला उतलाना, शिख-वाना, स्वय करे, अन्यसे करावे, करतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—मुनि आप सत्सारमें अनेक कलावोंका अभ्यास कीया हुआ है, फिर दीक्षा लेनेपर गृहस्थोंपर स्नेह करते हुये, उक्त कलावा गृहस्थोंको शीखावे, अर्थात् उस कलावोंसे गृहस्थ-लोग सावद्य वेपार कर अनेक क्लेशके हेतु उत्पन्न करेंगे धास्ते मुनिकी तो गृहस्थोंको एक धर्मकग, कि जिमसे इसलोक पर-लोकमें सुखपूर्वक आत्मकत्याण करे, ऐमा ही बतलानी चाहिये

(९) ,, अन्यतीर्थियोंको तथा गृहस्थोंको कठिन शब्द बोले ३

(१०) पथ स्नेह रहित कर्कश घचन बोले ३

(११) कठोर और कर्कश घचन बोले ३

(१२) ,, आशातना करे

(१३) कौतुक कर्म (दोरा राखडी)

(१४) भूतिकर्म, रक्षादिकी पोटली कर देना

(१५) ,, प्रश्न, हानि लाभका प्रश्न पूछे

(१६) अन्यतीर्थी गृहस्थ पूछनेपर ऐसे प्रश्नोंका उत्तर,
अर्थात् हानि लाभ बताये

(१७) षष्ठ प्रश्न विद्या मंत्र, मृत, प्रेतादि निकालनेका
प्रश्न पूछे

(१८) उक्त प्रश्न पूछनेपर आप बतलाये तथा शीखाये

(१९) भूतकाल संवन्धी

(२०) भविष्यकाल संवन्धी

(२१) वत्तमानकाल संवन्धी निमित्त भाषण करे ३

(२२) लक्षण—हस्तरेखा पगरेखा, तिल, मन्ना लक्षण
आदिका शुभाशुभ बताये

(२३) स्वप्नके फल प्ररूपे

(२४) अष्टापद—एक जातकी रमत, जैसे शेषजी आदिका
खेलना शीखाये

(२५) रोहणी देवीको साधन करनेकी विद्या शिखाये

(२६) हरिणगमैपी देवको साधन करनेका मंत्र शिखाये

(२७) अनेक प्रकारकी रसमिद्धि जडीबुट्टी, रमायन बताये

(२८) लेपजाति—जिससे यशोकरण होता हो

(२९) दिग्मूढ हुआ अन्त्यतीर्थी गृहस्थोंको रहस्ता बतलाये,
अर्थात् कलेशादि कर कितनेक आदमी आगे चले गये हो, और

कितनेक आदमी उन्होंको मारनेके लीये जा रहे हो, उस समय मुनिको रहस्ता पूछे, तथा

(३०) कोइ शिकारी दिग्मूढ हुये रहस्ता पूछे, उसे मुनि रहस्ता बताये, तथा दुसरे भी अन्यतीर्थी गृहस्थोंको रहस्ता बताये कारण—यह आगे जाता हुआ दिग्मूढतासे रहस्ता भूल जाये, दूसरे रहस्ते चला जाये, कष्ट पढनेपर मुनिपर कोप करे इत्यादि

(३१) धातु निधान, अन्यतीर्थी—गृहस्थाको उतलाये आप गृहस्थपणेमें निधान जमीनमें रखा, यह दीक्षा लेते समय किसीको पहना भूल गया था, फिर दीक्षा लेनेके बाद स्मृति होनेपर अपने रागीयोंको उतलाये तथा दीक्षा लेनेके बादमें कहापर ही निधान देखा हुआ बताये कारण—यह निधान अनथका ही हेतु होता है, मोक्षमार्गमें विघ्नभूत है

भाषार्थ—यह सत्र सूत्र अन्यतीर्थीयों, गृहस्थोंके लीये कहा है मुनि, गृहस्थाधाम अनथका हेतु, ससारभ्रमणका कारण जान त्याग कीया था, फिर उक्त क्रिया गृहस्थलोगोंको उतलानेसे अपना नियमका भंग, गृहस्थ परिचय, ध्यानमें व्याघात इत्यादि अनेक नुकसान होता है वास्ते इम अलाय उलायसे अलग ही रहना अच्छा है

(३२) ,, अपना शरीर (मुह) पात्रमें देखे

(३३) काचमें देखे

(३४) तलघारमें देखे

(३५) मणिमें देखे

(३६) पाणीमें देखे

(३७) तैलमें देखे

(३८) ढीलागुलमें देखें

(३९) चरबीमें देखे

भावार्थ—उक्त पदार्थोंमें मुनि अपना शरीर मुह) को देखे, देखाये देखताको अच्छा समझे देखनेसे शुश्रूषा बढती है सुन्दरता देख हृष, मलिनता देख शोकसे रागद्वेष उत्पन्न होते हैं मुनि इस शरीरको नाशयत्त ही समझे इसकी सहायतासे भोक्ष माग साधनेका ही ध्यान रखें

(४०) , शरीरका आरोग्यताके लीये वमन (उलटी) करे ३

(४१) पथ विरेचन (जुलाब) लेवे ३

(४२) वमन, विरेचन दानों करे ३

(४३) आरोग्य शरीर होनेपर भी दवाइयों ले कर शरीरका बल-वीर्यकी वृद्धि करे ३

भावार्थ—शरीर है, सो मयमका साधन है उसका निर्वाहके लीये तथा बेमारी आनेपर विशेष धारण हो तो उक्त काय कर सके परन्तु आरोग्य शरीर होनेपर भी प्रमादकी वृद्धि कर अपने ज्ञान—ध्यानमें व्याघात करे, कराये करतेको अच्छा समझे वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है

(४४) ,, पामत्या साधु, साधुओं (शिथिलाचारी) मंयमको एक पास रखके केवल रजोहरण मुखयच्छिका धारण कर रखी हो ऐसे साधुओंको बन्दन-नमस्कार करे ३

(४५) पथ पासत्यार्थाकी प्रशंसा-तारीफ श्लाघा करे ३

(४६) पथ उत्तम-मूलगुण पचमहाव्रत, उत्तरगुण पिंडविशुद्धि आदिके दीपित साधुओंको बन्दन करे ३

(४७) एउ प्रशमा करे ३ एउ दो सूत्र कुशीलीया-
भ्रष्टाचारी साधुयोका

(४८-४९) एउ दो सूत्र नित्य एक घरका पिंड (आहार)
तथा शक्तियान होनेपर भी एक स्थान निवास करनेवालोंका

(५०-५१) एव दो सूत्र संसत्ता-पासत्या मिलनेसे आप
पासत्य हो, संयोगी मिलनेसे आप सयोगी हो, ऐसे साधुयोका

(५२-५३) एव दो सूत्र कथगा-स्थाध्याय ध्यान छोडके
दिनभर स्त्रीकथा, राजकथा, देशकथा तथा भक्तकथा करनेवालोंका

(५४-५५) एव दो सूत्र पासणिया-ग्राम, नगर, बाग, बगीचे,
घर, बाजार इत्यादि पदार्थ देगते फिरे, ऐसे साधुयोका

(५६-५७) एव दो सूत्र ममत्त्रोपाधि धारण करनेवालोंका
जैसे यह मेरा-यह मेरा करे ऐसे साधुयोका

(५८-५९) एव दो सूत्र सप्रसांगिक जहा जावे वहा मम-
त्वभावसे प्रसारा धरते रहे, गृहस्थोवे कायमें अनुमति देता रहे

(६०-६१) ऐसे साधुयोको धंदन करे, प्रशसा करे ३

भावार्थ—यह सब कार्य जिनाज्ञा विरुद्ध है मोक्षमार्गमें
विघ्न करनेवाला है, असमवर्धन है इस अमृत्यु कार्योको धारण
करनेवाले बालजीव, मुनिवेषको लज्जित करनेवाला है ऐसेका
वन्दन-नमस्कार तथा तारीफ करनेसे शिथिलाचारकी पुष्टि
होती है उम भ्रष्टाचारी साधुयोको एक किसमकी सहायता
मिलती है वास्तव में उक्त साधुयोको वन्दन नमस्कार करनेवाला
भी प्रायश्चित्तका भागी होता है

(६२) " गृहस्थोक्त आहार—गृहस्थोवे बाल्योको खेलावे
आहार ग्रहन करे ३

(६३) ,, दूतीकम आहार—उधर इधरका समाचार कहे के आहार ग्रहन करे ३

(६४) ,, निमित्त आहार—ज्योतिष प्रकाश करके आहार ३

(६५) ,, अपने जाति, कुल्हा अभिमान करके आहार ३

(६६) ,, रक् भिग्वारीकी माफिक दीनता करके ,, ३

(६७) ,, वैद्यक-औषधिप्रमुख घतलायके आहार लेवे ३

(६८-७१) ,, क्रोध, मान, माया, लोभ करके आहार लेवे ३

(७२) ,, पहला पीछे दातारका गुण कोर्त्तन कर आहार लेवे ३

(७३) ,, विद्यादेवी साधन करनेकी विद्या बताके ,, ३

(७४) ,, मन्त्रदेव साधन करनेका प्रयोग बताके ,, ३

(७५) ,, न्यून-अनेक औषधि सामेल कर रसायण बताके ,, ३

(७६) योग—वशीकरणादि प्रयोग बतालायके , ३

भाषार्थ—उक्त १५ प्रकारके कार्य कर, गृहस्थोंकी खुशामत कर आहार लेना नि स्पृही मुनिको नहीं कल्पे

उपर लिखे, ७६ बोलसे एक भी बोल सेवन करनेवालाको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो धी मया उद्देशमे

इति श्री निशियसूत्र—वेरहवा उदेशात् सच्चिन्म सार.



(१४) श्रीनिशित्सूत्र—चौदवां उद्देशा

(१) 'जो कोई साधु साध्वी' को गृहस्थलोगपात्र-मूल्य-लाके देवे, तथा अन्य किसीसे मूल्य दिलावे देतेको सहायता कर मूल्यका पात्र साधु साध्वीयोको देवे, उस अकल्पनीय पात्रको साधु साध्वी ग्रहण करे, शिष्यादिसे ग्रहण करावे, अन्य कोई ग्रहण करते हुये साधुको अच्छा समझे

(२) एष साधु साध्वीके निमित्त पात्र उधारा लाके देवे, उसे ग्रहण करे ३

(३) एष सल्टा पलटा करदेवे ३

(४) एष निर्बलसे सप्रल ज़ररजस्तीसे दिलावे, दो भागीदारोंका पात्रमें एकका दिल नहीं होनेपर भी दुसरा देवे तथा सामने लायके देवे, उसे ग्रहण करे ३

(५) ,, किसी देशमें पात्रोंकी प्राप्ति नहीं होती हो, और दुसरे देशोंमें निग्यघ पात्र मिलते हो, ग्रहामे साधु, गणि (आचार्य) का उद्देश, अर्थात् आचार्यके नामसे, अपने प्रमाणसे अधिक पात्र ग्रहण कीया हो, वह पात्र आचार्यको आमंत्रण न करे, आचार्यको पूछे बिगर अपनी इच्छानुसार दुसरे साधुको देवे, दिलावे ३

भाषार्थ—सत्य भाषाका भग, अत्रिश्वासका कारण, सायमे कलेशका कारण भी होता है

(६) ,, लघु शिष्य शिष्यणी, स्वविर-ययोवृद्ध साधु साध्वी जिसका हाथ, पग, कान, नाक दोट आदि अघयय उद्दा हुया नहीं है, घेमार नहीं है, अर्थात् वह शक्तिमान् है, उसको परिमाणसे अधिक पात्र देवे, दिलावे, देतोंको अच्छा समझे

(७) कथंचित् हाथ, पग, कान, नाक, होठ छेदाया हुआ है किसी प्रकारकी अति बेमारी हो उसको परिमाणसे अधिक पात्र नहीं देवे नहीं दिलावे, नहीं देते हुयेको अच्छा समझे

भाषार्थ—आरोग्य अवस्थामें अधिक पात्र देनेसे लोलूपता बढे, उपाधि बढे, 'उपाधिकी पोठ समाधिसे न्यारी,' अगर रोगादि कारण हो, तो उसे अधिक पात्र देनाही चाहिये बेमार रोगघालाको सहायता देना, मुनियोंका अवश्य कर्तव्य है

(८) ,, अयोग्य अस्थिर, रखने योग्य न हो, स्वल्प समय चलने काबिल न हो, जिसे यतना पूषक गौचरी नहीं लासके, ऐसा पात्रको धारण करे ३

(९) अच्छा मजबूत हो, स्थिर हो, गौचरी लाने योग्य हो, मुनिको धारण करने योग्य हो ऐसा पात्रको धारण न करे ३

भाषार्थ—अयोग्य अस्थिर पात्र सुन्दर है तथा मजबूत पात्र देखनेमें अच्छा नहीं दीसता है परन्तु मुनियोंको अच्छा खरा बका रयाल नहीं रखना चाहिये

(१०) , अच्छा वर्णघाला सुन्दर पात्र मिलने पर वैराग्यका ढोंग देखानेके लीये उसे विचर्ण करे ३

(११) विषर्णपात्र मिलनेपर मोहनीय प्रकृतिको खुश करनेको सुवर्णघाला करे ३

भाषार्थ—जैसा मिले, वैसेसे ही गुजरान कर लेना चाहिये

(१२) ,, नया पात्रा ग्रहन करके तैल, घृत, मधुखन, चरबी कर मसले लेप करे ३

(१३) ,, नया पात्रा ग्रहन कर उसके लोघ्रध द्रव्य, कीकण

द्रव्य और भी सुगन्धी सुवर्णघात्ना द्रव्य एकघार घारघार लगावे, लेप करे ३

(१४) , तथा पात्राको ग्रहन कर शीतल पाणी, गरम पाणीसे एकघार घारघार धोवे ३

एष तीन सूत्र, बहुत दिन पात्रा चलेगा, उस लीये तैलादि लोद्रयादि पाणीसे धोवेका समझना १५-१६-१७

(१८) , सुगन्धि पात्र प्राप्त कर, उसे दुर्गन्धि करे ३

(१९) दुर्गन्धि पात्र प्राप्त कर उसे सुगन्धि करे ३

(२०) सुगन्धि पात्र ग्रहन कर तैल, घृत, मक्खन, चरजीसे लेप करे

(२१) एष लोद्रयादि द्रव्यसे

(२२) शीतल पाणी उष्ण पाणीसे धोवे

एष तीन सूत्र दुर्गन्धि पात्र सवधि समझना २३-२४-२५

एष छे सूत्र सुगन्धि, दुर्गन्धि पात्र बहुत दिन चलनेके लीये भी समझना २६-२७-२८-२९-३०-३१ भायना पूर्यवत्

(३२) ,, पात्राको आतापमे रखना हो, तो अतरा रहित पृथ्वीपर आतापमें रखे ३

(३३) पृथ्वी (रज) पर आतापमें रखे ३

(३४) ससक्त पृथ्वीपर आतापमें रखे

(३५) जहापर कीडी, मकोडा, मट्टी, पाणी, नीलण, फूठण, जीर्वाका झाला हो, पेसी पृथ्वीपर पात्रा आतापमें रखे ३ कारण-पेसे स्थानोंमें जीर्वाकी विराधना होती है

(३६) , घरके उमरापर दरवाजेके मध्यभागपर, उमल, खुटा आदिपर पात्राको आताप लगानेको रखे ३

(३७) कुट्टीपर, भीतिपर, शिलापर खुले अथकाशमें पात्रोंको आताप लगानेको रखे ३

(३८) आदि भीतके खंदपर, छत्रीके शिखरपर, माचापर, मालापर, प्रान्नादपर, हथेलीपर और भी किसी प्रकारकी उंची जगादपर, थिपमस्थानपर, मुश्कीलसे रखा जाये, मुश्कीलसे उठाया जाये, लेते रगते पढजानेका संभव हो, पसे स्थानोंमें पात्रोंको आताप लगानेको रखे ३

भाषाथ—पात्रा रगते उतारते आप स्थय पीसलके पडे, तो आत्मघात, सयमघात तथा पात्रा तृटे फूटे तो आरभ घटे, उसको अच्छे करनेमें घबरात खरघ करना पडे इत्यादि दोषका सहाय है

(३९) ,, गृहस्थके घह पात्रामें पृथ्वीकाय (लूणादि) भरा हुआ है उमको निकालके मुनिको पात्र देवे, उम पात्रको मुनि ग्रहन करे ३

(४०) पथ अष्वाय

(४१) पथ तेउकाय (राख उपर अगर रख ताप करते है)

(४२) घनस्पति

(४३) पथ कन्द, मूल पत्र, पुष्प फल, बीज निकाल पात्रा देवे, उम पात्रको मुनि ग्रहन करे ३ जीय विराधना दाती है

(४४) ,, पात्रामे औषधि (गहु, जय जधारादि) पडी हो, उसे निकालके पात्र देवे, वह पात्र मुनि ग्रहन करे ३

(४५) पथ ब्रस पाणी जीय निकाले ३

(४६) , पात्रको अनेक प्रकारकी माधुके निमित्त कोरणी कर देवे उसे मुनि ग्रहन करे ३

(४७) ,, भुनिके गृहस्थावासक न्यातीले अन्यातीले, आयक

अथाथक, मुनिके लीये ग्राममें तथा ग्रामातरमे मुनिके नामसे पात्राकी याचना करे वह पात्र मुनि ग्रहन करे, ३

(४८) पर परिषदकी अन्दर उठके कहेकि—हे भद्रश्रो-
ताथों ! मुनिको पात्राकी जरूरत है, किसीके हो तो देना इत्यादि
याचना कीया हुआ पात्र ग्रहन करे ३

(४९) मुनि पात्र याचना करनेपर गृहस्थ कहे—हे
मुनि ! आप ऋतुवद्ध (मास कल्प) यहापर ठेरे हम आपको
पात्रा देखेंगे ऐसा कहने पर वहापर मुनि मासकल्प रहे ३

(५०) परं चातुर्मासका कहनेपर, मुनि पात्रोंके निमित्त
चातुर्मास करे ३

भावार्थ—गृहस्थलोग मूल्य भगावे, तथा काष्ठादि कटवाके
नया पात्र बनावे इत्यादि

इस उद्देशामें पात्रोंका विषय है मुनिको समययात्रा निर्याह
करनेके लीये दृढ (मज्जवूत) महननवाले मुनियोंको एक पात्र र-
खनेका हुकम है मध्यम सहननवाले तीन^१ पात्र रखके मोक्षमा-
गंका साधन कर शके परन्तु उनके रगनेमें सुघर्ण, सुगन्धि कर-
नेमें अपना अमूल्य समय खरच करना न चाहिये लाभालाभका
कारण तथा स्निग्ध रहनेके भयसे रगना पडता हो, वह भी
यतनासे करसके है

इपर लिखे ५० बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले मु-
नियोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि
देखो धीमया उद्देशामें

इति श्री निशियसूत्र-चौदवा उद्देशाका सच्चित्त सार.

(१५) श्री निगिथसूत्र—पटरहवा उद्देशा

(१) ' जो कोई साधु माव्यी ' अन्य साधु साध्वी प्रत्ये निष्ठुर घचन बोले

(२) पय स्नेह रहित कर्कश घचन बोले

(३) कठोर, ककश घचन बोले, बोलाने, बोलनेको अच्छा समझे

(४) पय आशातना करे ३

भाषाथ—पेसा बोलनेसे धम स्नेहका नाश और कलेशकी वृद्धि होती है मुनियोंका घचन प्रियकारी, मधुर होना चाहिये-

(५) , सचित्त आम्रफल भक्षण करे ३

(६) पय सचित्त आम्रफलों चूसे ३

(७) पय आम्रफलों गुटली, आम्रफलके टुकड़े (घातळी) आम्रफलों पय शाखा (डाली) छतु आदिका चूसे ३

(८) आम्रफलों पेसी मध्यभागको चूसे ३

(९) सचित्त आम्रप्रतिबद्ध अर्थात् आम्रफलों फाकों काटी हुई, परन्तु अभीतक सचित्त प्रतिबद्ध है उसको खावे ३

(१०) पय उक्त जीव सहितका चूसे ३

(११) सचित्त जीव प्रतिबद्ध आम्रफल डाला, शाखादि भक्षण करे ३

(१२) पय उसे चूसे ३

भाषाथ—जीव सहित आम्रफलादि भक्षण करनेसे जीव विराधना होती है हृदय निदय हा जाता है अपने ग्रहन किया हुआ नियमका भंग होते है

(१३) , अपने पाय, अयतीर्थी, अन्यतीर्थी गृहस्थोंसे

मसलाये, दयाये, चपाये ३ एय यायत तीमरा उहेशामे ५६
 सूत्र म्बअपेशाका वहा है, इमी माफिक यहा माधु, अय तीर्या,
 अन्यतीर्या गृहम्यासि कराने करानेका आदेश देये, कराने हुयेको
 अच्छा ममझे यायत् ग्रामानुग्राम विहार कर्ते ममय अपने
 शिरपर छत्र धारण करवाये ३

भाषाथ—अन्यतीर्या लोगोसे कुछ भी काम नहीं कराना
 चाहिये वह कार्य पश्चात् शीतल पाणी पिनेके आरम्भ करे,
 कराने इत्यादि ६८

(६९) ,, आराम, मुमाफिग्याना, उद्यान स्त्रीपुरुषको
 आराम करनेका स्थान गृहम्यासा गृह तथा तापमोकि आश्रमकी
 अन्दर लघुनीत (पैसाय) बढीनीत (टटी) परिते

(७०) ,, एय उद्यानके जगला (गृह) उद्यानकी शाला,
 निजान, गृहशाला इस स्थानोमे टटी पैसाय परटे ३

(७१) कोट, कोटके फिरणी गृहस्ता, दरवाजा, पुरजोंपर
 टटी पैसाय परटे ३

(७२) नदी, तलाय, कुवाका पाणी आनेका मार्ग, पाणी
 नीक करनेका पन्थ, पाणीका तीर पाणीका स्थान (आगार) पर
 टटी, पैसाय परटे, परटाये ३

(७३) शुन्य गृह, शुन्य शाला, भग्गृह, भग्गशाला, कुडगर,
 भूमिमे गृह भूमिकी शाला, कोठारका गृह शाला इस स्थानोमे
 टटी, पैसाय परटे ३

(७४) तृण गृह, तृण शाला, तुस गृह-शाला, मूसाका
 गृह-शाला इन स्थानोमे टटी, पैसाय करे ३, परटे ३

(७५) ,, रथ रखनेका गृह-शाला, युगपान-सेविका, मैना
 रखनेका गृह-शालामे टटी, पैसाय परटे ३

(७६) करियाणागृह—शाला, दुकान, धातुके बरतन रखनेका गृह—शाला

(७७) वृषभ बाधनेका गृह, शाला तथा बहुतसे लोक निवास करते हो पैसा गृह, शालामें टटी, पैसात्र परठे, अर्थात् उपर लिखे स्थानोंमें टटी पैसात्र करे, कराये, करतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—गृहस्थोंको दुगुछा धमकी हीलना यावत् दुलभ बोधीपणा उपार्जन करता है मुनियोंको टटी, पैसात्र करनेको जंगलमें खुब दूर जाना चाहिये जहापर कोई गृहस्थ लोगोंका गमनागमन न हो, इसीसे शरीर भी निरोगी रहता है

(७८) , अपने लाइ हुइ भिक्षासे अशनादि च्यार आहार, अन्यतीर्थी और गृहस्थाको देवे दिलावे, देतेको अच्छा समझे

(७९) पय वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण देवे ३ भावनापूययत्

(८०) ,, पाम्त्ये साधुओंको अशनादि च्यार आहार

(८१) वस्त्र, पात्र, कंबल रजोहरण देवे ३

(८२-८३) पाम्त्यासे अशनादि च्यार आहार और वस्त्र, पात्रा, कंबल, रजोहरण ग्रहण करे ३

पय उत्तरीका च्यार सूत्र ८४ ८५-८६-८७

पय कुशीलीयोंका च्यार सूत्र ८८-८९-९०-९१

पय नितीयोंका च्यार सूत्र ९२-९३-९४-९५

पय संसक्तोंका च्यार सूत्र ९६ ९७-९८-९९

पय कथगोंका च्यार सूत्र १००-१०१-१०२-१०३

पय ममत्ववालोंका च्यार सूत्र १०४-१०५-१०६-१०७

एष पासणियोंका च्यार सूत्र १०८-१०९-११०-१११ भाषना
पूर्वधत् समझना

उक्त शिथिलाचागीयोसे परिचय करनेमे देवादेव अपनी प्रवृत्ति शिथिल होगी लोकशका, शामनहीलना, पासत्यायोका पोषण इत्यादि दोषोंका नभय है

(११०) ,, जानकार गृहस्थ साधुयोसे पूर्य सज्जनादि, यस्त्रकी आमंत्रणा करे, उस समय मुनि उस यस्त्रकी जाच पूछ, गयेपणा न करे ३

(११३) जो यस्त्र, गृहस्थ लोक नित्य पहेरते हो, स्नान, मञ्जनके समय पहेरते हो, रात्रि समय स्त्री परिचय समय पहेरते हो तथा उत्सव समय, राजद्वार जाते समय (बहुमूल्य) पहेरने हो, ऐसे यस्त्र ग्रहन करे

भाषार्थ—सज्जनादि पूर्य स्नेह कारण यह मूल्य दोषित यस्त्र देता हो, तो मुनिको पेस्तर जाच पूछ करना चाहिये तथा नित्यादि यस्त्र लेनेसे, यह यस्त्र अशुचि तथा विषय वर्धक होता है

(११४) , साधु, साध्वी अपने शरीरकी विमूषा करनेके लीये अपने पायोको एकचार ममले, द्वावे, चपे, चारचार ममले, द्वावे, चपे, एउ विमूषा निमित्त उक्त काय अन्य साधुयोसे कराये, अन्य साधु उक्त कार्य करतेको अच्छा समझे, तागीफ करे, सहायता करे, कराउ, करतेको अच्छा समझे एष यायत् तीसरे उद्देशमे ५६ सूत्रा कहा है, यह विमूषा निमित्त यायत् प्रामानुग्राम विहार करते अपने शिरछत्र धराये ३ एष १६९

(१७०) ,, अपने शरीरकी विमूषा निमित्त यस्त्र पात्र कयल, रजोहरण और भी किसी प्रकारका उपकरण धारण करे, धारण कराये, करतेको अच्छा समझे

(७६) करियाणागृह—शाला, दुकान धातुके बरतन रखनेका गृह—शाला

(७७) वृषभ बाधनेका गृह, शाला तथा बहुतसे लोक निवास करते हो ऐसा गृह, शालामें टटी, पैसाव परठे, अर्थात् उपर लिखे स्थानोंमें टटी पैसाव करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

भावार्थ—गृहस्थोंको दुगला धर्मकी दीलना, यावत् दुलभ बोधीपणा उपार्जन करता है मुनियोंको टटी पैसाव करनेको जंगलमें खुब दूर जाना चाहिये जहापर कोई गृहस्थ लोगोंका गमनागमन न हो, इसीसे शरीर भी निरोगी रहता है

(७८) , अपने लाइ हुइ भिक्षासे अशनादि च्यार आहार, अयतोर्याँ और गृहस्थाँको देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे

(७९) पय घस्र, पात्र, कंबल, रजोहरण देवे ३ भाषनापूर्वधत्-

(८०) ,, पास्त्ये साधुओंको अशनादि च्यार आहार

(८१) घस्र, पात्र, कंबल, रजोहरण देवे ३

(८२-८३) पास्त्यासे अशनादि च्यार आहार और घस्र, पात्रा, कंबल, रजोहरण ग्रहन करे ३

पय उत्सर्गोंका च्यार सूत्र ८४ ८५-८६-८७

पय कुशीलीयोंका च्यार सूत्र ८८-८९-९०-९१

पय नितौर्याँका च्यार सूत्र ९२-९३-९४-९५

पय संसर्त्ताँका च्यार सूत्र ९६ ९७-९८-९९

पय कथगोंका च्यार सूत्र १००-१०१-१०२-१०३

पय ममत्वघालाँका च्यार सूत्र १०४-१०५-१०६-१०७

एष पातणियोंका च्यार सूत्र १०८-१०९-११०-१११ भायना
पूर्यथत् समध्वना

उक्त शिथिलाचारीयोंसे परिचय करनेसे देग्गादेव अपनी
प्रवृत्ति शिथिल होगी लोकशक्ता, शामनहोल्ना, पासत्थार्योंका
पोपण इत्यादि दोषोंका नभय है

(११०) , जानकार गृहस्थ साधुओंके पूर्यं सज्जनादि,
बखकी आमंत्रणा करे, उम ममय मुनि उस बखकी जाच पूछ,
गयेपणा न करे ३

(११३) जो बख, गृहस्थ लोक नित्य पहेरते हो, स्नान,
मज्जनये समय पहेरते हो, रात्रि समय स्त्री परिचय ममय पहेरते
हो तथा उत्तमय ममय, राजद्वार जाते समय (बहुमूल्य) पहेरने
हो, ऐसे बख ग्रहन करे

भायार्थ—मज्जनादि पूथ म्नेह कारण यह मूल्य दोषित बख
देता हो, तो मुनिको पंन्तर जाच पूछ करना चाहिये तथा नि-
त्यादि बख लेनेसे, यह बख अशुचि तथा धिपय बर्धक होता है

(११४) , साधु साध्या अपने शरीरकी विमूपा कर-
नेये लीये अपने पायाको पकथार मसले, दाये, चपे, थारयार म-
सले शये, चपे, एथं विमूपा निमित्त उक्त कार्य अन्य साधुओंसे
करायें, अन्य साधु उक्त कार्य करतेको अच्छा ममझे, तारीफ
करे, महायता करे, करायें, करतेको अच्छा ममझे एष यायत्
तीसरे उद्देशामे ५६ सूत्रा कदा है, यह विमूपा निमित्त यायत्
प्रामानुग्राम विहार करते अपने शिरछत्र धरायें ३ एष १६९

(१७०) ,, अपने शरीरकी विमूपा निमित्त बख, पाथ,
बंयल, रजोहरण और भी विमी प्रकारका उपकरण धारण करे,
धारण करायें, करतेको अच्छा ममझे

(१७१) पथ बखादि धोये, साफ करे, उज्यठ करे घटा मटा उस्तरी दे गडोबन्ध नाफ करे, कराव, करतेको अच्छा समझे

(१७२) पथ बखादिको सुगन्धि पदार्थ लगाये रूप देकर सुगन्धि बनाये ३

भायार्थ—बिभूषा कर्मबन्धका हेतु है विषय उत्पन्न करनेका मूल कारण है समयमें भ्रष्ट करनेमें अग्रसर है इत्यादि दोषोंका संभव है

उपर लिखे १७२ बोलामे एक भी बोल सेवन करनेवाले मुनियोंका लघु चानुर्मानिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो धीमया उद्देशसे

इति श्री निशियसूत्र—पदरवा उद्देशाका सच्चित्त सार

—→६(०)३←—

(१६) श्री निशियसूत्र—सोलवा उद्देशा

(१) जो कोई साधु साधु ' गृहस्थ शय्या—जहापर दपती मीढाकर्म करते हो, ऐसे स्थानमें प्रवेश करे कराये, करतेको अच्छा समझे

भायार्थ—यहा जानेसे अनेक विषय विकारकी लेहरो उत्पन्न होती है पूर्व कीये हुये त्रिलास स्मृतिमें आते है इत्यादि दोषका संभव है

(२) ' गृहस्थाय फचापाणी पडा हो, ऐसे स्थानमें प्रवेश करे ३

(३) पत्र अग्निवे स्थानमें प्रवेश करे

भाषार्थ—जहाँ जैसा पदार्थ, वहाँ ऐसी भावना रहती है
चास्ते पसे स्यानोंमें नही ठेरे अगर गौचरी आदिसे जाना हो
तों कार्य होनेसे शीघ्रतासे छोट जावे

(८) ,, इक्षु (सैलडीके साठा) को चूने या पत् पदरहवे
उद्देशमें आम्रफलके आठ सूत्र कहा है, इसी माफिक यहाँ भी
समझना भावना पूर्वपत् ११

(१२) ,, अट्टी, अरण्य, विपमस्थान जानेवालोंका तथा अट
वीमें प्रवेश करते हुवेका अज्ञानादि च्यार प्रकारका आहार लेवे ३

भाषार्थ—कौई काष्ठवृत्ति करनेवाला अपना निर्वाह हो,
इतना आहार लाया है, उसे दीनतासे मुनि याचनेपर अगर
आहार मुनिको दे देवेगा, तो फिर उसे अपने लीये दुसरा
आरम्भ करना होगा, फटादि सचित्त भक्षण करना पड़ेगा या बड़े
कष्टसे अटवी उल्लूघन करेगा इत्यादि दोषोंका संभव है

(१३) ,, उत्तम गुणोंके धारक, पचमहाव्रत पालक, जितें-
द्रिय गीतार्थ, जैन प्रभाषक क्षान्यादि गुण सयुक्त मुनियोंको
पासन्धे, भ्रष्टाचारी आदि कहे, निंदा करे ३

(१४) शिथिलाचारी पासन्धियोंको उत्तम साधु कहे ३

(१५) गीतार्थ सवेगी, महापुरुषोंसे विभूषित गच्छको
पासन्धियोंका गच्छ कहे ३

(१६) पासन्धियोंके गच्छको गीतार्थोंका गच्छ कहे ३

भाषार्थ—द्वेयके वश हो अच्छाको घुरा, नागके वश हो
घुराको अच्छा कहे यह २६टि विपर्याप्त है इससे मिथ्यात्वकी
पुष्टि शिथिलाचारीयाँकी पुष्टि, उत्तम गीतार्थोंको अपमान, शा-
सनकी हीलना—इत्यादि अनेक दोषोंका संभव होता है

(१७) ,, कौइ साधु एक गच्छसे क्लेश कर बहासे विगार खमतसामना कर, निकल दुसरे गच्छमें आवे, दुसरे गच्छवाले उस क्लेशी साधुको अपनेपास अपने गच्छमे रखे उसे अशनादि च्यार आहार देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—क्लेशवृत्तिवाले साधुकोके लीये कुछ भी रोकघट न होगा तो एक गच्छमें क्लेशकर तीसरे गच्छमे जावेगा, एक गच्छका क्लेशी साधुको दुसरे गच्छवाले रखलेंगे तो उस गच्छका साधुको भी दुसरे गच्छवाले रखलेंगे इमसे क्लेशकी उत्तरोत्तर वृद्धि होगी, शासनकी हीलना आत्मकल्याणका नाश, क्षात्यादि गुणोंका उच्छेद आदि अनेक हानि होगी

(१८) एक क्लेशी साधुकोका आहार ग्रहन करे

(१९-२०) ब्रह्मादि देवे लेवे

(२१ २२) शिक्षा देवे, लेवे

(२३ २४) सूत्र मिद्धातकी वाचना देव, लेवे

भाषार्थ—ऐसे क्लेशी साधुकोका परिचयतक करनेसे, चेपी रोग लगता है वास्ते दूरही रहना चाहिये एक साधुमे दूर रहेंगे, तो दूसदर्या भी क्षोभ रहेंगा

(२५) , साधुकोके विहार करने योग्य जनपद देश मोजुद होते हुवे भी बहुत दिन उलंघने योग्य अरण्यको उल्लघ अनार्य देश (लूट देशादि) में विहार करे ३

भाषार्थ—अपना शारीरिक सामर्थ्य देखा विगार करनेसे रहस्तेमें आदाकर्मी आदि दोष तथा नयमसे पतित होनेका सभय है

(२६) जिस रहस्तेमें चौर, धाडायती, अनार्य धूर्तादि हो, ऐसे रहस्ते जाये ३

भाषार्थ—घस्र, पात्र, छीन लेवे, मार पीट करे द्वेष बढे, यावत् पतित करे अगर स्वयं शक्तिमान्, विद्यादि चमत्कार, स्थिर सहननवाला, उपकार लाभालाभका कारण जानता हो, यह जा भी सके है

(२७) ,, दुगुणिक कुल

(१) स्वल्प काल सुधा सुतकवाला घर

(२) दीर्घ काल शुद्रादि इन्होंके घरसे अशनादि च्यार प्रकारका आहार ग्रहण करे ३

(२८) पथ घस्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण ग्रहण करे ३

(२९) पथ शय्या (मकान) सन्तारक ग्रहण करे ३

भाषार्थ—उत्तम जातिके मनुष्य जिस कुलसे परेज रखते हो, जिसके हाथका पाणी तब भी नहीं पीते हो, ऐसे कुलका आहार पाणी लेना, साधुक वास्ते मना है

(३०) ,, दुगुणिक कुलमें जाके स्वाध्याय करे ३

(३१) पथ शिष्यकी वाचना देवे

(३२) सदुपदेश देवे

(३३) स्वाध्याय करनेकी आज्ञा देवे

(३४) दुगुणिक कुल (घर) में सूत्रकी वाचना लेवे

(३५) स्वाध्याय (अर्थ) लेवे

(३६) स्वाध्यायकी आवृत्ति करे

भाषार्थ—चाडालादि तथा सुधासुतकवालोंके घरमें सदैव अस्वाध्यायही रहेती है घहापर सूत्र सिद्धांतका पठन पाठन करना मना है तथा दुगुण अथात् लोकव्ययहारमें निन्दनीय कार्य करनेवाला, जिसकी लोक दुगुण करते हैं, पास न बैठे, न बै-

ठाये पेमा पामत्या, हीणाचारी, आन्वार दशनम भ्रष्ट तथा अ-
प्रतीतिथालाको ज्ञान ध्यान देना तथा उससे ग्रहण करना मना
है यहा प्रथम लोक व्यवहार शुद्ध रखना बतलाया है साथमें
योगायोग, और लाभालाभ, द्रव्य, क्षेत्रका भी विचार करनेका है

(३७) ,, अशनादि च्यार आहार लाके पृथ्वी उपर रखे ३

(३८) एव सस्तारक पर रखे ३

(३९) अधर खुटीपर रखे, छीकापर रखे, छातपर रखे ३

भाषार्थ—येसे स्थानपर रखनेसे पीपीलिका आदि जीवोंकी
विराधना होव वीहीयो आवे, काग, कृता अपहरण करे, स्नि-
ग्धता चीकट लगनेसे जीवोत्पत्ति होवे—इत्यादि दोषका मभष है

(४०) ,, अमनादि च्यार आहार, अयतीर्थी तथा
गृहस्योके साथमें बैठके भोगवे ३

(४१) चोतरफ अय तीर्थी गृहस्थ, चक्रकी माषिक और
आप स्वय उसके मध्य भागमे बैठके आहार करे ३

भाषार्थ—साधुको गुप्तपणे आहार करना चाहिये, जोनसे
कोइकि अभिलाषही नहावे

(४२) ,, वाचार्यापाध्यायत्रीके शय्या, सन्तारकके पा-
धोसे सघट्टा कर िगर समायो जावे ३

(४३) ,, शास्त्र परिमाणसे तथा आचार्यापाध्यायकी
आह्वामे अधिक उपकरण रखे ३

(४४) , आन्तरा रहित पृथ्वीकायपर टटी पैसाव परठे

(४५) जहापर पृथ्वीरज हो वहापर

(४६) पाणीसे स्निग्ध जगाहपर

(४७) सचित्त शिला, छोटे छोटे पत्थरेपर, तथा प्रस जीव, स्थावर जीव, नीलण, फूलण, कची पृथ्वी, झालादिपर टटी, पैसाय परठे, परठावे

(४८) घरका उबरा स्थूभ, उखले, ओटले

(४९) बन्धा, भीत, शैल, लेलू, उर्ध्वस्थानादि

(५०) इटो, स्तंभ, काष्ठवे ढगपर, गोबरपर

(५१) खाड, खाइ, स्थुभ, माचा, माला, प्रासाद हवेली आदि जो उर्ध्व हो, उसपर जाके टटी, पैसाय परठे, परिठावे, परिठावतेको अच्छा समझे भावना पूर्ववत् जीवोत्पत्ति लोका पवाद तथा शासनहीलना इत्यादि दोषोंका समर्थ है

उपर लिखे ५१ बोलोंसे एक भी बोलको सेवन करनेवाले मुनियोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो धीसया उद्देशार्थ

इति श्री निशिथसूत्रके सोलवा उद्देशाका सचित्त सार.

(१७) श्री निशिथसूत्र-सत्तरवा उद्देशा

(१) ' जो कोइ माधु साधवी ' कुतूहल निमित्त प्रस प्राणी-योंको-जीवोंको लणपाश (बन्धन) मुजकी रसी, घेतकी रमी, सूतकी रसी, चमकी रसीसे बाधे, बधाये, बाधतेको अच्छा जाने

(२) एव उक्त बधनसे बन्धे हुवेको छोडे ३ भावना पूर्ववत् एमी कुतूहल करनेसे परजीवोंको तकलीफ अपने प्रमाद ज्ञान, ध्यानमें विघ्न होता है

(३) ,, कुतूहल निमित्त तृणमात्र, पुष्पमाला, पत्रमाला, फलमाला, हरिकायमाला, धीजमाला करे ३

(४) धारे, धरावे, धरतेको अच्छा समझे

(५) भागवे

(६) पेहरे

(७) कुतूहल निमित्त लोहा, तावा, तरया, सीसा, चादी, सुवर्णके खीलुने चित्र करे ३

(८) धारण करे ३

(९) उपभोगमें लेवे ३

(१०) पर्ये द्वार (अठारसरी) अद्वार (नौसरी) तीनसरी सुवर्ण तारसे द्वार करे ३

(११) धारण करे ३

(१२) भोगवे ३

(१३) चमके आभरण यावत् विचित्र प्रकारके आभरण करे ३

(१४) धारण करे ३

(१५) उपभोगमें लेवे ३

भावार्थ—कुतूहल निमित्त कोई भी कार्य करना कर्मबन्धका हतु है प्रमादकी घृद्धि, ज्ञान, ध्यान, स्वाध्यायमें व्याघात होता है

(१६) ,, एक साधु दुसरा साधुका पाव अन्यतीर्थी तथा गृहस्थोंसे चपावे, दवावे, यावत् तीसरे उद्देशके ५६ शोल यहा पर कहना परं एक साधु साधुकी पाव, अन्यतीर्थी तथा गृहस्थोंसे दवावे, चपावे, मसलावे एव ५६ सूत्र एव एक साधुकी साधुके पाव अन्यतीर्थी गृहस्थोंसे दवावे, चपावे, मसलावे पर्य

५६ सूत्र पत्र माध्वी साध्वीयोके पाव अन्यतीर्थी गृहस्थोसे द्वाये, चपाये, ममलाये यात्रत् तीसरे उदेशा माफिक ५६-५६ चोल कहेना, च्यार अलापत्रे २२४ सूत्र कहना कुल २३९

भाषार्थ—साधु या साध्वी, कोइ भी कोशीश कर अन्यतीर्थी तथा उन्होके गृहस्थोसे साधु साध्वीयोका कोइ भी कार्य नहीं कराना चाहिये कारण—उन्होका सर्व योगसाधय है अयतनासे करनेसे जीवविराधना हो, शासनकी लजुता अधिक परिचय, उन्होके प्रत्ये पीछा भी कार्य करना पड़े इसमे भी राग, द्वेषकी प्रवृत्ति पड़े इत्यादि अनेक दोषोका मभव है जास्ते साधुयोको निस्पृहतामे मोक्षमार्गका साधन करना चाहिये

(२४०) ,, अपने सदृश समाचारी, आचार व्यवहार अपने मरीखा है, पेसा कोइ ग्रामान्तरसे साधु आये हो, अपने ठेरे है, उस मकानमे साधु उतरने योग्यस्थान होनेपरभी उस पाहुणे साधुको स्थान न देवे ३

(२४१) पय साध्वीयो, ग्रामातरसे आइ हुइ साध्वीयोको स्थान न देवे, ३

भाषार्थ—इसमे घन्मलनाकी दानि होती है, लाकाको धर्मसे श्रद्धा टिथिल पडती है, द्वेषभावकी वृद्धि होती है धर्मस्नेहया लोप होता है

(२४२) , उचे स्थानपर पडो हुइ वस्तु तकटीकसे उतारके देवे, पेसा अशनादि वस्तु साधु लेवे ३

(२४३) भूमिगृह, कोठारादि नीचे स्थानमे पडो हुइ वस्तु देय उसे मुनि ग्रहन करे ३

(२४४) कोटी कोठारादि अन्य स्थानमे वस्तु रत्न लेगादि कीया हो, उसको गोलय वस्तु देवे, उसे मुनि लेवे ३

(३) ,, कुतूहल निमित्त तृणमात्र, पुष्पमाला, पत्रमाला
फलमाला, हरिकायमाला, बीजमाला करे ३

(४) धारे, धराये, धरतेको अच्छा समझे

(५) भोगये

(६) पेदरे

(७) कुतूहल निमित्त लोहा, तावा, तरवा, सीमा, चादी,
सुवर्णके खीलुने चित्र करे ३

(८) धारण करे ३

(९) उपभोगमें लेये ३

(१०) पर्य द्वार (अठारमरी) अद्वार (नौसरी) तीनसरी
सुवर्ण नारसे द्वार करे ३

(११) धारण करे ३

(१२) भोगये ३

(१३) चमड़े आभरण यावत् विचित्र प्रकारके आभरण
करे ३

(१४) धारण करे ३

(१५) उपभोगमें लेये ३

भाषार्थ—कुतूहल निमित्त कोई भी काय करना कमबन्धका
हेतु है प्रमादकी वृद्धि, ज्ञान, ध्यान, स्वाध्यायमें व्याघात
होता है

(१६) ,, एक साधु दुसरा साधुका पाप अत्यतीर्था तथा
गृहस्थोंसे चपाये, दवाये, यावत् तीसरे उद्देशके ५६ बोल यद्वा
पर कहना एव एक साधु साधुकी पाप, अन्यतीर्था तथा
गृहस्थोंसे दवाये, चपाये, मसलाये एव ५६ सूत्र एव एक साधु
साधुके पाप अत्यतीर्था गृहस्थोंसे दवाये, चपाये, मसलाये पर्य

५६ सूत्र पथ माध्वी साध्वीयोक्ते पाव अन्यतीर्थी गृहस्थासे दयावे, चपावे, मसलावे यावत् तीसरे उद्देशा माफिक ५६-५६ बोल कहेंना, च्यार अलापकये २४ सूत्र कहना जुल २३९

भाषार्थ—साधु या साध्वी, कोइ भी कोशीश कर अन्यतीर्थी तथा उन्हांके गृहस्थोंसे साधु साध्वीयोका कोइ भी काय नहीं कराना चाहिये कारण—उन्हांका मर्थ योग सायध है अयतनासे करनेसे जीयविराधना हो, शामनकी लजुता, अधिक परिचय, उन्हांके प्रत्ये पीछा भी कार्य करना पडे, इममें भी राग, द्वेषकी प्रवृत्ति पडे इत्यादि अनेक दोषोंका मभय है वास्ते साधु-योको निस्पृहतासे मोक्षमार्गका साधन करना चाहिये

(२४०) ,, अपने मद्दश समाचारी, आचार व्यवहार अपने मगीखा है, पेमा कोइ ग्रामान्तरसे साधु आये हो, अपने ठेरे है, उम मफानमें साधु उतरने योग्यस्यान होनेपरभी उस पाहुणे साधुको स्यान न देये ३

(२४१) पथ साध्वीयो, ग्रामांतरसे आइ हुइ साध्वीयोको स्यान न देय, ३

भाषार्थ—इमसे धत्सलनाफी दानि होती है, लाकाकी धर्मसे धद्धा त्रिथिल पढती है, द्वेषभायकी वृद्धि होनी है धर्मस्नेहया लोप होता है

(२४२) ,, उचे स्यानपर पढी हुइ धम्तु तकलीकसे उतारये देये, पेमा अशनादि धम्तु साधु लेये ३

(२४३) भूमिगृह, काठारादि तीचे स्यानमें पढी हुइ धम्तु देय उसे मुनि ग्रहन करे ३

(२४४) कोठी कोठारादि अन्य स्यानमें धम्तु रस लेरादि कीया हो उमको मोग्पे धम्तु देये उसे मुनि लेये ३

भाषार्थ—करी वस्तु लेते, रगते पीमक पडजानेसे आत्मघात, मयमघात जीवाहिका उपमदन होता है पीच्छा लेप कर नेमे आरभ होता है

(२४५) पृथ्वीकायपर रखा हुआ अशनाहि च्यार आहार उठाके मुनिको देवे यह आहार मुनिग्रहन करे, ३

(२४६) पथ अष्कायपर

(२४७) पथ तेउकायपर

(२४८) धनस्पतिकाय पर रखा हुआ आहार देवे, उसे मुनि ग्रहन करे ३

भाषार्थ—ऐसा आहार लेनेसे जीवाकी विराधना होती है. आशाका भंग व्यवहार अशुद्ध है

(२४९) , अति उष्ण गरमागरम आहार पाणी देते समय गुहस्थ हाथसे मुहसे सुपडेसे ताडके पखेसे, पत्रसे शाखाके शाखाके खड्गे हथा लगाके जिससे धायुकायकी विराधना होती है ऐसा आहार मुनि ग्रहन करे ६

(२५०) अति उष्ण—गरमागरम आहार पाणी मुनि ग्रहन करे

भाषार्थ—उसमे अग्निकायक जीव प्रदेश होते हैं जीमसे जीव हिंसा का पाप लगता है

(२५१) उसामणका पाणी धरतन धोया हुआ पाणी चायल धोया हुआ पाणी धार धोया हुआ पाणी तिल० नुस० जय० भूसा० लोहादि गरम कर धुजाया हुआ पाणी फाजीका पाणी आम्र धोया हुआ पाणी शुद्धोदक जो उक्त पदार्थों धोयाकी ज्यादा धरत नही हुआ है जिसका रस नही बदला है जिस

जीयोंकी अतीतक शस्त्र नहीं प्रणम्या है, जीय प्रदेशोंकी सत्ता नष्ट नहीं हुई है अथान् यह पाणी अचित्त नहीं हुआ है, पेसा पाणी साधु ग्रहन करे ३ *

(२७२) ,, फोड साधु अपने शरीरको देख, दुनियाको कहेकि—मेरेमें आचार्यका सध लक्षण है अर्थात् मुझे आचार्यपद दो—पेसा कहे ३

भायार्थ—आत्मश्लाघा करनेसे अपनी कीमत कराना है

(२७३) ,, गगदृष्टि कर गाये, घाजिन्न यज्ञाये, नटोंकी माफिक नाचे कूदे, अश्वकी माफिक हणहणाट करे हस्तीकी माफिक गुलगुलाट करे सिंहकी माफिक सिंहनाद करे, कराये ३

भायार्थ—मुनियोंको पेसा उन्माद कार्य न करना, किन्तु शातवृत्तिसे मोक्षमार्गका आराधन करना चाहिये

(२७४) ,, भेरीका शब्द, पट्टका शब्द, मुद्दका शब्द, मादलका शब्द, नदीघोषका शब्द झलरीका शब्द, बल्लरीका शब्द, डमरु, मट्टया, शंख, पेटा, गोत्री, और भी श्रोत्रद्रियको आकर्षित करनेकी अभिलाषा मात्र भी करे ३

(२७५) ,, वीणाका शब्द, त्रिपंचीका शब्द, कृणाका, पापची वीणा, तारकी वीणा, तुंघीकी वीणा, सतारका शब्द, ढकाका शब्द, और भी वीणा-तार आदिका शब्द श्रोत्रद्रियको उन्मत्त बनानेवाले शब्द सुननेकी अभिलाषा मात्र करे ३

(२७६) ,, तात्र शब्द, वासीतालके शब्द, हस्ततालादि,

* एक जानिक धोत्रण में दुसरी जानीका धोत्रण मात्र देनम अगर विलयन हानों प्रसचीका कि उन्पनी हो जाती है टुफ भाद्योंको इगपर ह्याल करना चाहिये

और भी किसी प्रकारके ताल को यावत् श्रवण करनेकी अभिलाषा मात्र भी करे

(२५७) ,, शख शब्द वास वेणु, खरमुखी आदिके शब्द सुननेकी अभिलाषा करे ३

(३५८) ,, केरा गाहुर्वाका खाइ यावत् तलाष आदिका घहापर जौरसे निकलाता हुवा शब्द

(२५९) ' काच्छा गहन, अटवी, पर्वतादि विषम स्थानसे अनेक प्रकारके होते हुये शब्द "

(२६०) "ग्राम, नगर, यावत् सत्रिवेशके कोलाहल शब्द "

(२६१) ग्राममें अग्नि यावत् सत्रिवेशमें अग्नि आदिसे म हान् शब्द

(२६२) ग्रामका उद-नाश, यावत् सत्रिवेशका घटका शब्द

(२६३) अश्वदिका क्रीडा स्थानमें होता हुवा शब्द

(२६४) घौरादिकी घातके स्थानमें होता हुवा शब्द

(२६५) अश्व गजादिक युद्धस्थानमें "

(२६६) राज्याभिषेकके स्थानमें, कथनोंके स्थान पटहा दिके स्थान, होते हुये शब्द

(२६७) 'बालकोंके विनोद विलासक शब्द '

उपर लिखे मय स्थानांमें श्रोत्रेन्द्रियसे श्रवण कर, राग द्वेष उत्पन्न करनेवाले शब्द, मुनि सुने, अन्यको सुनाये, अन्य कोइ सुनताहो उसे अच्छा समझे

भाषार्थ—यसे शब्द श्रवण करनेसे राग द्वेषकी वृद्धि, प्रमा

दकी प्रबलता, विषयविकारका उत्तेजन, स्वाध्याय-ध्यानकी व्याघात, इत्यादि अनेक दोषों उत्पन्न होते हैं

(२६८) जो कोई साधु साध्वी अनेक प्रकारसे इस लोक मंत्रधी मनुष्य-मनुष्यणीका शब्द, परलोक मंत्रधी देवी, देवता, तिर्यच, तिर्यचणीके शब्द, देखे हुये शब्द, त्रिगर देखे हुये शब्द, सुने हुये शब्द, न सुने हुये शब्द, याघत् ऐसे शब्द सुन उसके उपर राग, द्वेष, मूर्च्छित, गृद्ध आमक्त हो, श्रोत्रेंद्रियका पोषण करे, कराने, करतेको अच्छा समझे

उपर त्रिखे २६८ जोत्रोंसे एक भी बोल कोई साधु साध्वी सेवन करेगा, उसे लघु धातुमांनिक प्रायश्चित्त होगा प्रायश्चित्त विधि देखो धीसया उद्देशामे

इति श्री निगिथसूत्र-मत्तरया उद्देशाका सविप्त सार.



(१८) श्री निगिथसूत्र-ग्रठारवा उद्देशा

(१) ' जो कोई साधु साध्वी ' त्रिगर कारण नौका (नाया) मे बैठे, पैटाये, बैठतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—समुद्रकी स्टेल् बग्नेकी तथा कुतुदृक्के लीये नौकामें बैठे, उसे प्रायश्चित्त होता है

(२) , साधु साध्वीयोंके निमित्त नौका मूल्य बगीद कर रखे, उस नौकापर घटे ३

(३) पय नौका उधारी लेवे, उसपर घटे ३

(४) सल्टो पलटो बगी हुइ नौकापर घटे ३

(५) निपैलसे कोई मयल जयरदस्तीसे ले, उस नौकापर

बैठे ३ एष हो मनुष्योंके विभागमें है, एककादिल न होनेवाले नौकापर चढे ३ साधुके निमित्त सामने लाइ हुई नौकापर चढे ३

(७) जलमें रही हुई नौकाको खेचके साधुके लीये स्थलमें लावे, उस नौकापर चढे ३

(८) एष स्थलमें रही नौकाको जलकी अंदर साधुके निमित्त लावे, उस नौकापर चढे ३

(९) जिस नौकाकी अन्दर पाणी भरागया हो, उस पाणीको साधु उलचे (बाहार फेंके) ३

(१०) कादवमें खुची हुई नौकाको बदमसे निकाले ३

(११) किसी स्थानपर पडो हुई नौकाको अपने लीये मगवाके उसपर चढे ३

(१२) उर्ध्वगामिनी नौका पाणाके सामने जानेवाली, अधोगामिनी नौका, पाणीके पूरमें जानेवाली नौकापर चढे ३

(१३) नौकाकी एक योजनकी गतिके टाइममें आदा योजन जानेवाली नौकापर बैठे

(१४) रसी पकड नौकाको आप स्थय चलाव

(१५) न चलती हुई नौकाको दडाकर, घेतकर, रसीकर आप स्थय चलाव ३

(१६) नौकामें आते हुये पाणीको पात्रसे कमडलसे उलचे बाहार फेंके ३

(१७) नौकाने छिद्रसे आते हुये पाणीको हाथ पग और कोई भी प्रकारका उपकरण करके रोके ३

भाषाय—प्रथम तो जहातक रहस्ता हो, बहातक नौकामें

साधुओंको बैठनाही नहीं चाहिये अगर बैठना हो ता जल्दीसे पार हो, पेसी नौकामे बैठे नदीका दुसरा तट दृष्टीगाचर होना हो, पेसी नौकामें बैठे बैठती जगत मुनि सागारी अनशन कर नौकामें बैठे जैसे नौकामे बैठनेके पहला भी गृहस्थोंकी दाक्षिण्यतासे गृहस्थोंका काम न करे, इसी माफिक ही नौकामे बैठनेके बाद भी गृहस्थका काय न करे जैसे मुनिकी दृष्टि नौकायामी जीर्णपर है, वैसीही पाणीके जीर्णपर है मुनि सबजीर्णका हित चाहते हैं घहापर गृहस्थका कार्य, साधु दाक्षिण्यतासे न करे यह अपेक्षा है धारण मुनि उम समय अनशन किया हुआ अपना जीनाभी नहीं इच्छता है

(१८) , साधु नौकामे, दातार नौकामें

(१९) साधु नौकामे दातार पाणीमें

(२०) साधु पाणीमें, दातार नौकामें

(२१) साधु पाणीमें, दातार पाणीमें

(२२) साधु तथा दातार दोनों नौकामें

(२३) साधु नौकामें दातार कर्दममें

(२४) साधु कर्दममें, दातार नौकामे

(२५) साधु तथा दातार दोनों कर्दममें नौका और जलके साथ चतुर्भंगी—२६ २७-२८

(२९) नौका और स्थलके साथ चतुर्भंगी समझना ३० ३१ ३२ ३३ जल और कर्दमसे चतुर्भंगी ३४ ३५ ३६ ३७ जल और स्थलके साथ चतुर्भंगी ३८ ३९ ४० ४१ कर्दम और स्थलके साथ चतुर्भंगी ४२ ४३ ४४ ४५ उक्त १८ वा सूत्रसे ४६ वा सूत्र तक दातार आहार पाणी देवे तो साधुओंको लेना नहीं कल्पै

यद्यपि स्थलमें साधु और स्थलमे दातार हाती कटपै, परंतु नौ-
कामें बैठते समय साधु स्थलमें आहार पाणी चुकावे वस्त्र, पा-
त्रकी एकही पेट (गाठ) कर लेते हैं चास्ते उस समय आहार
पाणी लेना नहीं कल्पै भायना पूर्वयत् यदा पन्थीलोग कीतनीक
कुयुक्तियों लगाते हैं यह भय मिथ्या है साधु परम दयावन्त
होते हैं मत्र जीवोंपर अनुकपा है

(४६) , मूल्य लाया हुआ वस्त्र ग्रहण करे ३

(४७) पय उधारा लाया हुआ वस्त्र

(४८) मलट पलट कीया हुआ वस्त्र

(४९) निर्बलसे सबल जबरदस्तीसे दिलाव, दो विभागमें
एकका दिल न होनेपर भी दुसरा देवे और मामने लाके देवे
पेना वस्त्र ग्रहण करे ३

भाषाथ—मूल्यादिका वस्त्र लेना मुनिको नहीं कल्पै

(५०) आचार्यादिरे लीये अधिक वस्त्र ग्रहण कीया हो
यह आचार्यको विगर आमत्रण करके अपने मनमाने साधुको
देवे ३

(५१) ,, लघु साधु माध्वी, स्वविर (वृद्ध) साधु साध्वी
जिसका हाथ, पग, कान नाक आदि शरीरका अवयव छेदा हुआ
नहीं, वेमार भी नहीं है अर्थात् सामर्थ्य होनेपर भी उसको प्र
माणसे' अधिक वस्त्र देवे, दिलाव, देतेको अच्छा समझे

(५२) पय जिसका हाथ, पाय नाक कानादि छेदा हुआ
हो, उसे अधिक वस्त्र न देवे, न दिलावे, न देतेको अच्छा समझे

१ तीन वस्त्रका परिमाण है एक वस्त्र २४ हाथका होता है साध्याक व्यास
(४) वस्त्रका परिमाण है

भावार्य—वैमारमुनिवे रक्तादिमे वस्त्र अशुचि हो, यास्ते अधिक देना उतलाया है

(५३) वस्त्र जाण है, धारण करने योग्य नहीं है, स्वल्पकाल चलने योग्य है, घेमा वस्त्र ग्रहण करे ३

(५४) नया वस्त्र, धारण करने योग्य, दीर्घकाल चलने योग्य है, घेमा वस्त्र न धारे ३ भावना पात्र उद्देशाकी माफिक

(५५) ,, धर्णवन्त वस्त्र ग्रहण कर विघर्ण करे ३

(५६) विघर्णका सुवर्ण करे ३

(५७) नया वस्त्र ग्रहण कर उसे तैल, घृत, मक्खन, चरबी लगावे ३

(५८) पत्र लोड्रय कोकण अवीरादि द्रव्य लगावे ३

(५९) शीतल पाणी, गरम पाणीसे एकवार, चारवार धोवे ३

(६० ६१-६२) नया वस्त्र ग्रहण कर उहुत दिन चलेगा इस अभिप्रायसे तैलादि, लोड्रयादि, द्रव्य लगावे, शीतल पाणी गरम पाणीसे धोवे ३

(६३) नया सुगन्धि वस्त्र प्राप्त कर उसे दुर्गन्धी करे

(६४) दुर्गन्धि वस्त्र प्राप्त कर उमे सुगन्धि करे

(६५) सुगन्धि वस्त्र ग्रहण कर उसे तैलादि

(६६) लाड्रयादि लगावे

(६७) शीतल पाणी, गरम पाणीसे धोवे एवं तीन सूत्र दुर्गन्धि वस्त्र प्राप्त कर

(६८-६९-७०) पर्व छे सूत्र बहुत दिनापेक्षा भी कहना

(७६) सूत्र हुये

(७७) ,, अन्तरारहित पृथ्वी (सचित्त) ऐसे स्थानमें
घस्रको आताप देवे ३

(७८) एव सचित्त रजपर घस्रको आताप देवे

(७९) कचे पाणीसे सिन्धु पृथ्वीपर घस्रको आताप देवे ३

(८०) सचित्त शिला काकरा, काल्डीये जीर्णकाशाला,
काष्टमृद्दीत जीय, इडा बीजादि जीय क्यात भूमिपर घस्रको
आताप देवे ३

(८१) घरके उबरेपर, देहलीपर

(८२) भितपर छोट खदोयापर यावत् आच्छादित भूमि
पर घस्रको आताप देवे ३

(८३) माचा, माला प्रामाद, शिखर, हवली, निसरणी
आदि उर्ध्वस्थानपर घस्रको आताप देव

भावाथ—ऐसे स्थानापर घस्रको आताप देनेमें देते लेते
स्यय आप गिर पडे, घस्र घायुके मारा गिर पडे, उसे आत्मघात,
संयमघात, परजीवघात-इत्यादि दोषाका सभव है

(८४) ,, घस्रकीअदर पूर्व पृथ्वीकाय रन्धी हुईथी,
उसको निकाल कर देवे ३ उस घस्रको ग्रहन करे ३

(८५) एव अप्काय कचा जलसे भोजा हुवा तथा पाणीके
सघटेसे

(८६) एव तेउनाय सघटेसे

(८७) एव वनस्पतिकायसे

(८८) एव औषधि, धान्य, बीजादि

(८९) एव प्रस प्राणी-जीवांसहित तथा गमनागमन कर
घायके

भाषार्थ—साधुको रूपडे निमित्त पृथ्-यादि किसी जीवाको तकलीफ होती हो, पेसा बख लेना साधुवोंको नहीं कल्पे

(९०) , माधुवोंरे पूर्व गृहस्थ्यागमसगधी न्यातीले हो, अन्यन्यातीले हो, श्रावक हो, अश्रावक हो, वह लोग ग्राममें तथा ग्रामान्तरमें माधुके नामसे याचना—जैसे महाराजकी बख चाहिये, महाराजका बख चाहिये, आपके बहा हो तो दीजीये—इत्यादि याचना कर देरे, वैसा उख माधु लेवे ३

भाषार्थ—साधुको बखकी जरूरत हो तां आप स्वय याचना करे, परन्तु गृहस्थाका याचा हुवा नहीं लेवे

(९१) , न्यातीलादि परिषदकी अन्दरसे उठके साधुके निमित्त बखकी याचना करे, वह बख साधु ग्रहन करे ३

भाषार्थ—किन्नी कपडेंवालाका देनेका भाव नहीं हो, परन्तु एक अच्छा आदमीकी याचनासे उसे शर्मादा होके भी देना पडता है वास्ते साधुका स्वयही याचना करनी चाहिये

(९२) ,, साधु बखकी निश्राय ऋतुबद्ध (मासकल्प) ठेरे ३

(९३) पय बखके लीये चातुर्मास करे ३

भाषार्थ—मुनि, बखकी याचना करनेपर गृहस्थ कहे कि—हे मुनि ! तूम अधी यहापर मामकल्प ठेरे, तथा चातुर्मास करे, हम आपको बख देंगे, और बख देशान्तरसे भगवा दग, पेसा बचन सुन, मुनि मामकल्प तथा चातुर्मास ठेरे अगर ठेरना होतो अपने कल्प तथा परउपकारके लीये ठेरना चाहिये परन्तु कपडेंकी खुशमदीके मातेत होके नहीं ठेरे, पेसा निस्पृही धीतरागका धर्म है

उपर लिखे ९३ बोलोंसे कोई साध साधवी एक बोल भी से-
वन करे, करावे करतको अच्छा समझगा, उसको लघु चातुर्मा-
सिक प्रायश्चित्त होगा प्रायश्चित्त विधि देखा योसया उद्देशार्थ-

इति श्री निशियसूत्र—अठारवा उद्देशाका सवित्त सार



(१६) श्री निशियसूत्र उन्नीसवा उद्देशा

(१) 'जो कोई साधु साधवी' बहु मूल्य वस्तु घन्न, पात्र, कम्बल, रजोहरण तथा औषधि आदि, काइ गृहस्थ बहु मूल्यवाला वस्तुका मूल्य स्वयं लावे, अथवा पास मूल्य भगवाक तथा अन्य साधुके निमित्त मूल्य लाते हुवेको अच्छा समझे यह वस्तु बहु मूल्यवाली मुनि ग्रहण करे, करावे, करतको अच्छा समझे

भावार्थ—बहु मूल्यवाली वस्तु ग्रहण करनेसे ममत्वभाव बढ़े घौरादिका भय रहे इत्यादि

(२) एव बहु मूल्यवाली वस्तु उधारी लाके देव, उसे मुनि ग्रहण करे ३

(३) सलटा पलटावे देव, उसे मुनि ग्रहण करे ३

(४) नियलसे जपरदस्ती सबल दिलावे उसे ग्रहण करे ३

(५) दो भागीदारोंकी वस्तु एकका दिल देनका न होने पर भी दुसरा देवे उसे मुनि ग्रहण करे

(६) बहु मूल्य वस्तु सामने लाके देवे, उसे ग्रहण करे ३
भाषना पूर्ववत्

(७) , अगर कोई बेमार साधुके लीये बहु मूल्य औष

धिकी स्वाम आवश्यकता होनेपर तीग दात मात्रा) से अधिक प्रहन करे ३

(८) ,, बहु मूल्य वस्तु कोई विशेष कारनसे (औपधादि) प्रहन कर ग्रामानुग्राम विहार करे ३

भावार्थ—चौरादिका भय, ममत्वभाव बढे तस्करादि मार पीट करे, गम जानेसे आर्त्तध्यान खडा होता है इत्यादि

(९) ,, बहु मूल्य वस्तुका रूप परावर्त्तन कर गृहस्थ देवे, जैसे कस्तूरी अपरादिकी गोलीयों रना दे गाल दे, ऐसेको प्रहन करे ३

भावार्थ—जहातक बने घहातक मुनियोंको स्वल्प मूल्यका बख, पात्र, कम्यल रजोहरण, औपधिसे काम लेना चाहिये उपलक्षणसे पुस्तक, पाना आदि स्वल्प मूल्यवालेसे ही काम चलाना चाहिये

(१०) ,, स्वाम, प्रात काल, मध्यान्ह, और आदिरात्रि, यह च्यारों टाइममें एक मुहूर्त्त (४८ मिनीट) अस्वाध्यायका काल है इस च्यारों कालमें स्वाध्याय (सूत्रोंका पठन, पाठन) करे कराये, करतेको अच्छा समझे

भावार्थ—इस च्यारों टाइममें तिर्यग्लोक निवासी देव फिरते हैं देवतायोंकी भाषा मागधी है अगर उस भाषामें तुटी हो तो देव कोपायमान हो, कभी नुकशान करे

(११ ') ,, दिनकी प्रथम पोरसी, चरम पोरसी, रात्रिकी प्रथम पोरमी, चरम पोरसी, इसमें अस्वाध्यायका काल निकालके शेष च्यारों पोरमीमें साधु साध्वीयों स्वाध्याय न करे, न कराये, न करतेको अच्छा समझे

(१२) ,, अस्वाध्यायके समय किन्नी विशेषकारणसे तीन पृच्छना (प्रश्न) से अधिक पूछे ३

भावाय -अधिक पूछना हो तो स्वाध्यायके कालमें पूछना चाहिये

(१३) एव दृष्टिवाद अगकी मात पृच्छना (प्रश्न) से अधिक पूछे ३

(१४) ,, च्यार महान् महात्मषकी अन्दर स्वाध्याय करे ३ यथा—इन्द्र मदीत्सव, चैत शुक्ल १५ फा, स्कन्ध महोत्सव, आ पाठ शुक्ल १५ का यक्ष महोत्सव, भाद्रपद शुक्ल १५का, भूत महोत्सव कार्तिक शुक्ल १५ का इम च्यार दिनमें मूल सूत्रोंका पठन पाठन करना साधुओंको नहीं कल्पै *

(१५) ,, च्यार महा प्रतिपदा—वैशाख कृष्ण १, श्रावण कृष्ण १ आश्विन कृष्ण १ मागशर कृष्ण १ इम च्यार दिनमें मूल सूत्रोंका पठन पाठन करना नहीं कल्पै

(१६) ,, स्वाध्याय पोरनीमें स्वाध्याय न करे ३

(१७) स्वाध्यायका च्यार काल है उममें स्वाध्याय न करे ३

भावार्थ—स्वाध्याय— सव्य दुक्खयिमुक्खण ' मुनिको स्वाध्याय ध्यानम ही मग्न रहना चाहिये चित्तवृत्ति निर्मल रहै प्रमादका नाश कर्मोंका क्षय और सद्गतिकि प्राप्तीका मुख्य कारण स्वाध्यायही है

* श्री स्कानागना सूत्र—चतुर्थ रघान—आश्विन शुक्ल १५ को यथ म नाल्पव कदा है उग अपथा कार्तिककृष्ण प्रतिपदा मग पठिका होनी है इम वास्त ननों प्रागमोंको वनुमान दत्त हुव दानों पूर्णिमा, दानों प्रतिपदाका अस्वाध्याय र-सना चाहिय तथ कवलीगम्य

(१८) ,, जहापर अस्याध्याययोग्य पदार्थ टटो, पैमात्र, हाड, माम, रौद्र, पंचेन्द्रियका क्लेशगादि ३४ अस्याध्यायमे कोइ भी अस्याध्याय हो, यहापर म्याध्याय करे, कराये, भावना पूर्यत

(१९) ,, अपने अस्याध्याय टटो, पैमात्र रौद्रादि शरीर-अशुचि हो माध्यो श्रुतधर्ममें हो, गड गुम्यडके रमी चीकनी हो-इत्यादि अपने अस्याध्याय होते म्याध्याय करे, कराये, करतेशो अच्छा समझे

(२०) , हठेरे समोसरणकी याचना न दी हो, और उपरके समोसरणकी याचना देये, अर्थात् जिमको आचारागसूत्र न पढाया हो, उमे मयगढागसूत्रकी याचना देये ३ मयगढागजी सूत्रकी याचना दी, उमे म्यानागसूत्रको याचना देये ३ पय याघत् प्रमसर सूत्रकी याचना देना कहा है, उमको उत्क्रमश याचना देये, देनेकी दुमरेको आक्षा देये, कन्य कोइ उत्क्रमश आगम याचना देते हुवेको अच्छा समझे यह आचार्यापाध्याय खुद् प्रायश्चित्तके भागी होते हैं

भाषार्थ—जैन सिद्धातको संकग्ना शैली इमी माफिक है कि-यह आगम क्रमश याचनाने ही सम्यक् प्रकारसे ज्ञानकी प्राप्ति होती है

(२१) ,, नौ ब्रह्मचर्यका अध्ययन (आचारागसूत्र प्रथम श्रुतस्कन्ध) की याचना न दे के उपरके सूत्राकी याचना देवे, दिगावे, देतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—जीयादि पदार्थ तथा मुनिमार्ग, उच्च कोटिका वेगग्यमे संपूरण भरा हुआ ब्रह्मचर्यका नौ अध्ययन है, यास्ते मोक्षमागमें स्थिर स्वोभ करानेके लिये मुनियोंको प्रथम आचा

रागसूत्र ही पढ़ना चाहिये, अगर पढ़ता न पढ़ाये उन्हाके लीये यह प्रायश्चित्त बतलाया हुआ है

(२२) , 'अप्राप्त' वाचना लेनेको योग्य नहीं हुआ है द्रव्यसे बालभावसे मुक्त न हुआ हो, अर्थात् कावर्मे रोम (बाल) न आया हो भावसे आगम रहस्य समझनेकी योग्यता न हा, धैर्य, गाभीर्य न हो, विचारशक्ति न हो, ऐसे अप्राप्तको आगमाकी वाचना देवे दिलाये, देतेको अच्छा समझे

(२३) ,, 'प्राप्त' को आगमाकी वाचना न देवे, न दिलावे, न देतेको अच्छा समझे द्रव्यसे बालभावसे मुक्त हुआ हो, कावम रोम आगये हो, भावसे सूत्रार्थ लेनेकी, ग्रहन करनेकी, तत्त्व विचार करनेकी, रहस्य समझनेकी योग्यता हो धैर्य गाभीर्य, दीपदर्शिता हो, ऐसे प्राप्तको आगमाकी वाचना न देवे ३

भाषा—अयोग्यको आगमज्ञान देना यह बड़ा भारी नुकशानका कारण होता है वास्ते ज्ञानदाता आचार्यापाध्यायजी महाराजकी प्रथमसे पात्र कुपात्रकी परीक्षा करके ही जिनवाणी रूप अमृत देना चाहिये ता के भविष्यमें स्वपरात्माका कल्याण करे

(२४) अति बाल्यावस्थावाला मुनिको आगम वाचना देवे ३

(२५) बाल्यावस्थासे मुक्त हुआको आगम वाचना न देवे ३ भावना २२-२३ सूत्रसे देखो

(२६) , एक आचार्यके पास विनयधर्मतयुक्त दाय शिष्या पढ़ते हैं उसमें एकको अच्छा चित्त लगाके ज्ञान-ध्यान शिखाये, सूत्रार्थकी वाचना देवे [रागके कारणसे], दुसरेको न शि-

खावे, न सूत्रार्थकी वाचना देवे [छेपके कारणसे] तो यह आचार्य प्रायश्चित्तका भागी होता है भावना पूर्ववत्

(२७) , आचार्यापाध्यायके वाचना दीये बिगर अपनेही मनसे सूत्रार्थ, वाचे, वचाये, वाचतेको अच्छा समझे

भावार्थ—जैन निष्ठात अति गभीर शैलीवाले अनेक रहस्यसे भरे हुए, कितनेक शब्द तो ग्याम गुरु गमताकी अपेक्षा रखनेवाले हैं, वास्ते गुरुगमतासे ही सूत्र वाचनेकी आज्ञा है गुरुगमता बिगर सूत्र वाचनेसे अनेक प्रकारकी शकाभा उत्पन्न होती है यायत् धर्मश्रद्धासे पतित हो जाते हैं

(२८) , अन्यतीर्थी, और अन्य तीर्थीयाके गृहस्थोंको सूत्रार्थकी वाचना देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे

भावार्थ—उन्हें लोगोंकी प्रथमसेही मिथ्यात्वकी वासना हृदयमें जमी हुई है उसको सम्यक् ज्ञानही मिथ्या हो परिणमता है कारण—वाचना देनेवाले पर तो उसका विश्वासही नहीं विनय, भक्तिहीनको वाचना न देवे कारण नन्दीसूत्रमें कहा है कि सम्यक्सूत्र भी मिथ्यात्वियोंको मिथ्यारूपमें परिणमते हैं

(२९) , अन्यतीर्था अन्यतीर्थीयोंके गृहस्थासे सूत्रार्थकी वाचना ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

भावार्थ—अन्यतीर्थी ब्राह्मणादि जैनसिद्धान्तोंके रहस्यका ज्ञानकार न होनेसे वह यथायत् नहीं समझा सके, न यथार्थ अर्थ भी कर शके वास्ते ऐसे अज्ञातोंसे वाचना लेना मना है इतनाही नहीं किन्तु उन्होंका परिचय करनाही घीककुल मना है आजकाल कीर्तवीक निर्नायक तरूण साध्वीयों स्वच्छन्दतासे अज्ञ ब्राह्मणों पासे पढति है जोस्का नतीजा प्रत्यक्षमें अनुभव कर रही है

ना करी उसे बहुतघार मासिक कहते हैं अगर मायारहित निष्कपट भावने आलोचना करी हो, तो उमे मासिक प्रायश्चित्त देवे

(१२) मायासयुक्त आलोचना करनेसे दोमासिक प्रायश्चित्त होता है भावना पूर्वकत्

(१३) एव बहुतसे दोमासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे मायारहितयात्राको दोमासिक आलोचना

(१४) मायासहितको तीन मासिक आलोचना यावत् बहुतसे पाच मासिक मायारहित आलोचनासे पाच मास, मायासहित आलोचना करनेसे छे मासका प्रायश्चित्त होता है सूत्र २० हुवे भावना प्रथम सूत्रकी मासिक समझना

(२१) ,, मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, चार मासिक, पाच मासिक और भी किसी प्रकारके प्रायश्चित्त स्थानोंको सेवन कर मायारहित आलोचना करनेसे मूल सेवा हो उतनाही प्रायश्चित्त होता है जैसे एक मासिक यावत् पाच मासिक

(२२) अगर माया-कपटसे सयुक्त आलोचना करे, उसे मूल प्रायश्चित्तसे एक मास अधिक प्रायश्चित्त होता है यावत् मायारहित हो, चाहे मायासहित हो, परन्तु छे माससे अधिक प्रायश्चित्त नहीं है अधिक प्रायश्चित्त हो तो पहलेकी दीक्षा छेदके नवी दीक्षाका प्रायश्चित्त होता है एव दो सूत्र बहुवचनापेक्षा भी समझना २३-२४ सूत्र हुवे

(२५) ,, चार मासिक साधिक चातुर्मासिक, पंच मासिक, साधिक एव मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर मायारहित आलोचना करे उसे मूल प्रायश्चित्त देवे

(२६) मायामयुक्त आलोचना करनेसे पाच मास साधिक

पाच मास, छे मास, उँ मास, इससे उपर मायामहित, चाहे मा-
यारहित हो, प्रायश्चित्त नहीं है भावना पूर्णवत्, पंच दो सूत्र बहु-
वचनापेक्षा २७-२८ सूत्र हुये

(२९) ,, चतुर्मासिक साधिक चतुर्मासिक, पच मासिक,
साधिक पचमासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करे,
मायारहित तथा मायासहित उस साधुको उपरवत् प्रायश्चित्त
देके कित्ती बेमार तथा वृद्ध मुनियोंकी धैर्यावध करने निमित्त
स्थापन करे अगर प्रायश्चित्त सेवन कीया, उसे संघ जानता हो
तो संघके सन्मुख प्रायश्चित्त देना चाहिये, जिससे संघको प्रतीत
रहे, साधुवोंको क्षाम रहे, दुसरी दूषे कोइ भी साधु, पेसा अकृत्य
कार्य न करे, इत्यादि अगर दोष सेवनको कोइ भी न जाने, तो
उसे अन्दर ही आलोचना देना उसका दोष जो प्रगट करते जि-
तना प्रायश्चित्त, दोष सेवन करनेवालोंको आता है, उतना ही
गुप्त दोषको प्रगट करनेवालोंको होता है कारण पसा करनेसे
शासनहीलना मुनियोंपर अभाय दोष सेवनमें नि शकता आदि
दोषका संभव है आलोचना करनेवालोंका च्यार भागा —

(१) आचार्यमहाराजका शिष्य, एकसे अधिक दोष सेवन
कर आलोचना करते समय क्रमसर पहले दोषकी पहले आलो-
चना करे

(२) पच पहले सेवन कीया दोषकी विस्मृति होनेसे पीछे
आलोचना करे

(३) पीछे सेवन कीया दोषकी पहले आलोचना करे

(४) पीछे सेवन कीया दोषकी पीछे आलोचना करे,
आलोचनाके परिणामापेक्षा और भी चौभंगी कहते है—

(१) आलोचना करनेके पहला शिष्यका परिणाम था कि

—अपने कल्याणके लीये विशुद्ध भावसे आलोचना करना और आचार्य पास आये विशुद्ध भावसे ही आलोचना करी

२) आलोचना विशुद्ध भावसे करनेका विचार कीयाया, फिर अधिक प्रायश्चित्त आनेसे, मान, पूजाकी दानिरे रयालसे मायासंयुक्त आलोचना करे

(३) पहले मायासंयुक्त आलोचना करनेका विचार कीया था, परंतु मायाका फल सत्सारवृद्धिका हेतु जान निष्कपट भावसे आलोचना करे

(४) भवाभिनन्दी पहला विचार भी अशुद्ध और पीछेसे आलोचना भी कपटसंयुक्त करे कारण कर्मोंकी विचित्र गती है. यह आठ भागा सर्व स्थान समझना भव्यात्मा मुनि, अपने कीये हुये कर्म (पापस्थान)की सम्यक् प्रकारसे समझके निमल चित्तसे आलोचना कर आचार्यादि शास्त्रापेक्षा प्रायश्चित्त देवे, उसे अपने आत्माकी शाखसे तपधर्या कर प्रायश्चित्तको पूर्ण करे

(३०) पच बहुधचनापेक्षा भी समझना

(३१) , चतुर्मासिक साधिक चतुर्मासिक, पच मासिक साधिक पचमासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर पूर्वोक्त आठ भागोंसे आलोचना करे, उन मुनिको यथायत् प्रायश्चित्त तपमें स्थापन करे, उस तपमें वर्तते हुयेको अथ दोष लग जाव, तो उसकी आलोचना दे उसी चल्लु तपमें वृद्धि कर देना अगर तप करते समय वह माधु असमर्थ हो तो अन्य माधु, उहोके वैयायश्च में सहायता निमित्त रखे, उसे तप पूर्ण कराना आचार्यका कर्तव्य है

(३२) पच बहुधचनापेक्षा भी समझना

भावार्थ—चतुः तपमे दोषांकी आलोचना कर तप लेये ता स्वल्प तपश्चर्या करनेसे प्रायश्चित्त उतर जाये, और पारणा करके तप करनेसे बहुत तप करना पड़े इस हेतुसे साथ हीम लगेतार तप करवाय देना अच्छा है तपकी विधि अनेक सूत्रमें है

(३३) जो मुनि, मायारहित तथा मायामहित आलोचना करी, उसका आचार्यने छ मासिक तप प्रायश्चित्त दीया है, उन्नी तपका अन्दर घर्तते मुनि, और दीय मासिक प्रायश्चित्त आये, पेसा दोषस्थानको सैधन कीया, और उम स्थानकी आलोचना अगर मायारहितकी हो, तो उस तपके साथ बीश रात्रिका तप सामेल कर देना कारण—पहला तप करते उम मुनि का शरीर क्षीण हो गया है अगर मायामयुक्त आलोचना करी हो तो दो मास और बीश रात्रि पहलेके (छेमानीक तप) तपके साथ मिला देना चाहिये परन्तु उम तपसी साजुका पीछेकी आलोचनाका हेतु कारण, अर्थ ठीक सतोपकारी घचनोंसे समझा देना चाहिये हे मुनि ! जो इस तपके साथ तप करेगे, तो दो मासकी जगाहा बीश रात्रिमे प्रायश्चित्त उतर जायेगा, अगर यहा न करेगे तो तपस्याका पारणा करके भी तरेको छे मासका (मायासयुक्त तो तीन मासका) तप करना होगा इस घखत तप अधिक करेगे तो यह हमारा माधु, तुमारी घैयायञ्च विगेन्द्रसे सहायता करेगा, इत्यादि यह साजु इस घातकी स्थीकार कर उम तपको चाहे आदिमें, चाहे मध्यमें, चाहे अन्तमें कर देये जितना ज्यादा परिश्रम हो, उसे मुनि घमेंनिर्जराका हेतु समझे

(३४) पथ पच मासिक प्रायश्चित्त विशुद्ध करते बीचम दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान नेयन कर आलोचना करे, उसकी विधि ३३ वां सूत्र मासिक समझना

(३५) एष चातुर्मासिक

(३६) एष तीन मासिक

(३७) एष द्वीय मासिक

१ ३८) एक मासिक भाषना पूर्ववत् समझना

(३९) जो मुनि छे मासी याषत एक मासी तप करते हुय अन्तरामे दो मासी प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर मायासयुक्त आ लोचना करी, जिससे द्वीय मास, वीश अहोरात्रिका प्रायश्चित्त आचायने दीया उस तपका पहलेके तपके अन्तमे प्रारभ कीया है उस तपमें घसंते हुये मुनिको और भी द्वीय मासिक प्रायश्चित्त स्थानका दोष लगजाव उसे आचार्य पास आलोचना मायारहित करना चाहिये तब आचाय उसे वीश दिनका तप उसे पूष तप अर्थाके साथ घटा देये और उनका कारण हेतु अथ आदि पूर्वांक मासिक समझाये मूठ तपके सिधाय तीन मास दश दिन का तप हुया

(४०) , तीन मास दश रात्रिका तप करते अतरे और भी दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करनेसे वीश रात्रिका तप प्रायश्चित्त देनेसे च्यार मासका तप करे भाषना पूर्ववत्

(४१) ,, च्यार मासका तप करते अन्तरेमें दोमासी प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे पूर्ववत् वीश रात्रिका प्रायश्चित्त पूष तपमें मिला देवे, तब च्यार मास वीश रात्रि होती है

(४२) ,, च्यार मास वीश रात्रिका तप करते अंतरे दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे और वीश रात्रि तप उसके साथ मिला देनेसे पाच मास दश रात्रि होती है

(४३) ,, पाच मास दश रात्रिका तप करते अतरे दो मासिक प्रायश्चित्त सेवन करनेसे बीस रात्रिका तप उसके साथ मिला देनेसे पूर्ण छे मास होता है, इसके आगे तप प्रायश्चित्त नहीं है फिर छेद या नयी दीक्षा ही दी जाती है भाषना पूर्ववत्

(४४) ,, छे मासी प्रायश्चित्त तप करते हुवे मुनि, अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थानकी सेवे, उसकी आलोचना करने पर आचार्य उसे पूर्वतपवे साथ पन्द्र दिनोका तप अधिक करावे

(४५) एष पाच मासिक तप करते

(४६) एष च्यार मासिक तप करते

(४७) तीन मासिक तप करते

(४८) दो मासिक तप करते,

(४९) एष एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कीया हो तो आदा मास सधके साथ मिला देना, भाषना पूर्ववत्

(५०) ,, छे मासिक यावत् एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक और प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर माया सयुक्त आलोचना करे, उसे साधुको आचार्यने दोड (१॥) मासिक तप दीया है, यह साधु पूर्ण तपको पूर्ण कर, उसके अन्तमें दोड (१॥) मासिक तप कर रहा है उसमें और मासिक प्रायश्चित्त स्थानसे भी माया रहित आलोचना करे उसे पन्द्र दिनकी आलोचना दे के पूर्ण दोड मासके साथ मिला देना एष दो मासका तप करे

(५१) ,, दो मासिक तप करते और मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करनेसे पन्द्रादिनकी आलोचना दे पूर्ण दो मासके साथ मिलाके अटार मासका तप करे

(५२) ,, अढाई मासवालाको मासिक प्रा० स्थान सेधन करनेसे पन्द्रा दिनका तप देके पूर्णके साथ मिलाय तीन मास कर दे

(५३) , पध तीन मासवालाके साढा तीन मास

(५४) साढा तीन मासवालाके च्यार मास

(५५) च्यार मासवालाके साढा च्यार मास

(५६) साढे च्यार मासवालाके पाच मास

(५७) पाच मास वालाके साढा पाच मास

(५८) साढा पाच मास वालाके छे मास भाधना पूर्णतत् समझना

(५९) , दो मासिक प्रायश्चित्त तप करते अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेधन करनेसे पन्द्रादिनकी आलोचना दे के पूर्ण दो मासके साथ मिला देनेसे अढाई मास

(६०) अढाई मासका तप करते अन्तरे दो मास प्रायश्चित्त स्थान सेधन करनेसे बीस रात्रिका तप दे के पूर्ण अढाई मास साथ मिलानेसे तीन मास और पाच दिन होता है

(६१) तीन मास पाच दिनका तप करते अन्तरे एक मासिक प्रा० स्थान सेधन करनेसे पन्द्रा दिनोंका तप, उस तीन मास पाच रात्रिके साथ मिलानेसे तीन मास बीस अहोरात्रि होती है

(६२) तीन मास बीस अहोरात्रिका तप करते अन्तरेमें दो मासिक प्रा० स्थान सेधन करने वालेको बीस अहोरात्रिकी आलोचना देके पूवका तपके साथ मिठा देनेसे ३-२०-२० च्यार मास दश दिन होते है

(६३) च्यार मास दश दिनका तप करते अन्तरेमें एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको पन्द्रा दिनकी आलोचना पूर्ण तपके साथ मिला देनेसे ४-१०-१५ च्यार मास पचवीश अहोरात्री होती है

(६४) च्यार मास पचवीश अहोरात्रिका तप करते अन्तरमें दो मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको बीस रात्रिकी आलोचना, पूर्यतपके साथ मिला देनेसे पच मास और पदरा अहोरात्रि होती है

(६५) पाच मास पदरा रात्रिका तप करते अन्तरमें एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको पन्द्रा अहोरात्रिकी आलोचना, पूर्यतपके साथ सामेल कर देनेसे छे मासिक तप होता है इसके आगे किसी प्रकारका प्रायश्चित्त नहीं है अगर तप करते प्रायश्चित्तका स्थान सेवन करते हैं, उसकी आलोचना देनेवाले आचार्यादि, उस दुर्लभ शरीरवाला तपस्थी मुनिको मधुरतासे उस आलोचनाका फागण, हेतु, अर्थ बतलाये कि तुमारा प्रायश्चित्त स्थान तो एक मासिक, दो मासिकका है, परन्तु पेस्त रसे तुमारी तपस्थी चल रही है जिसके जरिये तुमारा शरीरकी स्थिति निर्बल है लगेतार तप करनेमें जोर भी ज्यादा पड़ता है इस वास्ते इस हेतु-कारणसे यह आलोचना दी जाती है घृत पापका तप करना महा निर्जंगका हेतु है अगर तुमारा उत्थानादि मद हो तो मेरा साधु तुमारी सहायक करेगा तु शान्तिसे तप कर अपना प्रायश्चित्त पूर्ण करो इत्यादि २०

आलोचना सुननेकी तथा प्रायश्चित्त देनेकी विधि अन्य स्थानोंसे यहापर लिखी जाती है

आलोचना सुननेवाले

(१) अतिशय ज्ञानी (वैद्यकी आदि) जो मृत, भविष्य, वर्तमान—त्रिकालदर्शी हो उन्होंके पास निष्कपट भावसे आलोचना करते समय अगर कोई प्रायश्चित्त स्थान विस्मृतिसे आलोचना करना रह गया हो उसे यह ज्ञानी कह देवे कि—हे भद्र ! अमुक दोषकी तुमने आलोचना नहीं करी है अगर कोई माया—कपट कर किसी म्यानकी आलोचना नहीं करी हो तो उसे यह ज्ञानी आलोचना न देवे और किमी छद्मस्थ आचार्यके पास आलोचना करनेका कह देवे

(२) छद्मस्थ आचार्य आलोचना सुननेवाले कितने गुणविधारक होते हैं ? यथा—

(१) पचाचार्यको अखंड पालनेवाला हो सत्तरा प्रकारसे सयम, पाच समिति तीन गुण, दश प्रकारका यतिधर्मके धारक, गीताय, बहुश्रुत दीघदर्शी—इत्यादि कारण—आप निर्दोष हो यहही दुसरोको निर्दोष बना सके उसकाही प्रभाव दुसरे पर पड सके

(२) धारणावत—द्रव्य क्षेत्र, काल भाषके जानकार, गुरुकुल वासको सेवन कर अनेक प्रकारसे धारणा करी हो, स्याद्वादका रहस्य गुरुगमतासे धारण कीया हो

(३) पाच व्यवहारका जानकार हो—आगमव्यवहार, सूत्र व्यवहार आज्ञा व्यवहार, धारणा व्यवहार, जीत व्यवहार (देखो व्यवहार सूत्र उद्देशा १० वा) किस समय किस व्यवहारसे काम लीया जाये, या प्रवृत्ति की जाये उसका जानकार अवश्य होना चाहिये

(४) कितनेक ऐसे जीध भी हाते हैं कि—लज्जाके मारे शुद्ध आलोचना नहीं कर सके, पर तु आलोचना सुनने वालोंमे

यह भी गुण अग्रद्वय होना चाहिये कि—मधुरता पूर्वक आलोचक माधुकी लज्जा दूर करनेको स्थानाग-आदि मूत्रोंको पाठ सुनाके हृदय निर्मल बना देते जैसे—हे भद्र ! इस लोककी लज्जा पर भवमें विराधक कर देती है रुपा और लक्ष्मणा माधुकीका दृष्टान्त सुनाये

(५) शुद्ध करने योग्य होवे, आप स्वयं भद्रक भाव—अपक्ष पातसे शुद्ध आलोचना करवाके अर्थात् आलोचना करनेवालोंका गुण बताये, आठ कारणोंसे जीय शुद्ध आलोचना करे—इत्यादि

(६) मर्म प्रकाश नहीं करे धैर्य, गाभीर्य, हृदयमें हो किसी प्रकारकी आलोचना कोइभी करी हो, परन्तु कारण होने परभी किसीका मर्म नहीं प्रकाशे

(७) निर्वाह करने योग्य हो आलोचना अधिक आती है, और शरीरका सामर्थ्य, इतना तप करनेका न हो उसके ली ये भी निर्वाह करनेको स्वाध्याय, ध्यान, घन्दन, घैयायन्त्र-आदि अनेक प्रकारसे प्रायश्चित्तका बड़ खड़ कर उसको शुद्ध कर सके

(८) आलोचना न करनेका दोष, अनर्थ, भविष्यमें विराधकपणा, समारवृद्धिका हेतु, तथा आठ कारणोंसे जीय आलोचना न करनेसे उत्पन्न होता दु ख यायत्तु ससार भ्रमण करे ऐसा बतलाये

(९ १०) प्रिय धर्मों और दृढ धर्मों हो, धर्म शासनपर पूण राग, हाड हाड किमीजी, रग रग नशों और रोमरोममें शासन व्याप्त हो, अर्थात् यह दोषित साधु आलोचना न करेगा, तो दुसरा भी दोष लगनेसे पीछा न हटेगा ऐसी खराब प्रवृत्ति होनेसे भविष्यमें शासनको बड़ा भारी धोका पहुचेगा इत्यादि हिताहितका विचारवाला हो

(श्री स्थानागजी सूत्र—दशवें स्थाने)

उपर लिखे दश गुणोंको धारण करनेवाले आलोचना सुनने योग्य होते हैं यह प्रथम आलोचना सुने, दुसरी बखत और कहे—हे घत्स ! मैं पहला ठीक तरहसे नहीं सुनी, अब दुसरी दफे सुनावे तब दुसरी दफे सुने जब कुछ संशय हो तो, कहेयि—हे भद्र ! मुझ कुछ प्रमाद आ रहाथा, धास्ते तीसरी दफे और सुनायें तीन दफे सुननेसे एक सद्दश हो, तो उसे निष्कपट शुद्ध आलोचना समझे अगर तीन दफेमें कुछ फारपेर हो तो उसे माया संयुक्त आलोचना समझना (व्यवहारसूत्र)

मुनि अपने चारित्र्यमें दोष किमधास्ते लगाते हैं ? चारित्र्य मोहनीयकर्मका प्रबल उद्दय होनेसे जीव अपने व्रतमें दोष लगाते हैं यथा—

(१) कन्दर्पसे '—माहनीय कर्मके उद्दयसे उन्माददशा प्राप्त हो, हास्यविनोद, विषय विकार—आदि अनेक कारणोंसे दोष लगाते हैं

(२) ' प्रमाद ' मद, विषय, कर्माय निद्रा और विकथा—इस पांच कारणोंसे प्रेरित मुनि दोष लगाने हैं जैसे पूजन, प्रति लेखन, पिंड विशुद्धिमें प्रमाद करे

(३) ' अज्ञात ' अज्ञानतासे तथा अनुपयोगसे हलन, चलनादि अयतना करनेसे—

(४) आतुरता ' हरेक कार्य आतुरतासे करनेमें समयव्रतार्का बाधा पहुचती है

(५) आपत्तदशा ' शरीरव्याधि, तथा अरण्यादिमें आपदा आनेसे दोष लगावे

(६) 'शुका' यह पूजा प्रतिलेखन करी होगा या नहीं करी होगा इत्यादि कार्यमें शुका होना

(७) 'सहमात्कारे' थलात्कारमें, किमी कार्य करनेकी इच्छा न होनेपर भी यह कार्य करनाही पड़े

(८) 'भय' सात प्रकारका भयके मारे अधोरपनासे—

(९) 'द्वेषदशा' क्रोध मोहनीय उदय, अमनोहा कार्यमें द्वेषभाष उत्पन्न होनेसे दोष लगता है

(१०) शिष्यादिकी परीक्षा (आलोचना) श्रयण करनेके निमित्त दुमरी तीसरी बार कहना पडता है, कि मैंने पूर्ण नहीं सुनाया, और सुनायें (स्थानागसूत्र)

दोष लग जानेपर भी मुनियोंको शुद्ध भावसे आलोचना करना बढाही कठिन है आलोचना करते करते भी दोष लगा देते हैं यथा—

(१) कम्पता कम्पता आलोचना करे अर्थात् आचार्यादिका भय लायेकि—मुझे लोग क्या कहेंगे ? अर्थात् अस्थिर चित्तसे आलोचना करे

(२) आलोचना करनेके पहला गुरुसे पूछे कि—हे स्या मिन् ! अगर कौइ साधु अमुक दोष सेवे, उमका क्या प्रायश्चित्त होता है ? शिष्यका अभिप्राय यह कि—अगर स्वल्प प्रायश्चित्त होगा, तो आलोचना कर लेंगे, नहीं तो नहीं करेंगे ।

(३) किमीने देखा हो, ऐसे दोषकी आलोचना करे, और न देखा हो उसकी आलोचना नहीं करे (कौन देखा है ?)

(४) बड़े बड़े दोषोंकी आलोचना करे, परन्तु सूक्ष्म दोषोंकी आलोचना न करे

(५) सूक्ष्म दोषोंकी आलोचना करे, परन्तु स्थूल दोषोंको आलोचना न करे

(६) बड़े जोर जोरसे शब्द करते आलोचना करे जिससे बहुत लोक सुने, एकत्र हो जाये

(७) बिलकुल धीमे स्वरसे बोले जिसमें आलोचना सुननेवालोंकी भी पुरा शब्द सुनाया जाय नहीं

(८) एक प्रायश्चित्त स्थान बहुतसे गीतार्योंके पास आलोचना करे इरादा यहकि—कोनसा गीताथ कितना कितना प्रायश्चित्त देता है

(९) प्रायश्चित्त देनेमें अज्ञात (आचाराग, निशियका अज्ञात) के समीप आलोचना करे कारण यह क्या प्रायश्चित्त दे सके ?

(१०) स्वयं आलोचना करनेवाला खुद ही उस प्रायश्चित्त को सेवन कीया हो उसक पास आलोचना करे कारण—खुद प्रायश्चित्त कर दोषित है, यह दूसरोंको क्या शुद्ध कर सकेगा ? उन्हसे सच बात कही कही न जायगी

(स्थानांगसूत्र)

आलोचना कोन करता है ? जिसके चारित्र्य मोहनीय कर्मका क्षयोपशम हुवा हो भवान्तरमें आराधक पदकी अभिलाषा रखता हो, यह भव्यात्मा आलोचना कर अपनी आत्माको पवित्र बना सके यथा—

(१) जातिघान्

(२) कुलघान् इस वास्ते शास्त्रकारोंने दीक्षा देते समय ही प्रथम जाति, कुल, उत्तम होनेकी आवश्यकता बतलाई है.

जाति-कुल उत्तम हागा, वह मुनि आत्मकल्याणके लीये आलोचना करता कभी पीछा न हटेंगा

(३) धिनयवान्—आलोचना करनेमें धिनयकी खास आवश्यकता है क्योंकि-आत्मकल्याणमें धिनय मुख्य साधन है

(४) ज्ञानवान्—आलोचना करनेसे शायद इस लोकमें मान-पूजा, प्रतिष्ठामे कभी हानि भी हो, तो ज्ञानवंत, उसे अपना सुहृदयमें कभी स्थान न देगा कारण-ऐसी मिथ्या मान-पूजा, इम जीवने अनन्तवार कराइ है तदपि आराधकपद नहीं मिला है आराधकपद, निर्मल चित्तसे आलोचना करनेसे ही मिल सके, इत्यादि

(५) दर्शनवान्—जिसकी अट्ट भ्रष्टा, घीतरागके धर्मपर है, वह ही शुद्ध भावसे आलोचना करेगा उसकी ही आलोचना प्रमाण गिनी जाती है, कि-जिसका दर्शन निर्मल है

(६) चारित्रवान्—जिसको पूर्णतामे चारित्र पालनेकी अभिरुचि है, वह ही लगे हुये दोषोंकी आलोचना करेगा

(७) अमायी—जिसका हृदय निष्कपटी, मरल, स्वभाव होगा, वह ही मायारहित आलोचना करेगा

(८) जितेंद्रिय—जो इन्द्रियविषयको अपने आधीन बना लीया हो, वह ही कर्मके मनुष्य मोरचा लगाने तपरुप अख लेके खडा होगा, अथात् आलोचना ले, तप वह ही कर सकेगा, कि जिन्होंने इन्द्रियाको जीती हो

(९) उपशमभाषी—जिन्होंका कषाय उपशान्त हो रहा है न उसे क्रोध मताता है, न मानहानिमें मान मताता है, न माया न लोभ मताता है, वह ही शुद्ध भावसे आलोचना करेगा

(१) प्रायश्चित्त ग्रहण कर पश्चात्ताप न करे यह आलोचना करनेके योग्य होते हैं

(स्थानागसूत्र)

प्रायश्चित्त कितने प्रकारके हैं ? प्रायश्चित्त दश प्रकारके हैं कारण—एक ही दोषकी सेवन करनेवालोंको अभिप्राय अलग अलग होते हैं, तदनुसार उसे प्रायश्चित्त भी भिन्न भिन्न होना चाहिये यथा—

(१) आलोचना—एक पेसा अशक्त परिहार दोष होता है कि-जिम्हको गुरु सन्मुख आलोचना करनेसे ही पापसे निवृत्ति हो जाती है

(२) प्रतिक्रमण—आलोचना श्रवण कर गुरु महाराज कहे कि-आज तो तुमने यह कार्य किया है, कि-तु आइदासे पेसा काय नहीं करना चाहिये इसपर शिष्य कहे-तदत्त-अब मैं पेसा कायसे निवृत्त होता हू अकृत्य कायसे पीछा दटता हू

(३) उभया—आलोचना और प्रतिक्रमण दोनों करे भावना पूष्यत्

(४) विवेग—आलोचना श्रवण कर पेसा प्रायश्चित्त दीया जाय कि-दुमरी दपे पेसा कार्य न करे कुछ वस्तुका त्याग कराना तथा परिठन कार्य कराना

(५) कायोत्सर्ग—दश, बीस, लोगस्सका काउसर्ग तथा खमासणादि दिलाना

(६) तप—मासिक तप यावत् छे मासिक तप, जो निशि शसूत्रके २० उद्देशमें बतलाया गया है

(७) छेद—जो मूल दीक्षा लीयी, उसमें एक मास, यावत्

छ मास तकका उद्द दीया जाये, अर्थात् इतना मासपर्यायमें कम कर दीया जाय जैसे एक मुनि, दीया ग्रहणके बादमें दुसरा मुनिने तीन मास पीछे दीक्षा गयी, उस बखत पीछेमें दीक्षा देनेवाला मुनि, पहले दीक्षितको धन्द्व करे अब यह पढ़या दीक्षित मुनि, किन्ती प्रकारका दोष सेवन करनेमें उसे धातुमांसिक छेद प्रायश्चित्त आया है जिसमें उसका दीक्षापर्याय चार मास कम कर दीया फिर यह तीन मास पीछेमें दीक्षा गयी, उसको यह पृथदीक्षित मुनि धन्द्वना करे.

(८) मूत्र—चाहे कितना ही वर्षोंकी दीक्षा क्यों न हो, परन्तु आठवा प्रायश्चित्त म्यान सेवन करनेमें उस मुनिकी मूत्र दीक्षाको उद्दरे उस दिन फिरसे दीक्षा दी जाती है यह मुनि, सर्व मुनियोंमें दीक्षापर्यायमें लघु माना जावेगा

(९) अनुष्ठया—

(१०) पादुचिया—यह दोष प्रायश्चित्त सेवन करनेवालोंको पुन गृहम्यलिंग धारण करवायके दीक्षा दी जाती है इसकी विधि शास्त्रोंमें विस्तारसे उतगह है, परन्तु यह इस कालमें छि-च्छेद माना जाता है

(म्यानागसूत्र)

साधुवाको अगर कोई दोष लग जाये तो उम्मी बखत आलोचना ना करलेना चाहिये बिगर आलोचना किया गृहम्योरे यहा गौचरी न जाना, विहारभूमि न जाना, ग्रामानुग्राम विहार नहीं करना कारण आयुष्यका विग्राम नहीं है अगर विराधिकर्षणमें आयुष्य उन्ध जाये, तो भविष्यमें बड़ा भारी नुकसान होता है अगर किसी साधुयोके आपसमें कपायादि हुआ हो, उस समय लघु साधु खमाये नहीं तो बृद्ध साधुयोको यहा जाके खमाना लघुसाधु

खाहे उठे, न उठे, आदर-सत्कार दे, न भी दे घन्दन करे, न भी करे, खमावे, न भी खमावे, तो भी आराधिक पदवे अभिलाषी मुनिशो घटा जावे भी खमतखामणा करना बृहत्कल्पसूत्र)

आलाचना किसके पास करना ? अपना आचार्यापाध्याय, गीतार्थ, बहुधृत, उक्त दश (१०) गुणोंके धारकके पास आलोचना करना अगर उन्हींका योग न हो तो उक्त १० गुणोंके धारक स भागी साधुवाके पास आलाचना करे उन्हींका योग न हो तो अन्य संभोगी साधुओंके पास आलोचना करे उन्हींका योग न हो तो रूप साधु (रजोहरण मुखवस्त्रिकाका ही धारक है) गीतार्थ होनेसे उसके पास भी आलोचना करना उन्हींके अभावमें पच्छ काडा श्रायक (दीक्षासे गिरा हुआ परन्तु है गीताय), उन्हींके अभावमें सुविहित आचार्यसे प्रतिष्ठा करी हुई जिनप्रतिमाके पास जाके शुद्ध हृदयसे आलोचना करे, उन्हींके अभावमें ग्राम यावत् राजधानीके बाहार अर्थात् एकान्त जंगलमें जाके सिद्ध भगवानकी साक्षीसे आलोचना करे (व्यवहारसूत्र)

मुनि, गौधरी आदि गये हुयेको कोई दोष लग जावे, वह साधु निशियसूत्रका जानकार होनेसे घटापर ही प्रायश्चित्त प्रदान कर लेवे, और आचार्यपर आधार रखे कि - मैं इतना प्रायश्चित्त लीया है, फिर आचार्य महाराज इसमें न्यूनाधिक करेगा, वह मुझे प्रमाण है ऐसा कर उपाश्रय आते बखत रहस्तेमें काल कर जाये तो वह मुनि आराधिक है, जिसका २४ भाग है भागार्थ— कोई योग न हो तो स्वयं शास्त्राधारसे आलोचना कर प्रायश्चित्त ले लेनेसे भी आराधिक हो सके है (भगवतीसूत्र)

निशियसूत्रके १९ उद्देशाश्रमि च्याग प्रकारके प्रायश्चित्त ब तलाये है

- (१) लघुमासिक
- (२) गुरु मासिक
- (३) लघु चातुर्मासिक

(४) गुरु चातुर्मासिक तथा इसी सूत्रके घोसया उद्देशामें—
मासिक दो मासिक तीन मासिक, चार मासिक, पाच मा-
सिक और छे मासिक इस प्रायश्चित्तोंमे प्रत्येक प्रायश्चित्तके तीन
तीन भेद होते है—

- (१) प्रत्याख्यान प्रायश्चित्त
- (२) तपप्रायश्चित्त

(३) छेद प्रायश्चित्त इन तीनों प्रकारके प्रायश्चित्तोंका भी
पुन तीन तीन भेद होते है (१) जघन्य, (२) मध्यम, (३) उत्कृष्ट

जैसे (१) प्रत्याख्यान प्रायश्चित्त, जघन्यमे पकामना, म
ध्यमें धिगइ (नीची), उत्कृष्टमें आविलकं प्रत्याख्यानका प्रायश्चित्त
दीया जाता है पर्य तप और छेद

किसी मुनिने मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर उस
दोषकी आलोचना किसी गोतार्थ, यहुश्रुत आचार्य आदिके म-
मीप करी है अथ उस साधुकी आलोचना श्रवण करती बखत
विचार करे कि—इसने यह प्रायश्चित्त स्थान किस अभिप्रायसे
सधन कीया है ? क्या राग, द्वेष धिपय, कषाय, स्वार्थ इन्द्रिय
पश, कुतूहल प्रकृति-स्वभावसे ? धर्मरक्षण निमित्त ? शान्तसेवा
निमित्त ? गुरुभक्ति निमित्त ? शिष्यकों परतन पाठनके वास्ते ?
अपने ज्ञानाभ्यास वास्ते ? आपदा आनेसे ? रोगादि विशेष का-
रणसे ? अरण्य उल्लघन करनेसे ? किसी देशमें अज्ञातको उप-

देश निमित्त ? इत्यादि कारणासे दोष सेवन कर आलाचना क्या माया सयुक्त है ? माया रहित है ? गोक देखावु है ? अन्त करणसे है ? इत्यादि सबका विचार, आलोचना श्रयण करते वखत करके पथा प्रायश्चित्तके योग्य हो उसे इतनाही प्रायश्चित्त देना चाहिये प्रायश्चित्त देते समय उनका कारण हेतु अर्थ भी समझा देना जैसे वहेकि—हे शिष्य ! इस कारणसे, इस हेतुसे हम आगमके प्रमाणसे तुमको यह प्रायश्चित्त दीया जाता है

(व्यथहारसूत्र)

अगर प्रायश्चित्त देनेवाला आचार्य आदि राग द्वेषके घश हो, न्यूनाधिक प्रायश्चित्त देय तो, देनेवाला भी प्रायश्चित्तका भागी होता है और शिष्यको स्वीकार भी न करना चाहिये तथा शास्त्राधारसे जो प्रायश्चित्त देनेपर भी यह प्रायश्चित्तिया साधु उसे स्वीकार न करे तो, उसे गच्छमें नहीं रखना चाहिये कारण—एक अचिनय करनेवालेको देख और भी अचिनीत बनके गच्छमयांदाका लोप करता जायेगा (यत्रहारसूत्र)

शरीरबल सहनन, मनकी मज्जयुती—आदि अच्छा होनेसे पहले जमानेमें मासिक तपके ३० उपवास चातुर्मासिकके १२० उपवास, छं मासीके १८० उपवास दीये जाते थे, आज बल मह नन, मज्जयुती इतनी नहीं है वास्ते उसके बदल प्रायश्चित्त दाता घौने ' जीतकल्प ' सूत्रका अभ्यास करना चाहिये गुरुगमतामे द्रव्य, क्षेत्र, काल भाषका जानकार होना चाहिये ताके सब साधु साध्वीयोका निर्वाह करते हुये, शासनका धोरी बनके शासन चलावे (जीतकल्पसूत्र)

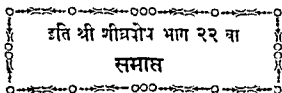
निशियसूत्रके लेखक—धर्मधुरधर पुरुष प्रधान प्रबल प्रत

पी, परम सवेग रगमें रगे हुये, अखिलाचारी, ज्ञान, दर्शन, धारित्र संयुक्त पाच समिति समिता, तीन गुप्ति गुप्ता, सत्तरा प्रकारका संयम, धारद भेद सप, दश प्रकारके यतिधर्मका धारक, चरण, करण प्रतिपालक, जिन्हों महा पुरुषोंकी कीर्तिकि ध्वनि, गगन मडलमें गर्जना कर रही थी, जिन्होंके स्याद्वादके सिद्धनादसे वादी रूप गज—हस्ती पलायमान होते थे, जिन्होंका सम्यक् ज्ञानरूप सूर्य, भूमंडलके अज्ञानरूप अन्धकारका नाश कर भव्य नीवोंके हृदय—कमलमे उद्योत कर रहा था, जिन्होंकी अमृतमय देशनारूप सुधारससे आकर्षित हुये चतुर्विध सघरूप भ्रम रोंके सुस्वरसे नीकलते हुये उज्वल यशरूप गुजार शब्दका ध्वनि, तीन लोकमें व्याप्त हो रहा थी, ऐसे श्री वैशाखागणि आचार्य महाराजने स्व-पर आत्माधोंके कल्याण निमित्त इस महा प्रभाषक लघु निशियसूत्रकों लिखवे अपने शिष्यों, परशिष्योंपर बहुत उपकार कीया है इतनाही नहि बल्के धर्मात्मान और भविष्यमें होनेवाले साधु साध्वीयों पर भी उड़ा भारी उपकार कीया है

इति श्री निशियसूत्र—वीशवा उद्देशाका सच्चिप्त सार



इति श्री लघु निशियसूत्र—समाप्त



देश निमित्त ? इत्यादि कारणोंसे दोष सेवन कर आलोचना
 माया सयुक्त है ? माया रहित है ? लोक देखावु है ? अत कर
 है ? इत्यादि सबका विचार, आलोचना ध्वषण करते यद्यत
 रक् यथा प्रायश्चित्तके योग्य हो उसे इतनाही प्रायश्चित्त दे
 चाहिये प्रायश्चित्त देते समय उसका कारण हेतु अर्थ भी सम
 देना जैसे कहेकि—हे शिष्य ! इस कारणसे इस हेतुसे इ
 आगमके प्रमाणसे तुमको यह प्रायश्चित्त दीया जाता है

(व्यवहारसूत्र)

अगर प्रायश्चित्त देनेवाला आचार्य आदि राग द्वेषक
 हो, न्यूनधिक प्रायश्चित्त देव तो, देनेवाला भी प्रायश्चित्त
 भागी होता है और शिष्यको स्वीकार भी न करना चाहिये तय
 शास्त्राधारसे जो प्रायश्चित्त देनेपर भी यह प्रायश्चित्तीया साधु
 उसे स्वीकार न करे तो, उसे गच्छमें नहीं रखना चाहिये वा
 रण—एक अविनय करनेवालेको देख और भी अविनीत बनक
 गच्छमयादाका लोप करता जावेगा (व्यवहारसूत्र)

शरीरबल महानन, मनकी मजबुती—आदि अच्छा होनेसे
 पहले जमानेमें मासिक तपके ३० उपवास चानुमासिकके १२०
 उपवास, छे मासीके १८० उपवास दीये जाते थे, आज बल सह
 नन, मजबुती इतनी नहीं है धास्ते उमकबदल प्रायश्चित्त दाता
 घोंने ' जीतकल्प ' सूत्रका अभ्यास करना चाहिये गुरुगमतासे
 द्रव्य, क्षेत्र, काल भायका जानकार होना चाहिये ताके सब
 साधु साध्वीयोंका निर्वाह करते हुये, शासनका धोरी बनक
 शासन चलावे (जीतकल्पसूत्र)

निशियसूत्रके लेखक—धर्मधुरधर पुरुष प्रधान प्रबल प्रत

मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहबके सदुपदेशसे
श्री रत्नप्रभाकरज्ञान पुष्पमाला ऑफीस फलोधीसे
आजतक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं.

सख्या	पुस्तकोंका नाम.	आवृत्ति	कुल सख्या.
(१)	श्री प्रतिमा छत्तीसी	४	२००००
(२)	„ गयवर यिलास	२	२०००
(३)	„ दान छत्तीसी	३	४०००
(४)	„ अनुकम्पा छत्तीसी	३	४०००
(५)	„ प्रभ्रमाल	३	३०००
(६)	„ स्तवन संग्रह भाग १	५	५०००
(७)	„ पैतीस थोलोंको थोकडो	१	१०००
(८)	„ दादामाहबकी पूजा	१	२०००
(९)	„ चर्चाका पब्लिक नोटीस	१	१०००
(१०)	„ देवगुरु यन्दनमाला	२	६०००
(११)	„ स्तवन संग्रह भाग २	३	३०००
(१२)	„ लिंग निर्णय धहुत्तरी	३	३०००
(१३)	„ स्तवन संग्रह भाग ३	३	४०००
(१४)	सिद्धप्रतिमा मुक्कायली	१	१०००
(१५)	„ यत्तीससूत्र दर्पण	१	५००
(१६)	„ जैन नियमायली	२	२०००
(१७)	„ चौरासी आशातना	२	२०००
(१८)	„ डवेपर घोट	१	५००
(१९)	„ आगम निर्णय	१	१०००
(२०)	„ चैत्यर्धदनादि	२	२०००

(२१)	” जिन स्तुति	२	२०००
(२२)	” सुबोध नियमावली	२	६०००
(२३)	” प्रभुपूजा	३	३०००
(२४)	” जैन दीक्षा	२	२०००
(२५)	” व्याख्या विलास	१	१०००
(२६)	” शीघ्रबोध भाग १	२	२०००
(२७)	” ” ” २	१	१०००
(२८)	” ” ” ३	१	१०००
(२९)	” ” ” ४	१	१०००
(३०)	” ” ” ५	१	१०००
(३१)	” सुख त्रिपाक सूत्र मूल	१	५००
(३२)	” शीघ्रबोध भाग ६	१	१०००
(३३)	” दशवैकालिकसूत्र मूल	१	१०००
(३४)	” शीघ्रबोध भाग ७	१	१०००
(३५)	” मेहरनामो	२	४५००
(३६)	” तीन निर्णामा ले० उत्तर	२	२०००
(३७)	” ओसीया तीर्थका लीट	१	१०००
(३८)	” शीघ्रबोध भाग ८	१	१०००
(३९)	” ” ” ९	१	१०००
(४०)	” नंदीसूत्र मूलपाठ	१	१०००
(४१)	” तीर्थयात्रा स्तवन	२	३०००
(४२)	” शीघ्रबोध भाग १०	१	१०००
(४३)	” अमे नाधु शामाटे यया ?	१	१०००
(४४)	” धीनती शतक	२	२०००
(४५)	” द्रव्यानुयोग प्रथम प्रवे०	१	६०००
(४६)	” शीघ्रबोध भाग ११	१	१०००
(४७)	” ” ” १२	१	१०००

(४८)	" " "	१३	१	१०००
(४९)	" " "	१४	१	१०००
(५०)	" आनन्दघन घोषीशी		१	१०००
(५१)	" शीघ्रबोध भाग १५		१	१०००
(५२)	" " "	१६	१	१०००
(५३)	" " "	१७	१	१०००
(५४)	" कफावत्तीसी सार्य		१	१०००
(५५)	" व्याख्या विलास भाग २		१	१०००
(५६)	" " " "	३	१	१०००
(५७)	" " " "	४	१	१०००
(५८)	" स्याध्याय गङ्गुली समग्र		१	१०००
(५९)	" राह देवमि प्रतिप्रमणसूत्र		१	१०००
(६०)	" उपवेश गच्छ लघु पट्टावली		१	१०००
(६१)	" शीघ्रबोध भाग १८		१	१०००
(६२)	" " "	१९	१	१०००
(६३)	" " "	२०	१	१०००
(६४)	" " "	२१	१	१०००
(६५)	" वर्णमाला		१	१०००
(६६)	" शीघ्रबोध भाग २२		१	१०००
(६७)	" " "	२३	१	१०००
(६८)	" " "	२४	१	१०००
(६९)	" " "	२५	१	१०००
(७०)	" तीन चतुसामोका दिग्दशन		१	१०००
(७१)	" हितोपदेश		१	१०००
७१				१४००००



